UGC-CARE List-Social Sciences

ISSN 0974-0074

राधा कमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा

National Peer Reviewed Journal of Social Sciences

वर्ष 25 अंक 1

जनवरी-जून, 2023

समाज विज्ञान विकास संस्थान

बरेली (उ.प्र.)

इस अंक में

1. **भारत में प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव** 1-7
डॉ.रविन्द्र ब्रह्मे
कु. दीपा देवी

2. **प्रयाग में कल्पवास की परंपरा : एक धार्मिक एवं समाजशास्त्रीय विवेचन** 8-15
सुश्री भाग्यश्री ओझा
डॉ. आशीष सक्सेना

3. **कश्मीर की राजनीति में लवन्य समुदायः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन** 16-23
डॉ. बनीता रानी

4. **आसियान देशों में भारतीय सॉफ्ट पॉवर (मृदु शक्ति) को संवर्धित करने वाली पहलों का विश्लेषणात्मक अवलोकन 2014-2022** 24-33
विभव चन्द्र शर्मा
डॉ. विमल कुमार कश्यप

5. **गुजरात के प्रशिक्षित ईडीपी लाभार्थियों की स्थितिः दक्षिण प्रदेश के दो जिलों का अध्ययन** 34-41
डॉ. अरुण एन. पंडया
नविन कुमार एम. रोहित

6. **भारत में क्रांतिकारी राष्ट्रवादः उद्भव, विकास और प्रभाव** 42-49
डॉ. भरत लाल मीणा

7. **पैरेटो की क्रिया-व्यवस्था एवं भारतीय समाजशास्त्र** 50-55
डॉ. मनोज कुमार तोमर

8. **मेव समुदाय के आर्थिक विकास पर तबलीगी जमात का प्रभाव** 56-62
डॉ. आसीन खाँ
डॉ. अनिल कुमार यादव

9. **क्रान्तिकारी जतिन दास की ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों का एक समीक्षात्मक अध्ययन** 63-71
प्रवीन कुमार

10. **छत्तीसगढ़ की पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व एवं महिला सशक्तीकरण : एक समीक्षात्मक अध्ययन** 72-78
डॉ. अनुपमा सक्सेना
दीपक कुमार कश्यप

11. **भारत चीन संबंध : संघर्ष के प्रमुख द्विपक्षीय मुद्दे** 79-84
बृजेश चंद्र श्रीवास्तव

12. **भारतीय समाज में सामाजिक कलंक के रूप में मासिक धर्म : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन** 85-93
प्रतिमा चौरसिया
कालिंदी सिंह

13. **गोदना-प्रिय जनजाति बैगा के गोदना में परिवर्तन** 94-98
श्रीमती सोमेश्वरी कुमारी वर्मा
डॉ. हेमलता बोरकर वासनिक

14. **भारतीय सनातन संस्कृति का विश्लेषण : वैदिक काल से आधुनिक काल** 99-108
डॉ. ज्योति
अतुल

15.	**समकालीन परिदृश्य में कृषि में महिला किसानों की भूमिका एवं समस्याएँ : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण** डॉ. आभा मिश्रा	109–114
16.	**भावी शिक्षकों की हिन्दी वर्तनी संबंधी समस्याएं : काँगड़ा जिला के संदर्भ में एक अध्ययन** लता कुमारी डॉ. अनु जी. एस.	115–123
17.	**ग्रामीण विकास में शिक्षा की प्रभावशीलता** डॉ. कुशल जैन कोठारी श्रीमती दीपिका त्रिवेदी	124–131
18.	**वर्तमान परिदृश्य मे कार्योजित मुसहर महिलाओं के सशक्तीकरण की चुनौतियां: समाजशास्त्रीय अंतर्दृष्टि** डॉ. नेहा चौधरी	132–139
19.	**सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव** डॉ पूनम बजाज राजेश चावला	140–145
20.	**पंजाब के प्रांतीय विधानमण्डल चुनावों में कांग्रेस के प्रदर्शन का विश्लेषणात्मक अध्ययन (1920 ई.-1946 ई.) : हरियाणा के विशेष संदर्भ में** निखिल कुमार	146–155
21.	**मलिन बस्ती वासियों का शैक्षिक स्तर एवं अभिरुचि : लखनऊ नगर के संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन** डॉ. शैलजा सिंह अब्दुल्लाह	156–161
22.	**मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी अधिनियम, 2010 : सेवा प्रदाय की नवीन व्यवस्था एवं समस्याएँ** डॉ. शीतल द्विवेदी	162–169
23.	**कार्यशील महिलाओं के परिवारों में लैंगिक असमानता का बदलता स्वरुप : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन** धारणा शर्मा डॉ0 उमा बहुगुणा	170–176
24.	**लैंगिक विषमता एवं ग्रामीण महिलाएँ** डॉ. उपासना डॉ. किरन डंगवाल	177–182
25.	**पोषण वाटिका का महिला पोषण सुरक्षा में योगदान : एक अध्ययन** डॉ. प्रगति	183–187
26.	**अरावली में अवैध खनन से उत्पन्न पर्यावरण संकट (मेवात क्षेत्र के विशेष संदर्भ में)** पूजा साहू	188–194

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

भारत में प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव

❑ डॉ.रविन्द्र ब्रह्मे
❖ सुश्री दीपा देवी

सूचक शब्द : प्रत्यक्ष कर, सकल घरेलू उत्पाद, कर राजस्व, आर्थिक विकास।

सरकारें आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए राजकोषीय नीति को लागू करती हैं, जिसमें करों से प्राप्त आय महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत शोध पत्र भारत में प्रत्यक्ष करों की प्रवृत्ति, प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद से प्रतिशत की प्रवृत्ति एवं प्रत्यक्ष करों के सकल घरेलू उत्पाद पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने के उद्देश्य से सरल रेखीय प्रतिगमन विधि का उपयोग करते हुए 2000 से 2022 तक के आंकड़ों का संग्रहण सांख्यिकीय एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय तथा बजट दस्तावेज से किया गया है। सांख्यिकीय परिमाण से ज्ञात होता है कि प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि को आर्थिक विकास के सूचक के रूप में उपयोग किया जाता है और भारत के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए व्यवस्थित कर प्रणाली महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाहन करती है जो, सतत् समावेशी विकास के लिए आवश्यक है।

सरकार जनता पर कर लगाकर अपने व्यय का वित्त पोषण करती है, जो करदाता पर उनके आय वर्ग के आधार पर लगाया जाता है। सरकारें करों के संग्रह के लिए अलग–अलग नीति बनाती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि करदाता निर्धारित समय अवधि पर करों का भुगतान करें जबकि सरकारें भी कर राहत प्रदान करती हैं। अर्थव्यवस्था के संदर्भ में कर, व्यवसाय के धन को स्थानांतरित करने के लिए एवं सार्वजनिक भलाई के लिए धन के उपयोग को सुनिश्चित करता है जैसे अवसंरचना, स्वास्थ्य प्रणाली, सड़कें, रक्षा, स्कूल, कानून और अदालत प्रणाली के माध्यम से अर्थव्यवस्था को सुदृढ करता है परन्तु सभी सरकारें इसमें सफलता प्राप्त नहीं कर पाती हैं।

राज्य के नियमों के अनुसार राज्य के बजट में योगदान करने के लिए जनता द्वारा कर का भुगतान किया जाता हैं। कर न केवल राज्य के व्यय की आवश्यकताओं के लिए राजस्व का स्रोत होता हैं बल्कि यह सरकारों को अर्थव्यवस्था को नियमित करने में मदद करता है। उपयुक्त कर नीति आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में योगदान देती है जबकि एक अनुचित कर व्यवस्था का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और यह आर्थिक विकास और व्यक्तियों के उपभोग व्यवहार को रोकती है।[1]

कर मुख्य रूप से दो तरह से लगाये जाते हैं। प्रत्यक्ष कर सीधे करदाताओं पर लगाये जाते हैं जो उन्हें वहन करने के लिए बाध्य होते हैं। इन करों का बोझ किसी अन्य व्यक्ति पर हस्तातंरित नहीं किया जा सकता है। अप्रत्यक्ष कर के लिए करदाता आर्थिक बोझ वहन नही करता है अपितु बिचौलियों द्वारा करों का भुगतान किया जाता है।[2,3]

भारत में स्वतंत्रता के बाद के युग में नए निवेश के लिए कर प्रोत्साहन के माध्यम से रोजगार को बढ़ावा देने, आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कराधन नीति तैयार की गई थी, आय और धन पर प्रगतिशील कर के माध्यम से असमानता को कम करना, आयात शुल्क बढ़ाकर भुगतान संतुलन पर दबाव कम करना और उपभोग वस्तुओं पर उत्पाद शुल्क में कर छूट के माध्यम से कीमतों को स्थिर करना आदि उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समय समय पर कर सुधार नीतियों का अनुसरण किया गया है।

कर प्रणाली में सुधार का पहला व्यापक प्रयास कराधान जांच आयोग 1953–54 के द्वारा किया गया जिसके अध्यक्ष जॉन मथाई थे। आयोग द्वारा केंन्द्र और राज्य दोनों स्तरों पर कर संरचना को चौड़ा और गहरा करना एवं समय–समय पर मूल्यांकन की अनुशंसा की गई थी। 1956 में निकोलस कालडोर द्वारा उपहार कर, पूंजीलाभ कर, व्यक्तिगत व्यय कर आदि करों को लगाने की

❑ प्रोफेसर अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.), महासचिव भारतीय आर्थिक परिषद
❖ शोध अध्येत्री अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

अनुशंसा की गई थी । 1970 के दशक के मध्य में पुनर्वितरण स्थापित करने के उद्देश्य से आयकर को प्रमुख साधन के रूप में विकसित किया गया था। 1973-74 में व्यक्तिगत आयकर में गयारह कर स्लैब थे, जिनकी दरें 10.85 प्रतिशत के मध्य थीं एवं अधिभार 15 प्रतिशत था। निगम कराधान प्रणाली की दरें 45.65 प्रतिशत के मध्य थीं, जिसमें वृहद कंपनी एवं एकाधिकारात्मक या छोटे समूह के बीच कर दरों में भिन्नता थी तथा निवेश भत्ते जैसी उदार कर प्राथमिकताओं के कारण प्रभावी दरें कम थी। 1976-77 और 1986-87 में कर प्रणाली को सरल एवं युक्तिसंगत बनाने का प्रयास किया गया था 1991 की कर सुधार समिति की सिफारिशों के आधार पर 1992-93 में 20, 30, 40 प्रतिशत कर की दरों को निर्धारित किया गया था। इस प्रकार कर के 3 स्लैब थे। वित्तीय संपत्तियों को धन कर से बाहर रखा गया था। 1997-98 में तीनों स्लैब दर को घटाकर 10, 20, 30 प्रतिशत कर दिया गया एवं अधिभार को सभी करों पर जोड़ दिया गया और 2 प्रतिशत शिक्षा उपकर जोड़ा गया। निगम कराधान की प्रणाली में भी सुधार किया गया जिसमें मूल कर दर को घटाकर 50 प्रतिशत कर दिया गया एवं छोटे समूह एवं एकाधिकारात्मक कम्पनियों के लिए कर की दरों कों 55 प्रतिशत पर एकीकृत कर दिया गया। 1997-98 में व्यक्तिगत आय कर एवं निगम कर दोनों की दरों में कटौती की गई और 10 प्रतिशत लाभांश कर को व्यक्तियों से कम्पनीयों में स्थानांतरित कर दिया गया। 2000-01 में लाभांश कर की दर 20 प्रतिशत तक बढ़ा दी गई थी, 2001-02 में इसे पुनः 10 प्रतिशत कर दिया गया था। 2001 में व्यक्तिगत आयकर के संबंध में कर नीति और कर प्रशासन पर सलाहकर समूह ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें रियायतों की विस्तृत सूची हैं इनमें बचत के लिए प्रोत्साहन और रियायतें, आवास, सेवानिवृति योजनाओं में निवेश और धर्मार्थ ट्रस्टों की आय सम्मिलित है। निगम कर में प्रमुख कर वरीयताएं निवेश भत्ता और मूल्यह्रास भत्ता सम्मिलित हैं इसके इलावा पिछड़े क्षेत्रों को कर प्रोत्साहन प्रदान किया गया। इन सब प्राथमिकताओं के परिणामस्वरूप कई शून्य कर कम्पनियों का उदय हुआ जिसके कारण 1997-98 में बुक प्रॉफिट के 30 प्रतिशत पर टैक्स लगाने के लिए न्यूनतम वैकल्पिक कर का प्रारंभ किया गया। 2005-06 में निगम कर 30 प्रतिशत कर दिया गया जो 2015-16 तक अपरिवर्तित रहा। 2015-16 में निगम करों को घटाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया। 2015 में न्यायमूर्ति आर.वी.राव की अध्यक्षता में आयकर अधिनियम को सरल बनाने का प्रयास किया गया। वित्तवर्ष 2023-24 में आयकर दर को 5 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक निर्धारित किया गया हैं। अधिभार 50 लाख से 1 करोड़ तक 10 प्रतिशत एवं 1 करोड़ से अधिक 2 करोड़ तक पर 15 प्रतिशत है।[4,5]

शोध पत्र में भारत में प्रत्यक्ष करों की प्रवृत्ति, प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद से प्रतिशत की प्रवृत्ति एवं प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया गया है जिससे आर्थिक विकास को सतत् एवं धारणीय रूप से बढ़ावा देने के लिए कर प्रणाली पर सुझाव दिया जा सके।

साहित्य का पुनरावलोकन

आमिर[6] ने अपने शोध पत्र में निष्कर्ष दिया है कि पाकिस्तान में अप्रत्यक्ष कर लगाकर राजस्व वसूला जाता है जबकि भारत में इसके विपरीत है। भारत प्रत्यक्ष करों के माध्यम से अपना राजस्व एकत्रित करता है।

गीतांजलि[7] ने अपने शोध पत्र में पाया कि सकल घरेलू उत्पाद पर प्रत्यक्ष करों के शुद्ध संग्रह का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

एगबुनिक[8] ने अपने शोध पत्र में निष्कर्ष दिया कि आर्थिक विकास एवं करों की बीच सकारात्मक संबंध है। सुझाव दिया कि राजस्व उत्पन्न करने के लिए सरकार को पर्याप्त उपाय करने चाहिए संघीय सरकार को करों से उत्पन्न वित्तीय संसाधनों का विवेकपूर्ण ढंग से प्रबंधन करना चाहिए। सरकार को स्थानीय लघु उद्योगों को छूट देने के लिए प्रयास करना चाहिए एवं भ्रष्टचारियों के लिए सख्त दंडात्मक उपाय करने चाहिए।

ओलादिपुपो[9] ने नाइजीरिया के आर्थिक विकास पर कर राजस्व के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि वैट, सीमा शुल्क एवं उत्पाद शुल्क का वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद के साथ सीधा संबंध है। उन्होंने शोध पत्र में सुझाव दिया कि वैट कर की कमियों की पहचान करने के लिए सरकार को प्रशासनिक उपाय अपनाने चाहिए पारदर्शी और विवेकपूर्ण तरीके से इन करों का संग्रह किया जाना चाहिए।

बलजगन[10] ने प्रत्यक्ष करों और अप्रत्यक्ष करों के प्रभाव के अध्ययन में पाया कि प्रत्यक्ष करों में परिवर्तन का

आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है एवं अप्रत्यक्ष करों का आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

डूरोविक[11] ने अपने शोध पत्र में निष्कर्ष दिया कि करों और आर्थिक विकास के बीच महत्वपूर्ण सम्बंध है।

गुयेन[12] के अनुसार, वियतनाम के आर्थिक विकास पर कर का सकरात्मक प्रभाव पड़ता है परन्तु प्रत्यक्ष करों का प्रभाव अदृश्य है। इस बात की पुष्टि करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य उपस्थित नही हैं कि अप्रत्यक्ष कर का प्रत्यक्ष कर की तुलना में अधिक सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

कोरकमाज[13] ने अपने शोध पत्र में निष्कर्ष दिया कि अप्रत्यक्ष कर आर्थिक विकास पर सकारात्मक और महत्वपूर्ण प्रभाव को दर्शाता है परन्तु प्रत्यक्ष कर आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव को दर्शाता हैं।

हकीम[14] ने अपने शोध पत्र में अर्थमितीय विश्लेषण के माध्यम से निष्कर्ष दिया कि प्रत्यक्ष कर आर्थिक विकास पर नकारात्मक रूप से सहसंबंधित पाया गया है जबकि अप्रत्यक्ष करों का सकारात्मक लेकिन नगण्य प्रभाव प्रतीत होता है।

बशा[15] के अनुसार, आर्थिक विकास पर मूल्यवर्धित कर का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है जबकि सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क का आर्थिक विकास पर नगण्य प्रभाव पड़ता है। बशा अपने शोध पत्र में जार्डन की अर्थव्यवस्था में प्रत्यक्ष कर के आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव को प्रदर्शित करते हैं। उन्होंने सुझाव दिया कि सरकार को अपने कर की दरें व कर नीतियों में सुधार की आवश्यकता है।

नारसीज के शोध पत्र के विश्लेषण और परिणाम बताते हैं कि निगम व आय कर उच्च और सीमित राजकोषीय दक्षता वाले देशों के दोनों समूहों के लिए आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

शोध प्रविधि

साधारण रेखीय प्रतिगमन विधि का उपयोग करके प्रत्यक्ष करों के सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव के जाँच के उद्देश्य से 2000-2022 तक के द्वितीयक आंकड़ों का संग्रहण सांख्यकीय एवं कार्यक्रम क्रियानवयन मंत्रालय एवं बजट दस्तावेज से एकत्रित किया गया है।

GDP = F (DT)
GDP = सकल घरेलू उत्पाद
DT = प्रत्यक्ष कर

अर्थमिति सूत्र : $Y = a + \beta 1X1 + \mu$

Y = आश्रित चर (सकल घरेलु उत्पाद)
a = स्थिरांक (Intercept)
β_1 = स्वतंत्र चर का ढलान
X_1 = प्रत्यक्ष कर
μ = त्रृटि पद

परिकल्पना

H0 प्रत्यक्ष कर का सकल घरेलू उत्पाद पर सार्थक प्रभाव नही पड़ा है।

H1 प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद पर सार्थक प्रभाव पड़ा है।

प्रत्यक्ष कर एवं सकल घरेलू उत्पाद का विश्लेषण

रेखाचित्र क्रमांक 01 से स्पष्ट है कि 2000-01 से 2018-019 तक प्रत्यक्ष करों में निरंतर वृद्धि की स्थिति है। 2019-20 एवं 2020-21 में प्रत्यक्ष कर घटकर क्रमशः 1050681 करोड़ रूपये एवं 947176 करोड़ रूपये हो गया है, जो कोविड 19 महामारी का परिणाम हैं। 2021-22 में कोविड़ 19 महामारी का प्रभाव कम होने के कारण प्रत्यक्ष करों मे 2020-21 की तुलना में 46524 करोड़ रूपये अधिक प्रत्यक्ष कर 2021-22 में प्राप्त हुआ हैं।

रेखाचित्र क्रमांक : 01 प्रत्यक्ष कर (करोड़ रूपये में)

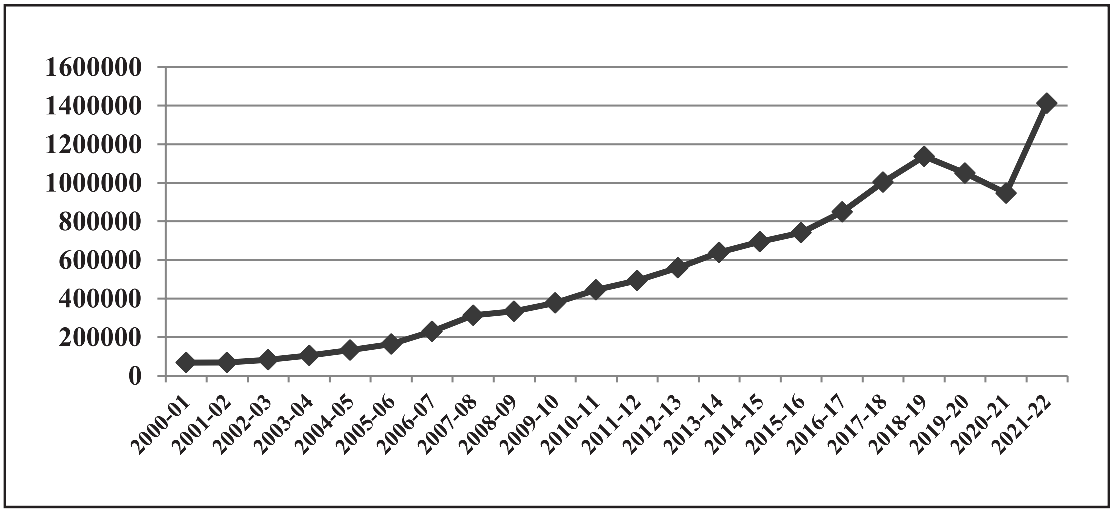

Source: @ MoSPI Press releases dated 29.05.2020 , 31.05.2021 and 31.05.2022

प्रस्तुत रेखाचित्र 2 से स्पष्ट है कि 2000-01 से 2019-20 तक सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि की स्थिति विद्यमान है। 2020-21 कोविड 19 महामारी की स्थिति है जिसमें जीडीपी 947176 करोड़ रूपये है जो पिछले वर्ष की तुलना में कमी दर्शाता हैं। 2021-22 में कोविड़ 19 महामारी का प्रभाव कम होने के कारण सकल घरेलू उत्पाद मे 2020-2021 की तुलना मे 3863723 करोड़ रूपये अधिक सकल घरेलू उत्पाद 2021-2022 में प्राप्त हुआ हैं।

रेखाचित्र 02 : सकल घरेलू उत्पाद (करोड़ रूपये में)

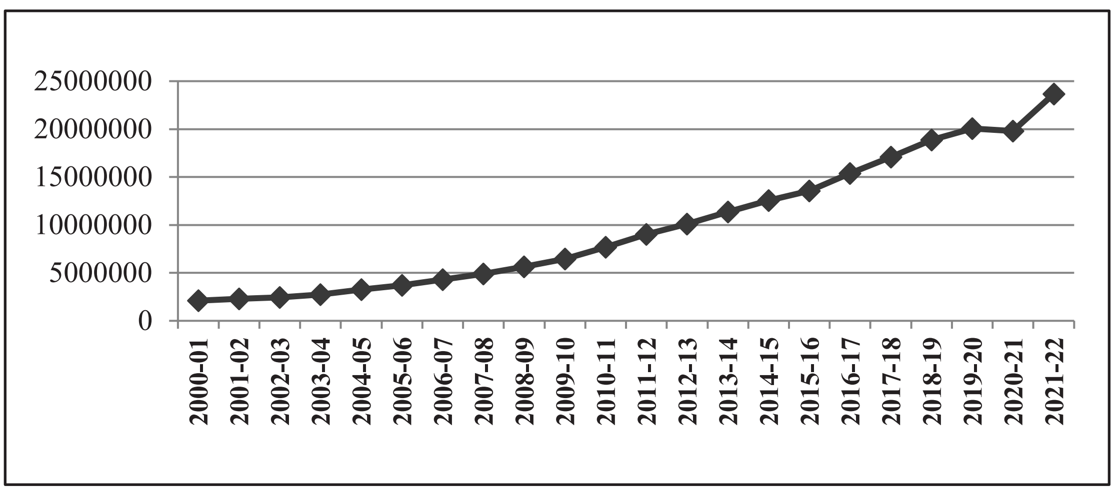

Source: @ MoSPI Press releases dated 29.05.2020 , 31.05.2021 and 31.05.2022

प्रस्तुत रेखाचित्र 03 से स्पष्ट है कि प्रत्यक्ष कर सकल घरेलू उत्पाद अनुपात, सकल घरेलू उत्पाद में प्रत्यक्ष करों की हिस्सेदारी को प्रदर्शित करती हैं। प्रस्तुत रेखाचित्र से स्पष्ट है कि 2000-01 से 2007-08 तक प्रत्यक्ष कर सकल घरेलू उत्पाद अनुपात में निरंतर वृद्धि की स्थिति बनी हुई हैं। 2009-10 से 2018-19 प्रत्यक्ष कर सकल घरेलू उत्पाद अनुपात स्थिर बनी हुई हैं। 2019-20 एवं 2020-21 में कोविड19 महामारी के परिणाम स्वरूप यह

अनुपात घटकर क्रमशः 5.23 प्रतिशत एवं 4.78 प्रतिशत पर है। 2021–22 में कोविड 19 महामारी के प्रभाव की कमी ने अर्थव्यवस्था को पुनः उभार की स्थिति की ओर अग्रसर किया जिससे 1.19 प्रतिशत वृद्धि पिछले वर्ष की तुलना में परिलक्षित है। सर्वाधिक प्रत्यक्ष कर सकल घरेलू उत्पाद अनुपात 6.3, 2007–08 की अवधि में है।

रेखाचित्र क्रमांक : 03 प्रत्यक्ष करों का सकल घरेलू उत्पाद से अनुपात

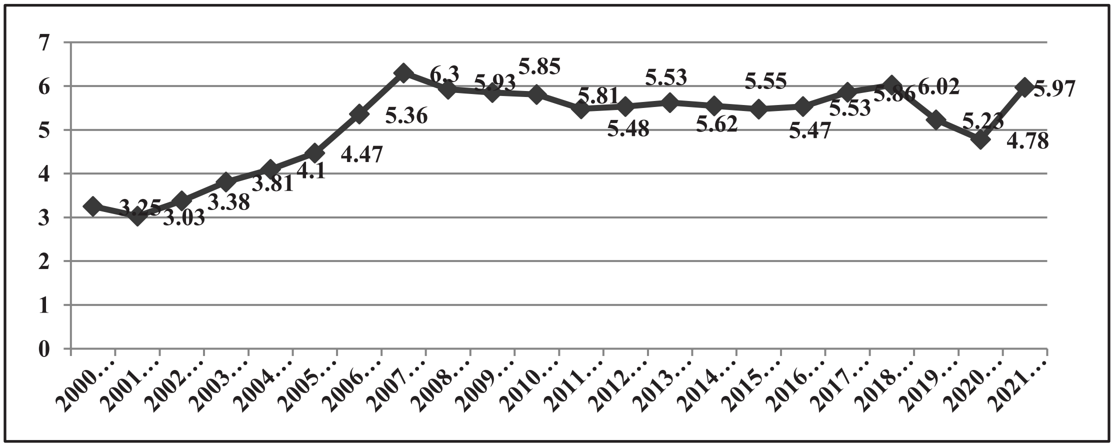

Source: @ MoSPI Press releases dated 29.05.2020 , 31.05.2021 and 31.05.2022

रेखाचित्र क्रमांक 04 से स्पष्ट होता है कि कुल कर राजस्व में प्रत्यक्ष करों की हिस्सेदारी 2000–01 से 2009–10 तक निरंतर बढ़ रही थी परन्तु 2010–11 से 2021–22 निरन्तर उतारचढ़ाव की स्थिति बनी हुई है। सार्वधिक कुल कर राजस्व में प्रत्यक्ष करों का प्रतिशत 2009–10 में 60.78 प्रतिशत है

रेखाचित्र क्रमांक : 04 प्रत्यक्ष करों का कुल कर राजस्व से प्रतिशत

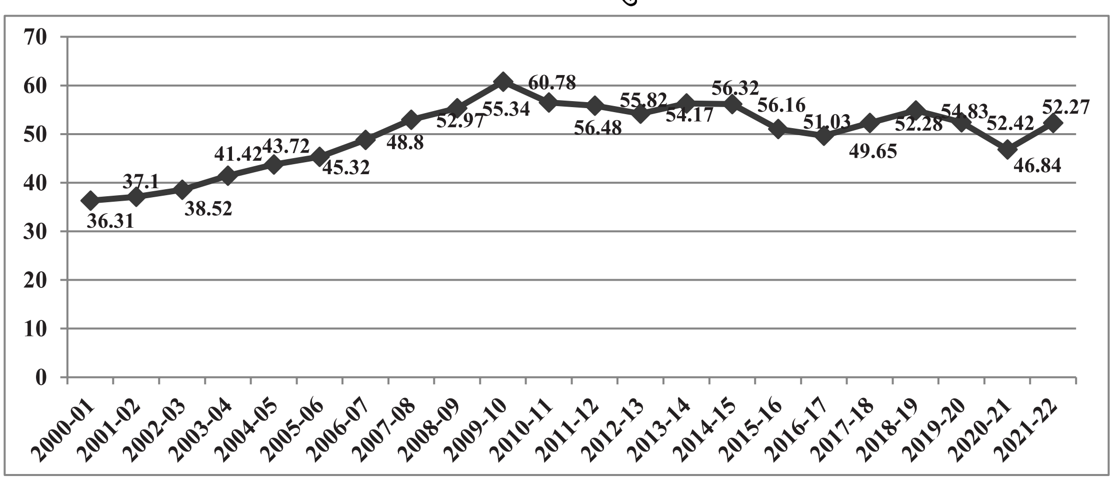

Source: @MoSPI Press releases dated 29.05.2020, 31.05.2021 and 31.05.2022

प्रत्यक्ष कर का सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव

आंकडों का संग्रहण सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय एवं विभिन्न वर्षो के बजट दस्तावेज से 2000–01 से 2021–22 के आंकड़ों को एकात्रित किया गया है, एडवांस एम.एस. एक्सल, 2016 सॉफटवेयर में साधारण रेखीय प्रतीगमन का उपयोग करके प्रत्यक्ष करों के सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव का परिणाम प्राप्त किया गया है।

Regression Statistics	
Multiple R	0.98766566
R Square	0.975483456
Adjusted R Square	0.974257629
Standard Error	0.055401942
Observations	22

ANOVA

	df	SS	MS	F	Significantce F
Regression	1	2.442534	2.442534	795.7756573	0.00
Residual	20	0.061388	0.003069		
Total	21	2.503922			

	Coefficients	Standard Error	t Stat	P-value	Lower 95%	Upper 95%	Lower 95.0%	Upper 95.0%
Intercept	2.346472325	0.161001	14.57424	0.00	2.010629458	2.682315	2.010629	2.682315
Direct tax	0.812403588	0.028799	28.2095	0.00	0.752330051	0.872477	0.75233	0.872477

GDP =2.3464 + .8124 DT

परिकल्पना परीक्षण

प्रत्यक्ष कर, सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव डालता है या नही ।

$H0 : ß1 = 0$ (प्रत्यक्ष कर का सकल घरेलू उत्पाद पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।)

$H1 : ß1 \neq 0$ (प्रत्यक्ष कर का सकल घरेलू उत्पाद पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।)

परिकल्पना का परीक्षण साधारण रेखीय प्रतीगमन विधि का उपयोग करके किया गया हैं। अवलोकन की संख्या 22 है चरों की संख्या दो है। साधारण रेखीय प्रतीगमन विधि में एनोवा तालिका में सार्थकता स्तर एफ (significance F) एवं पी मूल्य (P-value) का मान 0.05 से कम जो शून्य परिकल्पना को अस्वीकर करता है और वैकल्पिक परिकल्पना स्वीकार करता हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव : सकल घरेलू उत्पाद पर प्रत्यक्ष करों का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सरकारों द्वारा कर संग्रह पूरी तरह से सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धता और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है। शिक्षा, बुनियादी ढांचा स्वास्थ्य, देखभाल, सार्वजनिक निवेश और देश का समग्र आर्थिक विकास विशेष रूप से विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में, कर राजस्व का उपयोग आर्थिक विकास के विभिन्न पहलुओं के लिए किया जाता है। कराधान नीतियों को प्रोत्साहन प्रदान करने के मुख्य उद्देश्यों के साथ स्थापित किया जाता है। संसाधनों के उचित आबंटन को विनियमित करने, मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के लिए संसाधनों का निर्माण, और विभिन्न वर्गों के बीच धन और आय की असमानता को समाप्त करने आदि में कराधान नीति में परिवर्तन और अन्ततः कर दरों में परिवर्तन आर्थिक विकास को प्रभावित करती है। कर प्रणाली में सुधार के लिये निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं :

(1) सरकार द्वारा कर नीतियों की समीक्षा की जाये और प्रत्यक्ष कर दरों को युक्ति संगत किया जाना चाहिए।

(2) कर अपवंचन को रोकने के लिए कड़े कानून निर्माण किया जाना चाहिए

(3) निगम करों की दरों में संशोधन किया जाये ताकि छोटे और मध्यम उद्यमी व्यवसाय की स्थापना पर ध्यान केन्द्रित कर सके। आयकर की दर को कम करके आर्थिक विकास एवं रोजगार पर प्रत्यक्ष प्रभाव स्थापित किया जा सकता है।

आभार प्रदर्शन : प्रस्तुत शोध पत्र में अनुसंधान क्रियाविधि और आकड़ों के विश्लेषण में विशेष रूप से योगदान के लिए हम डॉ. प्रगति कृष्णन, अतिथि सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर, का हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करते हैं।

सन्दर्भ

1. Basha, M.H., 'Evaluating the Impact of Direct Taxes on Economic Growth: Empirical Evidence from Jordan'. Asian Economic and Financial Review, 12(8), 627-635, 2022, pp. 1-2
2. Nguyen, H.H., 'Impact of direct tax and indirect tax on economic growth in Vietnam'. The Journal of Asian Finance, Economics and Business, 6(4), 129-137.(2), 2019. p.2
3. Sehrawat, M. & Dhanda, U. 'GST in India : A Key Tax Reform'. Internation journal of Research-Granthaalayah, 3 (12), 133-141, 2015, p. 2
4. Rao, M.G., 'Tax System Reform in India : Achievements and Challenges Ahead'. Journal of Asian Economics, 16(6), 993-1011. 2005, p. 3
5. Kamble, B.G., & Isak, S.S.A Comparative Study between Old and New Tax Regime for the FY 2023-2024. IJFMR-International Journal For Multidisciplinary Research, 5 (2). p.3
6. Aamir, M., Qayyum, A., Nasir, A., Hussain, S., Khan, K.I. & Butt, S., 'Determinants of Tax Revenue: A Comparative Study of Direct Taxes and Indirect Taxes of Pakistan and India'. International Journal of Business and Social Science, 2 (19), 2011, p. 4
7. Geetanjali, J.V.R. & Venugopal, P.R., 'Impact of Direct Taxes on GDP: A Study', IOSR Journal of Business and Management (IOSR-JBM), 21-27, 2017, p. 4
8. Egbunike, F.C., Emudainohwo, O.B., & Gunardi, A, 'Tax Revenue and Economic Growth : A Study of Nigeria and Ghana', Signifikan: Journal iimu Economi, 7(2), 213-220. 2018, p. 4
9. Ibadin, P.O., & Oladipupo, A.O., 'Indirect Taxes and Economic Growth in Nigeria EKON'. MISAO I PRAKSA DBK.GOD XXIV. BR.2. (345-364). 2015, p.4
10. Bazgan, R.M., 'The impact of direct and indirect taxes on economic growth: An empirical analysis related to Romania. In Proceedings of the International Conference on Business Excellence, Vol. 12, No.1, pp. 114-127. 2018, p.4
11. Durovic-Toodorovic, J., Milenkovic, I. & Kalas, B., 'The Relationship Between Direct Taxes and Economic Growth in Oecd Countries'. Economic Themes, 57(3), 273-286., 2019, p.4
12. Nguyen, H.H. op.cit., p.4
13. Korkmaz, S., Yilgor, M., & Aksoy, F., 'The Impact of Direct and Indirect Taxes on the Growth of the Turkish Economy', Public Sector Economics, 43 (3), 311-323, 2019, p.4
14. ABD Hakim, T., 'Direct Versus Indirect Taxes: Imapact on Economic Growth and Total Tax Revenue', International Journal of Financial Research, 11(2), p. 143-153. pp., 2020, 4-5
15. Basha, op.cit., p. 5

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी-जून 2023
Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

प्रयाग में कल्पवास की परंपरा : एक धार्मिक एवं समाजशास्त्रीय विवेचन

❑ सुश्री भाग्यश्री ओझा
❖ डॉ. आशीष सक्सेना

सूचक शब्द : प्रयाग, कल्पवास, तीर्थस्थान, माघ मेला, सांस्कृतिक परिदृश्य।

प्रस्तुत शोध पत्र प्रयाग में कल्पवास की परंपरा का समाजशास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत करता है। प्रयाग को हिंदुओं का सबसे पवित्र स्थान तथा तीर्थों का राजा (तीर्थराज) भी कहा जाता है। हालांकि कुंभ मेले का आयोजन चार पवित्र स्थानों पर होता है परंतु प्रयाग में आयोजित होने वाले कुंभ मेले का अपना विशेष महत्व है। प्रयाग में यह मेला प्रतिवर्ष माघ मास में ही आयोजित होता है और मात्र प्रयाग ही है जहां पर कल्पवास की प्रथा माघ के महीने में देखने को मिलती है। कल्पवास का अर्थ है आत्मा के उत्थान के लिए किया गया धार्मिक आध्यात्मिक प्रवास। प्रयाग के पवित्र समग्र को निर्मित करने में यहां की जाने वाली कल्पवास की प्रथा का विशेष महत्व है क्योंकि कल्पवासियों द्वारा की जाने वाली पवित्र धार्मिक क्रियाएं प्रयाग के पवित्र संकुल को निर्मित करती हैं तथा इसके सांस्कृतिक परिदृश्य को भी बनाती हैं। ध्यान देने योग्य बात यह है कि यह परंपरा तथा इससे संबंधित पवित्र क्रियाएं, स्वयं से नही अपितु समाज द्वारा निर्मित हैं तथा पुनःउन्हें विभिन्न दृष्टियों से प्रभावित तथा नियमित भी करती हैं। अध्ययन में यह देखने का प्रयास किया गया है कि प्रयाग में पवित्र स्थान तथा पवित्र समय में किस प्रकार से कल्पवास की प्रथा सामाजिक रूप से निर्मित हुई तथा कल्पवासियों द्वारा किए जाने वाले विश्वास एवं अनुष्ठान किस प्रकार एक समाजशास्त्रीय बोध निर्मित करते हैं।

अति प्राचीन सभ्यताओं से वर्तमान समय तक विभिन्न पवित्र स्थलों ने श्रद्धालुओं पर एक शक्तिशाली आकर्षण बल उत्पन्न किया है।[1] ये ऐसे धार्मिक केंद्र होते हैं जहां भारी मात्रा में लोग एकत्रित होते हैं तथा विभिन्न प्रकार की धार्मिक क्रियाओं एवं अनुष्ठानों को संपन्न करते हैं। अनादि काल से ही, हिंदू धर्म के लोग अपने पवित्र देवी-देवताओं के प्रति आकर्षित होते रहे हैं। भारत में तीर्थयात्रा को हिंदुओं के बीच एक प्राचीन और धार्मिक परंपरा माना जाता रहा है। ये पवित्र स्थल देश के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में फैले हैं तथा इनके धर्मावलंबियों के विश्वास को वास्तविकता में रूपांतरित करने हेतु आधारशिला प्रदान करते हैं। तीर्थस्थानों की यात्रा करना धार्मिक जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं का प्रतिनिधित्व करता है।[2] प्रयाग को इसकी अनूठी पौराणिक विशेषताओं के कारण तीर्थराज (पवित्र तीर्थ स्थलों के राजा) के रूप में जाना जाता है, तथा साथ ही साथ विशेष रूप से इसे हिंदुओं के लिए भौगोलिक एवं सामाजिक, दोनों ही दृष्टियों से अत्याधिक पवित्र माना जाता है। प्रयाग को गंगा और यमुना के बीच की भूमि के साथ देवी पृथ्वी का जनक भी माना जाता है, इसे ब्रह्मांड के पौराणिक केंद्र के रूप में भी देखा जाता है।[3] यद्यपि कुंभ मेले का आयोजन अलग अलग खगौलिक घटनाओं के कालक्रम के दौरान भारत के चार पवित्र स्थानों, प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन पर होता है लेकिन प्रयाग में आयोजित कुंभ मेले का अपना एक विशेष महत्व है। यह हिंदू कैलेंडर के अनुसार केवल माघ के महीने में ही आयोजित होता है और यह विश्वास है कि केवल प्रयाग ही है जहां माघ मास में कल्पवास (एक माह लम्बा अनुष्ठानिक प्रवास) की परंपरा देखने को मिलती है।

माघ मेला एक हिंदू धार्मिक त्यौहार है और पृथ्वी पर लगने वाली सबसे विशाल धार्मिक सभा है। यह प्रत्येक वर्ष प्रयाग में पवित्र संगम (गंगा, यमुना एवं अदृश्य सरस्वती) पर आयोजित होता है। इसकी न केवल स्थानीय, अपितु वैश्विक पहचान भी है। यह कहा जा सकता है कि यह कुंभ मेले का एक सूक्ष्म रूप है। यह प्रयाग की धरती पर माघ मास के दौरान लाखों तीर्थयात्रियों और कल्पवासियों को कल्पवास करने के लिए आमंत्रित करता है। जब हम प्रयाग को मानवशास्त्रीय संदर्भ में तीर्थस्थल के रूप में देखते हैं तो एक प्रसिद्ध मानवशास्त्री एल.पी. विद्यार्थी के अध्ययन कार्य का संदर्भ आता है। उन्होंने 1961 में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'द सेक्रेड कॉम्प्लेक्स ऑफ हिंदू गया' में पवित्र भू भाग,

❑ शोध अध्येत्री, समाजशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)
❖ प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.)

पवित्र संस्कारिक क्रियाओं और पवित्र विशेषज्ञों के रूप में तीन आयामों को सम्मिलित किया, जो 'पवित्र संकुल' नामक एक समग्र उत्पन्न करता है।[4] यह पवित्र संकुल कुछ विशेषज्ञों द्वारा नियमित या आवधिक लेकिन विशिष्ट पवित्र प्रदर्शनों के साथ पवित्र केंद्रों के एक जटिल और अन्योन्याश्रित समूह का प्रतिनिधित्व करता है। प्रयाग में कल्पवास, प्रयाग के पवित्र संकुल के एक घटक का प्रतिनिधित्व करता है। विद्यार्थी का यह भी मानना है कि ये सभी घटक इस पवित्र संकुल के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और धार्मिक पक्षों का पता लगाने में सहायक होते हैं।

माघ मेला हिंदुओं की एक भव्य और विशाल पवित्र धार्मिक सभा है। यह मेला हिंदू विश्वास प्रणाली के विभिन्न तत्वों के मिश्रण से बना हुआ एक द्रव्य पात्र के समान बन जाता है जिसमें भिन्न भिन्न क्षेत्रों से लोग आकर इस पवित्र मास में अपनी धार्मिक क्रियाओं को पूर्ण करते हैं। पुराणों में हमें समुद्र के मंथन के बाद राक्षसों (असुरों) और देवताओं के मध्य युद्ध के उपरांत पृथ्वी पर अमृत की कुछ बूंदों के गिरने का विवरण प्राप्त होता हैं। लोग विशेष रूप से माघ मेले के दौरान प्रयाग आते हैं ताकि इन पवित्र स्थानों के समीप आ सकें जहां अमृत की बूंदों के गिरने का प्रमाण मिलता है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कल्पवास मूल रूप से पवित्र भू-भाग और पवित्र समय में संगम तट पर आयोजित होता है। पवित्र संगम के पास प्रयाग में ईश्वरीय हिंदू तीर्थयात्रियों द्वारा स्थापित किए गए शिविरों में माघ के महीने में अस्थायी प्रवास और भगवान के प्रति समर्पण को 'कल्पवास' कहा जाता है। अधिकांश भक्त, विशेष रूप से बुजुर्ग जोड़े, माघ मास के दौरान कल्पवास में भाग लेने का संकल्प लेते हैं। कल्पवास में प्रयाग में माघ मेला के क्षेत्र में माघ मास के दौरान भगवान को समर्पित आराम और शानदार जीवन का बलिदान सम्मिलित है। माघ मेला में स्वच्छता और धर्म के मध्य एक दृढ़ संबंध देखा जा सकता है। जब कल्पवासी माघ मेले में आते हैं, तो उनका एकमात्र उद्देश्य मोक्ष प्राप्त करना होता है और मोक्ष की प्राप्ति के लिए न केवल शारीरिक स्वच्छता बल्कि आत्मा की स्वच्छता होना भी एक पूर्व शर्त है। कल्पवासियों का मानना है कि इन क्रियाओं को करने से वे अपनी आत्मा को स्वच्छ अर्थात पवित्र कर सकते हैं और मोक्ष भी प्राप्त कर सकते हैं। यहां हम देख सकते हैं कि कल्पवासी सामाजिक संरचना और सामाजिक क्रियाओं के साथ निकटता से जुड़े हुए हैं और वे जो भी अनुष्ठान करते हैं तो यह परम्परा और आधुनिकता के बीच उनके अंतर्संबंध को दर्शाता है। 'तीर्थयात्रियों के समाजशास्त्र' में पारस कुमार चौधरी[5] ने भी समाजशास्त्र में नए क्षेत्रों की खोज की है। उन्होंने अन्वेषित किया कि तीर्थयात्रियों, पुजारियों और अनुष्ठानों को उनकी सामाजिक संरचना और सामाजिक कार्यप्रणाली के साथ निकटता से साथ जुड़ा हुआ देखा जा सकता है।

भारत में धर्म, निजी और सार्वजनिक दोनों परिक्षेत्रों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। टी.एन. मदान[6] ने 'भारत के धार्मिक दृष्टिकोण से समाजशास्त्र और इतिहास' में धर्म को धार्मिक के स्थान पर नृवंशविज्ञान संबंधी दृष्टिकोण से देखा। उन्होंने धर्म को अपवित्र से अलग करने और उच्च स्तर पर भक्तों को एक साथ जोड़ने के प्रसंस्करण के रूप में प्रकट किया। प्रयाग के पवित्र संगम पर प्रदर्शन किया जाने वाला कल्पवास स्पष्ट रूप से हमारी महान हिंदू परंपरा को प्रतिबिंबित करता है तथा एक पवित्र प्रदर्शन होने के नाते यह अपवित्र सांस्कारिक क्रियाओं को स्वयं से पृथक करने का कार्य भी करता है। कल्पवास की परम्परा कोई नई परम्परा नहीं है, बल्कि लंबे समय तक अभ्यास करने के बाद इसका संस्थाकरण हो गया है। 'तीर्थयात्रा वर्तमान और अतीत' में, साइमन कोलमैन[7] और जॉन एल्सर ने अन्वेषित किया है कि एक पवित्र स्थान का व्यापक प्रसार एक अलग दिव्य रूप है जो हिंदू पूजा आराधना की विशेषताओं को परिलक्षित करता है। उन्होंने प्रयाग में आयोजित 1989 के कुंभ मेले का उद्धरण भी दिया, जहां उन्होंने बताया कि तीर्थयात्रा का अभ्यास करते हुए किस प्रकार से तीर्थयात्रियों अथवा उपासकों ने इसे एक प्रथा के रूप में संस्थाकृत कर दिया।

माघ का महीना हिंदू कैलेंडर के सभी बारह महीनों मे सबसे शुभ महीना माना जाता है, जिसे हिंदू धर्मग्रंथों द्वारा कल्पवास हेतु अति शुभ निर्धारित किया गया है। माघ का महीना पौष पूर्णिमा से प्रारंभ होता है और माघ पूर्णिमा के साथ समाप्त होता है। विभिन्न हिंदू धर्मग्रंथों के अनुसार, प्रत्येक कल्पवासी अपने रहने की अवधि के अनुसार अपने कल्पवास के लिए फल प्राप्त करते हैं। आम तौर पर कल्पवास बुजुर्ग जोड़े करते हैं जो सेवानिवृत्ति के बाद इन लंबे अनुष्ठानों को संपन्न करते हैं। आम तौर पर वे मानव जीवन के तीसरे चरण के होते हैं जिसे वानप्रस्थ आश्रम कहा जाता है। हालांकि कुछ अन्य कल्पवासी भी

होते हैं जो जीवन के द्वितीय चरण अर्थात् गृहस्थ काल में ही कल्पवास प्रारंभ कर लेते हैं, परंतु उनकी संख्या बहुत ही कम है। पुराणों में कल्पवासियों के नियमों को विस्तार से सम्मिलित नहीं किया गया है, 'प्रयाग महात्म्य सत्यायी' नामक एक संस्कृत पाठ में कल्पवास शब्द के बिना अध्याय 49 से 52 तक माघ महीने में स्नान करने और प्रयाग में लंबे समय तक रहने का वर्णन है। यह पाठ स्वयं को पद्म पुराण के पाताल खंड से संबंधित करता है। प्रयाग में कल्पवास धार्मिक योग्यता और लाभ प्राप्त करने के लिए एक लोकप्रिय और सुलभ विकल्प प्रदान करता है, क्योंकि यह जाति और वर्ग के अंतर के बावजूद सभी के लिए खुला है। जबकि वैदिक बलिदान और अनुष्ठान धार्मिक ज्ञान के एकाधिकार की मांग करते हैं जो केवल ब्राह्मणों तक ही सीमित था। तीर्थयात्रा सभी जाति के लोगों, यहां तक कि शूद्रों के लिए भी समान अवसर प्रदान करता है। प्रयाग एक तीर्थ होने के कारण, होमा (अग्नि विचलन), पूजा (देवताओं की पूजा), व्रत, उपवास, दान, स्नान, तर्पण (देवताओं, ऋषियों और पूर्वजों की संतृप्ति), पिंडदान, प्रधम (प्रसाद) तीर्थयात्रा द्वारा बनाया गया सबसे आम दान गौदान (गाय का उपहार), जैसे धार्मिक संस्कारों के प्रदर्शन के लिए अति प्रमुख है।[8] गाय आत्मा को मृत्यु के बाद वैतरणी नामक दंड नदी को पार करने में सहायता करती है और इसलिए महत्वपूर्ण है।[9] समाजशास्त्री दुर्खीम ने वर्णित किया कि अनुष्ठान एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा धर्म को दृश्य और मूर्त बनाया जा सकता है।[10] एक अनुष्ठानिक क्रियाविधि के नियम एवं सामग्री उसे मूर्तता नहीं प्रदान करती है अपितु यह प्रतिभागियों द्वारा इसके साथ जुड़ा हुआ प्रतीकात्मक अर्थ है, जो इसे दृश्यता प्रदान करता है। एक नदी या झील में स्नान करना ही एक पवित्र कार्य नही माना जाता अपितु इसका अपना एक विशेष गहन महत्व है।[11] पवित्र जल में स्नान करने से उसका प्रतीकात्मक अर्थ जुड़ा होता है। हिंदुओं का विश्वास है कि जीवन एक यात्रा है जो जन्म और मृत्यु की धारणा के साथ जुड़ी हुई है तथा साथ ही यह हिंदू सामाजिक और आध्यात्मिक विचारों का आधार भी है। हिंदुओं के लिए यह एक अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है। कल्पवास में आध्यात्मिक एवं धार्मिक विचारों और भावनाओं को जागृत किया जाता है जो वर्तमान को अतीत से जोड़ने का प्रयास करता है। प्रत्येक कल्पवासी इस परम्परा का निर्वहन करता है क्योंकि उनके पूर्वजों ने इन क्रियाओं को सम्पन्न किया तथा वे स्वयं को इस उच्च्य सम्मानित परम्परा से एवं नैतिक कल्याण की भावना के साथ जोड़कर देखते हैं।

कल्पवासी की पहचान और उनके संवेदी अनुभव का सामाजिक निर्माण : तीर्थयात्री, जो कल्पवासी की पहचान पर एकाधिकार करने लिए प्रतिबद्ध हैं, वे कई धार्मिक अनुष्ठानों को पूरा करने के लिए भी प्रतिबद्ध होते हैं। उन्हें पूरे एक महीने के लिए गंगा के तट पर रहना चाहिए, सरल और सात्विक आहार खाना चाहिए और कई धार्मिक गतिविधियों का प्रदर्शन करना चाहिए ताकि वे सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से इस परम्परा का निर्वहन कर सकें। इस प्रतिबद्धता को कल्पवासी नाम से इंगित किया जाता है। कल्पवास दो शब्दों से मिलकर बना है, कल्प का अर्थ है 'आंतरिक निर्धारण के माध्यम से स्वयं का परिवर्तन' और वास का अर्थ है 'धार्मिक आध्यात्मिक प्रवास'। कल्पवासियों को उनकी दैनिक दिनचर्या और मेला क्षेत्र पर एकाधिकार करने वाले क्षेत्रों द्वारा आसानी से पृथक किया जा सकता है। इस प्रकार वे मेला के गैर कल्पवासियों से स्वयं को पृथक करते हैं। एक ही समूह के एक हिस्से के रूप में एक दूसरे को देखते हुए एवं आपस में अंतरक्रिया करके कल्पवासियों के मध्य एक सांझा पहचान निर्मित होती है।[12] यहाँ देखा जा सकता है की कल्पवासी की पहचान, सामाजिक रूप से निर्मित होती है। बर्जर और लकमैन ने वास्तविकता के सामाजिक निर्माण के बारे में अपनी अवधारणा प्रस्तुत की और वर्णित किया कि सामाजिक प्रणाली में अंतरक्रिया करने वाले व्यक्ति अथवा समूह समय के साथ, वैयक्तिक व सामूहिक अवधारणाओं का मानसिक प्रतिनिधित्व करते हैं जो अंततः सामाजिक पहचान के संस्थागत आवरण में अंतर्निहित हो जाता है।[13] ठीक इसी प्रकार से कल्पवासियों ने अपने समूह में अंतरक्रिया करके, समय के साथ, पारस्परिक भूमिकाओं का आदतीकरण किया है, एक दूसरे के संबंध में कल्पवासियों द्वारा निभाई गई, जब उनकी पारस्परिक अंतरक्रियायें संस्थागत हो गईं तो इसने उनकी सामाजिक पहचान को भी निर्मित किया। केवल एक कल्पवासी की सामाजिक पहचान बताती है कि एक कल्पवासी से किन किन चीजों की अपेक्षा की जाती है। यह सामाजिक पहचान उनके अनुभव और शारीरिक रूप से मांग वाले पर्यावरणीय परिस्थितियों की अंतरक्रिया को भी आकार प्रदान करती है। कविता पांडे एवं अन्य ने निष्कर्ष निकाला कि समूह के सदस्यों की सामाजिक पहचान के संबंध में

उनके अत्यधिक कम तापमान के प्रति सहनशीलता और अनुभव की व्याख्या की जा सकती है। यह पता चला है कि अन्य तीर्थयात्रियों के साथ कल्पवासी की साझा पहचान आपसी समर्थन के रूपों को जन्म देती है जिससे उनके लिए ठंड का सामना करना आसान हो जाता है और यह अप्रत्यक्ष रूप से कल्पवासी प्रतिभागियों को ठंड की स्थिति को सहन करने की क्षमता पर अनुकूल प्रभाव डालती है।[14] पवित्र प्रदर्शन यानी कल्पवासियों की भूमिका का निर्वहन करके, कल्पवासी अपनी पवित्र दुनिया को प्रकट करते हैं और उनकी महान हिंदू सनातन संस्कृति और समाज को प्रतीकात्मक अर्थ भी प्रदान करते हैं। पीटर बर्गर और लकमैन ने व्यक्ति और संस्कृति के बीच संबंधों पर जोर दिया है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि एक व्यक्ति अपने मानसिक प्रतिनिधित्व के निरंतर अंतरीकरण और बाहरीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से अपने संसार को निर्मित करता है।[15] जब कल्पवासी समय-समय पर पवित्र क्रियाओं को करते हैं तो ये धार्मिक गतिविधियाँ तर्कसंगतता सुनिश्चित करती हैं और अपवित्रता को पवित्रता से पृथक करती हैं। यहां एक महत्वपूर्ण द्वैधता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है जहां हम देखते हैं कि कल्पवासियों द्वारा कुछ वस्तुओं एवं क्रियाओं को पवित्र माना जाता है और तामसिक और विलासितापूर्ण जीवन को अपवित्र यानी अशुद्ध माना जाता हैं। कल्पवास के दौरान वे सभी अनुष्ठान पवित्र और अपवित्र के स्पष्ट विनिर्देश पर विभक्त होते हैं। ये वीना दास के महत्वपूर्ण कार्य द्वारा स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। उन्होंने संरचना और अनुभूति में हिंदू अनुष्ठानों में स्थान की अवधारणा का पता लगाया है। जहां उन्होंने गृह सूत्र में वर्णित विभिन्न समारोहों के विषय में अन्वेषण किया। यहां उन्होंने 'दाएं और बाएं की अवधारणा' के उपयोग के स्पष्ट विनिर्देश का उल्लेख किया। उन्होंने बताया कि दाएं और बाएं के बीच का यह विरोध, यहां तक कि सम संख्या बनाम विषम संख्या, शाकाहारी बनाम मांसाहारी, चार दिशाएं अर्थात पूर्व/पश्चिम/उत्तर/दक्षिण, शुद्ध और अशुद्ध के मध्य एक विरोधाभास है जो गृह सूत्र के अनुसार पवित्र तथा अपवित्र के विरोध को प्रदर्शित करते हैं।[16]

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन में माघ मेला 2022 में सम्मिलित होने वाले 61 कल्पवासियों के साथ अर्ध-संरचित साक्षात्कार आयोजित किए गए। साक्षात्कार को रणनीतिक रूप से सभी 6 सेक्टरों से कल्पवासियों की व्यापक आबादी से यादृच्छिक रुप से प्रतिदर्श लिया गया था ताकि आयु, लिंग और जाति श्रेणी की विविधता को भी सम्मिलित किया जा सके। परिणामी नमूने में 36 पुरुष कल्पवासियों और 25 महिला कल्पवासियों को सम्मिलित किया गया जिनकी औसत आयु सीमा 45- 68 वर्ष थी। साक्षात्कार अनुसूची से प्राथमिक आंकड़े एकत्रित किये हैं अपने वास्तविक जीवन के संदर्भ में कल्पवासियों की जीवन शैली की एक गहन एवं सूक्ष्म समझ उत्पन्न करने के लिए, नृवंशविज्ञान अवलोकन पद्धति का उपयोग किया गया और कल्पवासियों के कुछ वैयक्तिक अध्ययन भी एकत्रित किए हैं।

विश्लेषण

कल्पवासियों की सामाजिक स्थिति : सभी 220 चयनित कल्पवासियों में से, कल्पवासियों की अधिकतम संख्या (104) सामान्य जाति श्रेणी से संबंधित है, (64) ओबीसी जाति श्रेणी से संबंधित है, (48) एससी श्रेणी और केवल (4) एसटी श्रेणी से संबंधित हैं। सभी सामान्य श्रेणी के कल्पवासियों में से, अधिकतम प्रतिशत 71 ब्राह्मण जाति का है और बाकी 29 अन्य सामान्य जातियों जैसे क्षत्रिय, गोसाई, राय आदि से संबंधित हैं। प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि अधिकांश ब्राह्मण जाति श्रेणी के लोग कल्पवास करते हैं। संभवतः इसका कारण यह है कि वे बहुत प्राचीन काल से धार्मिक गतिविधियों में सम्मिलित होते रहे हैं और वे इस तरह की धार्मिक गतिविधि करने में सबसे अधिक रुचि भी रखते हैं क्योंकि वे स्वयं को अपनी महान परम्परा का हिस्सा मानते हैं। 220 कल्पवासियों में से अधिकांश 134 पुरुष हैं और शेष 86 महिला हैं। यहां महिला कल्पवासी उत्तरदाताओं की संख्या कम होने के विभिन्न कारण हो सकते हैं। पहला कारण यह हो सकता है कि महिलाएं उत्तरदाता बनने और उत्तर देने में स्वयं को अक्षम पाती हैं तथा अपने परिवार के पुरुष सदस्य को उत्तरदाता के रूप में सामने प्रस्तुत करती हैं। यह पुरुष प्रभुत्व को भी दर्शाता है क्योंकि महिलाएं स्वयं को अपने परिवार का मुखिया नहीं स्वीकार करती हैं। एक अन्य कारण यह भी हो सकता है कि अधिकांश महिलाएं अपनी सुरक्षा हेतु एक पुरुष सदस्य की आवश्यकता अवश्य अनुभव करती हैं, अतः वे पुरूष सदस्य के साथ यहां आने को वरीयता देती हैं। एक और कारण यह हो सकता है कि महिलाएं अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुक्त नहीं हो पाती हैं, इसीलिए वे कल्पवास करने के लिए नही

आ पाती हैं। जब हम कल्पवासियों की शैक्षिक स्थिति पर दृष्टि डालते हैं तो यह कहा जा सकता है कि अधिकतम कल्पवासी (60) अनपढ़ पाए गए, 48 प्राथमिक स्तर तक शिक्षित पाए गए, 54 हाई स्कूल तक, 18 उच्च्य शैक्षणिक स्तर तक शिक्षित पाए गए, 28 स्नातक हैं और केवल 12 परास्नातक पाए गए। स्पष्ट है कि अधिकांश कल्पवासी अशिक्षित हैं। इसका कारण यह भी हो सकता है कि वे कल्पवासी जो अधिक शिक्षित हैं, वे वैज्ञानिक और तार्किक रूप से विचार करते हैं, अतः धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्रियाओं में कम रुचि लेते हैं इसलिए कल्पवास की परम्परा में कम विश्वास करते हैं।

कल्पवास की धारणा, इतिहास एवं प्रासंगिकता के विषय में कल्पवासियो की राय : कल्पवासियों में से अधिकांश का मानना है कि कल्पवास का अर्थ, कठिन जीवन जीना, तपस्या का जीवन जीना और धार्मिक गतिविधियों में संलग्न होना है। इसके अलावा कल्पवासी यह भी मानते हैं कि कल्पवास का अर्थ है ईश्वर में ध्यान लगाना। कल्पवास के इतिहास के बारे में कल्पवासियों के बहुमत का मानना है कि कल्पवास का इतिहास सम्राट हर्षवर्धन की अवधि से पता लगाया जा सकता है। उसके बाद उनमें से कई कल्पवासी केवल समुंद्र मंथन के मिथक को ही जानते हैं जहां से वे कुंभ मेले के इतिहास और कल्पवास की परम्परा का पता लगाते हैं। बहुत कम कल्पवासी हैं जिन्हें कल्पवास के इतिहास के बारे में कोई जानकारी नहीं है। रामानंद तिवारी जो सेक्टर 3 में पंकज त्रिपाठी पंडा जी के शिविर में ठहरें हैं, वे कहते हैं कि हम तो नहीं जानते लेकिन आप हमारे पंडा जी से कल्पवास के विषय में सब कुछ पूछ सकते हैं। ये तथ्य दर्शाता है कि कल्पवास की धारणा व्यक्ति से उपर उठकर संस्था में परिणत हो गई है। अधिकांश तीर्थयात्री दृढ़ता से मानते हैं कि उनके कल्पवास का उद्देश्य उनके अगले जन्म को संवारना है और उनमें से कई का मानना है कि कल्पवास के माध्यम से उनके वर्तमान जीवन में सुधार होगा। ये तथ्य बताता है कि कहीं न कहीं कल्पवासी महान सनातन हिंदू धर्म की कर्म एवम पुनर्जन्म की विचारधारा का अनुसरण करते हैं। कल्पवासियों में अधिकांशतः मानते हैं कि कल्पवास की परंपरा का निर्वहन करके वे शांति एवम आनंद अनुभव करते हैं।

कल्पवासियों को कल्पवास करने के लिए प्रेरित करने वाले कारक : कल्पवासियों में से, उच्चतम प्रतिशत (41.7) उन कल्पवासियों का हैं जो कल्पवास करने के लिए अपने पंडा जी से प्रेरित हैं। उसके बाद द्वितीय स्थान पर, कई कल्पवासियों (21.7) का प्रतिशत आता है जो अपने परिवार की कल्पवास की परम्परा से प्रेरित होकर यहां कल्पवास करने आए हैं। शेष 10 प्रतिशत कल्पवासी वे हैं जो अपने परिवार के सदस्यों तथा अपने रिश्तेदारों से प्रेरित होकर आए हैं। इन सभी तथ्यों से पता चलता है कि पंडा का कल्पवास के अनुष्ठान के साथ अति घनिष्ठ संबंध है। आज भी अधिकांश कल्पवासी अपने पंडा की मदद से ही कल्पवास संपन्न करते हैं। 'पंडा-यजमान' अंतर्संबंध, वंशानुगत संबंध और आपसी दायित्वों को संदर्भित करता है जो पंडा और यजमान परिवारों के बीच भारत के विभिन्न हिस्सों की जातियों को पृथक करने का कार्य करते हैं, जिनके सदस्य हमेशा अनुष्ठान करने के लिए धार्मिक सहायता लेने के लिए अपने पंडा के पास आते हैं। पुजारी और उनके सामाजिक नेटवर्क में एल. पी. विद्यार्थी ने, पंडा द्वारा पीढ़ी से पीढ़ियों तक पुजारी-यजमान प्रणाली तंत्र के क्रियान्वयन का वर्णन किया। इन्होंने बताया कि पंडा के पास (1) वंशावली पदनामों की विरासत और वंशानुगत उपनाम (2) यजमानों के बहीखाता आदि की पूरी जानकारी होती है।

कल्पवासियों का खान पान : कल्पवासियों की खान पान की आदतें कई कठोर नियमों द्वारा विनियमित होती हैं जिनका एक कल्पवासी को पालन करना होता है। लेकिन समय के साथ, कल्पवासियों की खान पान की आदतों के विषय में विविधताएं देखी जा सकती हैं। पवित्र हिंदू धर्म शास्त्रों के अनुसार, एक कल्पवासी को दिन में एक बार भोजन (अन्न) लेना चाहिए, बाकी वे फल लेकर या फलाहर पर रह सकते हैं। वे जो भोजन लेते हैं, वह सात्विक प्रकृति का होना चाहिए। उनके द्वारा लिये जाने वाले खाद्य पदार्थों में बहुत सारे प्रतिबंध हैं, परंतु समय के साथ साथ यहां भी विविधताएं प्रत्यक्षतः देखी जा सकती हैं। अधिकांश कल्पवासियों (86 प्रतिशत) का मानना है कि कल्पवास के दौरान उन्हें कुछ सब्जियों तथा प्याज, लहसुन, बैंगन, गाजर, फूलगोभी, मसूर दाल, उड़द दाल, सरसों के तेल आदि का सेवन प्रतिबंधित हैं लेकिन कई कल्पवासी (13 प्रतिशत) केवल प्याज, लहसुन और सरसों के तेल को ही निषेध के रूप में देखते हैं। वे भोजन के संबंध में किसी अन्य निषेध का पालन नहीं करते हैं। उनमें से बहुत कम (40 प्रतिशत) अन्न में मसूर और उड़द दाल के सेवन

पर प्रतिबंध मानते हैं। उनका मानना है कि एक कल्पवासी को अपनी सुविधा और क्षमता के अनुसार कल्पवास के नियमों और प्रतिबंधों का पालन करना चाहिए। अधिकांश कल्पवासी सूर्यास्त से पूर्व एक बार भोजन लेते हैं क्योंकि उनका मानना है कि अगर वे दोपहर में भोजन लेते हैं, तो उन्हें आराम करने का मन होगा और दोपहर में आराम करना, कल्पवास के दौरान प्रतिबंधित है। लगभग 80 प्रतिशत कल्पवासी अन्न में कच्चा भोजन (फलाहार) रखते हैं, जिसमें मूंगफली, मखाना, तिल के लड्डू (सोंठ के लड्डू), चाय और फल आदि को मानते हैं। पक्के भोजन को अन्न के रूप में माना जाता है जिसमें रोटी, सब्जी, दाल और चावल सम्मिलित हैं जिनको वे ग्रहण करते हैं। गैस ईंधन अधिकांश कल्पवासियों (95 प्रतिशत) के भोजन को पकाने का माध्यम है। बहुत कम कल्पवासी (5 प्रतिशत) हैं जो भोजन तैयार करने के लिए स्टोव या चूल्हा का उपयोग करते हैं। अधिकांश कल्पवासी भोजन तैयार करने के लिए स्टील के बर्तनों का उपयोग करते हैं, अति निम्न प्रतिशत उन कल्पवासियों का है जो अपने बर्तनों में स्टील के साथ-साथ एल्यूमीनियम, तांबे या मिट्टी के बर्तनों का उपयोग करते हैं। विशेष अवसरों पर (मुख्य स्नान त्योहारों पर जैसे कि मकर संक्रांति, बसंत पंचमी, एकादशी) पर अधिकांश कल्पवासी (97 प्रतिशत) कुछ विशेष भोज्य पदार्थों जैसे कि पूरी, कचौरी, खीर, सेवई, हलवा आदि का सेवन करते हैं।

कल्पवासियो का पहनावा : हिंदू शास्त्रों के अनुसार कल्पवासियों को शुद्ध, सिल्क तथा ऊनी कपड़े पहनने की सलाह दी जाती है तथा सफेद या पीले रंग के कपड़े पहनने को वरीयता दी जाती है। परंतु अध्ययन क्षेत्र में चयनित कल्पवासियों के पहनावे को देखकर ज्ञात होता है कि अधिकांश पुरुष कल्पवासियों (81 प्रतिशत) का विश्वास है कि कल्पवास के दौरान वे धोती कुर्ता या पैंट पहनते हैं और अपनी आयु और जलवायु के अनुरूप जींस और टी-शर्ट को कल्पवास में नहीं पहनते हैं। अधिकांश महिला कल्पवासियों (82 प्रतिशत) का मानना है कि कल्पवास के दौरान साड़ी पहना जाना चाहिए और उन्हें किसी अन्य प्रकार का परिधान नहीं पहनना चाहिए। उनमें से कुछ (19 प्रतिशत) को मैक्सी या गाउन पहने देखा गया था और उनका मानना है कि यह पोशाक उनके लिए आरामदायक है इसलिए वे इसे पहनती हैं। कुछ कल्पवासियों (11 प्रतिशत) की यह भी राय थी कि कल्पवास के दौरान पोशाक पहनने के संबंध में कोई प्रतिबंध नहीं है। कल्पवासियों में से अधिकांश लोगों का मानना है कि कल्पवासियों को कल्पवास के दौरान पीले, लाल या हल्के रंग की पोशाक पहननी चाहिए। लेकिन उनमें से कई (10 प्रतिशत) का मानना है कि कल्पवास के दौरान पोशाक के रंग के बारे में कोई प्रतिबंध नहीं है।

कल्पवास के संबंध में नियम और प्रतिबंध : जब तीर्थयात्री कल्पवास के लिए मेला क्षेत्र में आते हैं, तो वे एक महीने तक के लिए मेला क्षेत्र में फूस की झोपड़ियों के रूप में शिविरों में ठहरते हैं। उसके बाद वे तुलसी को भगवान शालिग्राम और जौ को समृद्धि के प्रतीक के रूप में अपने शिविर के सामने लगाते हैं और अपने कल्पवास के दौरान दैनिक आधार पर उनकी पूजा आराधना भी करते हैं। कुछ लोग अपने साथ पीपल और केले के पौधे भी लाते हैं और लगाते भी हैं। कुछ कल्पवासी अपने तीर्थपुरोहितों/पंडाओं के साथ उनके शिविरों में स्थान लेते हैं। जब कल्पवासी अपने कल्पवास की शुरुआत करते हैं, तो गंगा, यमुना या संगम में एक पवित्र स्नान करके सूर्योदय के समय दिन में कम से कम एक बार स्नान करके, सूर्य नमस्कार करते हैं और देवताओं की पूजा करते हैं। कल्पवासियों को एक दिन में एकल समय भोजन पर जीवित रहने के लिए अपेक्षा की जाती है। वे प्रतिदिन दान देते हैं और दान में विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ, जैसे गुड़, तिल, दाल, चावल, लड्डू आदि को जरूरतमंदों को दान के रूप में देते हैं और यह माना जाता है कि दान देने वाले को जीवन में अधिक समृद्धि मिलती है। कल्पवासियों से अपने कल्पवास की अवधि के दौरान किसी भी उपहार को ग्रहण न करने की अपेक्षा की जाती है। वे कल्पवास के दौरान सुपारी और तंबाकू जैसे नशीले पदार्थों का सेवन नहीं करते हैं, ये चीजे पूर्णतः वर्जित हैं। कल्पवास के समापन पर, कल्पवासी तुलसी और जौ के पौधे, जो उन्होंने अपने शिविर के सामने लगाए थे, उन्हे गंगा में प्रवाहित कर देते हैं अथवा कुछ लोग इसे अपने घर वापस भी ले जाते हैं। इसके बाद वे अपने सामान्य जीवन जीने के लिए अपने घरों की ओर प्रस्थान करते हैं। प्रस्थान करने से पहले, कल्पवासी अपने पंडा को भोजन सहित उपयुक्त प्रसाद देते हैं और उनका आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। उनमें से अधिकतर का मानना है कि कल्पवास 12 साल की अवधि तक करना चाहिए। 12 साल के कल्पवास को पूर्ण करने के बाद, वे 'शय्यादान' नामक एक अनुष्ठान करते

हैं, जिसमें वे बिस्तर,चारपाई, अनाज और कई जरूरत के समान पंडा जी को दान में देते हैं। हालांकि शैय्यादन के बाद, कल्पवासियों को अपने जीवन के बाकी हिस्सों को व्यतीत करने के लिए फर्श पर ही सोना पड़ता है और बिना किसी आराम के, अपने सन्यास आश्रम में रहना पड़ता है। जब उनका कल्पवास खत्म हो जाता है, तो वे बेसन के कढ़ी पकोड़े खाते हैं और उसके बाद गंगा में 'जौ' और तुलसी विसर्नित करते हैं और फिर वे अपने घर वापस चले जाते हैं। प्रयागवाले पंडा अपने कल्पवासियों की पूरी जिम्मेदारी उठाते हैं। उनके पास अपने कल्पवासी के नाम, पते और सभी सूचनाओं की पूरी वंशावली होती है। हर कल्पवासी का अपना पंडा या तीर्थपुरोहित होता है, जिससे वे कल्पवास करने के लिए संपर्क करते हैं। कल्पवास शुरू करने से पहले, वे अपनी दाढ़ी और मूंछों को बनवाते हैं और इसे अपने तीर्थपुरोहितों को दान करते हैं। इस अनुष्ठान को चौर के नाम से जाना जाता है।

कुछ कल्पवासियों का वैयक्तिक अध्ययन इस प्रकार है

माघ मेला के अरैल क्षेत्र में सेक्टर 6 में धर्मराज पांडा के शिविर में रहने वाली सरोज केसरवानी सोराव गांव की मूल निवासी हैं। वह अपने पति के साथ यहां कल्पवास करने आई हुई हैं। वह कल्पवास के दौरान स्वयं भोजन बनाती हैं, सात्विक भोज्य सामग्री ही लेती हैं, कल्पवास के दौरान भोजन में प्याज, लहसुन, अरहर की दाल, उड़द की दाल, गाजर, मूली, सरसों का तेल, बैंगन, मसूर की दाल आदि का सेवन नही करती हैं। वह स्नान करने अथवा कपड़े धोने के लिए साबुन या तेल का उपयोग नहीं करती है। वह दिन में केवल एक बार ही गंगा स्नान कर पाती हैं और जमीन पर पियरी (पीला शुद्ध कपड़ा) बिछाकर सोती हैं। शिविर के पास भजन, कीर्तन और धार्मिक प्रवचनों को सुनने के लिए हर दिन जाती हैं। वह कल्पवास के दौरान सरल और साधारण कपड़े ही पहनती हैं। वह 12 साल से कल्पवास करने के लिए यहां आती रही हैं। वह इस बार शय्यादान करेंगी। वह बताती है कि शैय्यादान में वे सभी वस्तुएं पंडा जी को दी जाती हैं जो कि एक मृतक के दाह संस्कार में दी जाती हैं। यह माना जाता है कि यह अगले जीवन में आनंद की प्राप्ति के लिए कल्पवास अवश्य किया जाना चाहिए।

हनुमानगंज के निवासी कृष्ण कुमार विश्वकर्मा, मेला क्षेत्र के सेक्टर 4 में फलाहारी बाबा के शिविर में ठहरे हुए हैं। वह प्रत्येक वर्ष कल्पवास करने के लिए लगभग 20 वर्षों से यहां आते रहे हैं। यहां आने का उनका उद्देश्य धार्मिक कार्य करना और दान करना है। वह सुबह ब्रह्म मुहूर्त में जल्दी उठते हैं। वह पूजा-पाठ और भंडारा (धार्मिक दावत) का संचालन भी करते हैं। वह स्नान के लिए या कपड़े साफ करने के लिए साबुन या डिटर्जेंट का उपयोग नही करते हैं। वह अपने कपड़े केवल पानी के माध्यम से साफ करते हैं। इनके पास अपने शिवर में शौचालय तथा साफ सफाई की सुविधा है और बिजली भी यहाँ उपलब्ध है। जब वह यहां आए, तो उसने अपनी झोपड़ी के सामने तुलसी और जौ का पौधा लगाया और अपने कल्पवास के दौरान दैनिक आधार पर उनकी पूजा भी करते हैं। वह कहते हैं कि अन्य लोग इनके साथ पीपल और केले के पौधे भी लगाते हैं। वह मानते हैं कि हालाँकि हमारे कुलदेवता लड्डू गोपाल जी हैं लेकिन कल्पवास के दौरान मैं गंगा मैया, विष्णु भगवान और शालिग्राम भगवान की भी पूजा करता हूँ। वह कल्पवास के दौरान सरल और सात्विक भोजन ही ग्रहण करते हैं एवं सरल और साधारण प्रकृति की पोशाक ही पहनते हैं। वह प्रतिदिन तीन बार संगम स्नान करते हैं। हर दिन जब वह सुबह पवित्र डुबकी लगाने के लिए संगम जाते हैं, तो वह जरूरतमंदों को दान के रूप में अनाज और तिल दान देते हैं। वह कहते है कि वह कल्पवास की अवधि के दौरान कोई भी उपहार स्वीकार नहीं करते हैं।

'पंडित इंद्रमणि पांडे' सेक्टर 2 में माताप्रसाद जी के पंडाल में ठहरे हुए हैं। इनका विश्वास है कि कल्पवास के दौरान, प्रतिदिन कथा, प्रवचन को सुनना चाहिए तथा संगम में पवित्र डुबकी अवश्य लेनी चाहिए। वह कल्पवास के दौरान नशीले पदार्थों और किसी भी अन्य तामस सामग्री को ग्रहण नही करते हैं, क्योंकि इनका मानना है कि इसे सात्विक भोजन में नहीं गिना जाता है तथा इस दौरान इनका उपयोग पूरी तरह से वर्जित है। उन्होंने कहा 'खाना पकाने के लिए मैं सरसों का तेल प्रयोग नही करता हूँ, केवल देशी घी या मूंगफली के तेल का ही उपयोग करता हूँ, क्योंकि सरसों के तेल को तामस सामग्री में गिना जाता है'। वह दिन में केवल एक बार भोजन लेते है और इसके अलावा वे चाय या फल का सेवन कर लेते है क्योंकि ये चीजे अन्न में नहीं गिनी जाती हैं। उनका मानना है कि कल्पवास पौष पूर्णिमा से प्रारंभ होकर माघी पूर्णिमा तक समाप्त होता है।

निष्कर्ष 'पवित्रता' की अवधारणा बहुत आवश्यक है और वास्तव में हिंदू धर्म के लिए केंद्रीय है। लोग अक्सर अपने पापों का नाश करने तथा स्वयं को स्वच्छ करके पवित्रता प्राप्त करने के लिए तीर्थयात्रा करते हैं। विभिन्न अनुष्ठान जैसे कि स्नान, दान, यज्ञ आदि पापों का नाश करने के लिए ही प्रायोजित हैं। कल्पवास के दौरान ये अनुष्ठान एक विशेष अर्थ लें लेते हैं क्योंकि यह पवित्र समय के दौरान पवित्र स्थान पर आयोजित होते हैं। पवित्रता वह पहलू है जो एक स्थान अथवा विशेषता को अन्य स्थानों अथवा विशेषताओं से पृथक करने का कार्य करता है और यह अन्यथा समरूप स्थान में यह एक विराम है। प्रयाग में तीनों नदियों का संगम शानदार दिखता है और यह विश्वास कि इस स्थान पर अमृत की बूंदे गिरी, ये एक अलग रहस्य और विस्मय पैदा करता है, क्योंकि यह एक अदृश्य दिव्य स्रोत सा प्रतीत होता है। इसलिए धार्मिक व्यक्ति इस पवित्रता का हिस्सा बनना चाहता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कल्पवास के दौरान, माघ मास (पवित्र समय) के दौरान संगम की धरती में रहकर कल्पवासियों द्वारा उनकी दिव्य उपस्थिति दर्ज की जाती है और पौराणिक समय की पुनर्स्थापना करने का प्रयास भी किया जाता है। यह इस पवित्र स्थान पर पवित्र समय की पुनर्स्थापना में एक कल्पवासी के द्वारा किए गए अनुष्ठान उनके व्यवहार को अन्य के व्यवहार से पृथक करता है। यहां यह समझना आवश्यक है कि यह 'मूल समय' या त्योहार का समय एक पवित्र समय माना जाता है जिसके दौरान इस स्नान का महत्व है। इसलिए एक तीर्थस्थान अंततः एक सांस्कृतिक परिदृश्य को निर्मित करता है। ये एक सांस्कृतिक विरासत है जो मनुष्य और पवित्रता के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध की अनुमति देता है। सांस्कृतिक परिदृश्य सांस्कृतिक गुण हैं जो प्रकृति और मनुष्य के संयुक्त कार्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं। समय समय पर मानव और प्रकृति के बीच अंतरक्रिया एक सांस्कृतिक परिदृश्य को निर्मित करती है। कल्पवासियों ने कल्पवास की परंपरा का अनवरत निर्वहन करके तथा अभ्यास करके प्रयाग के सांस्कृतिक परिदृश्य को निर्मित किया है। देवेश चतुर्वेदी[17] ने अपनी पुस्तक 'द होली डिप' में 'कल्पवासियों' को 'कुंभ की आत्मा' माना है। उन्होंने संगम के तट पर लोगों (कल्पवासियों) द्वारा किए गए धार्मिक विश्वासों और अनुष्ठानों का वर्णन किया। यहाँ कल्पवासियों में उनके अनुसार 'कम्युनिटास' की भावना प्रयाग में माघ मेला के सांस्कृतिक परिदृश्य को बनाने में योगदान दिया है। कामा मैकलीन ने अपने लेख 'तीर्थयात्रा और शक्ति' में हिंदू तीर्थयात्रा के साथ-साथ 'कम्युनिटास' की प्रकृति को भी इंगित किया है। उनके अनुसार कम्यूनिटस से तात्पर्य, साथ साथ रहने की आनंदपूर्ण भावना से है जो उन्हे उत्तरदायी,सहज और हर्षित होने वाली सामान्यता को संदर्भित करता है। इसमें उन्होंने 1765– 1954 के बीच इलाहाबाद में आयोजित होने वाले माघ मेले के वार्षिक धार्मिक त्योहार का संक्षिप्त विवरण प्रदान किया है।[18]

सन्दर्भ

1. Bhardwaj, S.M. 'Hindu places of pilgrimage in India'. University of California Press. London.1973, pp. 124-139
2. Jacobson, Knut .A. 'Pilgrimage in Hindu tradition'. Routledge.London.2013, pp. 157-158
3. Dubey, D.P . 'Prayag : the site of kumbh mela' .New Delhi :Aryan books International. 2001, pp. 12-28
4. Vidyarthi, L.P. . Scared complex of Hindu. Gaya Bombay:Asia. 1961, pp. 29-86
5. Choudhary, Paras, 'Sociology of Pilgrims', Kalpaz Publications, New Delhi, 2006, pp. 49-55
6. Madan, T.N. 'India's Religions; Perspectives from Sociology And History', Oxford University Press, 2004 pp. 62-79
7. Elsnor, John and Coleman Semon, 'Pilgrimage : Past and Present in the World Religions', Harward University Press, 1995, pp. 136-166.
8. Dubay, D.P., op.cit., p. 74
9. Narain , BadriAnd Kedar Narain . 'Kumbh melaAnd the Sadhus : The quest for immortality'. Pilgrims Publishing. Varanasi. 2010, pp. 91-106.
10. Durkheim , Emile . 'The Elementary forms of religious life', London, Geography, Allen And Unwin,1915,pp. 252-395.
11. Bhardwaj S.M., op.cit., p. 149.
12. Shankar,S., Stevenson, C, Pandey, K., Tewari,S., Hopkins, N., And Reicher, S.D. Cold comfort At Magh Mela : Social identity processAnd physical hardship. British Journal of Social Psychology, 53. 2014, pp. 675-690.
13. Berger, P.L., & Luckman,T. The Social Construction of Reality. Penguin books. 1991, pp. 49-183.
14. Pandey, K. and et. al, 'Cold Comfort al-Magh mela : Social Identity Process and Physical Hardship', British Journal of Social Psychology 59, 2014, pp. 686-688.
15. Berger P.L. and Luckman T., op.cit., pp. 189-247.
16. Madan, T. N. (Ed) . 'Religion in India '. Oxford University press, New Delhi. 1991, pp. 156-172
17. Chaturvedi, Dr. Devesh . 'The Holy Dip' Studium Press, New Delhi. 2016, p. 83
18. MacLean , Kama . 'Pilgrimage And Power'. New York. Oxford University Press. 2008, pp. 2-16

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

कश्मीर की राजनीति में लवन्य समुदायः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

❑ डॉ. बनीता रानी

मुख्य शब्द – लवन्य, राजतरंगिणी, नृप-निर्माता, शाहमीर, मतांतरण, लोन।

ग्यारहवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तक कश्मीर की राजनीति को कई समुदायों द्वारा प्रभावित किया गया जैसे कि दरद, भौट्ट, चांडाल, डामर इत्यादि। ऐसे ही समुदायों में से एक अन्य प्रमुख समुदाय रहा- लवन्य समुदाय जिसका वर्णन कल्हण द्वारा उनकी कृति राजतरंगिणी में प्रथम लोहर वंश के राजा हर्ष (1096-1101ई.) के शासन काल के अन्तर्गत किया गया है। कश्मीर के इस समुदाय की प्रारम्भिक जानकारी का स्रोत कल्हण कृत राजतरंगिणी ही है। इस समुदाय की महत्ता यह है कि इसने कश्मीर की राजनीति में बढ़-चढ़ कर भाग लिया और साथ ही नृप-निर्माता (किंग मेकर) जैसी महत्वपूर्ण भूमिका को निभाया। इनकी प्रभावशाली स्थिति का प्रमाण तो यहीं से लग जाता है कि जब कश्मीर में विदेशी रिंचन और शाहमीर ने अपना राज्य स्थापित किया तो उन्होंने सर्वप्रथम इसी समुदाय को विभिन्न माध्यमों से दबाया। इनके दमन के बाद ही कश्मीर में मुस्लिम राज्य की स्थापना शाहमीर द्वारा की गई। तद्पश्चात मतांतरण की प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप लवन्य समुदाय में भी परिवर्तन हुआ। अतः वर्तमान समय में कश्मीर में लोन समुदाय देखने को मिलता है जो कि प्राचीन लवन्य समुदाय है। प्रस्तुत शोध पत्र में कश्मीर की राजनीति में लवन्यों द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका को वर्णित करने का प्रयास किया गया है।

प्राचीन काल से पूर्व मध्यकाल तक अनेक समुदायों का कश्मीर में महत्त्व रहा है जोकि उसके बाद भी जारी रहा है। इन समुदायों में प्रमुखतः हैं ब्राह्मण, डोम्ब, चांडाल, कायस्थ, प्रतिहार, राजानक, भौट्ट, डामर, तंत्री, एकांगा और दरद इत्यादि। इन्हीं समुदायों की तरह एक अन्य प्रमुख समुदाय लवन्य भी रहा है जिसका वर्णन कल्हण कृत राजतरंगिणी जो कि भारत की प्रथम ऐतिहासिक कृति का स्थान प्राप्त किए हुए है, की तरंग सात और आठ में कश्मीर की राजनीति को विभिन्न माध्यमों से प्रभावित करते हुए अनेक उद्धरणों में उद्धृत है। तद्पश्चात कल्हण के शिष्य जोनराज ने भी अपनी कृति अर्थात् द्वितीय राजतरंगिणी में इनका नृप-निर्माता के रूप में स्पष्ट उल्लेख किया है। इन कृतियों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लवन्य समुदाय राजाओं की शक्तिहीनता का लाभ उठाकर स्वयं को समृद्ध बनाता था। हालांकि कई बार ये लोग राज पक्ष की सहायता भी करते थे। जिसका एक उदाहरण वह है जब कोटा रानी के पति राजा उदयनदेव (1323-1339 ई.) की मृत्यु हुई तब इन्हीं लवन्यों ने कोटा रानी के पक्ष में सहायता प्रदान की थी।[1] इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं लगाया जाना चाहिए कि कोटा रानी से पहले इन्होंने राजपक्ष में कभी सहायता प्रदान नहीं की। क्योंकि कल्हणकृत राजतरंगिणी में अनेक ऐसे दृष्टांत वर्णित मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि कई लवन्य जहाँ कश्मीर के राजा के लिए राज्य में उपद्रव का माहौल खड़ा करते हैं वहीं कई लवन्य राजा के सैनिकों के रूप में भी अपनी भूमिका निभा रहे होते हैं। लवन्यों के संदर्भ में एक बात और महत्त्वपूर्ण है कि इन्होंने कश्मीर में द्वैराज्य की स्थिति का लाभ समय-समय पर उठाया। कश्मीर में स्थापित द्वैराज्य से अभिप्राय कश्मीर की राजधानी में स्थापित राज्य और लोहर प्रांत (वर्तमान लार परगना) में स्थापित राज्य से है तथा इन्हीं दोनों राज्यों के लिए विभिन्न राजाओं के मध्य चले संघर्षों में लवन्यों के विभिन्न कार्यों व नीतियों का उल्लेख मिलता है। अध्ययन विश्लेषण से पता चलता है कि लवन्य समुदाय कश्मीर में लगभग पाँच शताब्दियों तक महत्त्वपूर्ण भूमिका में रहे। तद्पश्चात उनके स्वरूप में परिवर्तन आया जिस कारण श्रीवर अपनी राजतरंगिणी में उनका उल्लेख मात्र एक श्लोक में ही करता है।

शोध के उद्देश्य

1. कश्मीर के लवन्य समुदाय के उद्भव को वर्णित करना।
2. कश्मीर की राजनीति में लवन्यों के योगदान को प्रकाश में लाना।
3. लवन्यों द्वारा नृप-निर्माता के रूप में निभाई भूमिका को उजागर करना

❑ प्रवक्ता इतिहास, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक पाठशाला, बलग, जिला शिमला (हिमाचल प्रदेश)

4. लवन्यों के वर्तमान स्वरूप पर प्रकाश डालना।

साहित्य समीक्षा : कल्हण कृत राजतरंगिणी नामक संस्कृत में उल्लेखित ग्रंथ में कश्मीर के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है। राजतरंगिणी कल्हण नामक विद्वान द्वारा रचित भारत की प्रथम ऐतिहासिक रचना है। इसमें कश्मीर में विभिन्न समुदायों जैसे कि खश, तंत्री व एकांगु, डामर, दरद आदि के साथ-साथ लवन्य समुदाय के उद्भव के बारे में पता चलता है। इसी कृति की तरंग सात तथा आठ में लवन्यों के द्वारा कश्मीर की राजनीति में निभाए गए योगदान का वर्णन मिलता है। यह रचना कश्मीर में लवन्य समुदाय संबंधित जानकारी प्राप्त करने का एक प्राथमिक स्रोत है। इस कृति का मूल संस्कृत पाण्डुलिपियों से अनुवाद कई विद्वानों द्वारा किया गया है। भाषा की जटिलता को समझते हुए उनमें से कई विद्वानों के द्वारा किए गए अनुवादों को इस शोध पत्र के लिए उपयोग में लाया गया है।

जोनराजकृत राजतरंगिणी नामक ग्रंथ भी मूल रूप में संस्कृत में रचित है। इस कृति को जोनराज ने जयसिंह (1128-1155ई.) के राज्यकाल से शुरू करके जैनुलआबदीन के शासन काल तक प्रवाहित किया है। इसमें लवन्यों के बारे में पता चलता है कि शाहमीर ने उनके प्रति साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति (अर्थात् जो समयानुसार उचित लगी) को अपना कर अपनी दूर-दृष्टि के साथ उनका दमन करके अपने शासन के लिए होने वाले विरोध की संभावना को पहले ही समाप्त कर दिया। इस पुस्तक के जिन अनुवादों को शोध पत्र के लिए उपयोग में लाया गया है वे हैं- श्रीकण्ठ कौल द्वारा 1967 में अनुवादित जोनराजकृता राजतरंगिणी, रघुनाथ सिंह द्वारा अनुवादित व 1972 में प्रकाशित पुस्तक जोनराजकृत राजतरंगिणी।

History of Kashmir मूल रूप से हैदर मालिक चदुरा द्वारा लवन्य समुदाय को 'लोन' रूप में वर्णित किया गया। राजा जस्सक के समय जहाँ जोनराज लवन्यों को नृप-निर्माता के रूप में दर्शाता है वहीं हैदर मालिक चदुरा ने उन्हें लोन रूप में वर्णित किया है। इस कृति का अनुवाद 1991 में रजिया बानो के द्वारा अंग्रेजी भाषा में किया गया है।

The Tabaqat-i-Akbari of Khwaja Nizamuddin Ahmad ब्रेजेन्द्रनाथ डे और बैनी प्रसाद द्वारा अंग्रेजी भाषा में किया गया परशियन कृति का अनुवाद है। इसमें कश्मीर के शासक सुल्तान शमसुद्दीन से लेकर सुल्तान यूसुफ शाह तक के शासनकाल को वर्णित किया गया है। इसमें लवन्यों का वर्णन लूनी (Luni) जनजाति के नाम से किया है।

Culture And Political History of Kashmir नामक कृति पी. एन. के. बमजाई द्वारा तीन खण्डों में संकलित है। इस कृति का प्रत्येक खण्ड एक विशेष काल (प्राचीन काल, मध्य काल और आधुनिक काल) के कश्मीर की जानकारी हमारे समक्ष रखता है। इसके प्रथम खण्ड में लवन्य, डामर व अन्य समुदायों से संबन्धित जानकारी मिलती है। इसमें लवन्यों को सैनिक जाति व वर्ग के रूप में वर्णित किया है तथा बताया गया है कि वर्तमान समय में कश्मीर में उपस्थित लोन क्राम ही प्राचीन लवन्य है जो कि कश्मीर की ग्रामीण जनसंख्या का जनजातीय भाग था।

शोध प्रविधि

1. प्रस्तुत शोध पत्र ऐतिहासिक उपागम पर आधारित है जिसमें विषय सम्बन्धित एकत्रित किए गए तथ्यों और स्त्रोतों का विश्लेषण करके शोध उद्देश्यों को प्रमाणित करने का प्रयास किया गया है।
2. शोध के लिए प्राथमिक, द्वितीयक अर्थात् मिश्रित स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के अंतर्गत प्राथमिक स्त्रोतों में वे विवरण सम्मिलित किए गये हैं जो कि उस विशेष समय के इतिहासकारों व विद्वानों द्वारा लिखे गए हैं। जबकि द्वितीयक स्त्रोतों में बाद के लेखकों व इतिहासकारों द्वारा लिखी पुस्तकों को सम्मिलित हैं।

लवन्य समुदाय का कश्मीर में उद्भव- महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि लवन्य कौन थे? कश्मीर के राजा हर्ष (1096-1101ई.) के शासन काल में इस समुदाय का वर्णन कल्हण द्वारा किया गया है। वह लवन्यों के एक प्रसंग को उल्लेखित करते हुए लिखता है कि वे 'लोहर प्रांत के निवासी' थे।[2] पी.एन.के. बमजाई के अनुसार तंत्री, एकांगा और लवन्य प्राचीन कश्मीर की लड़ाकू जातियां हैं।[3] एक अन्य मतानुसार लवन्य, तंत्री तथा एकांगों की तरह ही एक जनजातीय समूह था जो पेशे से सिपाही प्रतीत होते हैं जो कि बाद में ऐसे दुर्जेय समूहों के रूप में जाने गए जो वास्तव में नृप-निर्माता (King-Maker) की भूमिका निभाते थे।[4] वहीं एम. एल. कपूर लवन्यों को हठी लोगों का एक ऐसा वर्ग बताते हैं जो

कि शांति को भंग कर देते थे।[5] शिवदान सिंह ने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा है कि 'कल्हण ने कश्मीर की जनता के विभिन्न कबीलों का जिक्र किया है, परंतु ऐसा कोई साधन नहीं है, जिससे यह निर्णय किया जा सके कि यह भेद जातिगत था और वर्ण या कर्मभेद पर आधारित नहीं था। कल्हण ने 'लवण्यस' और 'तंत्रिन' आदि क्रामों का जिक्र किया है। यह दोनों क्राम आजकल गांव के मुसलमानों में 'लोन' और 'तांत्रे' नाम से मिलते है'।[6]

ध्यानाकर्षणीय है कि तंत्रियों व पदातियों के वर्ग का उद्धभव राजा शंकरवर्मा (883-902ई.) की पत्नी सुगंधा देवी (904-905ई.) के समय देखने को मिलता है जिसने इन्हीं के सहयोग से दो वर्ष तक शासन किया। तत्पश्चात वह राजा-निर्माता के पद को प्राप्त कर गए। इन्हीं की तरह एकांगा जिन्हें कि ट्रायर ने 'राजकीय अंगरक्षक' बताया है, वे भी प्रभावशाली स्थिति को समय के साथ पा गए। तंत्री और एकांगों ने कई राजाओं को कश्मीर के सिंहासन पर बैठाया व उतारा। इन्हीं वर्गों की तरह लवन्य (कहीं-कहीं लावन्य भी वर्णित) समुदाय का उद्धभव 11वीं शताब्दी के अंत तथा 12वीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ था। यह समुदाय ग्रामीण जनसंख्या के जनजातीय भाग से संबंधित प्रतीत होता है जिनकी वर्तमान समय में पहचान 'लोन' क्राम से की जाती है।[7] लारेन्स[8] को उद्धरित करके परवेज दीवान लिखते हैं कि यह एक वैश्य उत्पत्ति से संबंधित कबीला एवं समुदाय था। इस समुदाय से संबंधित लोगों का मानना है कि वे कश्मीर में 'चिलास' क्षेत्र से आकर बसे हैं लेकिन इसके पीछे कोई तर्क नहीं दिया गया है। स्तीन लिखता है कि लोन कश्मीर की ग्रामीण जनसंख्या का एक महत्त्वपूर्ण भाग था। परवेज दीवान लोन समुदाय को भू-स्वामी और कृषक बताता है साथ ही उन्हें वह अच्छे योद्धा के रूप में भी वर्णित करता है।[9]

पी. एन. के. बमजाई लिखते हैं कि 'लोन' उपाधि कश्मीर के अन्य क्रामों की तरह ही सिर्फ एक नाम है जिनका अन्य कृषक वर्ग की परम्पराओं व पेशों से कोई अंतर नहीं रहा है। प्राप्त स्रोतों से लवन्यों की उत्पत्ति का स्पष्ट ज्ञान नहीं होता, लेकिन विभिन्न तथ्यों से प्रतीत होता है कि उनमें से कई लवन्य जमींदार एवं भू-स्वामी तथा जनजातीय प्रमुख जैसी प्रभावशाली स्थिति को प्राप्त किए हुए थे।[10] एक मत के अनुसार लवन्य शब्द की उत्पत्ति 'लवन' शब्द से हुई है जिसका अर्थ कटाई या लुनाई से लगाया जाता है जो यह दर्शाता है कि लवन्य वह समुदाय था जो पेशे से लुनाई अर्थात् कटाई और कृषि में संलग्न था। एक प्रश्न यह भी उठता है कि लवन्य प्रायः कहाँ के मूल निवासी थे? हालांकि कल्हणकृत राजतरंगिणी में दरद, खश, भौट्ट जैसे कई समुदायों के बारे प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में संकेत मिलते हैं कि वे कश्मीर में बाहर से आए थे। परंतु लवन्यों के विषय में ऐसी कोई जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है। इस प्रश्न पर कुछ द्वितीयक स्रोतों से जानकारी मिलती हैः- भक्त प्रसाद मजूमदार के शब्दों में- ऐसा प्रतीत होता है कि 'लवन्य' लवन पर्वत से आए थे, जोकि कश्मीर के निकट स्थित है।[11] लेकिन लवन्यों की उत्पत्ति के विषय को सुनील चन्द्र राय प्रश्न रूप में ही छोड़ देते है कि क्या लवन्य लवन पर्वत जो कश्मीर के नजदीक स्थित है से आकर कश्मीर में बसे थे?[12] वहीं जी.एम. धर इस विषय पर विचार व्यक्त करते हैं कि 'लवन्य कश्मीर की ग्रामीण जनसंख्या से संबंधित वर्ग था, जो अपनी आर्थिक एवं वित्तीय लाभों की रक्षा के लिए हथियार उठाते थे। यह नाम आज भी 'लोन'[13] क्राम से कश्मीरी समाज में बना हुआ है। साहित्यिक स्रोतों से पता चलता है उनमें से कई भू-सामंतों (स्वामी) और जनजातीय प्रमुख जैसी प्रभावशाली पद को ग्रहण किए हुए थे।[14] इसके अतिरिक्त वे नृप-निर्माता की भूमिका को भी प्राप्त किए हुए थे।[15] वर्तमान समय में कश्मीरी लोन समुदाय अधिकतर अपना प्राचीन पेशा कृषि व पशुपालन ही बताते हैं।

रघुनाथ सिंह ने भी कुछ ऐसे ही मत को रखा है। उनके अनुसार ग्यारहवीं शताब्दी में लवन्य ग्रामीण थे, कृषक थे। फिर धीरे-धीरे प्रबल हुए। तद्पश्चात तंत्रियों के समान उनका नाम 'लुन' अब तक ग्रामों में प्रचलित है। 'लुन' (लोन) शब्द 'लवन्य' का अपभ्रंश है। राजतरंगिणी के आधार पर वे लिखते हैं कि लवन्य ग्रामीण क्षेत्र व समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे। वे भूमि के स्वामी थे। उनका एक समाज बन चुका था। आगे वे वर्णन करते हैं कि मड़वराज्य (वर्तमान में मराज) में हुए उनके दमन से पता चलता है कि वास्तव में वे डामर थे।[16] यह भी एक विवादास्पद विषय है कि लवन्य डामर एक ही वर्ग था या दो विभिन्न वर्ग थे। विचाराधीन बात यह है कि कल्हण अनेक श्लोकों में लवन्य समुदाय का वर्णन डामरों के साथ, तो वहीं कई श्लोकों में डामरों के स्थान

पर और डामर शब्द का प्रयोग लवन्यों के स्थान पर करता है। फलस्वरूप अनेक इतिहासकार व विद्वान यह मानते हैं कि लवन्य और डामर कोई दो समुदाय नही बल्कि एक ही समुदाय का नाम है। यही कारण है कि इस विषय पर विस्तार से चर्चा करना अवश्यंभावी हो जाता है।

लवन्य डामर– कल्हण के एक प्रसंगानुसार राजा हर्ष ने डामरों को उभरते देखकर अपने प्रांत मंडलेश्वर आनन्द को उन्हें समाप्त कर देने का आदेश दिया। उसी आदेश के अनुसार प्रांत मंडलेश्वर ने सर्वप्रथम होलड़ा (वर्तमान बेलूर परगना) प्रांत, जो मडवराज्य के अंतर्गत स्थित था, के बहुत-से डामरों को घोंसले में रहने वाले पक्षियों के समान अपनी-अपनी जगह रोक कर सामूहिक रूप से मरवा डाला। इसी प्रसंग में कल्हण आगे लिखता है कि जिस समय वह लवन्य डामरों (रामतेज शास्त्री के अनुवाद के अनुसार लवन्य जाति के डामर) का संहार कर रहा था उस समय यदि कोई ब्राह्मण भी ऊपर की ओर उठाकर केश बांधे तथा विकट वेशधारी अवस्था में दिखता तो वह भी मार डाला जाता था। इसके अतिरिक्त न जाने कितने ही निरपराध पथिक भी 'लवन्य डामर' समझ कर मार डाले गए। इन सब में महिलाओं तक को भी नहीं छोड़ा गया। जिसका एक उदाहरण कल्हण प्रस्तुत करते हुए कहता है कि उस दौरान हुए लवन्यों डामरों के दमन में लवन्य जाति की एक क्रूर स्त्री को बड़ी निर्दयता के साथ सूली पर चढ़ाया था। फलस्वरूप सभी लवन्य मंडलेश्वर आनन्द से भयभीत होकर इधर-उधर भाग खड़े हुए। जिनमें से कुछ लवन्य म्लेच्छ राज्य में जाकर गोमांस खाने लगे, कुछ रहट खींचने लगे और कुछ चक्की पीसने लगे। वहीं उस आनन्द नामक मंडलेश्वर ने राजा हर्ष के पास उपहारस्वरूप बहुत से लवन्यों के मुंडों (सिरों) को भेजा। परिणाम यह हुआ कि राजद्वार के चारों ओर घण्टों की भांति डामरों की खोपड़ियों को गूँथ कर बनाई गई तोरणवलियाँ लटकी दिखाई देती थीं। उस समय जो भी व्यक्ति किसी डामर का सिर काट कर लाता था, उसे पारितोषिक के रूप में देने के लिए सोने के कंकण तथा रेशमी वस्त्र आदि राजमहल के द्वार पर लटका दिये जाते थे। डामरों की खोपड़ियों का मांस खाने के लिए लालायित गिद्ध-कौए आदि पक्षी उन नरमुण्ड के तोरणों पर मँडराते हुए रात-दिन राजद्वार पर निवास करने लगे। उस समय यह परिपाटी-सी बन गई थी कि राज्य में भ्रमण करते समय राजा हर्षदेव जहाँ भी जाता था, वहाँ के नागरिक उसके स्वागत में लवन्यों की खोपड़ियों की माला अपने-अपने द्वार पर लटकाते थे'।[17] अतः कल्हण कृत राजतरंगिणी की तरंग के श्लोक सं. 1227 से 1237 के अंतर्गत प्रस्तुत इस प्रसंग में कल्हण लवन्य समुदाय और डामर समुदाय का वर्णन एक दूसरे के स्थान पर करता है। जिससे यह प्रतीत होता है कि लवन्य और डामर एक दूसरे के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं तो कभी यह भी प्रतीत होता है कि डामर एक प्रभावशाली स्थिति थी जिसको अनेक लवन्यों ने प्राप्त किया। डामर शब्द कल्हण कृत राजतरंगिणी में साधारणतः उपयोग में लाया गया जिन्होंने कश्मीर के इतिहास में प्रमुखतः प्रथम और द्वितीय लोहर वंश के काल में विशेष भूमिका निभाई थी। लेकिन यह ज्ञात नहीं होता कि डामर का वास्तविक अर्थ क्या है? वहीं अधिकतर संभावित अर्थ अशान्त, विद्रोही जनजाति से संबंधित हैं। साथ ही इसका अर्थ भू-सामन्त के लिए उपयोगिता है। आगे यह भी लिखा मिलता है कि डामर (लवन्य) यद्यपि सामन्तीय शाखा से संबंध रखते थे लेकिन उनका अस्तित्व अलग रूप में कल्हण द्वारा राजतरंगिणी में वर्णित है। जहाँ सामन्त हितकारी समझे गए, वहीं डामर अपनी गतिविधियों के कारण तिरस्कृत हुए।[18]

लवन्यों की राजनीति में निरंतरता– इसके अतिरिक्त श्लोक 1227 से 1237 के वर्णन से ज्ञात होता है कि राजा हर्ष तथा उसके समर्थकों के अत्याचारों से प्रभावित होकर अनेक लवन्य कश्मीर के बाहरी क्षेत्रों में चले गए। जहां उन्होंने अपने कई रहन-सहन के तरीकों में बदलाव किया। इन लवन्यों में से कई लवन्य तब कश्मीर वापिस लौटे, जब कश्मीर के सिंहासन के दूसरे दावेदार उच्चल (राजा हर्ष की वंश परंपरा से संबंधित व्यक्ति, उच्चल राजा जयसिंह के पिता सुस्सल का भाई था) ने एक बार कश्मीर से निर्वासन के बाद दोबारा प्रवेश किया। इसके पश्चात् कश्मीर में वह क्रम चला जिससे लवन्य या तो राजाओं के साथ या फिर राजपक्ष के दावेदारों के साथ निरन्तर दिखाई देने लगे। ध्यातव्य है कि लवन्य लूट-पाट भी करते थे अर्थात् जब अवसर मिलता, जहाँ अवसर मिलता, लवन्य लूट-पाट कर लेते। इसीलिए कल्हण ने इन्हें अनेक स्थानों पर लुटेरे, उपद्रवी व विद्रोही कह कर पुकारा है।

डामरों के संदर्भ में एक समय पर राजा ललितादित्य मुक्तापीड़ (8वीं शताब्दी) ने अपने मंत्रियों को संबोधित करते हुए कहा था-उसकी अनुपस्थिति के समय राज्य का कार्य संचालित करने के लिए वह उन लोगों को अपने कुछ प्रमुख सिद्धान्त बताता है। राजा ललितादित्य के द्वारा बताए गए सिद्धांतों में से ही एक में वे कहते हैं कि किसानों के पास केवल सालभर भोजन करने के लिए अन्न तथा खेती के लिए जितने आवश्यक हों, उतने ही बैल रहने चाहिए। इससे अधिक होने पर वे प्रबल क्रूर डामर, हठी तथा दुखदायी हो जाएँगे और राजाज्ञा की अवहेलना करने लगेंगे।[19] इन पंक्तियों से यह स्पष्ट हो रहा है कि डामर एक पद था जिसे कोई भी किसान या यूं कहें साधारण व्यक्ति अपनी आवश्यकता से अधिक अन्न और धन इकट्ठा करके प्राप्त कर सकता था। इकट्ठा किए गए अन्न तथा धन को आवश्यकता के समय दूसरों को देकर वे और भी मजबूत स्थिति को प्राप्त करते थे। जिस प्रकार एक साहूकार जरूरत पड़ने पर पैसे देकर इच्छानुसार ब्याज प्राप्त करके धनी बनता था। उसी प्रकार कोई भी व्यक्ति एकत्रित किए गए अन्न व धन से डामर की स्थिति को प्राप्त कर जाता था। कल्हण डामरों के विषय में लिखता है कि डामर राजधानी के बाहरी क्षेत्रों से थे जो शस्त्र धारण करते थे। वे अपनी सम्पत्ति को छुपाने के लिए कई प्रकार के साधनों को अपनाते थे। इसका एक उदाहरण जय्यक नामक डामर है जिसने अपनी सम्पत्ति (दीनारें) को मिट्टी खोद कर भूमि में भर दिया और उसके ऊपर चावल बीज दिए।[20] वहीं एक और तथ्य यह है कि यदि लवन्य और डामर एक ही थे तो कल्हण लवन्यों का उल्लेख राजा हर्ष के काल से पहले क्यों कभी नहीं करता? जबकि डामरों का उल्लेख वह राजा हर्ष के काल से लगभग दो शताब्दी पूर्व करता है। ध्यातव्य है कि लवन्य समुदाय को लेकर राजा हर्ष से पहले किसी प्रकार का कोई संकेत देखने को नहीं मिलता है।

प्रत्यक्ष नृप-निर्माता के रूप में लवन्य- हालांकि कल्हण जयसिंह के शासन काल तक कई बार ऐसे उद्धरण प्रस्तुत करता है जिनमें लवन्य राजा को बनाने और सिंहासन से उतारने जैसे कार्यों में संलग्न रहे हैं। किन्तु लवन्यों का राजा-निर्माता के रूप में भूमिका निभाने का प्रत्यक्ष प्रमाण जोनराज अपनी कृति राजतरंगिणी के श्लोक 56 में देता है, जिसे उद्धरित करते हुए वह लिखता है कि लवन्यों ने स्ववृद्धि की कामना से राजा जस्सक का अपने कार्यसाधन हेतु अभिषेक किया था। तद्पश्चात राजदेव (1213-1236ई.) के भी लवन्यों से महत्त्वपूर्ण संबंध स्थापित होने का वर्णन जोनराज ने करते हुए कहा है कि राजा राजदेव ने लवन्यों के प्रधानों को कृषि उपयोगी भूमि पर निवासित कर उन पर राजकीय बेगार (रूढ़ या रूढ़ि) लगाया तथा उन्हें विभिन्न कार्यभार सौंपे। अर्थात् राजा को जब भी युद्ध इत्यादि के लिए सैनिकों की आवश्यकता होगी तब यह लवन्य राजा को अपनी सैनिक शक्ति उपलब्ध करवाएँगे। इसी के बदले में राजा ने उन्हें कृषि योग्य भूमि उपलब्ध करवाई। युद्ध न होने की स्थिति में वे लोग अपना तथा अपने परिवार का पालन-पोषण उस भूमि पर कृषि करके प्राप्त हुई आय से कर सके। अतः यह लवन्यों की ओर से राजा को प्राप्त होने वाली सहायता का एक रूप था।[21] अतः इससे लवन्य पहले से भी अधिक प्रभावशाली हो गए। तद्पश्चात लवन्यों ने अन्य कई राजाओं के सिंहासन प्राप्ति में तथा उनकी सुदृढ़ता में अपना योगदान दिया।

राजा सुहदेव (1301-1320ई.) के काल में विदेशी रिंचन (मान्य मतानुसार लद्दाखी) अपनी प्राण-रक्षा हेतु अपने भाई-बंधुओं व रिशतेदारों सहित कश्मीर जोजिला मार्ग से आया था। उसी दौरान कश्मीर में दुलचा नामक एक आक्रमणकारी ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया जिससे भयभीत होकर कश्मीर का राजा सुहदेव राज्य छोड़ कर भाग गया। इस स्थिति का लाभ उठाकर रिंचन ने कश्मीर के लहर (लोहर) प्रांत में अपनी शक्ति संग्रह का कार्य किया तद्पश्चात उसने राज्य के प्रमुख सेनापति रामचन्द्र की हत्या करके उसकी बेटी कोटा रानी से शादी कर ली और कश्मीर के सिंहासन पर जा बैठा। तदुपरान्त उसने सर्वप्रथम लवन्यों की शक्ति तोड़ दी, क्योंकि राजा सुहदेव के पश्चात लवन्य ही उसके लिए दूसरा बड़ा खतरा थे, जोकि दुलचा के आक्रमण के दौरान घाटी में और भी प्रभावशाली हो गए थे।[22] जोनराज अपनी कृति के श्लोक संख्या 177 में लिखता है कि लवन्य पहले रिंचन के भय से तद्पश्चात उसकी भेदनीति के कारण बिखर गए। उनकी वहीं अवस्था हुई जोकि अन्य कश्मीरियों की दुलचा के आक्रमण के दौरान हुई थी। ध्यातव्य है कि कश्मीर का प्रथम मुस्लिम शासक रिंचन था। हालांकि रिंचन जब कश्मीर में घुसा तब वह भौट्ट था। लेकिन जब वह कश्मीर राज्य की गद्दी पर बैठा हुआ तो उसके बाद उसने इस्लाम मत को स्वीकार किया था। कहा जाता

है कि रिंचन ने सर्वप्रथम प्रमुख पण्डित देवस्वामी से शैवदीक्षा की याचना की थी। किन्तु देवस्वामी ने इस पर असहमति दर्शायी। तद्पश्चात रिंचन बुलबुलशाह कंधारी से इस्लाम मत में दीक्षित हुआ।[23] संभावित है कि बुलबुलशाह के कश्मीर प्रवास के दौरान अनेक अन्य लोगों के साथ लवन्यों का भी मतांतरण हुआ होगा। 1323 ई. में जब रिंचन की मृत्यु हुई और सुहदेव के भाई उदयन देव ने कश्मीर का सिंहासन संभाला और उसके बाद जब कोटा रानी ने 1339 ई. में उदयन देव की मृत्यु के बाद स्वयं को मजबूत किया, तब लवन्य समुदाय ने इनके समर्थकों के रूप में अपनी भूमिका निभाई थी। यही कारण है कि ये समुदाय शाहमीर के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रमुख निशाना बना।

लवन्य समुदाय का लोन स्वरूप- जैसा कि उपर्युक्त वर्णन किया जा चुका है कि लवन्य समुदाय का उद्धभव राजा हर्ष के शासनकाल में हुआ था। अर्थात् राजतरंगिणी की तरंग 7 और 8 में कल्हण लवन्यों द्वारा कश्मीर की राजनीति व प्रशासन में निभाए गए योगदानों का भरपूर वर्णन करता है। तद्पश्चात् कल्हण के शिष्य जोनराज ने भी लवन्यों को अपनी कृति में खूब वर्णित किया है। लेकिन जोनराज के शिष्य श्रीवर कृत जैनाराजतरंगिणी में लवन्यों का उल्लेख करने वाला मात्र एक श्लोक है। तद्पश्चात् शुक कृत राजतरंगिणी में तो लवन्यों का कोई विवरण नहीं मिलता, जिसका हेतु जोनराज, श्रीवर और शुक की कृतियों में देखने को मिलता है। वह हेतु है हिन्दुओं का इस्लाम में हुआ मतांतरण। अर्थात् उस समय तक लवन्यों का भी मतांतरण हो चुका था। वर्तमान समय में कश्मीर में एक लोन समुदाय उपस्थित है। अधिकतर विद्वान यह स्वीकारते हैं कि यह लोन समुदाय ही प्राचीन लवन्य समुदाय है। लेकिन वर्तमान समय में शोध के लिए प्राप्त किए गए साक्षात्कारों में लोन समुदाय के लोग इस विषय पर कोई प्रकाश नहीं डालते। उनके अनुसार उन्हें अपने इस इतिहास के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है। हालांकि वह यह मानते हैं कि वह भी कश्मीर के अन्य समुदायों की तरह मतांतरित हुए हैं लेकिन स्पष्टतः कोई विचार इस पक्ष में उनके द्वारा नहीं रखा गया है।

ध्यातव्य है कि जोनराज कृत द्वितीय राजतरंगिणी के श्लोक संख्या 248 के अनुसार शाहमीर ने अपने दो पोत्रों शिरःशाटक (शीर अशमाक) तथा हिन्द (हिंदल-हिन्दू खां) को भी शक्तिशाली स्थिति में पहुंचा दिया।[24] इसके पश्चात शाहमीर ने अल्लेश्वर (अलीशेर या अलीशाह) की कन्या के शादी लुस्त (शंकरपुर का सरदार) से तथा जमशेद की पुत्री की शादी भंगिल के सरदार तेलाक शूर से करके[25] उन प्रमुख सरदारों को अपने वश में कर लिया। उसने अलीशेर की शादी लक्ष्म (कंपनेश्वर) की पुत्री से की और गुहरा[26] का विवाह बरिंग के कोट्टराज से किया।[27] यह सब विवाह संबंध उनके लवन्यों के घरों से स्थापित हुए थे। क्योंकि जोनराज स्पष्ट शब्दों में लिखता है कि 'लवन्य लोगों ने शाहमीर के वंश की पुत्रियों को माला के समान धारण करते हुए यह सोचा ही नहीं कि वे स्त्रियाँ अति विषैली सर्पणियों के समान अंत में प्राणहरण करने वाली हैं'। जोनराज का यहाँ ऐसी तुलना करते हुए शोक व्यक्त करना, इन वैवाहिक सम्बन्धों की गंभीरता को दर्शाता है। इसके अगले ही श्लोक में जोनराज फिर लिखता है कि लगभग सब लवन्य शाहमीर के प्रति निष्ठ हो गए।[28] जो कोई भेद नीति से शेष बचे उन्हें शाहमीर ने अपनी शक्ति से वश में कर लिया। जैसा कि उसने बहरूप (बीरु परगना) और शमाला (वर्तमान हमल क्षेत्र) में किया। उसने वहाँ के लवन्य मुखियाओं को उनके क्षेत्र पर आक्रमण करके अपने अधीन कर लिया।[29] हालांकि विवाह सम्बन्धों का विवरण बहरिस्तान-ए-शाही में भी मिलता है परंतु लेखक उन्हें कश्मीर के विभिन्न क्षेत्रीय प्रमुखों तथा नेतृत्व करने वाले लोग बताता है[30] जबकि जोनराज के वर्णन से तो पूर्णतः स्पष्ट है कि वे लवन्य थे।

लवन्यों के प्रति अपनाई गई शाहमीर की विभिन्न नीतियों व उनके प्रभाव का वर्णन जोनराज ने श्लोक 258 में करते हुए लिखा है कि कुछ साम, कुछ भेद, अन्य दान तथा कुछ भय के कारण लवन्यों ने उसका शासन स्वीकार कर लिया। अर्थात् साम में शाहमीर ने लवन्यों से समझौता, वार्ता, संधि जैसी नीतियों को अपनाकर, भेद में अपनी चतुराई से लवन्यों में मतभेद पैदा करके, दान में कन्यादान व संभवतः धन तथा भू-दान करके और भय में युद्ध व शक्ति का प्रयोग करके लवन्य के प्रमुख नेताओं को अपने अधीन कर लिया। अभिप्राय यह है कि शाहमीर को जहाँ जो भी नीति आसान लगी उसने वही नीति अपनायी और अपने लिए या यूं कहें कि कश्मीर में मुस्लिम शासन के लिए अनुकूल स्थिति एवं वातावरण तैयार किया। वह लवन्यों की प्रभावशीलता से भली भांति परिचित था। इसलिए उसने कश्मीर में स्वयं

को शासक रूप में परिणित करने के लिए सबसे पहले तो स्वयं को और अपने संबंधियों को शक्तिशाली स्थिति तक पहुंचाया। तद्पश्चात उसने कश्मीर के तात्कालिक सबसे प्रभावशाली समुदाय लवन्यों को नियंत्रित करने के लिए प्रयत्न किए, जिसके द्वारा उसने अपने विरुद्ध होने वाले प्रतिरोध को होने से पूर्व ही दबा दिया। स्पष्टतः यह उसकी दूरदर्शिता थी।

अतः इन विवाह सम्बन्धों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव लवन्यों पर पड़ना स्वाभाविक था। इन्हीं से लवन्यों के घरों में इस्लाम का बीजारोपण हुआ। इसी स्थिति के कारण जोनराज दुख प्रकट करते हुए शाहमीर वंश की पुत्रियों को विषैली सर्पिणियां कहता है जोकि अंत में प्राणहरण करने वाली होती हैं।[31] हालांकि शाहमीर कुल के सदस्यों का लवन्यों के साथ हुए वैवाहिक सम्बन्धों का उल्लेख निजामुद्दीन अहमद ने नहीं किया है। लेकिन वह शाहमीर के शत्रु 'लुन' (स्नद) जनजाति को बताता है[32] जोकि प्राचीन लवन्य ही थे।

शाहमीर द्वारा किया गया यह प्रयोग अपने पक्ष में लवन्य समुदाय को करके शक्ति एकत्र करने के लिए था। ध्यातव्य है कि लवन्य उस तात्कालिक कश्मीर में बहुत प्रभावी थे। वे कोटा रानी के समर्थक भी थे। अतः शाहमीर यह भली भांति जानता था कि बिना लवन्यों के साथ के वह कश्मीर की राजगद्दी पहले तो वह प्राप्त ही नहीं कर पाएगा। वहीं यदि वह इस कार्य में सफल भी हो गया तो उसे लवन्यों के विद्रोह व प्रतिरोध का सामना समय-समय पर करना पड़ेगा। इसीलिए उसने अपने आपको शक्तिशाली बनाते हुए लवन्यों को साम, दान, दण्ड और भेद की नीति से दबाने का प्रयास किया जिसमें वह बहुत हद तक सफल भी हुआ।

लवन्य समुदाय का वर्णन कश्मीर में विभिन्न उपद्रवों के संदर्भ में मिलता है लेकिन कश्मीर में वे लोग कहाँ से आए थे? के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती है। इस संदर्भ में ध्यान रखने योग्य वर्तमान का एक समुदाय लबाना भी है जो कि वर्तमान में कश्मीर के अतिरिक्त भारत के बहुत से राज्यों में विभिन्न नामों से निवासित है। लवन्य शब्द राजतरंगिणी में वर्णित है अर्थात् संस्कृत ग्रंथ में। लेकिन लबाना वर्तमान में प्रचलित शब्द है। प्रतीत ऐसा होता है कि लवन्य और लबाना एक ही समुदाय है जिनका भाषा के अंतर के कारण उच्चारण भिन्न है जो कि बहुत सामान्य बात है। लवन्य और लबाना एक ही है इस अवधारणा को शोधकर्ता ने क्यों संभाव्य माना? के पीछे तर्क जोनराज लिखित एक श्लोक है जिसके अंतर्गत वह राजा राजदेव(1213-1236ई.) द्वारा लवन्यों को कृषि योग्य भूमि देकर बदले में उनसे आवश्यकता पड़ने पर सहायक सेना प्राप्त करना था। वहीं दूसरी ओर ऐसी ही व्यवस्था के बारे में हिमाचल प्रदेश के लबाना समुदाय के लोगों ने बताया, जिससे दो समान निष्कर्ष निकलते हैं एक लवन्य और लबाना दोनों लड़ाकू जाति थीं तथा राजाओं को सहायक सेना उपलब्ध कराती थीं। दूसरा दोनों राजपूत अर्थात् क्षत्रिय थीं। हालांकि यह संभावना शोध का प्रश्न है। इस प्रश्न के साथ ही अनेकों नए प्रश्न भी उत्पन्न होते हैं जैसे कि लबाणा समुदाय वर्तमान में अनेक व्यवसायों से संबंधित है जैसे कि पशुओं के व्यापार, नमक के व्यापार, लोहे के काम, दुकानदारी, सैन्य कार्य इत्यादि। तो यदि लबाणा और कश्मीर में वर्णित लवन्य समुदाय एक ही है तो संभव है कि लवन्य कश्मीर में भी किसी व्यापार वश ही पहुंचे हों जो कि शोध की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है क्योंकि इस प्रश्न के साथ ही भारत के अन्य भागों में उपस्थित लेकिन विभिन्न नामों से पहचाने जाने वाले समुदायों का भी इस समुदाय के साथ संबंध स्थापित किया जा सकेगा। अतः इस विषय पर शोध अपेक्षित है।

निष्कर्ष- लवन्य समुदाय ग्यारहवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तक कश्मीर की राजनीति को प्रभावित करता रहा है। प्रारंभ में तो राजा हर्ष द्वारा इनके प्रति काफी क्रूरता दिखाई गयी। उस दौरान इन्हें कड़ी परेशानियों का सामना करना पड़ा। हालांकि ये परेशानियाँ बाद में भी बनी रहीं। लेकिन लवन्यों को ऊपर उठाने में राजा उच्चल (1101ई.) ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तद्पश्चात कई लवन्य राजपक्ष के साथ बने रहते तो कई उनके विपक्ष में। समय के साथ उनकी स्थिति इतनी प्रभावशाली हुई कि इनके प्रतिरोध से बचने के लिए विदेशी भौट्ट रिंचन और शाहमीर ने कश्मीर में अपने शासन को स्थापित करने के लिए सबसे पहले इन्हीं को दबाया। लवन्यों के साथ शाहमीर ने जहाँ षड्यंत्र, युद्ध किए वहीं अपनी सत्ता को सशक्त करने हेतु वैवाहिक संबंध स्थापित किए। तत्पश्चात लवन्यों का मत परिवर्तिकरण हुआ। अतः आज के कश्मीर में लवन्य नाम से कोई समुदाय नहीं है क्योंकि मतांतरण के पश्चात लवन्यों का नाम लोन हो गया।

सन्दर्भ

1. Ray Sunil Chander, 'Early History and Culture of Kashmir, Munshi Ram Manoharlal, New Delhi, 1970, p. 95
2. कल्हण कृत राजतरंगिणी, अनु. रामतेजशास्त्री पाण्डेय, तरंग VII, श्ल.सं. 1170–1171, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 1985, पृ. 270. Kalhana's Rajtarangini, tr. by M.A.Stein Vol.1, Gulshan Books, Kashmir, 2019, p. 502
3. Bamzai P.N.K, 'Culture And Political History of Kashmir', Vol.1, MD Publications, New Delhi, 1994 P.193
4. Kapur M.L., 'History and Culture of Kashmir', Trikuta Publication, Jammu, 1976, P.67
5. वही, पृ. 84
6. चौहान शिवदान सिंह, 'कश्मीरः देश व संस्कृति', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1950, पृ93
7. Bamzai P.N.K,, op.cit., p. 194
8. लारेंस लोन समुदाय के विषय में लिखते हैं कि ये 'वैश्य' उत्पत्ति से संबंधित समुदाय है और ग्रामीण लोगों के मतानुसार लोन समुदाय 'चिलास' से कश्मीर आए थे। Walter R. Lawrence, 'The Valley of Kashmir', Kashmir Kitab Ghar, Jammu Tawi, 1996, P.306-
9. Dewan Pervez, 'Jammu Kashmir & Ladakh', Manas Publications, New delhi, 2008, pp.398-399.
10. Bamzai P.N.K,, op.cit., p. 193
11. Sharma Suresh K. & S.R. Bakshi, 'Ancient And Medieval Kashmir', Anmol Publications, New Delhi, 1995, p.311
12. Ray Sunil Chander, op.cit., p. 105
13. प्राचीन लवन्य जनजाति ही वर्तमान में लोन नाम से जानी जाती है। F. M. Hassnain, 'Hindu Kashmir', Light & Life Publications, New Delhi, 1977, p. 146
14. Dhar G. M., 'Social and Religious Conditions on The Eve of Spread of Islam in Kashmir', Gulshan Publishers, Srinagar, 1992, p.50
15. Dutt Jogesh Chander, ed. By., S.L. Sandu, 'Medieval Kashmir', Atlantic Publishers & Distributers, New Delhi, 1993, p. 78.
16. जोनराजकृत राजतरंगिणी, अनु. और टी. रगुनाथ सिंह, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, 1972, पृ. 113–114
17. कल्हण कृत राजतरंगिणी, पूर्वोक्त, तरंग VII, श्ल. सं. 1227–1237, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, 1985, पृ. 274–275
18. Majeed Umer, 'Feudal Lords of Ancient Kashmir', BUUKS, India, 2019, pp. 8-9.

19 कल्हण कृत राजतरंगिणी, पूर्वोक्त, पृ. 99–100

20 Sharma Suresh K. & S.R.Bakshi, पूर्वोक्त, पृ. 312

21 वही, पृ. 48

22 Hassan Mohibbul, 'Kashmir Under the Sultan', Aakar Books, Delhi, 2018, p-39

23 Baharistan-I-Shahi, ed.& tr. by K. N. Pandita, Firma KLM Pvt. Ltd., Calcutta, 1991, pp.21-22

24 जोनराज कृत राजतरंगिणी, पूर्वोक्त, श्ल. सं. 248/ Rajatarangini of Jonaraja, tr.& Co. by Srikanth Kaul, Vishveshvaranand Institute, Hoshiyarpur,1976, p.76 / शाहमीर के दो अन्य पुत्र थे। The Tabaqat-i-Akbari of Khwajah Nizamuddin Ahmad, tr.& co. by Brajendranath De and Baini Prashad, Jay Kay Book House, Jammu Tawi, 1998, p.635.

25 जोनराज कृत राजतरंगिणी, पूर्वोक्त, श्लो. सं. 250–251/ Rajatarangini of Jonaraja, tr.& Co. by Srikanth Kaul, p.77.

26 सिंह रघुनाथ और श्रीकण्ठ कौल दोनों इसे शाहमीर की बहन मानते हैं। जबकि राकेश कौल ने गुहरा को शाहमीर की पुत्री बताया है। Rakesh K. Kaul, 'The Last Queen of Kashmir', Harper Collins Publishers India, UP, 2016.

27 जोनराज कृत राजतरंगिणी, पूर्वोक्त, श्लो. सं. 256–257/ Rajatarangini of Jonaraja, tr. & Co. by Srikanth Kaul, p.77.

28 वहीं, श्लो. सं. 259–260/ Rajatarangini of Jonaraja, tr.& Co. by Srikanth Kaul, p.77.

29 वही, श्लो. 252/ Rajatarangini of Jonaraja, tr.& Co. by Srikanth Kaul, p.77.

30 Baharistan-I-Shahi, पूर्वोक्त, पृ. 28

31 जोनराज कृत राजतरंगिणी, पूर्वोक्त, श्ल. 259

32 'The Tabaqat-i-Akbari of Khwajah Nizamuddin Ahma', tr.& co. by Brajendranath De and Baini Prashad, Jay Kay Book House, Jammu Tawi, 1998, p.637.

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023
Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

आसियान देशों में भारतीय सॉफ्ट पॉवर (मृदु शक्ति) को संवर्धित करने वाली पहलों का विश्लेषणात्मक अवलोकन 2014–2022

❑ विभव चन्द्र शर्मा
❖ डॉ. विमल कुमार कश्यप

सूचक शब्द : मृदु शक्ति, लोक राजनय, आजादी का अमृत महोत्सव।

प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय सांस्कृतिक जुड़ाव को वर्तमान में विदेश नीति के प्रमुख अंग के रुप में विभिन्न प्रयासों को व्यवस्थित ढंग से सॉफ्ट पॉवर की दृष्टि से विश्लेषित किया गया है। भारत के दक्षिण पूर्व एशिया के साथ सम्बन्ध प्राचीन काल से विद्यमान हैं। व्यापार,धर्म व संपदा ने भारत को सदैव दक्षिण पूर्व एशिया की ओर आकर्षित किया है, संस्कृति के रूप में भारत पूर्व की ओर उपासना के साथ भी जुडा हुआ है। इस जुड़ाव को भारतीयकरण की संज्ञा देते हैं, जिसकी झलक दक्षिण पूर्व एशिया की भाषा, शासन पद्धति, धर्म, खान-पान व पाक-कला तथा स्थापत्य-कला इत्यादि में स्पष्ट दिखाई देती है। सम्पूर्ण क्षेत्र हिन्दू मन्दिरों, चैत्यों, विहारों व स्तूपों से परिपूर्ण है, जिसमें अंकोरवाट का मन्दिर, बोरोबुदुर का मन्दिर, आनंदपैगोडा, प्रम्बान्न मन्दिर, नाथलौंग क्योंग मन्दिर, ननपाया मन्दिर, जावा का चण्डिक कालसन मन्दिर, दियांग चंडी भीम मन्दिर इत्यादी भारतीयता के स्पष्ट पदचिन्ह हैं। समकालीन समय में भारतीय संस्कृति को राजनय की धुरी के रूप में देखा गया है। भारत सरकार द्वारा मृदु शक्ति को बढ़ावा देने के लिए और विदेश नीति में उच्च मानकों की प्राप्ति हेतु पंचामृत सिद्धांत स्थापित किया गया है। पंचामृत में सम्मान, संवाद, समृधि, सुरक्षा व संस्कृति है। भारत ने स्वतंत्रता के पहले से ही मृदु शक्ति को बढ़ावा देने के लिए भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद (आई.सी.सी.आर) और विश्व मामलों की भारतीय परिषद (आई.सी.डब्लू.ए) नामक थिंक टैंक स्थापित किए। वर्तमान सरकार द्वारा भारतीय मृदु शक्ति के निर्माण हेतु अनेकों पहलों को गति प्रदान की जा रही है।

'सॉफ्ट पॉवर' वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का एक महत्वपूर्ण तत्व है। विश्व की प्राचीन सभ्यताएं वर्तमान युग में शक्ति के प्रसार एवं राष्ट्रीय हितों की पूर्ति हेतु सॉफ्ट पॉवर को विदेश नीति के एक प्रमुख स्तम्भ के रूप में स्वीकार करती हैं। सॉफ्ट पॉवर की बात करें तो उससे पहले हम दक्षिण पूर्व एशिया के साथ सम्बन्धों को देखते हैं। सर्वप्रथम भौगोलिक निकटता का विश्लेषण करें तो, दक्षिण पूर्व एशिया की समृद्धशाली संपदा ने भारतीयों को आकर्षित किया इसी सम्बन्ध में भारतीय साहित्य इंगित करते हैं जैसे; वायुपुराण के अड़तालीसवें अध्याय में भारत के दक्षिण में स्थित द्वीपों का वर्णन किया गया है, जिनमें अंगद्वीप, मलयद्वीप, शंख द्वीप, कुशद्वीप और वाराह द्वीप हैं। मलय द्वीप वर्तमान का मलाया है, जिसके लिए वायुपुराण में बताया गया है, मणि, माणिक्य, सुवर्ण और चन्दन की प्राचुर्यता इस क्षेत्र में पाई जाती थी। वाल्मीकि रामायण में दक्षिण पूर्व एशिया के अनेकों द्वीपों का वर्णन मिलता है-

यत्नवन्तो यवद्वीपं सप्तराज्योपशोभितम्
सुवर्णरूप्यकद्वीपं सुवर्णाकरमण्डितम्।।[1]

भारत के समृद्ध शाली अतीत को वेदों पुराणों के माध्यम से समझा जा सकता है। बौद्ध ग्रन्थ 'पालिनिदेशा' सहित अन्य साहित्यिक साक्ष्यों में भी इस क्षेत्र के लिए स्वर्ण भूमि (सोने की भूमि), स्वर्ण द्वीप (सोने का द्वीप), नारिकेल द्वीप (नारियल का द्वीप), कर्पुर द्वीप (कपूर का द्वीप) जैसे क्षेत्र अनुकूल शब्दों का प्रयोग किया गया है। सातवीं शताब्दी में लिखे गये वो-काहन नामक संस्कृत शिलालेख के अनुसार भारतीय ब्राह्मण उस क्षेत्र में निवास करते थे जिसे हम आज कम्बोडिया और वियतनाम के रूप में जानते हैं।[1]

भारत का दक्षिण पूर्व एशिया के ऊपर प्रभाव विश्व इतिहास में एक सकारात्मक पदचिन्ह है, भारत इस क्षेत्र के साथ अनूठा सम्बन्ध साझा करता है, जिसके विकास में हिन्दू, बौद्ध व इस्लाम धर्म के अनुयायियों ने समुद्री और सड़क मार्ग से अपना रास्ता बनाया। आज हमें दक्षिण पूर्व एशिया के साथ जो सम्बन्ध

❑ शोध अध्येता राजनीति विज्ञान विभाग, सप्त सिन्धु परिसर, देहरा, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, कांगड़ा (हि.प्र.)
❖ सहायक आचार्य राजनीति विज्ञान विभाग, सप्त सिन्धु परिसर, देहरा, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, कांगड़ा (हि.प्र.)

दिखाई देते हैं, वे प्रागैतिहासिक काल से प्रारम्भ हो जाते हैं क्योंकि भारत ने प्राचीन काल से ही धम्म विजय का मार्ग चुना। समय-समय पर भारत से शैव, वैष्णव व बौद्ध धर्म के प्रचारकों ने दक्षिण पूर्व एशिया को अपना स्थल बनाया। व्यवस्थित तौर पर सम्राट अशोक ने धम्म विजय की और आचार्य उपगुप्त के नेतृत्व मे बौद्धों की तृतीय महासभा उपरान्त प्रचारक मंडल भेजा गया। इन प्रचारकों ने वहां जाकर न केवल धर्म का प्रचार किया अपितु सभ्यता के मार्ग को एक नई दिशा प्रदान की। इस प्रकार का सक्रिय आदान-प्रदान 18वीं व 19वीं शताब्दी अर्थात उपनिवेशित काल से पहले तक जारी रहा।[2]

शोध पत्र का उद्देश्य : प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य आसियान देशों के सम्बन्ध में भारतीय सॉफ्ट पॉवर का संवर्द्धन करने वाली पहलों का अध्ययन करते हुए उनकी विवेचना करना है। मुख्य उद्देश्य के अतिरिक्त कुछ अन्य उदेश्य भी हैं-

1. आसियान देशों में भारतीय सांस्कृतिक प्रभाव को सॉफ्ट पॉवर के रूप में समझना।
2. भारतीय सॉफ्ट पॉवर के संबंध में 2014 के उपरान्त अपनाई गई पहलों अध्ययन करना।

शोध प्रविधि : प्रस्तुत शोध पत्र में विश्लेषणात्मक व ऐतिहासिक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है जिसमें प्राथमिक व द्वितीयक आकड़े प्रयुक्त किए गए हैं। प्राथमिक आकड़ों के लिए विभिन्न प्रतिवेदन जैसे-विदेश मंत्रालय, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद व आसियान के प्रतिवेदनों को प्रयुक्त किया गया है, द्वितीयक आंकड़ों के लिए विभिन्न पुस्तकों, शोध पत्र, शोध पत्रिकाओं, समाचार पत्र इत्यादि को सम्मिलित किया गया है।

साहित्य समीक्षा :

जोजेफ नाई[3] के 'पब्लिक डिप्लोमेसी एंड सॉफ्ट पॉवर' नामक शोध पत्र के अनुसार शक्ति किसी अन्य को प्रभावित करने की क्षमता है। जिसके तीन प्राथमिक तरीके हैं, प्रथम धमकी देकर अर्थात बलपूर्वक, द्वितीय भुगतान देकर और तृतीय आकर्षित या संयोजित करके।

नैंसी स्नो[4], 'पब्लिक डिप्लोमेसी', नामक शोध में लिखते हैं कि शक्ति के तीन प्रमुख आयाम होते हैं जिनसे सॉफ्ट पॉवर अपने वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त करता है। प्रथम जब हमारी संस्कृति और विचार वैश्विकता के अनुरूप हों, द्वितीय आयाम जब देश की पहुँच बहुसंचार माध्यमों में हो और तृतीय आयाम जब देश अपने प्रभाव से अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार में परिवर्तन लाने में सक्षम हो।

के.वी.केशवन[5] के 'इंडियाज एक्ट ईस्ट पालिसी एंड रीजनल कोआपरेशन' शोध पत्र के अनुसार एक्ट ईस्ट पालिसी को बहु आयामी बनाने के लिए 2014 में म्यांमार यात्रा के दौरान भारत आसियान शिखर सम्मलेन में लुक ईस्ट नीति को अपग्रेड करते हुए एक्ट ईस्ट पालिसी लायी गयी।

अजीत मजूमदार[6] के 'इंडियाज सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी अंडर द मोदी एडमिनिस्ट्रैशन बुद्धिज़्म, डायस्पोरा एंड योग' नामक शोध पत्र के अनुसार भारत ने वैश्विक संवाद के प्रयास स्वतंत्रता पूर्व से ही शुरू कर दिए थे बौद्धिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम में सम्मिलित होकर वैश्विक जनमानस तक अपनी पहुँच स्थापित की है।

नवदीप सूरी[7] के 'पब्लिक डिप्लोमेसी इन इंडियाज फारेन पालिसी' नामक शोध पत्र में बताया गया है हम भारत की समृद्ध सॉफ्ट पॉवर के बारे में व्यापक जानकारी को विश्व तक प्रेषित करने के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं।

सांस्कृतिक प्रभाव से सॉफ्ट पॉवर देश के रूप में : अंतरराष्ट्रीय सम्बन्धों में शक्ति को दूसरे के कार्यों को प्रभावित करने की क्षमता के रूप में देखा जाता है। अंतराष्ट्रीय सम्बन्धों के यथार्थवादी दृष्टिकोण में शक्ति महत्वपूर्ण है। अराजक व्यवस्था में सुरक्षा और संप्रभुता के लिए शक्ति को अत्याधिक महत्व दिया जाता है। इसलिए शीत युद्ध के दौर में शक्ति पर ही ध्यान केन्द्रित रहता है। शीत युद्ध की समाप्ति के उपरान्त शक्ति की अवधारणा का दृष्टिकोण बदल जाता है। विश्व पटल पर वैश्वीकरण के युग में शक्ति एक नए रूप में विकसित होती है जिसे हम सॉफ्ट पॉवर के रूप में जानते हैं। सॉफ्ट पॉवर शब्द का सर्वप्रथम उपयोग अमेरिकी राजनीति वैज्ञानिक जोसेफ नाई ने 1990 में अपनी पुस्तक 'बाउंड टू लीडः द चेंजिंग नेचर ऑफ़ अमेरिकन पॉवर' में किया था।[8] नाई शक्ति के तीन आयाम को रेखांकित करते हैं। प्रथम बल प्रयोग, द्वितीय आर्थिक प्रलोभन व तृतीय संस्कृति व मूल्यों के आधार पर व्यवहार को बदलने की क्षमता है, जो सॉफ्ट पॉवर कहलाती है।[9] इस प्रकार नाई, कठोर शक्ति से अलग सॉफ्ट पॉवर को लक्ष्य केन्द्रित अनुनय और आकर्षण के सहकारी माध्यमों से वांछित परिणाम प्राप्त करने की राज्य की क्षमता के रूप में

परिभाषित करते हैं।[10] नाई कहते हैं कि यदि राज्य अपनी शक्ति को दूसरे राज्य के सम्मुख वैध बनाता है, तो कम प्रतिकार का सामना करना पड़ेगा व अन्य लोग स्वेच्छा से पालन करेंगे।[11] वास्तव में, शक्ति का प्रमाण आपके पास संसाधन का होना नही है बल्कि राज्यों के व्यवहार को बदलने की क्षमता से है।[12] सॉफ्ट पॉवर को जब राष्ट्रों की क्षमता के रूप में देखते हैं तो इसके तीन स्रोत दिखाई देते हैं। प्रथम,संस्कृति (ऐसे स्थानों पर जब हम अन्य राष्ट्रों को आकर्षित करते हैं) दूसरा, राजनीतिक मूल्य (जो हम अपने घरेलू स्तर पर प्रयोग करते जिसका प्रभाव अन्य पर पड़ता) और तृतीय, विदेश नीति (विधिक तौर पर नैतिक सत्ता के लिए)।[13] सॉफ्ट पॉवर को अत्याधिक स्पष्ट करते हुए जानथन मैक्लेर ने पांच वर्ग में विभाजित किया है जो क्रमशः सरकार, संस्कृति, राजनय, शिक्षा व व्यापार हैं।

अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में 'सॉफ्ट पॉवर' को विदेश नीति के उदेश्यों को गैर हिंसात्मक तरीके से उपयोगी राष्ट्रीय क्षमता के संदर्भ में समझ सकते हैं जो एक व्यापकता के रूप में दिखाई देती है जिसमें आर्थिक व सामजिक-सांस्कृतिक और सभ्यतागत सन्देश है जिसके द्वारा विभिन्न माध्यमों से राष्ट्र की छवि प्रबन्धन की जाती है। इस प्रकार के छवि प्रबन्धन में देश का शासन, संस्कृति, राजनय, शिक्षा इत्यादि पर जोर देकर सॉफ्ट पॉवर का प्रबन्धन किया जाता है।[14] इस प्रकार मृदु शक्ति के कुछ प्रमुख राजनयिक साधन दिखाई देते हैं, जिनके माध्यम से सॉफ्ट पॉवर का प्रयोग किया जाता है।

तालिका संख्या 01

राजनय	गतिविधि
ई-राजनय	ब्लॉग,बेव, सोशल मीडिया का प्रयोग
सांस्कृतिक राजनय	फेस्टिवल, प्रदर्शनी, सांस्कृतिक आदान-प्रदान
शिक्षा राजनय	छात्रवृत्ति, शैक्षिक आदान प्रदान
लोक राजनय	सांस्कृतिक, शैक्षिक, मीडिया पहुँच
खेल राजनय	स्पोर्ट्स इवेंट,
आर्थिक राजनय	आर्थिक सहायता के द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम

भारत में मृदु शक्ति का विकास : भारत को विविधता, बहुलवाद और सहिष्णुता की भूमि के रूप में जाना जाता है। भारत के अहिंसक आंदोलनों ने विश्व के अनेकों आंदोलनों को अहिंसा के प्रयोग के लिये प्रेरित किया। विश्व व्यवस्था में शाब्दिक तौर पर सॉफ्ट पॉवर के आगमन से पहले ही भारत ने सॉफ्ट पॉवर के क्षेत्र में कार्य करना शुरू कर दिया था। भारत को समृद्ध इतिहास, विरासत, विविध संस्कृति, बहुलवाद जैसे तत्वों ने विश्व गुरु (वर्ल्ड लीडर) के रूप में प्रस्तुत किया। भारत का वैश्विक प्रतिनिधित्व "विविधता में एकता" "वसुधैव कुटुम्बकम" जैसे विचारों में सन्निहित है। भारत के विचार, सम्पूर्ण विश्व को हमारी तरफ आकर्षित करते हैं। शताब्दियों से अनेकों धर्मों ने भारत को अपना घर बनाया। भारत में सभी धर्मों को धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रता प्राप्त हुई। भारत ने भी विभिन्न धर्मों के मूल्यों को सामंजस्य पूर्ण ढंग से आत्मसात भी किया है। अनेकों धर्मों के आगमन पश्चात भी भारत अपनी मौलिकता को बनाये हुए है। भारत सांस्कृतिक जुड़ाव के प्रति सजग है, विश्व के प्रत्येक कोने में अपनी संस्कृति को देख रहा है। भारत उदार, अहिंसक राज्य के रूप संस्कृति का वाहक बना है, जिसकी विरासत भारतीय साहित्य, संगीत, नृत्य, सॉफ्टवेयर उद्योग इत्यादि सम्पदा की महान श्रृंखला का निर्माण समकालीन समय में भी करती है, जो विदेशियों को आकर्षित करती है। भारतीय साहित्य की बात करें तो महाकाव्य, महाभारत और रामायण की तुलना ओडिसी और इलियड जैसे महान ग्रीक लेखन से की जाती है।[15] भारत समृद्ध विरासत वाला राष्ट्र रहा है जिसका प्रसार योग से, अध्यात्म से, वालीवुड से, भरतनाट्यम से, बौद्ध धर्म से, व्यंजन से पर्यटन तक विस्तृत है।[16] भारत ने पूरे विश्व में अपनी संस्कृति और ज्ञान का प्रसार किया है। तक्षशिला और नालन्दा जैसे विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय में अनेकों विदेशी नागरिक भारतीय ज्ञान का अर्जन करने आये। भारतीय शिक्षा सम्पदा प्रचीन काल से मृदु शक्ति की प्रबलता को दर्शाती है।[17] आज योग भारतीयों, प्रवासियों और पाश्चात्य जनमानस के लिए वैश्विक महोत्सव बन गया है। योग को "भारत की प्राचीन परम्परा का अमूल्य उपहार" के रूप में वर्णित करते हुए प्रधानमन्त्री मोदी ने सितम्बर 2014 में संयुक्त राष्ट्र महासभा में योग दिवस घोषित करने की मांग की, जिसे सर्व सम्मति से अनुमोदित किया गया।[18] तब से प्रति वर्ष भारतीय दूतावास और काउंसलर के माध्यम से भारत सरकार द्वारा अनेकों देशों में योग से सम्बन्धित कार्यक्रम आयोजित कराए जा रहे हैं। इस प्रकार सॉफ्ट पॉवर केवल सांस्कृतिक आकर्षण, राजनीतिक मूल्यों और एक

वैध विदेश नीति पर निर्भर नहीं करती है बल्कि किसी देश की आर्थिक और राजनीतिक पहुँच पर भी निर्भर करती है।[19]

स्वतंत्रता उपरान्त भारतीय विदेश नीति में सॉफ्ट पॉवर को प्रमुख स्थान नही मिला। तदोपरान्त मोदी सरकार द्वारा विदेश नीति को निर्देशित करने में सॉफ्ट पॉवर का उपयोग मजबूती के साथ आरम्भ किया गया। भारत सरकार द्वारा प्रवासियों के साथ जुड़ाव के अनेकों कार्यक्रम शुरु किए गए।[20] विदेश मंत्रालय ने "इंडियाज सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी" नामक अपनी 13 वीं रिपोर्ट में, अनुमोदन किया गया कि मंत्रालय को सॉफ्ट पॉवर के सम्बन्ध में व्यापक और संरचित नीति तैयार करनी चाहिए। 2016 में समिति को सौपे गए सुझावों के उत्तर देते हुए मंत्रालय ने सॉफ्ट पॉवर संवर्द्धन की आश्यकता पर सहमति व्यक्त करते हुए यह बताया कि विदेश मंत्रालय भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद के साथ मिलकर नीति पत्र का मसौदा तैयार करने के लिए कार्य कर रहा है। 2019 में, विदेश मंत्रालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी का लाभ उठाने के लिए संरचित नीति का प्रारंभिक कार्य किया जा चुका है। परिणाम स्वरुप विस्तृत रुपरेखा विदेश मंत्रालय की 16 वीं रिपोर्ट 2021 -2022 जिसका शीर्षक "इंडियाज सॉफ्ट पॉवर एंड कल्चरल डिप्लोमेसी : प्रोस्पेक्ट्स एंड लिमिटेशन" में विस्तृत नीति प्रस्तुत की गई है, जिसमें यह बताया गया है कि भारत में खेल, संगीत, कला, फिल्म, साहित्य, लोकतांत्रिक संस्थायें, स्वतंत्र प्रेस और न्यायपालिका, जीवंत नागरिक समाज, बहुजातीय राजनीति, धर्मनिरपेक्षता, बहुलवाद, व्यंजन इत्यादि भारतीय सॉफ्ट पॉवर की विस्तृत श्रृंखला का रेखांकन करते हैं, जिसके आधार पर भारतीय सॉफ्ट पॉवर के कुछ प्रमुख साधन दृष्टिगत हैं[21] जो चित्र संख्या 01 माध्यम से प्रदर्शित हैं।

चित्र सं:01

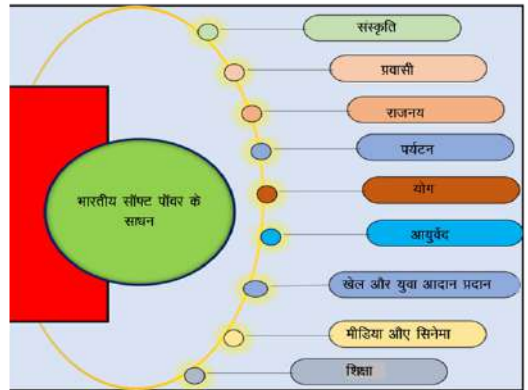

स्रोतः विदेश मंत्रालय की रिपोर्ट के आधार पर चित्र लेखक द्वारा स्वनिर्मित

सॉफ्ट पॉवर के सम्बन्ध में केंद्रीय मंत्री अनुराग ठाकुर ने अप्रैल 2022 में एक संवाद में कहा, "राष्ट्र को एक कठोर शक्ति की आवश्यकता भी है, किन्तु सीमाओं से बाहर जाकर सम्बन्धों के लिए सॉफ्ट पॉवर उपयोगी है, क्योंकि यह दिलों को छूती है"।[22] सॉफ्ट पॉवर का एक प्रमुख साधन लोक राजनय के रूप में हमारे समक्ष है, जिसका विश्लेषण आवश्यक है क्योंकि, लोक राजनय अल्पावधि में एक अनुकूल चर्चा के द्वारा सक्रिय छवि और लम्बे समयांतराल में देश की प्रतिष्ठा और सद्भावना की प्रगति में बेहद सहायक होती है। भारत का संस्कृति मंत्रालय भी सांस्कृतिक राजनय के द्वारा सॉफ्ट पॉवर का प्रबन्ध करता है जिसके लिए भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद कार्यरत है, जो कि भारत और अन्य देशों के बीच सांस्कृतिक सम्बन्धों को मजबूत करने की दिशा में संलग्न है। यह भारतीय विश्वविद्यालयों और विदेशी विश्वविद्यालयों में विनिमय कार्यक्रम में छात्रवृत्ति प्रदान करता है।

भारत की सॉफ्ट पॉवर राजनय के उदेश्यों को स्पष्ट करते हुए भारत की विदेश नीति पत्र/ दस्तावेज में अभिव्यक्ति के आधार पर तीन प्रमुख उदेश्य हैं-

प्रथम, हमारी संप्रभुता, एकता और क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा करना और हमारे समग्र राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देना।

द्वितीय, 'पड़ोसी प्रथम' नीति के साथ विस्तारित क्षेत्र में भारत प्रशांत क्षेत्र में सरकार के प्रयासों के अंतर्गत सबका साथ, सबका विकास और सबका विश्वास।

तृतीय, विश्व के समस्त देशों के साथ शांतिपूर्ण,

सामंजस्यपूर्ण, मैत्रीपूर्ण और परस्पर सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध के साथ वसुधैव कुटुम्बकम की दृष्टि का प्रसार।[23]

भारत अपने प्रवासी भारतीयों के माध्यम से हिन्द प्रशांत क्षेत्र में सॉफ्ट पॉवर का प्रयोग करता है, क्योंकि जो वर्तमान में अन्य राष्ट्रों के नागरिक हैं, भारतवंशी समृद्ध पीढ़ियों के माध्यम से अपनी आस्था, भाषा व लिपि, व्यंजन, सामुदायिक संस्थाओं से मूल संस्कृति का निर्वहन कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में न केवल उन्होंने अपनी नवीन मातृभूमि को समृद्ध किया है बल्कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और सामुदायिक नेटवर्क के माध्यम से अपने वर्तमान देश और भारत के बीच के सम्बन्धों को गहरा किया है। इस जीवित विरासत के साथ भारतीय संस्कृति अधिकांश हिन्द प्रशांत देशों के वास्तुशिल्प, सामाजिक और सांस्कृतिक परिदृश्य का हिस्सा है। उदाहरणस्वरुप सुमात्रा द्वीप (इंडोनेशिया) के उत्तरी छोर पर स्थित बंदा ओचेय का बन्दरगाह और शहर, सदियों से भारतीय क्षेत्र का हिस्सा माना जाता था। ऐसा इसलिए था क्योंकि यह भारतीय व्यापारी समुदाय के माध्यम से इंडोनेशिया के बाकी द्वीप की तुलना में भारतीय कोरोमंडल और मालाबार तट के निकट था।[24] अपने समान इतिहास और संस्कृति के कारण दक्षिण पूर्व एशियाई देश भारत के सॉफ्ट पॉवर को अत्याधिक महत्व देते हैं। आज इन देशों को सभ्यतागत पड़ोसी के रूप में देखा जाता है। इन देशों में भारत को विशेष लाभ प्राप्त है, भारतीय संस्कृति और प्राचीन सभ्यताओं के आदर्श को उसके निकट पड़ोसियों में सम्मान दिया जाता है। आयुर्वेद, बालीबुड, बौद्ध धर्म, सिनेमा, क्रिकेट, व्यंजन, डायस्पोरा, ललित कला, सूचना प्रोद्योगिकी, प्रदर्शन कला और योग सभी का मृदु शक्ति के स्रोत के रूप में उल्लेख किया गया है[25] विदेशी मामलों में भारत का सॉफ्ट पॉवर का उपयोग विभिन्न लक्ष्यों से प्रेरित है। अपनी समृद्ध संस्कृति और सभ्यतायों के जुड़ाव के कारण भारत के पास अपार संभावनाएं हैं। अत्याधिक संख्या में भारतवंशी, प्रसिद्ध फिल्में, संगीत और कला साहित्य ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध मुख्य रूप से सॉफ्ट पॉवर में योगदान करते हैं।[26] भारत और दक्षिण पूर्व एशिया के देश व्यापार, धर्म, सीमा पार प्रवाह इस सम्पूर्ण क्षेत्रीय नेटवर्क का हिस्सा थे। समकालीन समय ने, राजमार्गों, विमानन, और रेलवे नेटवर्क जैसी बुनियादी ढाँचे के विकास ने इन देशों के बीच शैक्षिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक आदान- प्रदान का विस्तार किया है। साथ ही कुछ वैश्विक चुनौतियों जैसे, उच्च आर्थिक विकास व स्थाई आजीविका और गैर पारम्परिक सुरक्षा खतरों ने जिनमें जलवायु परिवर्तन, खाद्य संकट इत्यादि ने एशियाई क्षेत्रीय व्यवस्था के साझेदारी की आवश्यकता को अनुभव किया। इसी सम्बन्ध में प्रधानमंत्री नरेंद मोदी ने कहा कि 'विभिन्न शिखर सम्मेलनों और द्विपक्षीय बैठकों में भाग लेने के लिए 11 नवम्बर से मैं, म्यांमार, ऑस्ट्रेलिया और फिजी की यात्रा करूंगा। म्यांमार में, मैं दो प्रमुख बहुपक्षीय सम्मेलनों- आसियान और पूर्व एशिया शिखर सम्मेलनों में भागीदारी करूंगा। दक्षिण पूर्व एशिया के साथ हमारे संबंधों की जड़ें काफी गहरी है। आसियान देशों के साथ संबंधों को सुदृढ़ बनाना हमारी एक्ट ईस्ट पॉलिसी का एक महत्वपूर्ण अंग है। आसियान अगली शताब्दी के एशियाई देशों के होने के संदर्भ में हमारे स्वप्न का मुख्य केन्द्र है जहां भारत एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। मुझे विश्वास है कि ये बैठकें सृजनात्मक होंगी'।[27] दक्षिण पूर्व एशिया और भारत के मध्य प्रगाढ़ सभ्यतागत सम्बन्धों, समुद्री संपर्क, पारगमन सांस्कृतिक आदान-प्रदान को स्वीकार किया गया जो पिछले 30 वर्षों में सुदृढ़ हुए हैं। आसियान और भारत पूर्वोत्तर के क्षेत्रों के साथ सीमा साझा करते हैं और साझेदारी कार्यकर्मों और परियोजनायों की एक श्रंखला का निर्माण भारत और आसियान देशों के साथ किया है।[28] भारत आसियान के मध्य छात्र आदान-प्रदान कार्यक्रम शुरू किए गए, भारतीय ऐतिहासिक सांस्कृतिक आर्थिक और नेतृत्व पहलुओं को समझने हेतु भारत भ्रमण से सम्बन्धित अतुलनीय भारत के नाम से पर्यटन मंत्रालय द्वारा कार्यक्रम संचालित किया जा रहा है। इस प्रकार के आदान-प्रदान कार्यक्रम से ना केवल भारत को समझ सके अपितु बेहतर जुड़ाव भी दिखाई देता है, जिससे दो महान सभ्यतायों में विश्वास सुदृढ़ हुआ है।

2014 उपरान्त भारतीय सॉफ्ट पॉवर के संवर्द्धन में सहायक प्रमुख पहलें : भारत सरकार भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद के द्वारा सांस्कृतिक सम्बन्धों को लगातार बढ़ावा दिया जा रहा है। भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद की स्थापना 1950 में की गयी थी यह भारतीय सॉफ्ट पॉवर को गति प्रदान करती है। आई.सी.सी.आर. की बेवसाईट "संस्कृति का संचार, अन्य देशों के साथ रचनात्मक संवाद" को प्रमुखता में वर्णित करती है। यह सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ स्नातक, परास्नातक व शोध

छात्रों के लिए छात्रवृत्ति कार्यक्रम संचालित कर रहा है। आई.सी.सी.आर. ने विभिन्न देशों के विश्वविद्यालयों में भारत और भारतीय भाषाओं से संबंधित लगभग 93 पीठों की स्थापना की है, जिनमें से छह पीठ दक्षिण पूर्व एशिया में स्थित हैं। ये वियतनाम (सामाजिक विज्ञान और मानविकी विश्वविद्यालय), थाईलैंड (चुलान्कोर्ण विश्वविद्यालय और शिल्पांकन विश्वविद्यालय), सिंगापुर (राष्ट्रीय विश्वविद्यालय), मलेशिया (मलाया विश्वविद्यालय), इंडोनेशिया (महेंद्रदत्त विश्वविद्यालय) और कंबोडिया (बौद्ध विश्वविद्यालय) हैं।

भारत ने एक्ट ईस्ट नीति के अनुपालन में 4 सी को बढ़ावा दिया, भारतीय मृदु शक्ति के प्रसार में अनेकों पहलों का समकालीन समय में अनेकों कार्यक्रम के माध्यम से भारत और पूर्व एशिया के सम्बन्धों को नए आयाम दिए जा रहे हैं। भारत सरकार द्वारा दक्षिण पूर्व एशिया के साथ सम्बन्धों को गति देने के लिए अनेकों छात्रवृत्ति कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। कुछ प्रमुख छात्रवृत्ति निम्नलिखित हैं[29]

1. मेकांग-गंगा सहयोग छात्रवृत्ति स्कीम ।
2. ऐड टू मलेशिया छात्रवृत्ति आयुष स्कीम ।
3. छात्रवृत्ति स्कीम फॉर मलेशियन नेशनल ।
4. आयुष छात्रवृत्ति स्कीम फॉर नॉन बिम्सटेक ।
5. आयुष छात्रवृत्ति स्कीम फॉर बिम्सटेक ।
6. आयुष स्कालरशिप स्कीम फॉर साउथ ईस्ट एशियन रीजन ।
7. जनरल स्कॉलरशिप स्कीम।
8. कल्चरल एक्स्चेंज प्रोग्राम/ एजुकेशनल एक्स्चेंज प्रोग्राम स्कॉलरशिप स्कीम ।
9. अटल बिहारी वाजपेयी जनरल स्कॉलरशिप स्कीम ।
10. लता मंगेशकर डांस एंड म्यूजिक जनरल स्कॉलरशिप स्कीम ।

भारत ने सांस्कृतिक सम्बन्धों को गति प्रदान करते हुए, आउट गोइंग विजटर प्रोग्राम के अंतर्गत दिसम्बर 2014 में 'द रिबोर्न' इंटरनेशनल क्रॉस जेंडर सेमीनार के लिए मिस्टर समता सरबजीत सिंह योग्यकार्ता, इंडोनेशिया गए। इसी प्रकार आउट गोइंग कल्चरल प्रोग्राम अंतर्गत 12 सदस्यीय वालीवुड समूह ने इंडोनेशिया और वियतनाम देश का भ्रमण किया। इसी वर्ष सांस्कृतिक विविधता में एकता को प्रसारित करते हुए 10 सदस्यीय मणिपुर के फोक नृत्य समूह ने कम्बोडिया, वियतनाम और मलेशिया का भ्रमण किया। अन्य प्रयासों के रूप में 'हुए फेस्टिवल' वियतनाम में, और 'फूड फेस्टिवल' एवं 'एम.जी.सी टेक्सटाइल म्यूजियम' का शिलान्यास कम्बोडिया में और मलेशिया में सांस्कृतिक प्रस्तुति भारतीय समूह ने दी। इसी वर्ष वार्षिक भरतनाट्यम नृत्य में प्रतिभागिता के लिए भारतीय भरतनाट्चम समूह मलेशिया गया, 'चेन्नई नल्ला चेनई' नामक प्रदर्शनी का आयोजन भी मलेशिया में भारत द्वारा किया गया। भारत द्वारा 'वुमेन बाई वुमेन' और 'बुद्धिज्म इन इंडिया' नामक प्रदर्शनी नोम पेन्ह, कंबोडिया में लगाई गई। इसी वर्ष पपेट रामायण के मंचन के लिए इंडोनेशिया का समूह भारत आया। इतना ही नहीं 6 सदस्यीय असवारा नृत्य समूह पांचवे इंटरनेशनल डांस एंड म्यूजिक महोत्सव और 10 सदस्यीय समूह प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय रामायण मेला में प्रस्तुति के लिए समूह मलेशिया से भारत आया। सांस्कृतिक संबधों को जीवंत करने हेतु, भारत द्वारा विशिष्ट अतिथि कार्यक्रम के अंतर्गत 2014 में मलेशिया के पूर्व प्रधानमन्त्री तुन अब्दुला बदावी आमंत्रित किए गए। भारतीय सांस्कृतिक विरासत से जोड़ने के मन्तव्य के साथ 23-28 फरवरी 2015 को प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय रामायण मेले का उदघाटन भारत के माननीय प्रधानमन्त्री द्वारा फिक्की के सभागार में किया गया। इस महोत्सव में कम्बोडिया, इंडोनेशिया, मलेशिया, सिंगापुर, थाईलैंड और भारतीय समूहों ने प्रतिभाग किया। अन्य प्रयास के रुप में दिसम्बर 2014 और जनवरी 2015 के भारत आसियान कलाकारों के प्रवास पर आसियान देशों के कलाकारों द्वारा "मर्जिंग मेटाफर" नाम से समूह प्रदर्शनी इंडोनेशिया में आयोजित की गई। 2015 में इंडोनेशिया में 'भारत के इस्लामी स्मारक' नाम से चित्र प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। 12 सदस्यीय भंगड़ा और गिद्धा नृत्य समूह थाईलैंड संस्कृति मंत्रालय द्वारा आयोजित कार्यक्रम में गया। एक अन्य 8 सदस्यीय समूह ने थाईलैंड में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय समकालीन नृत्य महोत्सव में भारत ने प्रतिभाग किया। इस वर्ष राजा के जन्मोत्सव में भारत द्वारा सौराष्ट्र लोक कला केद्र के माध्यम से 10 सदस्यीय गुजराती लोक कला समूह थाईलैंड गया। भारत ने महत्मा गाँधी की मूर्ति चुलान्कोर्ण विश्वविद्यालय थाईलैंड को प्रदान की और इंडियन हेरिटेज सेण्टर में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस की प्रतिमा का अनावरण किया गया उसके उपरान्त महत्मा गाँधी और पंडित जवाहर लाल नेहरु की

प्रतिमा भी भेजी गयी।[30]

भारत ने दक्षिण पूर्व एशिया में सम्बन्धों को समृद्ध करने की प्रबल इच्छा के साथ "सागर संगमःट्रांस औसोनिक कल्चरल डायलॉग, कलिंग एंड इंडोनेशिया' नामक सेमीनार का आयोजन भारत में किया गया। भारत ने भारत की वास्तविक छवि अन्य राष्ट्रों तक पहुंचे इसी क्रम में इंडोनेशिया के उप राष्ट्रपति और इंडोनेशिया के प्रसिद्ध अकादमिक और नीति सम्यक को भारत के प्रमुख विश्वविद्यालयों का सम्मान पूर्वक भ्रमण करवाया गया। इसी वर्ष इंडोनेशिया से 15 सदस्यीय पपेट समूह का तीसरे अंतर्राष्ट्रीय भक्ति सम्मेलन के लिए भारत में आगमन हुआ। 12 सदस्यीय खोन रामाकिन समूह थाईलैंड से और 13 सदस्यीय 'अप्सरा समूह' सिंगापुर से द्वितीय अंतर्राष्ट्रीय रामायण मेला में प्रतिभाग देने के लिए भारत आया। 15 सदस्यीय नृत्य और संगीत समूह सातवें अंतर्राष्ट्रीय नृत्य और संगीत उत्सव में, अन्य अवसर पर 12 सदस्यीय समूह वियतनाम से भारत आया। भारत की विराट आध्यात्मिक धरोहर के माध्यम से भारत भारतवंशियों से जुड़ सकें इसके अनुपालन में, 21 सदस्यीय रामली इब्राहिम समूह सांस्कृतिक प्रस्तुति और 10 सदस्यीय रामली इब्राहिम समूह सिंहस्थ महापर्व उज्जैन में प्रतिभाग के लिए मलेशिया से भारत आया। भारत ने 10 सदस्यीय बालीवुड समूह मलेशिया मे प्रतिभागिता देने के लिए भेजा। भारत से स्नेहा चक्रधर को बाली मिशन में भरतनाट्यम प्रस्तुति के लिए भेजा। अन्य 6 सदस्यीय भरतनाट्यम समूह फेस्टिवल ऑफ़ भरतनाट्यम में प्रस्तुति के लिए मलेशिया गया। भारत ने आनंदों मुखर्जी को ओपेरा गायन के लिए इंडोनेशिया 10वीं वर्षगाँठ के अवसर अपने सम्बन्धों को मजबूत करने की प्रबल इच्छा से भेजा। 9 सदस्यीय जनजातीय संस्कृति समूह 'इंटरनेशनल इंडिजिनस आर्ट फेस्टिवल' में प्रतिभाग करने के लिए मलेशिया भेजा गया। भारत वियतनाम के राजनयिक सम्बन्धों के 45 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में 29 सदस्यीय सांस्कृतिक प्रतिनिधिमंडल भारत द्वारा सांस्कृतिक प्रस्तुति के लिए भेजा गया। भारत द्वारा 'आसियान रामायण प्लस' में प्रतिभाग करने और 'बैंकॉक इंटरनेशनल फेस्टिवल ऑफ़ डांस एंड म्यूजिक' में प्रतिभाग के लिए 15-15 सदस्यीय समूह थाईलैंड भेजा गया। 12 सदस्यीय भंगड़ा समूह 'सदर्न फ्रूट फेस्टिवल' में, 06 सदस्यीय 'डेमेंटिया' नामक बैंड समूह दिवाली उत्सव के लिए वियतनाम भेजा गया। भारतीय संस्कृति से परिचय कराने हेतु 12 सदस्यीय समूह बैशाखी मेला में प्रस्तुति के लिए सिंगापुर गया।[31]

भारत ने अपने सम्बन्धों को गति देते हुए, 2017 में ग्यारहवें 'रिदम ऑफ़ द अर्थ वर्ल्ड फेस्टिवल' और 'इंटरनेशनल मास्क फेस्टिवल' में भारतीय कलाकारों ने थाईलैंड में प्रतिभाग किया। भारत द्वारा भारतवंशियों से सम्बन्धों को मजबूती प्रदान करते हुए 2017 में पेंटिंग प्रदर्शनी 'इंडिया एट 70' नाम से थाईलैंड में आयोजित किया गया जिसको भारत फेस्टिवल के रूप में देखा गया। इसी वर्ष भारत द्वारा कुचिपुड़ी समूह को मलेशिया में प्रदर्शन हेतु प्रेषित किया गया। इसी वर्ष 'प्रतिष्ठित पूर्व छात्र पुरस्कार' से प्रोफ़ेसर दोलापार्न फुँखोंग (थाईलैंड) को सम्मानित किया। 2017 में 'डांस इंडिया पैसफिक' और 10 वें कला उत्सव महोत्सव में और 15 सदस्यीय देशज नागालैण्ड समूह क्योंग्पोंग कल्चरल सोसाइटी ने दीपावली के अवसर पर सिंगापुर में प्रतिभाग किया। इसी वर्ष 2017 में 'सिम्बल्स एंड स्क्रिप्ट्स- द लैंग्वेज ऑफ़ क्राफ्ट' में भारतीय समूह ने प्रतिभाग किया। जनवरी 2018 में आसियान देशों द्वारा रामायण महोत्सव का अयोजन दिल्ली में किया गया। 2018 में 12 सदस्यीय राजस्थानी समूह ने चिंग माई वर्ल्ड फेयर थाईलैंड में प्रतिभाग किया।[32]

2019 में, भारतीय दूतावास और विश्व के सबसे बड़े सामाजिक-अकादमिक इस्लामिक संगठन उलमा ने संयुक्त रूप से इंडोनेशिया में बुका पूसा (इफ्तार) कार्यक्रम की मेजबानी करते हुए सॉफ्ट पॉवर को नए आयाम देने का प्रयास किया। इसी वर्ष इंडोनेशिया में एक अन्य कार्यक्रम के दौरान भारतीय संगीत शिक्षक द्वारा 'इंटरनेशनल रेपल म्यूजिक फेस्टिवल' में 50000 दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर देने वाला आयोजन किया गया। अतुलनीय भारत मिशन के द्वारा इंडोनेशिया के प्रतिनिधिमंडल को भारत का भ्रमण कराया गया। मलेशिया की बाटू गुफा में 1000 से अधिक लोगों के साथ अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया गया। महात्मा गाँधी की 150 जयंती के अवसर पर एक वृहद कार्यक्रम साइबरजया यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ मेडिकल साइंसेज में आयोजित किया गया। भारत ने हिंदी प्रसार के लिए स्वामी विवेकानद सांस्कृतिक केंद्र, यांगून, म्यामांर के मुख्य गेट पर प्रतिदिन हिंदी भाषा का एक नया शब्द लगाया जा रहा है। बैंकॉक में भारत

द्वारा माइंड ट्रेनिंग सेशन 'इमोशनल वेलनेस एंड हीलिंग' और 'हीलिंग ए बिजी माइंड' आयोजित किया गया। इसी वर्ष एक पुस्तक 'रामायण फुटप्रिंट्स इन साउथ ईस्ट एशियन कल्चर एंड हेरिटेज' नाम से विमोचन किया गया।[33]

2020, में भारत ने सम्बन्धों को अत्याधिक प्रगति देते हुए, भारत में "विदेश में भारतीय संस्कृति को बढ़ावा देने में प्रवासी भारतीय की भूमिका" नामक विषय पर व्याख्यान आयोजित किया गया था, जिसमे पूर्व क्षेत्रों के लिए कार्यक्रम में मारीशस के अविनाश तिलक, माननीय मंत्री कला व संस्कृति मंत्री सम्मानित अतिथि के रुप में थे। अन्य प्रमुख पहल के रुप में इसी वर्ष अक्टूबर में "वीविंग रिलेशंसः टेक्सटाइल ट्रैडिशन" नामक अंतर्राष्ट्रीय वेबिनार का आयोजन किया गया जिसमे इंडोनेशिया और वियतनाम ने भाग लिया। जवाहर लाल नेहरु सांस्कृतिक केंद्र, जकार्ता, इंडोनेशिया में 21, जून, 2020 को विश्व संगीत दिवस भारतीय दूतावास के सभागार में मनाया गया, जिसमें भारत के राजदूत ने भाग लिया। इसी वर्ष 150वीं गाँधी जयंती के अवसर पर एक पेंटिंग प्रदर्शनी, एक ओडिसी, एक बाली नर्तक के साथ सांस्कृतिक तबला प्रदर्शनी का आयोजन इंडोनेशिया में किया गया। इसी वर्ष अन्य गतिविधि के रूप में अनेकों वार्ता और कार्यक्रम इंडोनेशिया में आयोजित किया गया जिनमें, 'ए कल्चरल सूत्रा टाक', 'योगा दरी रुमा', 'इंटरनेशनल डे ऑफ़ योगा जॉइंट सेलिब्रेशन', 'भारत इंडोनेशिया पतंग प्रदर्शनी', 'सूफी कउवाली कार्यक्रम', 'वालीवुड मुजिकल इवनिंग' का आयोजन किया गया। इसी वर्ष स्वामी विवेकानंद सांस्कृतिक केंद्र द्वारा वीडियो कांफ्रेंस से कोरिया और वियतनाम में भारतीय सांस्कृतिक झलक पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन भी किया गया। भारतीय दूतावास और वियतनाम में कवांग निन्ह प्रान्त की सरकार के मार्गदर्शन में 21 जून, 2020 स्वामी विवेकानंद संस्कृति केंद्र के माध्यम से यूनेस्को विश्व धरोहर स्थल हैलांग खाड़ी पर 6वें अंतरराष्ट्रीय योग दिवस का आयोजन किया गया । इसी वर्ष वियतनाम में, आयुर्वेद दिवस और हिंदी दिवस तथा बुद्ध और उनका दर्शन पर पांच व्याख्यान आयोजित किये गये। 2020 में चम्पा, खमेर, इंडोनेशिया संस्कृति से उदाहरणों का चित्रण करके 'वियतनाम में मूर्तिकला और मन्दिरों में शिव का महत्व' पर और 'चंपा में मूर्तिकला और मन्दिरों में शिव' के महत्व पर प्रकाश डाला गया। इसी वर्ष वियतनाम में पांच दिवसीय बेविनार 'योग फॉर वेलनेस एंड हार्मनी इन मॉडर्न लाइफ' का आयोजन किया गया जिसके वक्ता भारत से आमंत्रित किए गये थे। जुलाई 2020 में भारत द्वारा गाँधी जी की प्रतिमा को वियतनाम प्रेषित किया गया। इसी वर्ष थाईलैंड में शिल्पांकन विश्वविद्यालय में संस्कृत पीठ का रिन्यूअल भारतीय राजदूत और शिल्पांकन विश्वविद्यालय के अध्यक्ष के साथ एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर करके किया गया।[34]

भारत की अमिट छाप को भारतीय सम्बन्धों की संपदा के रूप में प्रयुक्त करते हुए 2020 में, म्यांमार में भारत द्वारा संस्कृत भाषा के संवर्धन के लिए 'संस्कृति दिवस' और 'कालिदास दिवस' का आयोजन में किया गया। वैचारिक साम्यता को आधार बनाते हुए सांस्कृतिक सम्बन्धों को गति देने हेतु, भारतीय सांस्कृतिक केंद्र के 10 वर्ष पूर्ण होने पर एक विचार श्रंखला 'ग्लिम्प्स ऑफ़ रिच संस्कृत लिटरेचर' का आयोजन किया गया। इसी वर्ष लोकमान्य तिलक की जयंती पर 'ट्रिब्यूट टू लोकमान्य तिलक' नामक डिजिटल एगजीविशन का आयोजन किया गया। म्यामार में एक रंगोली प्रतियोगिता का आयोजन संस्कार भारती द्वारा दिवाली के अवसर पर किया गया। विश्व संगीत दिवस 'सुरों की फुहार' के रूप में आयोजित किया गया। 'नो योर नेबर' नाम से एक अंतर्राष्ट्रीय बेबिनार का आयोजन स्वामी विवेकानंद सांस्कृतिक केंद्र यांगून और मुम्बई विश्वविद्यालय के तत्वाधान में आयोजित किया गया। स्वामी विवेकानन्द सांस्कृतिक केंद्र बैंकॉक, थाईलैंड द्वारा स्वामी विवेकानद की जयंती पर स्वामी जी की प्रतिमा का अनावरण किया गया और 'स्वामी विवेकानंद मैसज टू यूथ' नाम से वर्चुअल टॉक का आयोजन किया गया। भारतीय सांस्कृतिक विरासत को ध्यान देते हुए 'अयोध्या टू अयोथ्या- कल्चरल हाईवे' नामक पैनल चर्चा के माध्यम से संस्कृति और पुरातत्व के आधार भारत और थाईलैंड में राम और रामायण पर विशद चर्चा का आयोजन किया गया। स्वामी विवेकानन्द सांस्क्रतिक केंद्र बैंकॉक, थाईलैंड द्वारा भारतीय संस्कति के अनेकों आयामों को समझने हेतु कई वेबिनार का आयोजन किया गया जिनमें 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस एंड इंडियन साइंटिफिक ट्रेडिशन', 'आर्ट एंड साइंस ऑफ़ रंगोली' 'आयुर्वेदा ए पैराडाइम शिफ्ट', 'अंडरस्टैंडिंग आयुर्वेद एंड इट्स सिंपल रेमेडी' और 'द एलीवेटर'

नामक हिंदी थाई नाटक का मंचन किया गया। वर्चुअल कला यात्रा महोत्सव का आयोजन थाईलैंड में किया गया इस आयोजन में थाईलैंड से रामायण समूह को विडियो रिकॉडिंग की सुविधा प्रदान कर गयी जिसमें दो महाकाव्यों रामायण और महाभारत के प्रसंगों को प्रदर्शित किया गया।[35]

निष्कर्ष : भारत विश्व का सबसे विशाल लोकतंत्र व बहुलवादी समाज है। इसके साथ ही भारत 2050 तक विश्व की तीसरी महाशक्ति बन जायेगा। भारत के पास वैभवशाली विविधता की विरासत है, हमारे पास विश्व को देने के लिए हजारों वर्षों पुराना इतिहास है। भारत आज वसुधैव कुटुम्बकम के मन्त्र से प्रेरित होकर अपने पूर्वजों से प्राप्त विरासत को दुनिया के समक्ष प्रस्तुत कर रहा है।

हाल ही में 'युसुफ इशांक इंस्टिट्यूट ऑफ़ सिंगापुर' में एक सर्वेक्षण किया गया। इस सर्वेक्षण के परिणाम से यह पता चलता है कि आसियान देशों में भारत की छवि सुदृढ़ हुई है। आसियान देश चीन की रणनीतिक प्रतिद्वंद्विता से बचने के लिए भारत को एक सशक्त विकल्प के रूप में चुनना पसंद कर रहे हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि आसियान देशों द्वारा चीन को एक संदेहास्पद शक्ति के रूप में देखा जा रहा है, जबकि भारत को उसकी सांस्कृतिक विरासत के कारण एक विश्वसनीय शक्ति के रूप में देखा जा रहा है। इसी क्रम में संकटकालीन समय में भारतीय नौ सेना और वायु सेना ने ऑपरेशन समुद्र मैत्री संचालित किया। इसके उपरान्त 2021, कोविड काल में वैक्सीन मैत्री के माध्यम से चिकित्सा सम्बन्धी सहायता, वैक्सीन और दवाइयों की आपूर्ति की गयी है। भारत सरकार द्वारा विदेश नीति में सॉफ्ट पॉवर के संवर्द्धन के लिए अपनायी गई पहलों का विशद अवलोकन शोध पत्र में किया गया है जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है, कि भारत के पास सॉफ्ट पॉवर के लिए पर्याप्त संपदा है किन्तु कुछ सीमाएं दिखाई देती हैं, जो भारत की सॉफ्ट पॉवर की प्रगति को धीमा कर देती हैं। प्रथम, सॉफ्ट पॉवर के संचालन में लगे सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों में समन्वय की अधिक आवश्यकता दिखाई देती है। द्वितीय, भारतीय मिशन अथवा दूतावास से सम्बन्धित कार्यों में उत्साही जनशक्ति की थोड़ी कमी है। तृतीय, भारतीय सॉफ्ट पॉवर के लिए राष्ट्रीय नीति की नितांत आवश्यकता है। हालाँकि भारत अधिक सक्रियता के साथ सॉफ्ट पॉवर के संवर्द्धन के साथ विश्व गुरु बनने की ओर अग्रसर है। वर्तमान समय में भारत हिन्द प्रशांत क्षेत्र में सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी, नागरिक से नागरिक (पी टू पी) जुड़ाव और भारतवंशियों के माध्यम से निरंतर अपनी सक्रिय भूमिका के साथ सॉफ्ट पॉवर राष्ट्र के रूप में जाना जा रहा है।

सन्दर्भ

1. विद्यालंकार एस, 'दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति', श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 1991, पृ. 17
2. पूर्वोक्त विद्यालंकार, पृ. 09
3. नाई.जे., 'पब्लिक डिप्लोमेसी एंड सॉफ्ट पॉवर', द एनेल्स ऑफ़ द अमेरिकन एकेडेमी ऑफ़ पोलिटिकल एंड सोशल साइंस, 616(1), 2008, पृ. 94-109 https://doi.org/10.1177/0002716207311699
4. नैंसी.एस और टायलर फ्लिप, 'रोटलेज हैण्डबुक ऑफ़ पब्लिक डिप्लोमेसी', रोटलेज, 2019, पृ. 1-13
5. केशवन के., 'विशिष्ट व्याख्यान', इंडियाज एक्ट ईस्ट पालिसी एंड रीजनल कोऑपरेशन ओ.आर.एफ़, 2020 https://www.orfonline.org/expert-speak/indias-act-east-policy-and-regional-cooperation-61375/
6. मजुमदार ए., 'इंडियाज सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी अंडर द मोदी एडमिनिस्ट्रेशन', बुद्ध, डायस्पोरा एंड योग, एशियन अफेयर्स, 2018, 49-3, पृ. 468-491
7. सूरी एन., 'पब्लिक डिप्लोमेसी इन इंडियाज फारेन पालिसी', स्ट्रेटजिक एनालिसिस, 2011, 35(2), पृ. 10-36.
8. कुमारी नै., 'सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी इन इंडिआज फारेन पालिसी अंडर द मोदी गवर्नमेंटः चौलेन्ज एंड प्रोस्पेक्टस', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ पोलिटिकल साइंस एंड गवर्नेंस, 2022, 5(1) पृ. 24-28
9. नाई. जे., 'द फ्यूचर ऑफ़ पॉवर', न्यू यार्क, पब्लिक अफेयर्स, 2011, पृ. 43
10. नाई.जे., 'सॉफ्ट पॉवर द मीन्स टू सक्सेस इन वर्ल्ड', न्यूयार्क, पब्लिक अफ्फेर्स, 2005, पृ. 5-6
11. नाई.जे., 'सॉफ्ट पॉवर', फारेन पालिसी, 1990, पृ.167
12. वही, पृ. 155
13. नाई.जे., 'पब्लिक डिप्लोमेसी एंड सॉफ्ट पॉवर', द एनेल्स ऑफ़ द अमेरिकन एकेडेमी ऑफ़ पोलिटिकल एंड सोशल साइंस, 616(1), 2008, पृ. 94-109 https://doi.org/10.1177/0002716207311699
14. कुमार यू., 'इंडियाज सॉफ्ट पॉवर एज ए पिलर ऑफ़ फारेन पालिसी', भारतीय दूतावास काबुल अफगानिस्तान https://eoi.gov.in/kabul/?11226?000
15. अमरेश, 'द राइज ऑफ़ इंडिया एज अ ग्लोबल सॉफ्ट पॉवर', गेट वे ऑफ़ इंडिया, 06 अगस्त 2021

https://www.bridgeindia.org.uk/the-rise-of-india-as-a-global-soft-power/

16. प्रेस इन्फोर्मेशन ब्यूरो, भारत सरकार, 17 दिसम्बर 2018 https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1556296
17. कुमारी नै., पूर्वोक्त, पृ. 24-28
18. संयुक्त राष्ट्र संघ सूचना केंद्र, 2014 https://www.un.org/en/observances/yoga-day
19. मुलेन और गांगुली, 'द राइज ऑफ़ इंडियाज सॉफ्ट पॉवर', फोरेन पालिसी, 2012 https://foreignpolicy.com/2012/05/08/the-rise-of-indias-soft-power/
20. मजूमदार ए., 'इंडियाज पब्लिक डिप्लोमेसी इन ट्वेंटी फर्स्ट सेंचुरी कम्पुनेंट्स ऑब्जेक्टिव एंड चौलेंजेज', इण्डिया क्वार्टर्ली, 76 (1),पृ. 24-39
21. विदेश मंत्रालय प्रतिवेदन, इंडियाज सॉफ्ट पॉवर एंड कल्चरल डिप्लोमेसी प्रोस्पेक्ट्स एंडलिमिटेशन 2021-2022, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, 2022 https://loksabhadocs.nic.in/lsscommittee/External%20Affairs/17_External_Affairs_16.pdf
22. प्रेस इन्फोर्मेशन ब्यूरो, भारत सरकार, 26 अप्रैल, 2022 https://pib.gov.in/PressReleseDetailm.aspx?PRID=1820319
23. वही प्रतिवेदन, https://loksabhadocs.nic.in/lsscommittee/External%20Affairs/17_External_Affairs_16.pdf
24. लेन्त्री एस., 'इंडियन डायस्पोरा सॉफ्ट पॉवर इन द इंडो पैसफिक', गेट वे हाउस, 31 मार्च 2022 HTTPS://WWW.GATEWAYHOUSE.IN/INDIAN-DIASPORA-SOFT-POWER-IN-THE-INDO-PACIFIC/
25. मजूमदार ए., 'इंडियाज सॉफ्ट पॉवर डिप्लोमेसी अंडर द मोदी एडमिनिस्ट्रेशन', बुद्धिज्म, डायस्पोरा एंड योग, एशियन अफेयर्स, 2018, 49-3, पृ. 468-491.
26. पुरषोत्तम यू., 'शिफ्टिंग परसेप्शन ऑफ़ पॉवर : सॉफ्ट पॉवर एंड इंडियाज फोरेन पालिसी', जर्नल ऑफ़ पीस स्टडीज वैल्यूम 17 इश्यु 2-3, अप्रैल, 2017
27. प्रेस इन्फोर्मेशन ब्यूरो, भारत सरकार, 06-नवम्बर-2014 https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=111134
28. अग्रवाल आर., 'आसियान एंड इंडियाज एक्ट ईस्ट पालिसी, डिप्लोमेसी एंड बियोंड प्लस', ए जर्नल ऑफ़ फारेन पालिसी एंड नेशनल अफेयर्स, 2023, पृ28-29
29. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, स्कॉलरशिप मैनुअल 2022-2023, 2022 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/2022-08/Scholarship%20Manual%20Updated%2024%20August%202022.pdf
30. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, वार्षिक विवरण 2014-2015, 2014 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/Annual%20reports/Annual%20Report%202014-15%20ICCR%20%28English%29.pdf
31. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, वार्षिक विवरण 2016-2017, 2016 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/Annual%20reports/Annual_Report_2016-17_English.pdf
32. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, वार्षिक विवरण 2017-2018,2017 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/Annual%20reports/Annual%20Report%202017-2018%20%20%281%29.pdf
33. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, वार्षिक विवरण 2019-2020, 2019 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/202112/ICCR%20English%20Report%202021%20L.pdf
34. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, वार्षिक विवरण 2020-2021, 2020 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/2022-07/Annual%20Report%20202021_16082021%20final.pdf
35. भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद, वार्षिक विवरण 2021-2022, 2021 https://www.iccr.gov.in/sites/default/files/2023-02/Annual%20Report%202021-22%20%28English%29%20Final%202nd%20Jan.%202023.pdf

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

गुजरात के प्रशिक्षित ईडीपी लाभार्थियों की स्थितिः दक्षिण प्रदेश के दो जिलों का अध्ययन

❑ डॉ. अरुण एन. पंडया
❖ नविनकुमार एम. रोहित

सूचक शब्द : उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी), प्रशिक्षणार्थी, जनजातीय उद्यमिता, स्वरोजगार, दक्षिण गुजरात।

अनुसूचित जनजाति के विकास के लिए स्वतंत्रता के पश्चात से नीति अंतर्गत कई सारी योजनाओं एवं कार्यक्रमों को कार्यान्वित किया गया है। इन्हीं में से एक प्रकल्प जनजातीय समुदाय के लोगों में उद्यमशीलता को विकसित करने के लिए देश के 12 राज्य में प्रशिक्षण कार्यक्रम सी.इ.डी. (सेन्टर फॉर इंटरप्रेन्योरशिप डेवलपमेंट) संस्था के माध्यम से सन 1983 से चल रहा है। प्रस्तुत प्रपत्र में गुजरात राज्य के दक्षिण प्रदेश के तापी एवं डांग जिलों के जनजातीय समुदाय के लोगों में इस प्रकल्प से जुड़ें हुए प्रशिक्षणार्थियों का समाज कार्य के परिप्रेक्ष्य से अभ्यास करने का एक नम्र प्रयास किया गया है। वर्ष 2013 से 2022 तक सी.इ.डी. के माध्यम से इन जिलों के कुल 369 व्यक्तिओं को प्रशिक्षण दिया गया है जिनमें से पद्धतिसर निदर्शन का प्रयोग करते हुए साक्षात्कार अनूसूचि के माध्यम से 185 चयनित ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों के साथ गहन साक्षात्कार से आवश्यक सूचनाएं प्राप्त की गई हैं। साथ में अध्ययन को सशक्त बनाने के लिए द्वैतीयक स्त्रोतों का भी उपयोग किया गया है। इन प्रशिक्षणार्थियों की वर्तमान में क्या स्थिति है? एवं उनकी सफलता और असफलता के विभिन्न पहलुओं को उजागर करने का प्रयत्न मात्र है।

भारत पिछले एक दशक में लगभग 7 प्रतिशत की औसत सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर के साथ विकासशील देशों में अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। सूचना प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढांचे और सेवाओं के क्षेत्र में काफी आर्थिक प्रगति हुई है। प्राथमिक क्षेत्र (कृषि, वानिकी और मत्स्य पालन) जो जनसंख्या के 68 प्रतिशत से अधिक (2011 की जनगणना के अनुसार 1210 मिलियन में से 830 मिलियन) का हिस्सा है, हालांकि औसत वार्षिक वृद्धि 4 प्रतिशत प्रति वर्ष या थोड़ा सा कम है। ग्रामीण और शहरी विकास के बीच की खाई एक प्रमुख मुद्दा है। इस समस्या का प्रभावी समाधान ग्रामीण क्षेत्र में उद्यमशीलता गतिविधियों को विकसित करना प्रतीत होता है। ग्रामीण भारत की आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक स्थिति कौशल विकास की मांग करती है, इसलिए ग्रामीण लोगों को न केवल कृषि कार्य का समर्थन करने के लिए बल्कि बेहतर आजीविका के लिए अतिरिक्त आय उत्पन्न करने के लिए अपनी नियमित कृषि गतिविधियों के साथ व्यवसायिक गतिविधियों में सम्मिलित होने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) एक प्रभावी प्रयास कहा जा सकता है।

भारत में उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी): एक ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य : उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के युग में सरकार की चिंता युवाओं के बीच उद्यमिता क्षमताओं के विकास के माध्यम से रोजगार के अधिक अवसर पैदा करना है। भारत ने स्वतंत्रता से पहले अपने विकास पथ की योजना बनाई थी और इस तरह की विकासात्मक प्रक्रियाओं की जड़ें सर एम. विश्वेशरैया योजना (1934), पंडित नेहरू की अध्यक्षता वाली राष्ट्रीय योजना समिति, बॉम्बे प्लान (1944), एम. एन. रॉय की पीपुल्स प्लान और गांधीवादी योजना के माध्यम से खोजी गईं। स्वतंत्रोपरांत देश के सामने गरीबी और बेरोजगारी सबसे बड़ी चुनौती थी। आर्थिक विकास के लिए नियोजित प्रयास 1950 में भारत के योजना आयोग की स्थापना के साथ प्रारंभ किए गए थे। आयोग ने आर्थिक विकास की नीति के रूप में पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण किया था। बाद में गरीबी, बेरोजगारी और शोषण से मुक्ति के लिए सामाजिक पहलू पर अधिक जोर दिया गया, जिससे देश

❑ सह प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, वीर नर्मद दक्षिण गुजरात युनीवर्सिटी, सूरत (गुजरात)
❖ शोध अध्येता, समाजशास्त्र विभाग, वीर नर्मद दक्षिण गुजरात युनीवर्सिटी, सूरत (गुजरात)

में छिपी हुई क्षमता बाहर आ सके।

इसके लिए नीति निर्माताओं ने देश में लघु उद्योगों के संवर्धन और विकास की वकालत शुरू कर दी। परिणाम स्वरूप, साठ के दशक के प्रारंभ में लघु क्षेत्र को रोजगारोन्मुख क्षेत्र के रूप में मान्यता दी गई। साठ के दशक के अंत तक छोटे क्षेत्र के लिए रोजगारोन्मुख सोच में बदलाव आया और अब छोटे क्षेत्र को उद्यमशीलता की क्षमता का उपयोग करने के लिए एक प्रभावी साधन के रूप में पहचाना गया जो अब तक देश में निष्क्रिय था।

उपक्रम स्थापित करने में उद्यमियों के सामने आने वाली विभिन्न समस्याओं का अनुभव करते हुए, सरकार ने उद्यमियों को प्रोत्साहन पैकेज देने का निर्णय लिया जिसमें केंद्रीय, राज्य और स्थानीय स्तरों के विभिन्न सहायक संगठनों के माध्यम से प्रदान की जाने वाली वित्तीय सहायता और प्रोत्साहन, ढांचागत सुविधाएं तथा तकनीकी और प्रबंधकीय मार्गदर्शन सम्मिलित हैं।

इस अनुभव ने योजनाकारों और नीति निर्माताओं को यह सम्मिलित कराया कि उपक्रम स्थापित करने के लिए सुविधाएं और प्रोत्साहन निःसंदेह आवश्यक हैं, लेकिन उद्यमियों से पर्याप्त प्रतिक्रिया मांगने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। अतः अब यह अनुभव किया गया कि उद्यमिता विकास के लिए मानव विकास पर बल देना एक आवश्यक शर्त है। इस प्रकार उद्यमिता विकास पर गंभीर चिंतन यहीं से शुरू हुआ।

सन 1962 में हैदराबाद में लघु उद्योग विस्तार और प्रशिक्षण संस्थान (एसआईइटी), जो अब राष्ट्रीय लघु उद्योग विस्तार प्रशिक्षण संस्थान (एनआईएसआईइटी) है, की स्थापना के साथ भारत में उद्यमशीलता के विकास के ठोस प्रयास शुरू हुए। एसआईइटी को भारत में उद्यमिता विकास में अग्रणी कार्य करने के लिए हार्वर्ड विश्वविद्यालय के समर्थन से एक अवसर मिला।

एसआईइटी ने हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डेविड सी. मैकक्लेलैंड के सहयोग से आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु के राजामुंडी, काकीनाडा और वेल्लुर शहरों में 5 साल का प्रशिक्षण और शोध कार्यक्रम आयोजित किया। मैकक्लेलैंड ने सिद्ध किया कि उचित शिक्षा और प्रशिक्षण के माध्यम से एक उद्यमी की महत्वपूर्ण गुणवत्ता, जिसे मैकक्लेलैंड ने 'उपलब्धि की आवश्यकता' कहा, को विकसित किया जा सकता है। तथ्य यह है कि मैकक्लेलैंड का यह सफल प्रयोग भारत में उद्यमिता विकास के लिए एक बीज साबित हुआ जो अब तक देश में उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) के रूप में एक आंदोलन बन गया है।[1]

मोहंती[2] ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि, सरकार और वित्तीय संस्थानों ने प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से देश में उद्यमिता विकसित करने के बारे में सोचना शुरू किया। गुजरात औद्योगिक निवेश निगम (जीआईआईसी) ने पहली बार 1970 में उद्यमिता विकास पर तीन महीने का प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किया। छोटे पैमाने के उपक्रमों, उनके प्रबंधन और उनसे लाभ कमाने के लिए 1970 के दशक के उत्तरार्ध तक जीआईआईसी के ईडीपी की जानकारी देश के अन्य भागों में भी फैल गई। इन प्रयासों के उत्साहजनक परिणाम 1979 में सेंटर फॉर एंटरप्रेन्योरशिप डेवलपमेंट (सीईडी), अहमदाबाद की स्थापना के रूप में सामने आए। यहाँ, यह उल्लेखनीय है कि सीईडी, अहमदाबाद उद्यमिता विकास के लिए पूरी तरह से प्रतिबद्ध अपनी तरह का पहला केंद्र था। सीईडी, अहमदाबाद की सफलता से प्रेरित और प्रभावित आईडीबीआई, आईएफसीआई, आईसीआईसीआई, और एसबीआई जैसे राष्ट्रीय स्तर के वित्तीय संस्थानों ने गुजरात सरकार के सक्रिय समर्थन से 1983 में 'भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान (इडीआईआई)' नामक एक 'राष्ट्र संसाधन संगठन' प्रायोजित किया। इस संस्थान का देश में उद्यमिता विकास गतिविधियों के विस्तार और संस्थागतकरण की जिम्मेदारी सौंपी गई है जिसका संस्थान सफलतापूर्वक निर्वहन कर रहा है। 1983 में इडीआईआई की स्थापना के समय ही भारत सरकार ने देश में उद्यमिता विकास गतिविधियों के समन्वय के लिए 'राष्ट्रीय उद्यमिता और लघु व्यवसाय विकास संस्थान' (एनआईइएसबीयुडी) की स्थापना की। समय के साथ, कुछ राज्य सरकारों ने राष्ट्रीय स्तर के वित्तीय संस्थानों के समर्थन से राज्य स्तरीय उद्यमिता विकास केंद्र (सीईडी) या उद्यमिता विकास संस्थान (आईईडी) की स्थापना की। अब तक, बारह राज्यों- बिहार, गोवा, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश ने या तो सीईडी या आईईडी स्थापित कर लिया है। इन राज्यों में सीईडी या आईईडी की स्थापना से पहले तकनीकी परामर्श संगठन (टीसीओ) द्वारा आईडीपी आयोजित किए

गए थे। एनआईइएसबीयुडी के अध्ययन के अनुसार, देश में लगभग 686 संगठन ईडीपी के संचालन में सम्मिलित हैं जिन्होंने सैकड़ों ईडीपी आयोजित करके हजारों लोगों को प्रशिक्षण दिया है।

2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121 करोड़ में से 8.6 प्रतिशत जनजातीय जनसंख्या है। स्वतंत्रता के बाद से केंद्र और विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा समय-समय पर जनता के कल्याण और भलाई के लिए कई योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किए गए हैं और जनजातीय समुदायों को मुख्यधारा में लाने के लिए विशेष ध्यान दिया गया है। अब तक 184 एकीकृत जनजातीय विकास परियोजनाएं (आईटीडीपी), सघन अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों के लिए गहन क्षेत्र विकास दृष्टिकोण (आईटीडीए) के 277 पैकेज और आदि जनजातीय समूहों के लिए 73 सूक्ष्म परियोजनाएं स्थापित की गई हैं। आदिवासियों को शोषण से बचाने के लिए उनके विकास के लिए विभिन्न सहकारी संस्थाओं का गठन किया गया। एससी और एसटी समुदायों को सशक्त बनाने के लिए, सरकार ने जनजातीय उद्यमिता विकास के लिए वन धन योजना, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति हब, स्टैंड-अप इंडिया, और प्रधान मंत्री कौशल विकास योजना (पीएमकेवीवाय) जैसी योजनाएं शुरू की हैं तथा इसके अतिरिक्त ट्राइफेड, भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान (इडीआईआई), कौशल विकास और उद्यमिता मंत्रालय, तथा उद्यमिता विकास के लिए उद्यमिता विकास केंद्र (सीईडी) उद्यमिता जैसे संगठन भी स्थापित किए हैं।

साल 2020 के बजट आवंटन के अनुसार, भारत सरकार ने कौशल भारत मिशन के लिए 3000 करोड़ रुपये तथा साल 2021 में जनजातीय मामलों के मंत्रालय को 7524.87 करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे। इसमें जनजातिओं को वित्तीय, शैक्षिक, स्वास्थ्य और अधिकारिता सहायता प्रदान करना शामिल है। ऐसे कार्यक्रमों और योजनाओं के बावजूद उद्यमिता में जनजातीय समुदाय के लोगों की भागीदारी अभी भी कम है। उदाहरण के लिए, 6वीं आर्थिक जनगणना रिपोर्ट[3] 2013-14 से पता चला कि 'निजी स्वामित्व' की श्रेणी में आने वाले 11.4 प्रतिशत प्रतिष्ठान अनुसूचित जाति के, 5.4 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के, 40.8 प्रतिशत अन्य पिछड़े वर्ग के और 42.4 प्रतिशत अन्य वर्गों से हैं। ये आंकड़े अनुसूचित जनजातियों और अन्य समुदायों के बीच उपक्रम स्थापना के संदर्भ में एक बहुत बड़ा अंतर दर्शाते हैं।

भारत में जनजातीय स्वास्थ्य रिपोर्ट 2018[4] से पता चलता है कि 2001 और 2011 की जनगणना रिपोर्ट के बीच, जनजातीय किसानों की संख्या में 10 प्रतिशत की कमी आई है जबकि खेतिहर मजदूरों की संख्या में 9 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। देश की लगभग 55 प्रतिशत जनजातीय आबादी अब अपने पारंपरिक आवासों के बाहर निवास करती है। जनजातीय आबादी का इस तरह का प्रवास, जैसा कि रिपोर्ट इंगित करती है, संभवतः आजीविका और शैक्षिक अवसरों की तलाश में जनजातीय लोगों का जनजातीय से गैर-जनजातीय क्षेत्रों में एक प्रवजन है। ऐसा प्रतीत होता है कि आजीविका का संकट इस पलायन को उत्प्रेरित कर रहा है।

गुजरात सरकार ने भी जनजातियों के बीच उद्यमशीलता की क्षमता बढ़ाने के लिए जनजातीय समुदाय के अनुकूल पहल शुरू की है जिसमें राज्य सरकार द्वारा स्थापित उद्यमिता विकास केंद्र (सीईडी) 1979 से उद्यमिता विकास प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है तथा युवा उद्यमियों को उद्यमशीलता सहायता प्रदान करने के लिए पूर्ण रूप से समर्पित संगठन है। स्थापना के बाद से पिछले 40 वर्षों में संगठन द्वारा हजारों प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं। संस्थान उद्यमिता विकास प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए केंद्र सरकार और अन्य शैक्षणिक संस्थानों के साथ भी सहयोग कर रहा है, जैसे कि भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान (इडीआईआई), ग्रामीण प्रबंधन संस्थान आनंद (इरमा), राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति हब (एनएसएसएच), गुजरात और अन्य स्थानीय गैर सरकारी संगठन।

साहित्य समीक्षा : भारत में उद्यमिता विकास की तस्वीर प्राप्त करने के लिए पूर्व में हो चुके अध्ययनों की समीक्षा की गई है। समीक्षा को दो भागों में विभाजित किया गया है, एक उद्यमिता, उद्यमशीलता की अवधारणाओं की उत्पत्ति और सामाजिक कार्य के दृष्टिकोण से संबंधित है तथा दूसरे खंड में अनुसंधान अध्ययन सम्मिलित हैं जो भारत के संदर्भ में ईडीपी के मूल्यांकन पर किए गए हैं।

एल्ड्रिच के अनुसार उद्यमशीलता कार्य की अवधारणा के उद्भव से बहुत पहले फ्रेंच भाषा में 'एंटरप्रेन्योर' शब्द दिखाई दिया। 16वीं शताब्दी के प्रारंभ में यह उन लोगों

के लिए लागू किया गया था जो सैन्य अभियानों में सम्मिलित थे और 17वीं शताब्दी तक इसे निर्माण और किलेबंदी जैसी सिविल इंजीनियरिंग गतिविधियों को आच्छादित करने के लिए विस्तारित किया गया था, हालांकि यह केवल 18वीं शताब्दी के प्रारंभ में ही इस शब्द का प्रयोग आर्थिक गतिविधियों को संदर्भित करने के लिए किया गया था।[5]

गार्टनर[6] ने उद्यमियों और गैर-उद्यमियों के बीच व्यक्तित्व और पृष्ठभूमि में अंतर का अध्ययन किया और पाया कि उद्यमियों की सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और शैक्षिक पृष्ठभूमि गैर-उद्यमियों से काफी अलग हैं।

स्केरेर रॉबर्ट, और अन्य[7] के अनुसार उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) की अवधारणा के लिए आम तौर पर एक अमेरिकी सामाजिक मनोवैज्ञानिक और उद्यमिता के क्षेत्र में एक प्रमुख शोधकर्ता डेविड मैकक्लेलैंड और उनकी टीम ने 1960 के दशक के अंत में, विकासशील देशों में उद्यमिता पर एक अध्ययन किया और पाया कि उद्यमिता की कमी आर्थिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण बाधा थी। उन्होंने सफल व्यवसायों को प्रारंभ करने और विकसित करने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल और संसाधनों के साथ इच्छुक उद्यमियों को प्रदान करने के साधन के रूप में ईडीपी के निर्माण की वकालत की। तभी से, ईडीपी की अवधारणा विकसित हुई है और उद्यमिता और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए दुनिया भर में सरकारों, गैर-लाभकारी संगठनों और शैक्षणिक संस्थानों द्वारा विभिन्न रूपों में लागू की गई।

सालेबे[8] ने सामाजिक कार्य में एक सैद्धांतिक ढांचे के रूप में शक्ति परिप्रेक्ष्य के बारे में लिखा, जो केवल उनकी समस्याओं और कमियों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय व्यक्तियों और समुदायों की अंतर्निहित शक्तियों और क्षमताओं पर जोर देता है। इस अवधारणा को कई प्रभावशाली सामाजिक कार्य विद्वानों और विचारकों द्वारा विकसित और विस्तारित किया गया है।

राव और वेंकट राव[9] आंध्र प्रदेश में अनुसूचित जाति समुदायों पर उद्यमिता विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों के प्रभाव का मूल्यांकन करते हैं। उन्होंने उल्लेख किया है की अनुसूचित जाति भारत में सबसे वंचित समुदायों में से हैं और महत्वपूर्ण आर्थिक और सामाजिक चुनौतियों का सामना करती हैं। तदुपरांत उनका तर्क है कि हाशिए पर रहने वाले समुदायों के बीच आर्थिक विकास और सामाजिक समावेश को बढ़ावा देने के लिए उद्यमिता विकास एक प्रभावी रणनीति हो सकती है।

पाटिल और कुमार[10] ने गुजरात के डांग जिले की जनजातिओं में उद्यमिता की सफलता में योगदान देने वाले कारकों में सामुदायिक समर्थन और पारंपरिक ज्ञान जैसे सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके अतिरिक्त, क्षेत्र में उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए सरकारी समर्थन और बुनियादी ढांचे के महत्व की भी पहचान की। यह अध्ययन सीमांत समुदायों में उद्यमशीलता की समझ में योगदान देता है और नीति निर्माताओं को डांग और अन्य समान क्षेत्रों में जनजातियों के बीच उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए सहायता और संसाधन प्रदान करने की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

बोधा[11] जम्मू और कश्मीर राज्य में विशेष रूप से महिलाओं और सीमांत समुदायों के बीच उद्यमशीलता गतिविधियों को बढ़ावा देने में उद्यमिता विकास कार्यक्रमों की प्रभावशीलता की जांच करते हैं। उनका अध्ययन संसाधनों और बाजारों तक सीमित पहुंच और इन मुद्दों को संबोधित करने में सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों की भूमिका के संदर्भ में इन समुदायों के सामने आने वाली चुनौतियों पर प्रकाश डालता है।

मसूर और अन्य[12] का अध्ययन धारवाड़ और हुबली तहसील की महिला प्रशिक्षणार्थियों पर उद्यमशीलता विकास कार्यक्रमों (ईडीपी) के प्रभाव पर केंद्रित है, जिन्होंने 2010-2013 के बीच प्रशिक्षण लिया था। उन्होंने पाया कि एकीकृत कृषि प्रणाली पर प्रशिक्षण में सबसे अधिक संख्या में महिला लाभार्थियों ने भाग लिया, जिसमें डेयरी, पोल्ट्री और वर्मी कंपोस्टिंग सम्मिलित थे।

सुधा, चित्रा और प्रियंका[13] के अनुसार, उद्यमशीलता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) का भारत में उद्यमिता को बढ़ावा देने पर महत्वपूर्ण प्रभाव दिखाई पड़ता है। शोधकर्ताओं ने पाया कि ईडीपी प्रतिभागियों के बीच उद्यमशीलता कौशल, प्रेरणा और आत्मविश्वास के विकास को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं। अध्ययन छोटे व्यवसायों और स्टार्टअप की सफलता दर बढ़ाने के लिए प्रभावी ईडीपी को डिजाइन और कार्यान्वित करने में सरकारी समर्थन के महत्व पर भी प्रकाश डालता है। कुल मिलाकर, शोध का निष्कर्ष है कि ईडीपी उद्यमशीलता

संस्कृति को बढ़ावा देने और भारत में आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

उपर्युक्त समीक्षा प्रस्तुत प्रपत्र को महत्वपूर्ण अंतःदृष्टि प्रदान करते हैं। एक तरह से हमने पाया कि जनजातियों के उत्थान के लिए करोड़ों रुपये आवंटित किए जाते हैं, विशेष रूप से कौशल विकास और उद्यमिता विकास के संदर्भ में, लेकिन दूसरी तरफ, विभिन्न अध्ययन यह भी दर्शाते हैं कि दिन-ब-दिन हालत सुधरने के बजाय बिगड़ते जा रहे हैं। इसलिए, प्रशिक्षित ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की स्थिति के संदर्भ में जनजातियों के बुनियादी मुद्दों को संबोधित करने के लिए वर्तमान स्थिति एक वैज्ञानिक जांच की मांग करती है।

अध्ययन का उद्देश्य : उपर्युक्त मुद्दों को संबोधित करने के लिए वर्तमान अध्ययन दक्षिण गुजरात के जनजातीय समुदाय के प्रशिक्षित ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की स्थिति का पता लगाने के लिए किया गया है तथा इसका उद्देश्य प्रशिक्षित ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की सफलता और असफलता के पीछे जिम्मेदार कारकों को उजागर करना हैं।

शोध पद्धतिः

अध्ययन के उद्देश्य के अनुरूप क्योंकि यह तथ्यात्मक जानकारी एकत्र करता है और तथ्यों की पड़ताल करता है, इसलिए अन्वेषणात्मक और वर्णनात्मक शोध डिजाइन का संयोजन शोध समस्याओं को समझने के लिए उपयुक्त पाया गया।

प्रस्तुत अध्ययन ईडीपी का कार्योत्तर मूल्यांकन है। वर्तमान अध्ययन का नमूना और लक्ष्य तापी और डांग जिलों के जनजातीय लोग हैं जिन्होंने पिछले दस वर्षों (2013 से 2022) में सीईडी के जिला स्तरीय प्रशिक्षण केंद्र से उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) पर प्रशिक्षण लिया हैं। इन दो जिलों के चयन के पीछे मुख्य रूप से तीन कारण रहे हैं :

1. 2013-2022 की अवधि के दौरान, जिलों में 369 ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षित किया गया। लेकिन ईडीपी पर प्रभाव का मूल्यांकन करने के लिए अभी तक कोई अध्ययन नहीं किया गया है।
2. तापी और डांग दोनों जिले दक्षिण गुजरात क्षेत्र से संबंधित हैं जो भौगोलिक, कृषि, औद्योगिक वातावरण और उद्योगों की सघनता के मामले में विशाल विविधता प्रदान करता है। दक्षिण गुजरात प्रदेश में बड़ी संख्या में उद्योगों की उपस्थिति उद्यमिता विकास प्रशिक्षण के साथ-साथ पर्यावरण के प्रभाव का आकलन करने में सक्षम बनाती है। प्रदेश की औद्योगिक प्रकृति वर्तमान अध्ययन के लिए एक बेहतर क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है।
3. तापी और डांग दोनों जिलों में जनजातीय आबादी का उच्च प्रतिशत क्रमशः 94.6 प्रतिशत और 84.18 प्रतिशत है।

प्रशिक्षित ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों का चयन उद्यमिता विकास केंद्र, गांधीनगर द्वारा प्रदान की गई जानकारी के आधार पर किया गया है। ईडीपी प्रशिक्षित प्रशिक्षणार्थियों के नाम और आवासीय पते की जानकारी निर्देशिका से वर्षवार और प्रशिक्षण केंद्रवार निकाली गई। उत्तरदाताओं का उचित प्रतिनिधित्व और सटीक कवरेज सुनिश्चित करने के लिए शोधकर्ता ने 369 प्रशिक्षणार्थियों की दी गई सूची से सटीक नमूना आकार निर्धारित करने के लिए क्रेजसी एंड मॉर्गन[14] तालिका सूत्र का उपयोग किया। इसके अलावा, शोधकर्ता ने ऑनलाइन और ऑफलाइन स्रोतों जैसे सर्वेमंकी डॉट कॉम[15], बुखारी सैंपल साइज कैलकुलेटर[16] का भी उपयोग किया है।

उपर्युक्त सभी सूत्र नमूना आकार का वही परिणाम दे रहे हैं जो क्रमशः 184 से 188 के आसपास है। गहन अध्ययन के लिए नमूना ढांचे से उत्तरदाताओं का चयन करने के लिए शोधकर्ता ने एक सरल यादृच्छिक नमूना पद्धति लागू की। उपर्युक्त सभी नमूनाकरण प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए, त्रुटि के 0.5 प्रतिशत मार्जिन के साथ, शोधकर्ता ने 369 जनजातीय युवा ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की कुल आबादी से 185 नमूने निर्धारित किए हैं।

अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक सूचना दक्षिण गुजरात के तापी और डांग जिलों में रहने वाले जनजातीय समुदायों के लोगों से संरचित साक्षात्कार अनुसूची और केस स्टडी विधियों के माध्यम से एकत्र किया गया है। प्राथमिक सूचना के साथ-साथ वर्तमान शोध समस्या के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोधकर्ताओं ने द्वितीयक सूचनाओं का भी उपयोग किया है। इसके अंतर्गत पुस्तकों, पत्रिकाओं, लेखों और इंटरनेट से राज्य और केंद्र सरकार की आधिकारिक वेबसाइटों से रिपोर्ट (प्रकाशित या अप्रकाशित) आदि की सहायता ली गई।

तालिका 1 : प्रशिक्षित प्रशिक्षणार्थियों की कुल संख्या और चयनित नमूना

जिलों	ईडीपी के अंतर्गत प्रशिक्षित प्रशिक्षणार्थियों की कुल संख्या (2013 से 2022)	50 प्रतिशत नमूना पर चुना गया	प्रशिक्षणार्थियों की तय संख्या	प्रतिशत
तापी	238	119	30	12
डांग	131	66	15	11
कुल	369	185	45	12

स्रोत : उद्यमिता विकास केंद्र, गांधीनगर

गांधीनगर में उद्यमिता विकास केंद्र से प्राप्त हुए आंकड़ों के अनुसार, वर्ष 2013 और 2022 के बीच तापी और डांग जिलों में ईडीपी के तहत कुल 369 प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षित किया गया था। इनमें से 50 प्रतिशत यानी 185 प्रशिक्षणार्थियों का एक नमूना विश्लेषण के लिए चुना गया। प्राप्त सूचना से पता चलता है कि तापी जिले में 30 प्रशिक्षणार्थियों और डांग जिले में 15 प्रशिक्षणार्थियों ने सफल रूप से अपना नया उपक्रम स्थापित किया है।

विश्लेषण तथा अर्थघटनः यहां प्रस्तुत की गई सूचनाएं उत्तरदाताओं की स्थिति में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है जिन्होंने उद्यमिता विकास कार्यक्रम (ईडीपी) पूरा कर लिया है। नमूने के आकार में दोनों जिलों के कुल 185 उत्तरदाता सम्मिलित हैं।

तालिका 2. उत्तरदाताओं की स्थिति

उत्तरदाताओं की स्थिति	संख्या
ईडीपी के बाद शुरू किया स्वतंत्र उद्यम	45
सेवाओं में (सरकारी नौकरी)	05
सेवाओं में (प्राइवेट नौकरी)	21
गैर-नियोजित	19
पूर्णकालिक आधार पर पारिवारिक व्यवसाय में सम्मिलित हुए	10
अध्ययन (छात्र)	17
अंशकालिक व्यवसाय	05
कृषि गतिविधियों में लगे	23
पहुँच अयोग्य उत्तरदाताए	40
कुल	185

185 उत्तरदाताओं में से, 45 ने ईडीपी को पूरा करने के बाद स्वतंत्र उपक्रम शुरू किया है, यह दर्शाता है कि कार्यक्रम उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करने में सफल रहे हैं। 21 उत्तरदाता निजी नौकरी में जबकि 5 सरकारी नौकरी में कार्यरत हैं। तथा 10 उत्तरदाता पूर्णकालिक आधार पर अपने पारिवारिक व्यवसायों में सम्मिलित हो गए हैं। 17 उत्तरदाता अभी भी अध्ययन कर रहे हैं, यह दर्शाता है कि उन्हें अभी अपने करियर का प्रारंभ करना है।

जो 26 उत्तरदाता सरकारी या निजी क्षेत्रों में नौकरियों में लगे हुए हैं उनसे पूछताछ करने पर पता चला है कि नौकरी पाने से पहले इन्होंने ट्रेनिंग ली थी। उन्होंने उन प्रशिक्षणों से संबंधित व्यवसाय स्थापित करने या शुरू करने का प्रयास किया था लेकिन खराब सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के कारण वह ऐसा करने में विफल रहे और सेवाओं में बदल गए। सूचना यह भी इंगित करती है कि उत्तरदाताओं का एक छोटा प्रतिशत, 5 अंशकालिक व्यवसायों में लगे हुए हैं। इसके अतिरिक्त, 23 उत्तरदाता कृषि गतिविधियों में लगे हुए हैं, जो उनकी ग्रामीण पृष्ठभूमि और उनके पारिवारिक व्यवसायों की प्रकृति का संकेत है। इसके अतिरिक्त, अध्ययन में 2013 से लेकर 2022 तक सम्मिलित किए हुए प्रशिक्षणार्थियों में से 40 उत्तरदाताओं के घर का पता और मोबाइल नंबर गलत मालूम हुए। काफी कोशिश के बावजूद भी यह प्रदेश की भौगोलिक स्थिति की वजह उनसे सूचना प्राप्त करने में असमर्थता महसूस की गई।

डांग जिले में, वर्ष 2013 से 2022 के बीच कुल 12 विभिन्न प्रकार के उपक्रम शुरू किए गए थे, जिनमें पशुपालन, ऑनलाइन ई-कॉमर्स व्यवसाय, किराने की दुकानें, डीजे साउंड, मंडप सेवाएं, चावल मिल, आरओ जल संयंत्र और अगरबत्ती बनाना सम्मिलित हैं। कुल 131 व्यक्तियों में से 15 अर्थात् 11.45 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने उपक्रम शुरू किए हैं।

जबकि, तापी जिले में वर्ष 2013 से 2022 के बीच कुल 13 विभिन्न प्रकार के उपक्रम शुरू किए गए, जिनमें किराने की दुकान, पशुपालन, बिजली के काम और बिजली के सामान बेचने का व्यवसाय, बैंकिंग पत्राचार बिंदु और मोबाइल मरम्मत की दुकानें सम्मिलित हैं। तापी

जिले में शुरू किए गए कुछ उद्यम डांग जिले में शुरू किए गए उपक्रमों के समान थे, जैसे कि मंडप सेवाएं, जेरॉक्स और ग्राफिक्स की दुकानें, और स्थानीय पारंपरिक खाद्य पदार्थों का गृह उद्योग।

विश्लेषण एवं निष्कर्ष : प्राप्त परिणामों से पता चला कि अधिकांश ईडीपी लाभार्थी प्रशिक्षण कार्यक्रम से संतुष्ट थे और उन्हें लगा कि इससे उन्हें नए कौशल और ज्ञान प्राप्त करने में सहायता मिली है। दोनों जिलों के ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों में से केवल 12 प्रतिशत ही कार्यक्रम में भाग लेने के बाद अपना उपक्रम शुरू करने में सफल रहे जबकि ऐसे कार्यक्रमों के सफलता का राष्ट्रीय दर 30 प्रतिशत है और विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग तथा उद्योग साहसिकता विकास संस्थान के अध्ययन के अनुसार यह दर 20 प्रतिशत के करीब है।[17]

जनजातीय समुदाय के लोगों के ईडीपी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेने के विभिन्न उद्देश्य पाए गए जो प्रेरक कारक है। जिनमें प्रमुख रूप से देखा जाएँ तो प्रशिक्षण का प्रमाणपत्र प्राप्त करना, किसी उपक्रम को प्रारंभ करने के लिए वित्तीय सहाय प्राप्त करने के लिए, अपने व्यवसाय को आगे बढाने के लिए, तथा इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में निःशुल्क रहने और खाने की सुविधाएं प्रदान की जाती है जो जनजातीय समुदाय के इच्छुक और बेरोजगार लोगों को आकर्षित करती है।

अध्ययन के माध्यम से ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की सफलता और असफलता दर के लिए विभिन्न उत्तरदायी कारकों की पहचान की गई। अध्ययन के निष्कर्ष जनजातीय समुदायों के बीच ईडीपी के महत्व को उजागर करते हैं, क्योंकि वे वंचित समुदायों को नए कौशल और ज्ञान प्राप्त करने तथा स्वरोजगार के माध्यम से आय उत्पन्न करने का अवसर प्रदान करते हैं। असफलता के लिए जिम्मेदार कारकों में वित्त तक पहुंच की कमी, अपर्याप्त बाजार संपर्क, खराब व्यापार योजना, अपर्याप्त बुनियादी ढांचा और सरकारी एजेंसियों से अपर्याप्त समर्थन सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त, सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाओं ने ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की सफलता दर को भी प्रभावित किया, जैसे उद्यमशीलता की मानसिकता की कमी और परिवार के सदस्यों के समर्थन की कमी। जनजातीय संस्कृति उनकी अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जनजातीय संस्कृति और अर्थव्यवस्था को उनकी बुनियादी जरूरतों पर देखा जाता है। इन प्रदेशों की भौगोलिक परिस्थितियों को देखते हुए स्वयं को विकसित करने की इनकी अनेक सीमाएँ हैं। उनकी सांस्कृतिक व्यवस्था उनकी जरूरतों को पूरा कर रही है, जिससे उनमें उद्यमी संस्कृति दिखाई या विकसित नहीं होती है।[18]

आंकड़ों से यह भी पता चलता है कि दोनों जिलों में शुरू किए गए उपक्रमों के प्रकारों में बहुत कम विविधता पाई गई है, साथ ही शुरू किए गए व्यवसायों के प्रकारों में कुछ साम्यता भी है। इसके अतिरिक्त, दोनों जिलों में अपना उद्यम शुरू करने वाले व्यक्तियों का प्रतिशत अपेक्षाकृत कम है, किन्तु उत्तरदाताओं की उद्यमशीलता की आकांक्षाओं पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, जो दर्शाता है कि इन क्षेत्रों में उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करने और सुविधा प्रदान करने के लिए अधिक समर्थन और संसाधनों की आवश्यकता है।

हालांकि, ईडीपी प्रशिक्षणार्थियों की कम सफलता दर के लिए अन्य कारक जैसे कुटुंब की आर्थिक स्थिति तथा जरूरतों में जिम्मेदार देखा गया है। जनजातीय समुदाय के सामाजिक, संस्कृतिक, ओर आर्थिक व्यवहार मे उद्यमिता ना के बराबर पायी जाती हे और इसी कारण इन्हे पहली पीढ़ी के उद्यमी के रूप में देखा जाता है। फिर भी यह कहने मे कोई आपत्ति नहीं है कि जनजातीय और इसमें भी डांग तथा तापी जैसे पिछड़े जिले में उध्यमिता के प्रति यह रुझान आने वाले समय में जनजातीय समुदाय के लोगों के विकास के लिए मील का पत्थर साबित होंगे।

सन्दर्भ

1. Saini, Jasmer Singh, 'Entrepreneurship Development: Programmes and Practices', Deep & Deep Publications, New Delhi. 1998, p. 09.
2. Mohanty, S. K. 'Fundamentals of Entrepreneurship', India: Phi Learning, New Delhi, 2005 p. 116.
3. Sixth Economic Census 2013-14. Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises. https://www.mospi.gov.in/all-india-report-sixth-economic-census (Retrieved on 12-05- 2023)
4. Tribal Health in India Report (2018) by the Ministry of Health and Family Welfare https://www.downtoearth.org.in/news/health/more-than-50-of-india-s-tribal-population-has-moved-out-of-traditional-habitats-62208 (Retrieved on 01-05-2023).

5. Aldrich, H., Organization and Environments, Englewood Chiffs, Prentice Hall, New Jersey, 1979, p. 21
6. Gartner, W.B., A Conceptual Framework for Describing the Phenomenon of New Venture Creation, Academy of Management Review, 10, 1985, pp. 696-706.
7. Scherer, R. F.; J. S. Adams; S.S. Carley, & F. A. Wiebe, 'Role Model Performance Effects on Development of Entrepreneurial Career Preference, Entrepreneurship Theory and Practice', 13(3), 1989, pp. 53-73, DOI: 10.1177/104225878901300305
8. Saleebey, D., The Strengths Perspective in Social Work Practice: Extensions and Cautions, Social Work, 37(2), 1992, pp:167-173. DOI: 10.1093/sw/37.2.167
9. Rao, T. N., & P.V. Rao, 'Impact of Entrepreneurship Development Training Programmes on Schedule Caste Communities: A Case Study of Andhra Pradesh Scheduled Caste Cooperative Finance Corporation in Prakasam District of Andhra Pradesh', International Journal of Social Economics, 42(11), 2015, pp. 993-1004.
10. Patil, A., & A. Kumar, Tribal Entrepreneurship: A Case of Adivasis in Dangs, Journal of Entrepreneurship, Management and Innovation, 13(2), 2017, pp. 97-115.
11. Bodha, I. J., Analysis of Entrepreneurship Development Programmes: A Study of Jammu and Kashmir, Entrepreneurship Development Institute, 2018, pp: 1-15.
12. Masur, Y. V., V. S., Jadhav, & K. Sarojani, 'Entrepreneurship Development Programmes offered for Women by KVK and RUDSETI: A Review of Literature', International Journal of Community Development and Management Studies, 3(2), 2019, pp. 45-52. DOI: 10.5958/2455-8713.2019.00005.3
13. Sudha, B., S. Chitra, & T. Priyanka, 'Entrepreneurial Development Programmes: Impact on Entrepreneurship in India', International Journal of Management, Technology, and Social Sciences, 4(2), 2019, pp.14-26.
14. Krejcie, R. V., & Morgan, D. W., Determining Sample Size for Research Activities, Educational and Psychological Measurement, 30(3), 1970, 607-610.
15. Sample Size Calculator: Understanding Sample Sizes, SurveyMonkey.Com (2023). https://www.surveymonkey.com/mp/sample-size-calculator/ (Retrieved on 10-03-2023).
16. Bukhari, S. A. R., "Bukhari Sample Size Calculator", Research Gate GmbH., 2020, DOI: 10.13140/RG.2.2.27730.58563
17. Mohanty, S. K., 'Fundamentals of Entrepreneurship'. India: Phi Learning, New Delhi, 2005, p.116.
18. पंडया, अरुण, एन, और सुमीर गामित, 'आदिवासिओं की अर्थ व्यवस्था और सांस्कृतिक जीवन व्यवहार', जुनी ख्यात, मरुभूमि शोध संस्थान, बीकानेर, वर्ष 12, नं. 1, जुलाई-दिसम्बर 2022, पृ. 428-441

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

भारत में क्रांतिकारी राष्ट्रवाद : उद्भव, विकास और प्रभाव

❑ डॉ. भरत लाल मीणा

सूचक शब्द : स्वाधीनता आंदोलन, क्रांतिकारी राष्ट्रवाद, उदारवाद, उग्रवाद, गांधी मार्ग, पाश्चात्य शिक्षा, आर्थिक शोषण, समाजवाद, साम्यवाद।

भारत का स्वाधीनता आंदोलन अनेक विचारधाराओं और मोर्चों के स्तर पर संचालित किया गया एक व्यापक आंदोलन था। 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से पूर्व ही भारतीयों में स्वाधीनता की चेतना विकसित होने लगी थी। फलस्वरूप भारतीयों ने अंग्रेजों के विरुद्ध अनेक विद्रोह किये, जिनमें किसानों, आदिवासियों, सैनिकों और क्रांतिकारियों के सशस्त्र विद्रोह प्रमुख थे। कांग्रेस के नेतृत्व में लड़े गए राष्ट्रीय आंदोलन का भी लगातार विचारधारात्मक रूपांतरण होता रहा। औपचारिक रूप से कांग्रेस के बाहर भी अनेक आंदोलन चलाए गए, किंतु वे पूरी तरह कांग्रेस से अलग नहीं थे। यथार्थ में इन सभी आंदोलनों का कांग्रेस की मुख्यधारा के साथ जटिल संबंध रहा और किसी स्तर पर ये कांग्रेस के विकल्प नहीं बन पाए। इसलिए इतिहास में इन आंदोलनों को कांग्रेस के आंदोलन के समानांतर उतना महत्व नहीं मिल सका जितना मिलना चाहिए। ऐसी अनेक आंदोलनात्मक धाराओं में क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद का प्रमुख स्थान है, जिसके क्रांतिकारियों ने न केवल अपना सर्वोच्च आत्मबलिदान देकर स्वाधीनता आंदोलन में जोश भरा, बल्कि हिदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन (1928) की स्थापना तक इसने भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के भीतर एक बड़ी वैचारिक लकीर खींचने और आज़ादी के बाद के भारतीय समाज निर्माण का कार्यक्रम प्रस्तुत करने में भी सफलता प्राप्त की। यद्यपि कुछ इतिहासकारों, प्रतिक्रियावादी प्रेस और ब्रिटिश सरकार ने क्रांतिकारी आंदोलन को षड्यंत्र व आतंकवाद की संज्ञा देकर बदनाम किया है, तथापि निष्पक्ष दृष्टि से देखें तो यह आंदोलन अंग्रेजों के विरूद्ध सशस्त्र ढंग से प्रतिरोध कर और उनमें आतंक व भय पैदा करके देश छोड़ने को विवश करने के उद्देश्य से प्रारंभ हुआ था, जो बाद में वैचारिक कार्यक्रम के साथ जन आंदोलन बनने की दिशा में अग्रसर हुआ। इस क्रांतिकारी आंदोलन में सम्मिलित लोगों की पृष्ठभूमि, उनकी कार्यप्रणाली, विचार और उद्देश्यों पर गौर करें तो इसके राष्ट्रवादी होने का प्रमाण मिलता है।

भारत की स्वाधीनता के लिए जितने भी प्रयत्न हुए उनमें क्रांतिकारियों की उपस्थिति सबसे अधिक प्रेरणादायी सिद्ध हुई है। क्रांतिकारी राष्ट्रवादी आंदोलन का समय सामान्यतः 1857 से 1942 तक माना जाता है, परंतु श्रीकृष्ण सरल के मतानुसार इसका समय 1757 के प्लासी के युद्ध से 1961 में गोवा मुक्ति तक माना जाना चाहिए। ब्रिटिश शासन की तानाशाही, शोषण और अत्याचार के विरूद्ध कई जन संघर्ष हुए, जिनमें चुहाड़ विद्रोह (1766), संन्यासी व फकीर विद्रोह (1763– 93), वेलूथांपी का संघर्ष (1808), भील विद्रोह (1817), नायक विद्रोह (1817), भूमिज विद्रोह (1832), गुजरात का महीकांत विद्रोह (1836), धर राव विद्रोह (1844), संथाल विद्रोह (1855) नील विद्रोह (1860), दक्षिण भारत में किसान जागरण (1870), पंजाब का कूका विद्रोह (1872) और उत्तर पूर्व में बहावी आंदोलन इत्यादि प्रमुख थे। इस दौरान कई सैनिक विद्रोह भी हुए। 1857 के विद्रोह तक भारतीयों का संघर्ष चरम सीमा तक पहुंच गया था। इस विद्रोह के बाद भारत में कई प्रकार के सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन आए, जिससे लोगों में नई राष्ट्रीय एवं राजनैतिक चेतना का विकास हुआ।[1]

उद्देश्य : प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य भारतीय स्वाधीनता आंदोलन में क्रान्तिकारी धारा की भूमिका का अध्ययन करना है। इस क्रम में क्रांतिकारी आंदोलन के उद्भव, विकास, प्रकृति तथा प्रभाव का अध्ययन करना भी समीचीन है।

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन की शोध पद्धति ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक है, जो कि द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इस हेतु विभिन्न पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध आलेखों एवं ऑनलाइन उपलब्ध सामग्री का अध्ययन कर विश्लेषण किया गया है।

साहित्य समीक्षा : बिपिन चंद्र की पुस्तक 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष', में 1857 से पूर्व और उसके बाद अंग्रेजों के विरूद्ध भारतीयों के प्रमुख विद्रोहों का विश्लेषण करते हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में किए गए राष्ट्रीय आंदोलन, सामाजिक धार्मिक सुधार और राष्ट्रीय जागरण, क्रांतिकारी आतंकवाद, वामपंथ के उदय, आज़ाद हिन्द फौज, सांप्रदायिकता का उदय, विश्वयुद्ध के बाद की राष्ट्रीय लहर, भारत विभाजन,

❑ सहायक आचार्य, बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय अलवर (राजस्थान)

राष्ट्रीय आंदोलन की दीर्घकालिक रणनीति और उसके वैचारिक आयाम, औपनिवेशिक अर्थतंत्र इत्यादि की मीमांसा की गई है। यद्यपि पुस्तक में 'क्रांतिकारी राष्ट्रवादियों' के लिए 'क्रांतिकारी आंतकवाद' शब्द प्रयुक्त किया गया है जिसकी पुनर्समीक्षा की आवश्यकता प्रतीत होती है, तथापि यह पुस्तक स्वतंत्रता आंदोलन की विभिन्न धाराओं को समझने में उपयोगी सिद्ध होती है।

रामलखन शुक्ल की पुस्तक 'आधुनिक भारत का इतिहास', विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों एवं शोध अनुसंधानकर्ताओं द्वारा एक निश्चित योजना के अंर्तगत लिखे गए लेखों का संकलन है, जिसमें भारत में ब्रिटिश राज की स्थापना, उसका स्वरूप और प्रभाव, भारतीय राष्ट्रीय राजनीति, समाज और अर्थव्यवस्था इत्यादि की विवेचना की गई है। जहां क्रांतिकारी आंदोलन के लिए बिपिन चन्द्र की पुस्तक भारत का स्वतंत्रता संघर्ष में 'क्रान्तिकारी आतंकवाद' शब्द का प्रयोग किया गया है, वहीं इस पुस्तक में उसके स्थान पर 'क्रान्तिकारी राष्ट्रवादी आंदोलन' शब्द का प्रयोग करते हुए क्रांतिकारी गतिविधियों का विस्तारपूर्वक विश्लेषण किया गया है जो प्रस्तुत शोध आलेख के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ है।

बीएल ग्रोवर और यशपाल की पुस्तक 'आधुनिक भारत का इतिहास' में अंग्रेजों की भारत विजय का पुनर्वेक्षण करते हुए मुगल साम्राज्य के पतन और उसके बाद के घटनाक्रमों तथा बंगाल में अंग्रेजी शक्ति के उदय के बाद भारत में उनकी राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक व सैनिक गतिविधियों का विश्लेषण किया गया है। इसके साथ ही जनजातीय, निम्न जातीय, सैनिक और असैनिक विद्रोह तथा कृषक, मजदूर आंदोलन, सांस्कृतिक जागरण इत्यादि की मीमांसा करते हुए भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के उत्थान और पतन को समझाने का प्रयास किया गया है। यह पुस्तक भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के प्रति व्यापक समझ विकसित करती है।

चमन लाल की पुस्तक 'भगत सिंह के राजनीतिक दस्तावेज' में स्वतंत्रता आंदोलन में भगत सिंह की भूमिका का विस्तार से विवेचन करते हुए क्रांतिकारी आंदोलन के वैचारिक पक्षों को तथ्यात्मकता के साथ स्पष्ट किया गया है। इस क्रम में पुस्तक के पहले खंड 'राष्ट्रीय चिंतन' के अंतर्गत भगत सिंह के बहुचर्चित लेख सम्मिलित हैं, जैसे धर्म और हमारा स्वतंत्रता आंदोलन, साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज, अछूत समस्या, सत्याग्रह और हड़तालें, विद्यार्थी और राजनीति इत्यादि। पुस्तक का दूसरा खंड 'अंतराष्ट्रीय क्रांतिकारी' के अन्तर्गत भगत सिंह के अराजकतावादी दर्शन और निहिलिस्ट आंदोलन को समझने व समझाने वाले लेख सम्मिलित हैं, जिनसे आगे चलकर रूस में मार्क्सवाद लेनिनवाद का विकास हुआ और भगत सिंह भारत में इसी रास्ते पर चल रहे थे। पुस्तक के तीसरे खंड में 'क्रांतिकारी एक्शन' प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक का चौथा खंड भगत सिंह का जेल में 'राजनीतिक संघर्ष और चिंतन' अत्यंत महत्वपूर्ण है। अंतिम खंड 'भगत सिंह के चिंतन के प्रौढ़तम और श्रेष्टतम रूप' को तीन लेखों मैं नास्तिष्क क्यों हूँ?, ड्रीमलैंड की भूमिका, राजनीतिक कार्यक्रम की रुपरेखा तथा बलिदान से पहले क्रांतिकारी साथियों को लिखा पत्र एवं जेल डायरी के अंश सम्मिलित हैं। यह पुस्तक न केवल भगत सिंह के व्यक्तित्व, कृतित्व और राजनीतिक चिंतन को समझने के लिए उपयोगी है, बल्कि क्रांतिकारी आंदोलन के वैचारिक दर्शन को गहराई से समझने के लिए भी महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

सत्यम वर्मा की पुस्तक 'विचारों की सान पर' भगत सिंह के लेखों, पत्रों, नौजवान भारत सभा, हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन का घोषणा पत्र, सेशन कोर्ट में बयान, क्रांतिकारी कार्यक्रम का मसौदा इत्यादि अध्ययन सामग्री के माध्यम से भगत सिंह और अन्य क्रांतिकारियों के सपनों का भारत निर्मित करने के सवाल को रेखांकित करती है तथा इस अधूरे सपने को पूरा करने के लिए युवा पीढ़ी का आह्वान करती है।

क्रांतिकारी राष्ट्रवाद का उद्‌भव : भारत में क्रांतिकारी आंदोलन का उद्‌भव मुख्य रूप से उन घटनाओं और परिस्थितियों का परिणाम था जिनके कारण उग्र राष्ट्रवाद का उदय हुआ। इसके उदय के निम्न कारणों की चर्चा की जा सकती है-

1. भारत का मध्यम शिक्षित वर्ग जो पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त था, उन्हें रूस, इटली, आयरलैंड के क्रान्तिकारी आंदोलन तथा अन्य वैश्विक घटनाओं से प्रेरणा प्राप्त हुई थी। फलस्वरूप इस वर्ग के युवाओं में भारत की स्वतंत्रता लिए सशस्त्र क्रांति से विदेशी शासन को समाप्त करने की अभिलाषा जागृत हुई।
2. ये शिक्षित युवा ब्रिटिश सरकार की भारत विरोधी आर्थिक नीतियों से क्षुब्ध थे। ब्रिटिश शासन ने भारत की प्राकृतिक और भौतिक संपदा के साथ जो घिनौना खेल खेला था वह इन्हें स्वीकर नहीं था। अकाल,

महामारी तथा भूकंप के कारण जनता की दरिद्रता इतनी बढ़ चुकी थी कि उसने इन युवाओं को क्रांतिकारी मार्ग पर चलने को विवश कर दिया।

3. लार्ड कर्जन की दमनात्मक और विभाजनकारी नीतियों, विशेषकर बंगाल विभाजन ने भी युवाओं को क्रांतिकारी मार्ग अपनाने को विवश किया। 1907-8 में राजद्रोहात्मक सभा अधिनियम, समाचार पत्र अधिनियम तथा अन्य दमनकारी कानूनों के कारण लोकतान्त्रिक तरीके से राजनीतिक आंदोलन चलाना कठिन हो गया था। फलस्वरूप युवाओं ने गुप्त कार्यवाही चलाकर क्रांतिकारी आंदोलन की राह पकड़ी।
4. शिक्षित युवा वर्ग कांग्रेस की नरम, उदारवादी, संवैधानिक और धीमी कार्य प्रणाली से संतुष्ट नहीं था। भारतीय राजनीतिज्ञों की भिक्षा की नीति को शर्मनाक मानते हुए इन युवा क्रांतिकारियों का वर्ग धैर्य खो रहा था। वे स्वाधीनता आंदोलन को त्वरित और सक्रिय बनाना चाहते थे।
5. 1905 में जापान के हाथों रूस की पराजय ने यूरोपियन सर्वोच्चता के मिथक को तोड़ दिया।
6. इसी दौरान इन युवाओं में आनंदमठ, वंदे मातरम, युगांतर, संध्या, काल, भवानी निकेतन जैसे पत्र, पत्रिकाओं और पुस्तकों ने तीव्र राष्ट्रवादी भावना उत्पन्न की।
7. क्रांतिकारी आंदोलन के द्वितीय चरण की पृष्ठभूमि प्रथम चरण के क्रांतिकारियों ने ही तैयार कर दी थी। महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में युवाओं ने बढ़ चढ़कर भाग लिया था तथा गांधीजी के एक वर्ष के अंदर देश को स्वतंत्रता दिलाने के नारे ने युवाओं में उत्साह भर दिया था। किंतु चोरीचौरा की हिंसक घटना के बाद गांधी जी द्वारा अचानक आंदोलन को स्थगित कर देने से युवाओं को निराश कर दिया और गांधी मार्ग से उनका मोह भंग हो गया।

प्रथम चरण में क्रांतिकारी आंदोलन का विकास और प्रभावः 1918 की विद्रोह समिति की रिपोर्ट में यह कहा गया था कि भारत में क्रांतिकारी आंदोलन का प्रथम आभास महाराष्ट्र में मिलता है। 1879 में महाराष्ट्र में वासुदेव बलवंत फड़के ने 50 किसानों को संगठित कर क्रान्तिकारी गतिविधियों का संचालन किया। 22 जून 1897 को पुणे में दामोदर चापेकर और बाल कृष्ण चापेकर ने अंग्रेज अधिकारी रैंड और लेफ्टिनेंट एयरस्ट की हत्या कर दी। ऐसा माना जाता है कि बाल गंगाधर तिलक के लेखों और भाषणों ने चापेकर बंधुओं को हिंसा की प्रेरणा दी। क्रांतिकारियों के हाथों यूरोपियों की यह प्रथम राजनीतिक हत्या थी। इस हत्या का तात्कालिक कारण प्लेग समिति द्वारा पुणे में प्लेग ग्रस्त व्यक्तियों के घरों को खाली करवाने के लिए सैनिकों का सहारा लेना था। इस घटना के बाद चापेकर बंधु पकड़े गए और उन्हें फांसी पर लटका दिया गया।[2]

बंगाल में क्रान्तिकारी गतिविधियां ब्रिटिश सरकार की बंगाल विभाजन की योजना के साथ शुरू हुई। 1907 के अंत में ब्रिटिश सत्ता के कारनामों से विक्षुब्ध बंगाल के युवाओं ने व्यक्तिगत वीरता और सशस्त्र क्रान्ति की राह पकड़ी। अपनी भावनाओं को व्यक्त करने और आजादी के लिए संघर्ष करने के लिए उनके पास और कोई तरीका बचा भी नहीं था। नरमपंथी राजनीति अव्यवहारिक हो चुकी थी, सरकार दमन पर उतारू थी और गरमपंथी राजनीति भी असफल सिद्ध हो रही थी।[3] इस माहौल में प्रेमनाथ मित्रा, बारीन्द्र कुमार घोष और भूपेंद्र दत्त ने गुप्त क्रान्तिकारी सभा 'अनुशीलन समिति' का गठन किया। कई समान विचार वाले ऐसे शिक्षित युवा भी उनसे आ मिले जो सशस्त्र क्रान्ति से पूर्ण स्वतन्त्रता चाहते थे। बंगाल विभाजन के पश्चात विदेशी माल का बहिष्कार और स्वदेशी आंदोलन ने जोर पकड़ा, जिसके फलस्वरूप बंगाल में राजनैतिक चेतना आई, जो पहले कभी देखने को नहीं मिली। बंगाल के क्रांतिकारियों ने ब्रिटिश राज का तख्ता पलटने के लिए छः सूत्रीय कार्यक्रम बनाया- प्रेस के माध्यम से प्रचार कर शिक्षित वर्ग में ब्रिटिश राज के प्रति घृणा की भावना उभारना, शहीदों की जीवनियों को संगीत और नाटक के द्वारा लोगों के सामने रखकर मातृ भूमि के प्रति प्रेम जागृत करना, जलसे, हड़ताल, जुलूस इत्यादि गतिविधियों से दुश्मन को व्यस्त रखना, सैनिक शिक्षा, धार्मिक कार्यक्रम, शक्ति पूजा इत्यादि के लिए युवकों को भर्ती करना, हथियार प्राप्त करना तथा चंदे और डकैती के जरिए पैसा एकत्र करना।[4] 30 अप्रैल 1908 को प्रफुल्ल चाकी और खुदी राम बोस ने कलकत्ता के पूर्व मजिस्ट्रेट और मुजफ्फरपुर जिले के न्यायाधीश किंग्सफोर्ड की हत्या करने का प्रयास किया। परंतु गलती से बम केनेडी की गाड़ी पर गिरा दिया गया, जिसमें दो महिलाओं की मृत्यु हो गई। इस घटना के बाद प्रफुल्ल चाकी ने आत्महत्या कर ली और खुदीराम बोस पर मुकदमा चलाकर फांसी दे दी गई। ब्रिटिश शासन ने इस घटना से चौकन्ना होते हुए अवैध हथियारों की तलाश के संबंध में मानिकटोला उद्यान

तथा कलकत्ता में तलाशी का सघन अभियान चलाया। इस दौरान 34 व्यक्तियों को बंदी बनाया गया, जिनमें अरविंद घोष और उनके अनुज बारीन्द्र घोस सम्मिलित थे। इन पर 'अलीपुर षड़यंत्र कांड' का मुकदमा चलाया गया। मुकदमें के दिनों में सरकारी गवाह नरेंद्र गोसाईं की जेल में हत्या कर दी गई, इसके बाद सरकारी वकील और पुलिस उप अधीक्षक की भी हत्या कर दी गई। इन घटनाओं से पूरे देश में उत्तेजना फैल गई। बाल गंगाधर तिलक ने अपने पत्र 'केसरी' में इन बंगाली क्रांतिकारियों की प्रशंसा की।[5]

बंगाल विभाजन और उसके विरुद्ध उपजे क्रांतिकारी आंदोलन का असर पंजाब में भी हुआ। वहां अजित सिंह, सैयद हैदर रजा, सूफी अंबा प्रसाद और लाला लाजपत राय के नेतृत्व में जमीन संबंधों का आधार बदलने वाले 'उपनिवेशन बिल' के विरोध में एक क्रांतिकारी आंदोलन का जन्म हुआ। इन नेताओं ने अपनी सभाओं और क्रांतिकारी साहित्य के द्वारा जनता में क्रांतिकारी विचारधारा फैलाने का प्रयास किया तथा ब्रिटिश राज को सशस्त्र विद्रोह द्वारा पलटने की योजना भी बनाई। साथ ही क्रांतिकारी गतिविधियों हेतु आवश्यक धन की पूर्ति के लिए सरकारी खजानों, डाकखानों इत्यादि को लूटने की योजना भी बनाई गई। जब सरकार को क्रांतिकारियों की गतिविधियों की सूचना मिली तो उन्होंने कई नेताओं को कैद कर लिया तथा अजीत सिंह और लाजपत राय को जून 1907 में बर्मा की मांडले जेल भेज दिया गया। लाल चंद फलक और भाई परमानंद को भी जेल भेजा गया। किंतु भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा जन विरोध के कारण सरकार को अजित सिंह और लाला लाजपत राय को रिहा करना पड़ा। रिहाई के बाद अजीत सिंह और उनके साथियों ने अपनी क्रान्तिकारी गतिविधियां पुनः शुरु कर दीं। इसके बाद ब्रिटिश सरकार ने क्रान्तिकारियों के विरुद्ध दमनकारी नीति अपनाई। विवश होकर अजीत सिंह और सूफी अंबा प्रसाद देश छोड़कर अफगानिस्तान चले गए, फिर वहां से यूरोप चले गए। अब क्रांतिकारियों ने विदेश में अपने अड्डे बनाए।[6]

इस चरण में दिल्ली में क्रांतिकारी गतिविधियों का नेतृत्व मास्टर अमीरचंद ने किया। 1912 में दिल्ली में लॉर्ड हार्डिंग पर बम फेंका गया, जिसमें वायसराय घायल हो गए और उनके एक सेवक की मृत्यु हो गई। इस घटना के बाद अवध बिहारी, अमीरचंद, बालमुकुंद और बसंत विश्वास को फांसी की सजा दी गई तथा बलराज और हनवंत सहाय को आजीवन कारावास का दंड दिया गया।[7] इस दौरान देश के अन्य भागों में भी क्रांतिकारी गतिविधियां चलती रहीं। मद्रास में गतिविधियों का संचालन विपिन चंद्र पाल ने किया, राजस्थान में अर्जुन लाल सेठी, केसरी सिंह बारठ, राव गोपाल सिंह और प्रताप सिंह ने क्रांतिकारी गतिविधियां संचालित कीं।

विदेश में भारतीय क्रान्तिकारियों की गतिविधियां : विदेश में भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन के प्रचार प्रसार का श्रेय श्याम जी कृष्ण वर्मा को जाता है। 1904-14 के बड़े ही नाजुक दौर में उन्होंने लंदन, पेरिस और जनेवा में भारत की स्वतंत्रता के लिए बड़े जोर शोर से अभियान चलाया। इस कार्य में उनके सहयोगी बने भाई परमानंद, मैडम कामा, विनायक दामोदर सावरकर इत्यादि। उन्होंने अंग्रेज मित्रों की सहायता से एक मासिक पत्रिका 'इंडियन सोशियोलोजिस्ट' का प्रकाशन किया, ताकि इसके द्वारा भारतीय दृष्टिकोण को प्रकाश में लाया जा सके। उन्होंने 1905 में 'होम रूल सोसायटी' तथा 'इंडिया हाउस' की स्थापना की। शीघ्र ही इंडिया हाऊस लंदन में रहने वाले भारतीयों के लिए आंदोलन का केंद्र बन गया। श्याम जी कृष्ण वर्मा द्वारा संचालित राजनीतिक गतिविधियों से अनेक भारतीय नवयुवकों में सोई हुई राष्ट्रीय भावना जागृत हो गई। इसी दौरान सावरकर ने ''अभिनव भारत नामक'' संगठन का गठन भी किया। 1908 में इंडिया हाऊस ने 1857 के विद्रोह की स्वर्ण जयंती मनाने का निश्चय किया। सावरकर ने इस विद्रोह को भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की संज्ञा दी। जब ब्रिटिश अधिकारियों ने इंडिया हाऊस के क्रांतिकारियों को कुचलने के लिए अनुचित तरीके अपनाने की नीति का पालन किया तो इसके विरूद्ध आक्रोश व्यक्त करते हुए मदनलाल ढींगरा ने 1909 में कर्नल विलियम कर्जन वाइली की हत्या कर दी, इसके बाद उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और फांसी की सजा दी गई। बाद में श्याम जी कृष्ण वर्मा ने भी लंदन छोड़ दिया, वे पेरिस चले गए और इंडिया हाऊस की गतिविधियां बंद करनी पड़ी।[8]

इसके बाद क्रांतिकारी आंदोलन का संचालन कनाडा और अमेरिका से हुआ। अमेरिका के सेनफ्रांसिस्को नगर में लाला हरदयाल ने रामचंद्र और बरकतुल्ला की मदद से 1 नवंबर 1913 को गदर पार्टी का गठन किया। गदर पार्टी ने गोरिल्ला युद्ध के द्वारा भारत को स्वतंत्र कराने की योजना बनाई। इस पार्टी ने 'गदर' नाम से एक साप्ताहिक पत्रिका भी चलाई। गदर पार्टी ने यह बात सामने लाने का प्रयत्न किया कि विदेश में भारतीयों

का सम्मान इसलिए नहीं होता है क्योंकि हम परतंत्र हैं। गदर आंदोलन से अमेरिका और दूसरे देशों के भारतीय बहुत प्रभावित हुए, फलस्वरूप अमेरिका और कनाडा में रहने वाले भारतीय, विशेषतः पंजाबी युवक गदर पार्टी में सम्मिलित हो गए। प्रथम विश्वयुद्ध शुरू होने पर लाला हरदयाल और उनके साथी जर्मनी चले गए। उन्होनें बर्लिन में 'भारतीय स्वतंत्रता समिति' का गठन कर क्रांतिकारी गतिविधियों का संचालन किया। इसके बाद गदर पार्टी के नेताओं ने भारत वापस आकर क्रांतिकारी गतिविधियों को योजनाबद्ध तरीके से चलाने का निर्णय लिया। इसी समय पंजाब में कामागाटामारू कांड की वजह से तनाव व्याप्त था। पंजाब के बाबा गुरुदत्त सिंह ने एक जापानी जलपोत कामागाटामारु को किराए पर लेकर 351 पंजाबी सिक्ख और 21 मुसलमान युवकों को भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के लिए कनाडा के वेनकूवर नगर ले जाने का प्रयास किया। किंतु ब्रिटिश सरकार के दबाव के कारण कनाडा सरकार ने इन क्रांतिकारी यात्रियों को बंदरगाह पर उतरने नहीं दिया और जहाज को 27 सितंबर 1914 को पुनः कलकत्ता लौटना पड़ा। बाबा गुरु दत्त सिंह को गिरफ्तार करने का प्रयास किया गया, किंतु वे भूमिगत हो गए। शेष क्रान्तिकारी यात्रियों ने पंजाब आकर अपनी गतिविधियां चलाई।[9] इन क्रांतिकारियों से मिलकर रास बिहारी बोस ने 21 जुलाई 1915 को सेना के विद्रोह की तिथि निश्चित की, परंतु एक सदस्य ने अंग्रेज अधिकारियों को इसकी सूचना दे दी, जिसके फलस्वरूप करतार सिंह, विष्णु पिंगले आदि क्रान्तिकारी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया और रास बिहारी बोस फरार होकर जापान चले गए, जहां वे कैप्टन मोहन सिंह द्वारा गठित 'इंडियन नेशनल आर्मी' (आजाद हिंद फौज) के साथ जुड़ गए। कालांतर में इस आर्मी का नेतृत्व सुभाष चंद्र बोस ने किया। 1915 तक गदर नेताओं को कैद कर लिया गया और ब्रिटिश सरकार ने भारत सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत उनके ऊपर विशेष मुकदमा चलाया, जो 'प्रथम लाहौर षड्यंत्र केस' नाम से प्रसिद्ध हुआ। 78 लोगों पर मुकदमा चलाया गया, जिनमें से 20 को फांसी की सजा हुई, जबकि 58 को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। इसी समय काबुल में राजा महेंद्र प्रताप के नेतृत्व में जर्मनी की सहायता से भारत की 'अंतरिम सरकार' की स्थापना की गई, इसके मंत्रिमंडल के सदस्य थे– मौलाना अब्दुल्ला, मौलाना बशीर, सी पिल्ले, शमशेर सिंह, मथुरा सिंह, खुदाबख्श और मुहम्मद अली। बरकतुल्ला को इस सरकार का प्रधानमंत्री बनाया गया। इस अंतरिम सरकार ने अनेक देशों की सरकारों से संपर्क करके सहायता प्राप्त करने के प्रयास किए। इसी क्रम में राजा महेंद्र प्रताप ने रूसी क्रांति के नायक लेनिन से भी मुलाकात की। इसके साथ ही भारत में 'हिजरत आंदोलन' भी शुरु किया गया और कई मुसलमान युवक भारत की सीमा पार करके अफगानिस्तान और तुर्किस्तान चले गए तथा वहां उन्होंने 'खुदाई सेना' की स्थापना की।[10]

इस प्रकार राष्ट्रीय आंदोलन के प्रथम चरण में जहाँ भारत की प्रमुख पार्टियां कांग्रेस, मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा और देशी रियासतों के राजाओं ने प्रथम विश्वयुद्ध में ब्रिटिश सरकार की सहायता की, वहीं क्रांतिकारियों ने ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध विद्रोह का झंडा उठाए रखा। प्रथम चरण के क्रांतिकारी आंदोलन की तकनीक और तरीके एक जैसे थे। इनका विश्वास था कि अहिंसा और शांतिमय तरीके से आजादी नहीं मिल सकती। ये क्रान्तिकारी ब्रिटिश सरकार के अधिकारियों और उनकी सहायता करने वालों के मन में आतंक पैदा करना चाहते थे, ताकि वे देश छोड़कर चले जाएं। भारत को आजाद कराने के लिए क्रांतिकारियों ने विदेशी सरकारों से भी सहायता लेने में कोई संकोच नहीं किया। बाद में इन क्रांतिकारियों के अनेक नेता रूसी क्रांति से प्रभावित होकर साम्यवादी बन गए और दूसरे चरण के क्रांतिकारी आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रथम चरण के क्रांतिकारी आंदोलन की कमजोरी यह थी कि ये क्रांतिकारी देश को आजाद तो करवाना चाहते थे, किंतु आजादी के बाद कैसा समाज बनाना चाहिए? इस पर उन्होंने कोई चिंतन नहीं किया था, जिसके कारण वे भारत की जनता को अपने साथ नहीं जोड़ पाए।

द्वितीय चरण में क्रांतकारी आंदोलन का विकास और प्रभावः प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान क्रांतिकारी आंदोलन को बुरी तरह से कुचल दिया गया था। किंतु ब्रिटिश सरकार ने मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारों को लागू करने के लिए सद्भावना का वातावरण बनाने के उद्देश्य से 1920 में क्रांतिकारियों को आम माफी के अंतर्गत जेल से रिहा कर दिया। इसके बाद ज्यादातर क्रांतिकारी महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में सम्मिलित हो गए। लेकिन महात्मा गांधी के द्वारा चौराचोरी की हिंसा के बाद असहयोग आंदोलन को अचानक वापस ले लिए जाने के निर्णय से इन क्रांतिकारियों की आशाओं पर वज्राघात हो गया और उनका कांग्रेस के अहिंसक आंदोलन से विश्वास उठने लगा तथा वे दूसरे विकल्प

की तलाश करने लगे। असहयोग आंदोलन की विफलता के बाद रामप्रसाद बिस्मिल, योगेश चटर्जी और सचिंद्रनाथ सान्याल के नेतृत्व में भारत के क्रांतिकारी पुनः संगठित होना प्रारंभ हुए। क्रांतिकारियों ने अक्टूबर 1920 में कानपुर में सम्मेलन किया और 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' का गठन किया, जिसका उद्देश्य सशस्त्र क्रांति के माध्यम से ब्रिटिश सत्ता को उखाड़कर एक संघीय गणतंत्र 'संयुक्त राज्य भारत' की स्थापना करना था। इसी दौरान हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन ने क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए पैसा एकत्र करने के उद्देश्य से 9 अगस्त 1925 को काकोरी में रेल विभाग का खजाना लूटकर पूरे देश में सनसनी फैला दी। काकोरी कांड के क्रांतकारियों अशफाकुल्ला, रामप्रसाद बिस्मिल, रोशन सिंह, राजेंद्र लाहिड़ी को फांसी दी गई तथा अनेक युवाओं को गिरफ्तार किया गया, जबकि चंद्रशेखर आजाद फरार हो गए। काकोरी कांड क्रांतिकारियों के लिए एक बड़ा आघात जरुर था, पर ऐसा नहीं था जो क्रांतिकारी आंदोलन के लिए मौत सिद्ध हो। इस घटना के बाद क्रांतिकारी संघर्ष के लिए अनेक युवा आगे आये तथा अप्रैल 1928 में लाहौर में भगत सिंह के नेतृत्व में 'नौजवान भारत सभा' का गठन क्रांतिकारी आंदोलन की रणनीति में एक महत्वपूर्ण बदलाव का सूचक बना। उत्तर प्रदेश में विजय कुमार, शिव वर्मा और जयदेव कपूर तथा पंजाब में भगत सिंह, भगवती चरण बोहरा और सुखदेव ने चंद्रशेखर आजाद के नेतृत्व में 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' को फिर से संगठित करने का काम प्रारंभ किया। इस उद्देश्य से 9 और 10 सितंबर 1928 को फिरोज शाह कोटला मैदान (दिल्ली) में युवा क्रांतिकारियों की मीटिंग आयोजित की गई, जिसमें क्रांतिकारियों ने 'समाजवाद' की स्थापना करने के लिए अपना लक्ष्य निर्धारित किया तथा संगठन का नाम बदलकर हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन' रखा गया।[11] इसके घोषणा पत्र में कहा गया कि हमारा उद्देश्य उन तमाम व्यवस्थाओं का उन्मूलन करना है जिसके अंतर्गत एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति का शोषण किया जाता है। इस संगठन ने जनता को सामाजिक क्रांति और साम्यवादी सिद्धांतों की शिक्षा देने, किसानों और मजदूरों के संगठन बनाने का निर्णय लिया तथा बड़े उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करने का प्रस्ताव रखा।[12]

इसी दौरान जेल की काल कोठरी से राम प्रसाद बिस्मिल ने युवकों को संदेश भेजकर अपील की कि वे पिस्तौल और रिवाल्वर रखने की इच्छा छोड़कर खुला आंदोलन चलाएं। अब क्रांतिकारी युवक व्यक्तिगत आतंकवाद की राजनीति छोड़कर धीरे-धीरे जन क्रांतिकारी कार्रवाई में विश्वास करने लगे थे। किंतु लाहौर में साइमन कमीशन के विरूद्ध प्रदर्शन के दौरान लाला लाजपत राय पर बर्बर लाठीचार्ज होने और इसके बाद उनकी मौत ने युवा क्रांतिकारियों को एक बार फिर व्यक्तिगत हिंसा के रास्ते पर चलने को विवश कर दिया। 17 सितंबर 1928 को भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद और राजगुरु ने लाहौर में लाला लाजपत राय पर लाठी बरसाने वाले पुलिस अधिकारी सांडर्स की हत्या कर दी। इसके बाद क्रांतिकारियों ने जनता को यह समझाने का निर्णय लिया कि उनका उद्देश्य बदल गया है और वे जनक्रान्ति में विश्वास रखते हैं। इसी समय ब्रिटिश सरकार जनता, विशेषकर मजदूरों के मौलिक अधिकारों पर प्रतिबंध लगाने के उद्देश्य से दो विधेयकों 'पब्लिक सेफ्टी बिल' और 'ट्रेड डिस्प्यूट्स बिल' को पास करने की तैयारी कर रही थी। इसके विरूद्ध विरोध प्रकट करने के लिए भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त ने केंद्रीय विधानसभा में खाली स्थान पर प्रतीकात्मक विरोध स्वरूप मामूली बम फेंका। क्रांतिकारियों द्वारा बम फेंकने का उद्देश्य अपनी गिरफ्तारी देकर अदालत को अपनी विचारधारा के प्रचार का माध्यम बनाना था, जिससे जनता क्रांतिकारियों के विचारों और राजनीतिक दर्शन को जान सके। किंतु जब महात्मा गांधी द्वारा इन क्रांतिकारियों को बम का उपासक बताते हुए एक लेख लिखा गया तो इसके जवाब में चंद्रशेखर आजाद के अनुरोध पर हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन की ओर से भगवती चरण बोहरा ने 'बम का दर्शन' लेख लिखा, जिसे भगत सिंह ने अंतिम रूप दिया।[13] इस लेख में चंद्रशेखर आज़ाद, भगत सिंह सहित अन्य क्रान्तिकारियों की सोच को अभिव्यक्त किया गया। लेख में हिंसा और अहिंसा के प्रश्न पर विचार करते हुए कहा गया कि हिंसा का अर्थ है, अन्याय के लिए किया गया बल प्रयोग। परन्तु क्रांतिकारियों का तो यह उद्देश्य नहीं है। इस लेख में क्रांति को 'सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक स्वाधीनता' के रूप में परिभाषित किया गया।

जेल के दौरान क्रान्तिकारियों ने अमानवीय दशाओं को सुधारने के लिए लंबे अनशन का रास्ता अपनाया। इसी दौरान अनशन के 64वें दिन जतिन दास की मृत्यु हो गई। लाहौर षड्यंत्र तथा अन्य मामलों में अनेक क्रांतिकारियों को लंबी सजा दी गई, अनेक लोगों को अंडमान जेल भेजा गया और 23 मार्च 1931 को भगत सिंह राजगुरु

व सुखदेव को फांसी दी गई। बाद में चन्द्रशेखर आज़ाद भी पुलिस मुठभेड़ में गिरफ्तारी से बचने के लिए स्वयं को गोली मारकर शहीद हो गए। लेकिन इस समय तक दूसरे चरण का क्रान्तिकारी आंदोलन जन समर्थन प्राप्त करके काफी लोकप्रिय हो चुका था। चंद्रशेखर आज़ाद के नेतृत्व में हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन का क्रान्तिकारी आंदोलन वैचारिकता की तरफ आगे बढ़ा, जिसे भगत सिंह ने अपनी बौद्धिकता से दार्शनिक गहराई प्रदान की। भगत सिंह ने जेल में रहकर क्रांतिकारी आंदोलन के बारे में गहन चिंतन, मनन, अध्ययन और विश्लेषण किया। उन्होंने क्रांतिकारी साहित्य, विशेषकर मार्क्सवाद का अध्यन किया, जिसका प्रमाण उनकी जेल नोटबुक है। इस नोटबुक में रूसो, टॉमस पेन, जैफरसन, हेनरी, अप्टन सिक्लेयर, बरट्रेंड रसेल, क्रोपाटकिन, बाकुनिन, हेगल आदि के विचारों के उद्धरण के साथ मार्क्सवादी विचारधारा, रूसी क्रांति, सोवियत समाजवाद और इतिहास की कई पुस्तकों से संदर्भ सहित टिप्पणियां दर्ज की गई हैं।[14]

पहले चरण के क्रांतिकारियों से दूसरे चरण के क्रांतिकारी इस रूप में भिन्न थे कि ये छोटे अफसरों, पुलिस मुखबिरों इत्यादि पर हमला करने के पक्ष में नहीं थे, क्योंकि इनके विचार में ऐसे कार्य देश में क्रांति लाने के मार्ग में रुकावट खड़ी कर सकते थे। इन क्रांतिकारियों ने समाजवादी कार्यक्रम के आधार पर गांव और शहरों के युवाओं को संगठित कर जन क्रांति का रास्ता चुना और आजादी के बाद समाजवादी समाज स्थापित करने का लक्ष्य घोषित कर गांधीवादी विचारधारा का विकल्प लोगों के सामने रखा।

हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के क्रांतिकारियों की गिरफ़्तारी के बाद सूर्य सेन के नेतृत्व में 'चटगांव विद्रोह' के रूप बड़ी क्रांतिकारी घटना थी। इसमें अंग्रजी फौज के 80 सैनिक और 12 युवा क्रांतिकारी मारे गए। 16 फ़रवरी 1933 को सूर्य सेन को भी गिरफ्तार कर लिया गया और 12जनवरी 1934 को उन्हें फांसी पर लटका दिया गया।[15]

क्रांतिकारी घटनाओं ने भारत की राजनीतिक स्थिति पर व्यापक प्रभाव डाला। पूरे देश में अंग्रेजों के विरुद्ध भावनाएं जागृत हो गईं। इस चुनौतीपूर्ण वातावरण में युवा क्रांतिकारियों के उभार को पहचाने तथा वामपंथ से मेलमिलाप करने के लिए लाहौर अधिवेशन (1929) में जवाहर लाल नेहरू को कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया। यह कांग्रेस के भीतर पीढ़ीगत बदलाव था। नेहरू ने इस अधिवेशन में पूर्ण स्वतंत्रता को कांग्रेस का लक्ष्य घोषित किया और 26 जनवरी 1930 को पूर्ण स्वाधीनता दिवस मनाने का निर्णय लिया। साथ ही गांधी जी के नेतृत्व में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने का निर्णय लिया। इस आंदोलन के बाद 1935 का भारत शासन अधिनियम पारित किया गया। लाहौर अधिवेशन के बाद कांग्रेस में अगले एक दशक तक समाजवादी नेतृत्व का प्रभाव दिखाई दिया। 1938 में समाजवादी वामपंथी रुझान वाले सुभाष चंद्र बोस कांग्रेस के निर्विरोध अध्यक्ष बने, वे युवाओं में बहुत ज्यादा लोकप्रिय थे। गांधीजी की इच्छा के विरुद्ध 1939 में भी सुभाष चन्द्र बोस चुनाव जीतकर कांग्रेस के पुनः अध्यक्ष चुने गए। लेकिन कांग्रेस नेताओं से ज्यादा मतभेद हो जाने पर उन्होंने कांग्रेस से त्यागपत्र देकर फॉरवर्ड ब्लॉक का गठन कर लिया और फिर आज़ाद हिंद फौज का नेतृत्व किया। इसी दौरान ब्रिटिश सरकार ने भारतीय जनता की अनुमति के बिना भारत को द्वितीय विश्वयुद्ध में धकेल दिया तो पुनः स्थिति बिगड़ती चली गई। क्रिप्स सद्भावना मंडल की असफलता तथा कांग्रेस के भारत छोड़ों आंदोलन के बाद महात्मा गांधी और उनके सहयोगियों की गिरफ्तारी से पुनः क्रांतिकारियों को अपनी गतिविधियां आरंभ करने को बाध्य किया। फलस्वरूप 1942 में भारत में लोकप्रिय विद्रोह हो गया। इसमें गांधीजी के अनुयायियों और क्रांतिकारियों ने मिलकर ब्रिटिश राज की समाप्ति के लिए असफल प्रयास किया। इस दौरान आंदोलन की कमान अच्युत पटवर्धन, अरुणा आसफ अली, राम मनोहर लोहिया, सुचेता कृपलानी, उषा मेहता, छोटू भाई पुराणिक, बीजू पटनायक, आर पी गोयनका, जय प्रकाश नारायण थे। ये लोग पैसा और बम, हथियार, बारूद आदि सामग्री एकत्र कर देश भर में छिपे हुए गुप्त क्रान्तिकारी समूहों में बांटते थे।[16]

भारत छोड़ो आंदोलन से आज़ाद हिंद फौज को एक नई शक्ति मिली। सुभाष चंद्र बोस ने देश से बाहर जाकर जर्मनी और जापान की सहायता से आज़ाद हिन्द फौज का पुनर्गठन किया और उन्होंने 21 अक्टूबर 1943 को सिंगापुर में स्वाधीन भारत की सरकार गठित की। इस सरकार ने ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। 6 जुलाई 1944 को सुभाष चन्द्र बोस ने आज़ाद हिंद रेडियो पर बोलते हुए गांधी जी को संबोधित किया- 'भारत की स्वाधीनता का अंतिम युद्ध शुरू हो चुका है, राष्ट्रपिता! भारत की मुक्ति के इस पवित्र युद्ध में हम आपका आशीर्वाद और शुभ कामनाएं चाहते हैं।'[17] किंतु सुभाष चंद्र बोस अपने उद्देश्य में सफल होते, इससे

पूर्व ही एक प्लेन दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई। विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद ब्रिटिश सेना ने आज़ाद हिंद फौज के हजारों सैनिकों को बंदी बना लिया, जिसके तीन प्रमुख कमांडर - कर्नल प्रेम कुमार सहगल, कर्नल गुरबक्श सिंह ढिल्लन और मेजर जनरल शाहनवाज सम्मिलित थे। इन पर मुकदमा चलाया गया, किंतु कांग्रेस पार्टी के नेताओं भूला भाई देसाई, जवाहर लाल नेहरू, तेज बहादुर सप्रु, कैलाश नाथ काटजू और आसफ अली की टीम की दलील तथा जन आंदोलन के दबाव में इन तीनों को जेल से रिहा कर दिया गया। इस मुकदमें के द्वारा ही देशवासियों को पता चला कि आज़ाद हिंद फौज ने भारत बर्मा सीमा पर अंग्रजों के विरूद्ध अनेक जगहों पर जंग लड़ी थी और 14 अप्रैल 1944 को कर्नल एस.ए. मलिक की लीडरशिप में फौज की एक टुकड़ी ने मणिपुर के मोरांग में तिंरगा लहराया था।[18]
आज़ाद हिंद फौज के सैनिकों के विरूद्ध चले मुकदमें से भारत में प्रखर राष्ट्रवादी भावना का उभार हुआ तथा 1945-46 में विद्रोह की तीन बड़ी घटनाएं हुईं, जिनमें बंबई में रॉयल इंडियन नेवी की हड़ताल विद्रोह (नौसैनिक विद्रोह) प्रमुख था। इसके बाद देश के अन्य शहरों में भी हड़तालें हुई। अंततः भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की सभी धाराओं के सम्मिलित प्रयासों से 15 अगस्त 1947 को भारत को स्वतंत्रता मिल गई।

निष्कर्ष : भारत के स्वाधीनता आन्दोलन में क्रान्तिकारी धारा के उदय और विकास को एक रोमांचकारी घटना के रूप में ही नहीं, बल्कि एक गंभीर वैचारिक आंदोलन के रूप में भी देखा जाना चाहिए। यद्यपि इसका प्रारंभ ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध व्यक्तिगत वीरता प्रदर्शन और हिंसक कृत्यों से हुआ, तथापि 1928 तक यह धारा भारतीय युवाओं के बीच सशक्त वैचारिक आंदोलन बन गई, जिसने भारत में ब्रिटिश शासन को उखाड़ फेंकने की सोच को विकसित किया। क्रांतिकारी आंदोलन का लक्ष्य भारत के लिए पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति था और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ये क्रांतिकारी परिस्थितिजन्य हर उपयुक्त साधन का इस्तेमाल करने के पक्षधर थे। किंतु इनका अन्तिम ध्येय कभी भी आतंकवाद का नहीं रहा। क्रांतिकारी मानवीय मूल्यों में विश्वास करते थे। यह बात भगत सिंह के एक बयान से स्पष्ट हो जाती है जिसमें उन्होंने कहा था कि 'क्रान्ति ईश्वर का विरोध तो कर सकती है, लेकिन मनुष्य विरोधी नहीं हो सकती।'
यदि हम किसी आंदोलन की सफलता का मूल्यांकन तुरंत उद्देश्य की प्राप्ति के आधार पर न करके इस आधार पर करें कि उसने जन जागृति, स्वतंत्रता की ललक, साम्राज्यवाद पर दबाव डालने और उसके लिए सर्वस्व न्योछावर करने की भावना विकसित करने में कितना योगदान दिया? तो इस आधार पर भारत का क्रांतिकारी आंदोलन बहुत प्रभावशाली सिद्ध हुआ। क्रांतिकारी आंदोलन उन अवसरों पर विशेष रूप से प्रकट होता रहा, जब अन्य प्रमुख राजनैतिक संगठनों का जोश ठंडा पड़ जाता था या फिर वे एक प्रकार से हतोत्साहित हो जाते थे। भारत की स्वतंत्रता में क्रांतिकारी आंदोलन का योगदान अतुल्य है। इसका स्वरुप राष्ट्रवादी था।

सन्दर्भ

1. शुक्ल रामलखन, 'आधुनिक भारत का इतिहास', हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1993, पृ. 441
2. ग्रोवर बी.एल. और यशपाल, 'आधुनिक भारत का इतिहास', एस. चांद एंड कं., दिल्ली, 2001, पृ.310
3. चंद्र बिपिन, 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष', हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1996, पृ.101
4. सिंह गुरुमुख निहाल, 'लैंडमार्क इन इंडियन कांस्टीट्यूशन एंड नेशनल डवलपमेंट', आत्माराम एंड संस, दिल्ली, 1950, पृ. 146
5. ग्रोवर बी.एल. और यशपाल, पूर्वोक्त, पृ. 311-12
6. शुक्ल रामलखन, पूर्वोक्त, पृ.447-48
7. चंद्र बिपिन, पूर्वोक्त, पृ. 110
8. शुक्ल रामलखन, पूर्वोक्त, पृ. 450-51
9. ग्रोवर बी.एल. यशपाल, पूर्वोक्त, पृ. 312-13
10. शुक्ल रामलखन, पूर्वोक्त, पृ. 452
11. चंद्र बिपिन, पूर्वोक्त 190
12. वर्मा सत्यम, 'विचारों की सान पर', परिकल्पना प्रकाशन, लखनऊ, 2001, पृ. 36-37
13. वर्मा सत्यम, पूर्वोक्त, पृ. 49
14. लाल चमन, 'भगत सिंह के राजनीतिक दस्तावेज', एनबीटी, दिल्ली, 2014, पृ. 172
15. चंद्र बिपिन, पूर्वोक्त, पृ. 196
16. चंद्र बिपिन, पूर्वोक्त, पृ. 370
17. चंद्र बिपिन, पूर्वोक्त, पृ.376
18. शर्मा अभय, 'लालकिले पर आजाद हिंद फ़ौज के मुकदमे की कहानी', 13 अक्टूबर, 2022 https://www.thelallantop.com/lallankhas/post/tarikh-azad-hind-fauj-ina-red-fort-trials-bhulabhai-desai-liaquat-pact

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

पैरेटो की क्रिया–व्यवस्था एवं भारतीय समाजशास्त्र

❑ डॉ. मनोज कुमार तोमर

भारतीय सामाजिक व्यवस्था को समझने का प्रयास भिन्न–भिन्न काल खण्डों में अनेकों विद्वानों ने किया है। भारतीय चिंतन की विविधता भौगोलिक विस्तार, प्राचीनता, विभिन्न नृजातीय परम्पराओं तथा धर्म की विचारधारा से प्रभावित रही है। इस चिंतन में आस्ट्रिक, द्रविड़, आर्य, मंगोल, ग्रीक, अरब, एवं तुर्क आदि समूहों के सम्पर्क एवं समन्वय का विशेष योगदान है। 1920 के बाद भारत में समाजशास्त्रीय विचारों की परम्परा विकसित हुई जिसमें ग्रामीण समाजशास्त्र के अन्तर्गत अनेकों विद्वजनों ने, जिसमें मैकिम मैरियट, एस.सी. दुबे, एम.एन. श्रीनिवास, डब्ल्यू एच.वाइजर, एवं बी.आर. चौहान आदि प्रमुख हैं ने ग्रामीण अध्ययनों द्वारा भारतीय सामाजिक व्यवस्था को समझने का प्रयास किया। एक तरफ जहाँ पाश्चात्य विद्वान पाश्चात्य अवधारणाओं के संदर्भ में भारतीय समाज की व्याख्या करने का प्रयास कर रहे थे। वहीं प्रोफेसर राधाकमल मुखर्जी एवं डी.पी. मुखर्जी सरीखे अनेक भारतीय समाजशास्त्रियों का मत रहा कि भारतीय समाज को भारतीय अवधारणा, मूल्य एवं उसके सन्दर्भ में समझना ही उचित होगा। प्रस्तुत शोध पत्र इसी क्षेत्र में किया गया एक प्रयास है।

सूचक शब्द : क्रिया व्यवस्था, क्रिया सिद्धाँत, तार्किक क्रिया, अतार्किक–क्रिया, भ्रांत तर्क, विशिष्टि चालक।

समाजशास्त्र का उद्भव 19वीं शताब्दी में हुआ और इस सन्दर्भ में 17वीं शताब्दी की वैज्ञानिक क्रान्ति और 19वीं शताब्दी की औद्यौगिक क्रान्ति की एक संकटमूलक स्थिति का विशेष योगदान रहा। चूंकि 17वीं शताब्दी प्रारंभ में नवीन अविष्कारों एवं खोजों से युक्त थी जिसने आगे चलकर 19वीं सदी में औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात किया। इसके परिणामस्वरूप तर्कसंगत विचारों, मानववाद, अभिनवीकरण तथा प्रविधि विकास का सूत्रपात 20वीं सदी में हुआ। विल्फ्रेडो पैरेटो ने सामाजिक क्रिया सिद्धांत की सर्वप्रथम रूपरेखा प्रस्तुत की तत्पश्चात मैक्सबेबर ने आदर्श प्रारूप (Ideal Type) के रूप में इसे प्रस्तुत किया एवं टालकोट पारसंस ने सामाजिक क्रिया सिद्धांत को विश्लेषणात्मक रूप से विकसित किया।

अगस्त काम्टे ने समाजशास्त्र की नींव रखी एवं बताया कि समाजशास्त्र वह शास्त्र है जो समाज का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र को एक विषय के रूप में स्थापित करने में दुर्खीम एवं मैक्स बेबर का बहुत बड़ा योगदान है। मैक्स बेबर एवं टालकोट पारसंस ने समाजशास्त्र में सामाजिक क्रिया व्यवस्था की व्याख्या कर इसे ही समाजशास्त्र की विषय वस्तु माना है। विल्फ्रेडो पैरेटो ने इसी सामाजिक क्रिया सिद्धान्त को प्रकार्यात्मक उपागम के रूप में प्रस्तुत कर सामाजिक यथार्थ को समझाने का प्रयास किया है।

वर्तमान भारतीय समाजशास्त्र एक तरफ अनुभव–सिद्ध प्रयोगवाद और दूसरी तरफ दार्शिनिक–ऐतिहासिक अभिगम के बीच निर्णय द्वार पर है जिसमें पश्चिमी और विशेषकर अमेरिकी समाजशास्त्र पर निर्भरता बढ़ती चली गई एवं स्वयं की आनुभाविक और सैद्धान्तिक क्षमता कम होती गई। प्रस्तुत शोध पत्र इस क्षमता की गहरी खाई को कम करने का एक प्रयास है।

शोध पत्र के उद्देश्य : प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य चिन्तन के भारतीय परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत पैरेटो की क्रिया व्यवस्था का विषयवस्तु की समानता भिन्नता सिद्धांत (कान्टेन्ट पैरेलल्स एण्ड डिफरेन्सेज थ्यौरी) के आधार पर तुलनात्मक विवेचन करना है साथ ही इस तथ्य की ओर भी संकेत करना है कि क्या भारतीय समाजशास्त्र में पैरेटो के क्रिया–सिद्धांत का प्रयोग समसामयिक है यदि नहीं तो पैरेटो का यह सिद्धांत भारतीय सामाजिक व्यवस्था के किन बिन्दुओं पर भिन्नता रखता है।

शोधपत्र की प्रविधि : प्रस्तुत शोधपत्र मुख्य रूप से तुलनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन पद्धति पर आधारित है। अतः यह शोधपत्र द्वितीयक स्त्रोतों पर आधारित है, इसके अध्ययन के लिए पुस्तकों के साथ–साथ शोध पुस्तिका एवं इन्टरनेट की सहायता ली गई है।

यदि यथार्थता के आधार पर देखें तो तुलनात्मक

❑ प्रोफेसर समाजशास्त्र राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सवाई माधोपुर, (राजस्थान)

समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की कोई पृथक शाखा नहीं बल्कि स्वयं में समाजशास्त्र ही है। बेतई[1] के अनुसार तुलनात्मक समाजशास्त्र के अन्तर्गत सामाजिक प्रघटना को दृष्टिगत रखते हुए मानवीय जीवन की भिन्नता का आधार खोजना होता है। ब्राउन रैडक्लिफ के अनुसार समाजशास्त्र को जब हम वैज्ञानिक कसौटी पर कसने का प्रयास करते हैं तो तार्किक आधार पर हमें यह अवलोकन करना चाहिए कि सामाजिक प्रघटना के घटित होने का वास्तविक आधार क्या है।[2] एक ही प्रकार की वैज्ञानिक पद्धति एक ही समय में अनेक शास्त्रों की विषय-वस्तु पर प्रयोग में लायी जा सकती है। लेकिन सामाजिक प्रघटना के सम्बन्ध में यह लागू नहीं होता क्योंकि वह एक ही समय में विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों के प्रभाव का परिणाम होती है। इसी तुलनात्मक आधार पर हमें समाजशास्त्रीय प्रत्ययों व सैद्धान्तिक अवधारणाओं का अंधानुकरण करने के बजाय उनके संश्लेषणवादी दृष्टिकोण पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

भारतीय समाज की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति है। जहाँ विविधता में अनेकता समाहित है। भाषा, जाति, धर्म एवं रीति-रिवाज आदि की विविधताऐं चारों ओर विद्यमान हैं। इसी प्रकार की विविधताओं के अस्तित्व को बनाए रखते हुये भारतीय ऋृषि मुनियों ने ऐसे सूत्र स्थापित किये कि एक वैभवशाली सांस्कृतिक एकता की अधोसंरचना पड़ गई अर्थात् विविधिता में एकता का एक अनूठा रूप और आदर्श प्रस्तुत करता रहा है। एम.एस.श्रीनिवास के शब्दों में भारतीय समाज में संरचना एवं सांस्कृतिक प्रतिमान विविधता एवं एकता के द्वारा ही जाने जाते है।[3] एस.सी.दुबे के अनुसार ''भारतीय संस्कृति में विविधता के प्रमुख आधार जातीय उद्भव, धर्म व भाषाऐं हैं।''[4] भारतीय संस्कृति में विद्यमान विविधताओं को एस.एस. दुबे ने शास्त्रीय रीति-रिवाज, क्षेत्रीय रीति-रिवाज, स्थानीय रीति-रिवाज, शास्त्रीय पाश्ताल्य रीति-रिवाज, नवोदित राष्ट्रीय रीति-रिवाज एवं विशेष समूहों के उप सांस्कृतिक रीति-रिवाज अर्थात् भारतीय संस्कृति अनेक खण्ड एवं समूहों में विभक्त बताया है। भारतीय समाज की यही विविधताएं किसी एक सिद्धान्त विशेषकर पाश्चात्य अवधारणा पर आधारित भारतीय सामाजिक यथार्थ को समझने में पूर्णतः सफल रहने पर प्रश्न चिन्ह लगाती है। यही वह आधार है जिसको बृजराज चौहान ने राबर्ट रेडाफल्ड की लघु-समुदाय की अवधारणा को अपनी पुस्तक राजस्थान विलेज में न केवल नकारा बल्कि भविष्य के समाजशास्त्रियों के लिए यह एक सलाह भी थी कि किस प्रकार केवल मैक्सिकन गॉव टोपाजालेन के आधार पर भारतीय गॉव की सामाजिक संरचना को समझा नहीं जा सकता।[5]

सामान्यतः यदि कोई विद्वजन भारतीय समाज को समझना चाहता है तब उसे दो दृष्टियों को सामने रखकर समझना उचित होगा। प्रथम धर्मशास्त्रीय, पुस्तकीय, पाठीय अथवा शास्त्रीय दृष्टिकोण तथा द्वितीय आनुभाविक अथवा क्षेत्राधारित दृष्टिकोण। एक तरफ ग्रंथो एवं महाकाव्यों की सहायता से भारतीय समाज का विशुद्ध चित्रण किया जाता है जो आर्दशात्मक दृष्टिकोण भी माना जाता है, दूसरी और आनुभाविक दृष्टिकोण क्षेत्रीय वास्तविकता को समझने पर बल देता है। भारतीय समाजशास्त्र को समझने की कोशिश भिन्न-भिन्न काल में अनेक विद्वानों ने की। आजादी के बाद ग्रामीण समाजशास्त्र के अन्तर्गत अध्ययनकर्ताओं में मैमिम मैरियट, एस.सी. दुबे, एम.एन. श्रीनिवास, डब्ल्यू एच.वाइजर एवं बी. आर. चौहान आदि प्रमुख हैं। जहाँ पाश्चात्य विद्वानों ने पाश्ताल्य अवधारणाओं के सन्दर्भ में भारतीय समाज की व्याख्या करने का प्रयास किया तब राधाकमल मुखर्जी एवं डी. पी. मुखर्जी सरीखे भारतीय विद्वानों ने कहा कि भारतीय समाज को भारतीय मूल्यों एवं सन्दर्भ में समझना ही उचित होगा।

सामाजिक क्रिया सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए पैरेटो का मत था कि हम समाजशास्त्र को तार्किक प्रयोगात्मक विज्ञान के रूप में स्थापित करना चाहते हैं। पैरेटो सामाजिक क्रिया का दो भागों में विश्लेषण करते हैं- तार्किक क्रिया जो वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित है एवं अतार्किक क्रिया व्यक्तिपरकता से सम्बन्धित है। अर्थात् तार्किक क्रिया वैज्ञानिकता के आधार पर होती है, जबकि अतार्किक क्रिया संवेगों व मनोवृतियों आदि पर आधारित होती है। वह लक्ष्य एवं साधन दो शब्दों का प्रयोग करते हैं, जिस आधार पर आपका मानना है कि जो क्रियाऐं तर्कपूर्ण रीति से साधन को लक्ष्य के साथ जोड़ती हैं तथा कर्ता के साथ अन्य व्यक्ति जो उस विषय के विशेषज्ञ हैं उनकी दृष्टि से भी तर्कपूर्ण हों तार्किक क्रियाएं कही जाती हैं, जबकि अतार्किक क्रियाऐं जिसमें लक्ष्य साधनों के मध्य में विवेक सम्मत आधार नहीं होता है एवं जो एक विशिष्ट मानसिक अवस्था से उत्पन्न होती हैं और

उस क्रिया को करने वाला उसके पक्ष में अनेक युक्तियाँ पेश करता है। यहाँ यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण होगा कि पैरोटो का मत है कि प्रत्येक क्रिया के साथ तर्क जुड़ा होता है अर्थात प्रत्येक क्रिया का आधार तार्किक होता है। यहाँ पैरेटो भ्रांत तर्क की अवधारणा की चर्चा करते हैं। जहाँ पैरेटो का मत है कि क्रिया के सन्दर्भ में तर्क या भ्रांत तर्क कोई एक का होना आवश्यक है। इसी सन्दर्भ में पैरोटो भ्रांत तर्क एवं विशिष्ट चालक शब्दों को प्रयोग क्रिया के परिप्रेक्ष्य में करते हैं। पैरेटो विशिष्ट चालकों की विशेषताओं को प्रस्तुत करते हुए व्याख्या करते हैं कि ये (विशिष्ट चालक) प्रकृति से स्थिर अथवा अपेक्षाकृत, अपरिवर्तनशील, भावनाओं की मात्र अभिव्यक्ति हैं तथा विशिष्ट चालकों को तार्किक आधार पर प्रमाणित नहीं किया जा सकता मानते हैं अर्थात् पैरेटो मानते हैं कि विशिष्ट चालक मनुष्य की भावनाएं एवं उनकी मूल प्रवृति नहीं हैं अपितु इनकी अभिव्यक्ति मात्र हैं। विशिष्ट चालकों को आप अति महत्वपूर्ण मानते हैं। जिसके अनुसार आपका मत है कि यह विशिष्ट चालक मानवीय व्यवहार के निर्धारक होते हैं एवं सामाजिक व्यवस्था में संतुलन बनाये रखने में सहायक होते हैं। ये मानव के सम्पूर्ण व्यवहार को प्रभावित एवं निर्धारित करते हैं, मनुष्य से भावनात्मक रूप से जुड़े होते हैं। साथ ही साथ विशिष्ट चालक एक दूसरे के पूरक होते हुए मनुष्य को सामाजिक प्राणी बनाते हैं। पैरोटो भ्रांत तर्क को मानवीय व्यवहार का परिवर्तनशील, अपेक्षाकृत, अस्थायी पक्ष मानते हैं एवं इनका वर्गीकरण करते हुए घोषणा, अधिकार या सत्ता एवं मौखिक प्रमाण तीन प्रकारों में विभाजित करते हैं। इन सभी अवधारणाओं आदि के आधार पर सामाजिक क्रिया व्यवस्था सिद्धान्त की व्याख्या करते हैं। इस प्रकार पैरेटो द्वारा प्रस्तुत भ्रांत तर्क व्यवहारों एवं क्रियाओं का वह व्यापक क्षेत्र है जिससे मनुष्य अपने व्यवहारों की तार्किकता औचित्य के संबंध में स्वयं अपने आपको और अन्य व्यक्ति को विश्वास दिलाने का प्रयत्न करता है।

इस सन्दर्भ में पैरेटो का यह कथन सही प्रतीत होता है कि मनुष्य के अधिकांश व्यवहार किसी तर्क या सिद्धान्त से प्रभावित नहीं होते बल्कि मनुष्य पहले व्यवहार करता है और इसके बाद अपने व्यवहार के औचित्य को सिद्ध करता है। पैरेटो की मान्यता है कि केवल सामान्य व्यक्ति ही अपने जीवन में भ्रांत तर्को का सहारा नहीं लेते बल्कि राजनीति, दर्शन तथा समाज विज्ञान में भी बढ़े-बढ़े विद्वान अपने कार्यो और विचारों को भ्रांत तर्क की सहायता से उपयोगी प्रमाणित करने का प्रयत्न करते है। अगस्त कॉम्टे ने रीलिजन ऑफ ह्यूमिनिटी के रूप में जिस अवधारणा को प्रस्तुत किया वह कुछ समाज वैज्ञानिकों द्वारा इसी प्रकार के तथ्यों पर आधारित मानी गई, जबकि कुछ समाज वैज्ञानिक इस तर्क से असहमति प्रकट करते हैं।

पैरेटो का स्पष्ट मत है कि मनुष्य की अधिकतम क्रियाऐं अतार्किक होती हैं ये किसी तर्क से नहीं बल्कि विशिष्ट मानसिक अवस्था से उत्पन्न होती हैं तथा यही वह आधार है जिस पर पैरोटो मानवीय व्यवहार को समझते हैं एवं सामाजिक क्रिया सिद्धान्त की व्याख्या करते हैं।

समाजशास्त्र का भारतीय परिप्रेक्ष्य : कुछ उभरते प्रश्न?

समाजशास्त्र के भारतीय संदर्भ की विषय-वस्तु पर जो वाद-विवाद चल रहा है, उस विद्योचित साम्प्रदायिकता (एकेडमिक कोम्पेनलिज्म) से सभी विद्वतजन भली-भाँति परिचित होंगे। विद्योचित साम्प्रदायिकता से तात्पर्य भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक प्रत्ययों का सैद्धांतिक स्तर पर पाश्चात्य समाजशास्त्रीय प्रतिरूपों से प्रत्यक्ष संघर्ष है। भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक यथार्थ को उजागर करने के लिए घुरियें, कपाड़िया, डी.पी. मुखर्जी, ए.के. सरन के पश्चात् लुई डयूमॉ, पोकाक व मैक्यिम मैरियट जिन पर भारतीय समाजशास्त्र को हिन्दू समाजशास्त्र के साँचे में ढालने का आरोप है, वैले जैसे भारतीय सोच के मनीषियों के नाम उल्लेखनीय है। इसी संदर्भ में अविभाजित भारत की सामूहिक संस्कृति से बनी भारतीय सामाजिक व्यवस्था के वास्तविक स्वरूप को भारत ज्ञानशास्त्रीय उपागम (इन्डोलौजिकल एप्रोच) के द्वारा खोजना ही भारतीय समाजशास्त्र की विषयवस्तु होनी चाहिए।[6]

सामूहिक संस्कृति से ''व्यक्ति'' की अनुपस्थिति भारतीय सांस्कृतिक यथार्थ की मुख्य विशेषता रही है। इसीलिए समाजशास्त्र के भारतीय परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत हमें भारत-वर्ष के उस यथार्थ का अध्ययन करना चाहिए जिसमें सभी देशीय या विदेशीय संस्कृतियाँ भारतवर्ष की एक ''सामूहिक संस्कृति'' से एकाकार करके भारतीयकृत (इन्डियनाइज्ड) हुयी थीं। जवाहरलाल नेहरू के अनुसार कहना न होगा कि आज जो संस्कृति स्वयं को भारतीय संस्कृति में विमुख मानकर एक विलग सत्ता के रूप

में अपनी अस्मिता चाहती है, वह भी भारत वर्ष की सामान्य परम्पराओं का प्रतिनिधित्व करती हैं।[7] इस सन्दर्भ में यह प्रासंगिक है कि समाजशास्त्र के भारतीय परिप्रेक्ष्य का तात्पर्य वर्ण, जाति या धर्म के वादविवाद से तटस्थ रहते हुए उस मूल्य-व्यवस्था से लेना चाहिए जो भारतीय समाज के सांस्कृतिक संश्लेषण से निर्मित सामान्य भारतीय संस्कृति (कॉमन इण्डियन कल्चर) का आधार रही है।

भारत मूल के बुद्धिजीवियों के पश्चिम की अवधारणाओं से आत्मसात करने पर भारत में पाश्चात्य समाजशास्त्र की स्थापना हुयी। पाश्चात्य अवधारणाओं के संस्थापन से भारत में समाजशास्त्र के विद्यार्थियों में वृद्धि तो हुयी है। लेकिन जहाँ तक भारतीय समाज के यथार्थ को उजागर करने का प्रश्न है उसकी वेदना भारतीय समाजशास्त्रीय जगत में निरन्तर अनुभव की जा रही है। यही कारण रहा है कि पाश्चात्य जगत की समाजशास्त्रीय अवधारणायें व सिद्धान्त परास्नातक के विद्यार्थियों व सम्मेलनों में चर्चा के विषय तक ही सीमित रहे हैं। परिणामस्वरूप भारतीय समाजशास्त्र की विषयवस्तु के ज्ञान तक से हमारी वर्तमान पीढ़ी अनभिज्ञ ही रही है। हमारे कुछेक पूर्वगामी भारतीय सोच के मनीषियों ने पाश्चात्य प्रत्ययों व प्रतिरूपों के पूर्णरूपेण उपयोग के दुष्परिणामों से सावधान तो किया था, लेकिन क्या हम उनकी भाषा समझकर अनुकरण कर पाये?

उपर्युक्त संदर्भ में विल्फ्रेडो पैरेटो के सिद्धान्त का न केवल विश्लेषण ही बल्कि भारतीय समाजशास्त्र में उनके सिद्धान्त की व्यवहारिक उपयोगिता की सीमा ही विषय की प्रासंगिकता को सिद्ध कर सकती है।

पैरेटो क्रिया-व्यवस्था : एक पुनर्विवेचन

विल्फ्रेडोः पैरेटो अपने समकालीन अर्थशास्त्री विनीयसर्की के विचारों से प्रभावित होकर विशुद्ध गणितीय अर्थशास्त्री से समाजशास्त्री हुए थे। तत्पश्चात् ही पैरेटो समाजशास्त्री के यन्त्रवादी सम्प्रदाय (मिकेनिस्टिक स्कूल ऑफ सोशयोलॉजी) के जन्मदाता भी कहलाये। इसमें कोई संदेह नहीं कि इटली व फ्रॉंस में न केवल अर्थशास्त्रीय व समाजशास्त्रीय विचारों पर बल्कि वहॉं की राजनीति पर भी पैरेटो के विचारों का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। यहाँ तक कि इटली की फासीवादी विचारधारा को भी परेटो के सिद्धान्तों ने प्रभावित किया। इसी कारण से इटली में उन्हें ''मध्यम वर्ग का कार्लमार्क्स'' भी कहा जाता है। पैरेटो की समाजशास्त्रीय अवधारणायें अपने मूलरूप में उनके दो निबन्धों में अध्यनार्थ मिलती हैं। प्रथम ''टेटाटो डी सोशयोलॉजिया जर्नेला'' जो इटली में 1915 व 1916 में प्रकाशित हुई थी, द्वितीय लेस सिस्टमूस सोशयोलॉजिस्टीस।

विषय की प्रासंगिकता देखते हुए यहाँ उस तथ्य की ओर इशारा करना भी आवश्यक हो जाता है कि पैरेटो ने क्योंकि अतार्किक व विवेकहीन क्रियाओं को ही मानवीय जीवन, उसके सम्बन्धों की संरचना व परिवर्तन के सन्दर्भ में अवलोकित किया है इसीलिए ''पैरेटो का समाजशास्त्र'' सामाजिक विज्ञान की वह शाखा है जिसमें मानवीय व्यवहार अधिकांश रूप में इन अतार्किक क्रियाओं के द्वारा निर्देशित होता है।[8]

पैरेटों के लिए समाज मानवीय अणुओं (ह्यूमन मॉलीक्यूल्स) के पारस्परिक सम्बन्धों की जटिल व्यवस्था है। अर्थात् सामाजिक व्यवस्था का स्वरूप मानवीय अणुओं के इसी स्वरूप से निर्धारित होता है। इन अणुओं के स्वरूप में परिवर्तन से ही समाज में परिवर्तन होता है। जो शक्तियाँ समाज में साम्यावस्था लाती हैं पैरेटो ने उनकी निर्माणक अंगों के रूप में तीन वर्गों में विभाजित किया है।

1. अतिरिक्त मानवीय पर्यावरण या भौतिक अवस्थायें, जैसे-जलवायु, भूमि, पेड़-पौधे इत्यादि,
2. बाह्य दशायें जैसे-समाज की पूर्व अवस्था का अन्य संस्कृति के साथ सम्पर्क
3. सामाजिक व्यवस्था के आंतरिक तत्व जैसे, प्रजाति विशिष्ट चालकों की प्रकृति, रूचि, ज्ञान, मूल्य, विचारधारायें एवं मानवीय अणु के अन्य लक्षण जो व्यवस्थाओं के निर्माण में सहायक होते है।[9] पैरेटो का विश्वास था कि यदि सामाजिक व्यवस्था को बाह्य शक्तियों के द्वारा (सांस्कृतिक सम्पर्क विघटित करने का प्रयास किया जाता है तो सामाजिक व्यवस्था के आंतरिक तत्व) जैसे विशिष्ट चालक व विचारधारायें इत्यादि समाज को सामान्य अवस्था में लाने का प्रयास करते हैं।[10]

यदि पैरेटो के सैद्धांतिक दृष्टिकोण पर गहराई से विचार करें तो ज्ञात होता है कि पैरेटो की सामाजिक व्यवस्था उसके अवशेषों (रेजीड्यूज) व भ्रान्त तर्कों (डैरिवेशन्स) के बीच विचल व्यवस्था हैं। उनका विचार था कि मानवीय क्रिया में बहुतायत रूप में ''प्रबल प्रेरणा'' या चालकों (ड्राइव्स) के व्यवहार पर निर्भर करती है। इन चालकों

के स्थिर स्वरूप को पैरेटो ने विशिष्ट चालक या अवशेष कहा है। पैरेटो के विशिष्ट चालक न तो मूलप्रवृति है न ही संवेग बल्कि ''स्थाई चालक'' (कान्सटेन्ट ड्राइव) है जो किसी भी समाज के व्यक्तियों के अस्तित्व का निर्धारण करते हैं। बाह्य संस्कृति से संपर्क के परिणामस्वरूप जब इन विशिष्ट चालकों का स्वरूप परिवर्तन होता है तभी सामाजिक व्यवस्था व उसके स्वरूप में परिवर्तन आता है। सोरोकिन के अनुसार विशिष्ट चालकों का स्वभाव ही मानवीय क्रियाओं का स्वभाव निर्धारित करता है। व्यक्तियों की क्रियायें व विचारधारायें उनके स्थायी विशिष्ट चालकों की ही अभिव्यक्ति हैं। ये विशिष्ट चालक ही विचारधाराओं का निर्माण करते हैं। इसीलिए सोरोकिन ने पैरेटो के अवशेषों को ''विचार-धाराओं का जन्मदाता'' (फादर ऑफ आइडियोलॉजीज) व भ्रान्त तर्क को उस मत परिवर्तन (वैदरकॉक) के एक स्वरूप के रूप में उल्लेख किया है जो विशिष्ट चालकों रूपी वायु की दिशा के अनुसार ही अपनी दिशा तय करते हैं। अतः यदि हम किसी व्यक्ति या समूह के मतों और विचारधाराओं को बदलना चाहते हैं तो सर्वोत्तम मार्ग यह है कि हम अवशेषों में परिवर्तन लाये।[11]

भारतीय संदर्भ में पैरेटो की सामाजिक व्यवस्था : वास्तव में भारतीय सामाजिक व्यवस्था जिस पर हिन्दू सामाजिक व्यवस्था होने का भी आरोप है भारत वर्ष के अतीत की मूल्यावस्था से संबद्ध एक जीवन विधि है जिसने एक विशिष्ट विश्व दृष्टि (स्पेसिफिक वर्ल्डव्यू) व संस्कृति संकुल (क्ल्चरल काम्पलैक्स) को जन्म दिया है। (राधाकृष्णन[12] व योगेन्द्र सिंह[13]) यह भारत के मूल की एक ऐसी जीवन शैली का प्रतिनिधित्व करती है जो व्यक्ति (इन्डीविजुएल) के अस्तित्व को नकारती हुई मानव के ''सामूहिक'' जीवन पर बल देती है। हिन्दू सामाजिक व्यवस्था, भारतीय सभ्यता व सामूहिक संस्कृति के उस पक्ष पर अधिक बल देती है जिसमें विश्व की कई लघु परंपराओं (लिटिल टेड्रीशन्स) को न केवल प्रभावित किया बल्कि एक विशिष्ट व अद्वितीय मूल्य व्यवस्था को आत्मसात करने को भी बाध्य किया है। यही कारण है कि भारतवर्ष की आरंभिक सभ्यता से जन्मी भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सांस्कृतिक तत्व विश्व की विभिन्न संस्कृतियों में सामान्य रूप से अवलोकित किये जा सकते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि भारतीय समाजशास्त्र में सामाजिक व्यवस्था का वास्तविक अर्थ क्या है और यह पैरेटो की क्रिया-व्यवस्था से किस सीमा तक भिन्नता रखती है। **स्पष्ट तौर** पर सार्वभौमिक वैज्ञानिक प्रतिमान तुलनात्मक उपागम के आधारभूत परिसर (फन्डामैन्टल प्रीवाइज) पर आधारित होते हैं। तथापि तुलनात्मक मापदण्ड को सुदृढ़ बनाने के लिए हमें संपूर्ण के किसी एक भाग को न देखकर संपूर्ण के निर्माण की प्रक्रिया का अवलोकन करके ही किसी निष्कर्ष पर पहुंचना चाहिए।भारतीय समाजशास्त्र में आत्मबोध के चिन्तन के लिए जब हम सामाजिक व्यवस्था की चर्चा करते हैं तो यह हिन्दू सामाजिक व्यवस्था तक ही सीमित हो जाती है। लेकिन दोषारोपण करते समय हम इस तथ्य को विस्मृत कर देते हैं कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था, भारतीय सांस्कृतिक व्यवस्था के आकलन का एक मानदण्ड रही है अर्थात् हिन्दू सांस्कृतिक व्यवस्था ने भारत वर्ष की सामान्य सामाजिक व्यवस्था के स्थापन में एक प्रतिरूप (मॉडल) का कार्य किया है। वर्तमान में इसी व्यवस्था के प्रतिरूप के मानदण्डों से दूसरी लघु संस्कृतियां भी आत्मबोध के अभिज्ञान से स्वयं का परिचय कराती है। विषय की प्रासंगिकता को दृष्टिगत रखते हुए हम यह कह सकते हैं कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था सदैव से ही व्यक्तिवादिता को नगण्य करके सामूहिक उद्देश्यों की पूर्ति पर बल देती रही है। साथ ही मानवीय जीवन को बनाये रखने के लिए भूमिका संस्थापन जो लक्ष्य प्राप्ति के लिए एक पूर्व आवश्यता है, के लिए बाध्य करती रही है। इसी मूल्यावस्था व परंपरागत सांस्कृतिक इतिहास के चलते भारतीय सामाजिक व्यवस्था स्थिर रह पायी है। इसी समाजशास्त्रीय परिसर को ध्यान में रखते हुए हमें पैरेटो की सामाजिक व्यवस्था से भिन्नता खोजकर समाजशास्त्र के भारतीयकरण पर बल देना चाहिए।

व्यवस्थात्मक भिन्नता के मूल्य बिन्दु :

1. पैरेटो की सामाजिक व्यवस्था ''मानवीय अणुओं'' पर आधारित है जबकि भारतीय सामाजिक व्यवस्था सामाजिक सांस्कृतिक समूह प्रतिमान को दृष्टिगत रखते हुए ''मानव'' को वैयक्तिक अणु के रूप में नहीं बल्कि परंपरागत सांचे में ढले ''एक सत्ता'' के रूप में उसका आकलन करती है। इसीलिए यहां मेरा विचार है कि पैरेटो की सामाजिक व्यवस्था ''अणुप्रधान'' है जबकि भारतीय व्यवस्था ''परंपरा प्रधान''[16]

2. पैरेटो ने सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के लिए विशिष्ट चालकों व विचारधाराओं को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। साथ ही यह बताने का प्रयास किया है कि व्यक्ति की संपूर्ण क्रियायें इन्हीं चालकों द्वारा निर्धारित होती हैं और मानव की इन क्रियाओं का अधिकांश भाग अतार्किक क्रियाओं के द्वारा संचालित होता है जबकि भारतीय सामाजिक व्यवस्था में ना तो व्यक्तिगत विचारधाराओं, उद्देश्यों का कोई स्थान है और ना ही व्यक्ति की अतार्किक क्रियाओं को मानव की वास्तविक क्रियाओं का आधार माना जाता है। बल्कि परंपरागत मानदण्डों के बिना भारतीय जीवन क्योंकि मृत समान है इसीलिए भारतीय संदर्भ में सामाजिक व्यवस्था का अर्थ सामूहिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मानव को संस्थात्मक साधनों के प्रयोग के लिए उद्यत करना है।

सारांशतः भारतीय सामाजिक व्यवस्था से पैरेटो की क्रिया-व्यवस्था से सांस्कृतिक भिन्नता होते हुए भी समाजशास्त्र के भारतीय संदर्भ में इनका प्रयोग शंकनीय है। अन्ततः हम कह सकते हैं कि जिन पाश्चात्य अवधारणाओं, प्रत्ययों व प्रतिरूपों में स्पष्ट भिन्नता हो भारतीय संदर्भ के समाजशास्त्र में उनके अंधानुकरण से हमें सदैव बचना चाहिए। यदि हम इन आयातित प्रतिरूपों का जस का तस के आधार पर अंधानुकरण करते रहेंगे तो कैसे समाजशास्त्र के विद्योचित राष्ट्रवाद का स्वरूप चरितार्थ होगा। हमारे कुछ पूर्वगामियों ने हमें एक भारतीय सोच तो दी थी। उस सोच व बोध के अनुपयोगी रहने पर क्या हम भावी पीढ़ी को समाजशास्त्र के नाम पर कुछ दे पायेंगे? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हमें सदैव उद्यत रहना चाहिए।[17]

वर्तमान काल में भारतीय समाज द्रुतगति से परिवर्तित हो रहा है जहां न सामाजिक संरचना में बदलाव देखे जा रहे हैं वरन् संस्थात्मक मूल्यों में परिवर्तन के साथ-साथ अनेक संस्थाऐं अपने प्रकार्यो को संधारित करने का भरसक प्रयास कर रही हैं। भारतीय सन्दर्भ में इस बदलती तस्वीर को यदि पैरोटो की क्रिया व्यवस्था के सन्दर्भ में देखा जाये तो कुछ उत्साहजनक परिणाम आ सकते हैं। चूंकि इस क्षेत्र में कोई आनुभाविक अध्ययन नहीं हुआ है तब यह एक बड़ी शोध संभावना (रिसर्च गैप) के रूप में परिलक्षित प्रतीत होता है। शोध विषय में रूप में विद्यार्थी इस सिद्धान्त को जांच परख कर एक नये सिद्धान्त या सामान्यीकरण की ओर बढ़ सकते हैं।

सन्दर्भ

1. Andre Beteille, 'Some Observations on the Comperative Method' Economic and Political Weekly. Vol 25 Issue Oct 1990. pp. 22-25
2. Brown A.R. Radcliffe, 'Methods in Social Anthroplogy', University of Chicago Press, 1958, p-108
3. Shrinivas M.N., 'Social Structure', Transaction Publishers, 1980, pp. 6-21
4. Dube S.C., 'Indian Society', National Book Trust India, 1992, pp. 29-63
5. Chouhan Brajraj, 'A Rajasthan Village', Vir Publishing House, New Delhi, 1967, pp. 69-83
6. Bailey F.G., 'Political and Social Change', University of California Press, 1959, p. 10
7. Nehru Jawahar Lal, 'Discovery of India', Oxford University Press, 1989 p. 76
8. Francis M. Abraham, 'Modern Sociological Theory : An Introduction', Oxford University Press, New Delhi, 1997, p. 77
9. Abraham Francis, op. cit., pp. 77-78
10. Abraham Francis, op. cit., pp. 78-79
11. Sorokin A. Pitirim, 'Social and Cultural Dynamics', American Book Company, 1958, pp. 42-47
12. S. Radhakirshnan, 'The Hindu View of Life', Allen & Unwin London, 1927, p. 110
13. Singh Yogendra, 'Modernization of Indian Tradition', Rawat Publication, Jaipur, 1986, p. 30
14. Mukerji D.P., 'Diversities' P.P.H., New Delhi, 1958, pp. 231-232
15. G.R. Madan, 'Western Sociologist on Indian Society', Routledge & Kegan Poul, 1979, p. 167
16. Dumont Louis, 'Homo Hierarchicus : The Caste System & Its Implication', Oxfornd, New Delhi, 1988, p. 4
17. Ibid pp. 4-5

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

मेव समुदाय के आर्थिक विकास पर तबलीगी जमात का प्रभाव

❑ डॉ. आसीन खाँ

❖ डॉ. अनिल कुमार यादव

सूचक शब्द : तबलीगी जमात, मौलाना इलियास, मेवात, मेव समुदाय, सांस्कृतिक रूपांतरण, इस्लामीकरण, आर्थिक विकास

विश्व में बड़े पैमाने पर घटित भू-राजनीतिक घटनाक्रमों की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप वैश्विक-परिदृश्य में आर्थिक, सामाजिक-सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिवर्तन की प्रक्रिया के अंतर्गत आधुनिक भारत में हिंदू जातियों के समान ही सामाजिक व धार्मिक परिवर्तन और रूपांतरण की तीव्र प्रकिया इस्लामी जन समूहों में भी देखने को मिलती है। मेवात का मेव जन समुदाय भी इन परिवर्तनों से अछूता नहीं रह सका। वैसे तो मेव समुदाय सामूहिकता व संगठनबद्धता में आस्था रखने वाला और इस्लाम धर्म को मानने वाला 'जन समुदाय' है, परंतु अपनी उदार सांस्कृतिक विशिष्टता के कारण, स्वतंत्र पहचान के साथ जाना जाता रहा है। मेवों पर इस्लामीकरण के प्रभावों का श्रेय मौलाना इलियास कांधलवी को जाता है, जिन्होंने तबलीगी आंदोलन का प्रारंभ करके मेव समुदाय को इस्लाम की मान्यताओं से अवगत कराया और उनके अनुसार जीवन जीने को प्रेरित किया।[1] तबलीगी जमात ने मेव समुदाय के सामाजिक व आर्थिक विकास को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। प्रस्तुत शोध में इन्हीं तथ्यों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिम दशकों में कई मुस्लिम आंदोलनों का उदय हुआ, जिनका उद्देश्य मुस्लिम समाज को तंजीम (Organization) एवं तबलीग के माध्यम से संगठित करना था। इन आंदोलनों में से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व उल्लेखनीय आंदोलन के रूप में 'तबलीग आंदोलन' है जिसका प्रभाव मुसलमानों में सबसे अधिक देखने को मिलता है। वस्तुतः 'तबलीग' अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ 'लोगों को अपने धर्म के बारे में समझाना व शिक्षित करना' से लिया जाता है।[2] भारत में तबलीग आंदोलन विशुद्ध रूप से धार्मिक आंदोलन नहीं था इसलिए इसे एक सामाजिक-धार्मिक आंदोलन के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए, जिसका एक सामाजिक संदर्भ भी है। किसी आंदोलन के लिए आवश्यक तत्त्वों में से महत्वपूर्ण- एक निश्चित विचारधारा, एक संगठन जिसके माध्यम से संदेशों का संचार किया जा सके तथा एक नेतृत्व व लोगों को जोड़ने का एक तरीका होता है। इस अर्थ में तबलीग एक आंदोलन है जिसने विश्व पटल पर एक धार्मिक आंदोलन की पहचान पाई है परंतु मेवात और मेव समुदाय में इसकी स्वीकार्यता और पहचान सामाजिक व धार्मिक सुधार की एक मुहिम के रूप में अधिक रही है जिसने इस समुदाय के आर्थिक क्रिया-कलापों को भी प्रभावित किया है।[3]

मेवात एक ऐसा भू-सांस्कृतिक क्षेत्र है जिसमें 'मेव' लोग निवास करते हैं। यहां पर तबलीग आंदोलन की शुरुआत आर्य समाज द्वारा चलाये जा रहे 'शुद्धि आंदोलन' की प्रतिक्रिया के रूप में हुई थी। मेवात क्षेत्र में आर्य समाज द्वारा चलाये जा रहे शुद्धि आंदोलन का उद्देश्य उदार धार्मिक आस्था के साथ मिश्रित सामाजिक-सांस्कृतिक परंपराओं व प्रथाओं को अपनी पहचान का प्रतीक बनाए हुए, परन्तु कई शताब्दी पहले इस्लाम धर्म को ग्रहण कर चुके 'मेव समुदाय' का धर्मांतरण करके पुनः हिंदू धर्म में लेकर आना था। उस समय आर्य समाज द्वारा चलाये जा रहे शुद्धि आंदोलन ने मुसलमानों को झकझोर दिया था। धर्म परिवर्तन के इस संगठित प्रयास से अपने धर्म के लोगों को बचाए रखने की कोशिशों के रूप में तबलीग आंदोलन का नाम उभर कर सामने आया था। तबलीग आंदोलन लोगों को धर्म परिवर्तित करके मुसलमान बनाने के काम की बजाय पहले से ही मुसलमान लोगों को इस्लाम धर्म के प्रति आस्थावान बनाकर इस्लाम का सही अर्थ समझाना जैसे काम को ही करता है। निर्विवाद रूप से मेवात में तबलीगी आंदोलन की शुरुआत का श्रेय मौलाना इलियास

❑ प्रोफेसर अर्थशास्त्र विभाग, बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राजस्थान)
❖ प्रोफेसर अर्थशास्त्र एवं सहायक निदेशक, आयुक्तालय कालेज शिक्षा, जयपुर (राजस्थान)

कांधलवी को जाता है।[4]

शोध का उद्देश्य : प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य तबलीगी जमात का मेव समुदाय के आर्थिक विकास पर प्रभावों का अध्ययन करके उनकी विवेचना करना है। मुख्य उद्देश्य के अतिरिक्त निम्नलिखित अन्य सहायक उद्देश्य भी रहे हैं-

1. तबलीगी जमात से मेव समुदाय के जुड़ाव की पृष्ठभूमि और इसे अनुकूलता प्रदान करने वाले कारकों की पहचान करना।
2. तबलीगी जमात के कारण मेव समुदाय की सामाजिक-सांस्कृतिक विशिष्टताओं में हुए बदलावों को जानना।
3. मेव समुदाय की व्यावसायिक गतिशीलता एवं आर्थिक प्रगति पर तबलीगी जमात के प्रभावों की समीक्षा करना।

शोध पद्धति : प्रस्तुत शोध अध्ययन की पद्धति विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक है जो मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसके लिए प्रकाशित विभिन्न पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध पत्रों व आलेखों का अध्ययन किया है।

साहित्यावलोकन : अग्रवाल[5] ने अपने शोध आलेख 'Islamic Revival in Modern India: The case of the Meos' में मेवात क्षेत्र में तबलीग जमात की धार्मिक गतिविधियों, सामाजिक-सांस्कृतिक सुधार के प्रयासों एवं उसके मेवों पर आर्थिक प्रभावों का उल्लेख किया है। आलेख में रेखांकित किया है कि मेवात में यह आंदोलन आर्य समाज की धार्मिक सक्रियता एवं शुद्धिकरण के प्रयासों की प्रतिक्रिया के रूप में स्वीकार्यता ग्रहण कर पाया था और देश के बंटवारे के दौरान मेवों के प्रति सांप्रदायिक हिंसा ने इसे लोकप्रिय बनाया। मेवात में इस आंदोलन का प्रमुख उद्देश्य उदार धार्मिक आस्था वाले मेवों को आस्थावान मुसलमान के रूप में इस्लामिक शिक्षा व जीवन पद्धति के प्रति निष्ठावान बनाना रहा है।

अली[6] द्वारा लिखित 'The Meos of Mewat: Old Neighbours of New Delhi' पुस्तक के 'प्राचीन काल से अध्ययन अवधि तक' अध्याय में आरंभिक मुस्लिम शासन काल से लेकर भारत के विभाजन के समय मेवों के विस्थापन व पुनर्वास तक के प्रमुख घटनाक्रमों का संक्षिप्त वर्णन करते हुए मेवात में तबलीग जमात की गतिविधियों और मेव समुदाय पर इसके प्रभावों का विवेचन किया है। पुस्तक में तबलीग जमात के सिद्धांतों तथा इसके प्रणेता मौलाना इलियास द्वारा मेवात में किये गये प्रयासों का उल्लेख करते हुए बताया है कि तबलीगी जमात आंदोलन की गतिविधियों का मेव समुदाय पर व्यापक प्रभाव दिखाई देता है।

शम्स[7] ने उनकी पुस्तक 'Meos of India: Their Customs and Laws' में मेव लोगों के रिश्ते-नातों व शादी-समारोहों में प्रचलित परंपराओं एवं विचित्र संस्कारों के आधार पर लिखा है- 'यद्यपि मेव लोग इस्लाम धर्म के अनुयायी हैं परंतु इनके रीति-रिवाजों और जीवन शैली पर हिंदू संस्कृति की स्पष्ट झलक दिखाई देती है।' लेखक ने बताया है कि मेवात में तबलीगी जमात की सक्रियता व लोगों में इसकी स्वीकार्यता के कारण मेवात क्षेत्र और मेव समुदाय की उदार मिश्रित संस्कृति, जिसमें इस्लाम व हिंदुइज़्म का विशिष्ट संयोजन देखने को मिलता है, वह अब धीरे-धीरे अपने अवसान की ओर जा रही है।

मायाराम[8] की पुस्तक 'Resisting Regimes- Myth, Memory and the Shaping of a Muslim Identity' मेव जातीय समूह की मुस्लिम पहचान के साथ उनकी जद्दोजहद को लोगों की स्मृतियों और ऐतिहासिक दस्तावेजों के आलोक में उजागर करने का एक गंभीर प्रयास है। पुस्तक में लेखक इस बात की जांच करते हैं कि औपनिवेशिक व रियासती शासन व्यवस्था और तबलीगी जमात के प्रति मेवों में किस प्रकार की प्रतिक्रिया देखने को मिलती है। मेवात में निवास करने वाले मेव लोग एक ऐसा जातीय समूह है जो सांस्कृतिक व धार्मिक रूप से हिंदुइज़्म व इस्लाम के बीच संघर्ष कर रहा है। लेखक ने स्पष्ट रूप से कहा है कि बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों में आर्य समाज द्वारा इस क्षेत्र में चलाए गये धर्मांतरण के संगठित प्रयास जिसे 'शुद्धिकरण' नाम दिया गया था, ने मेवात में तबलीगी जमात के लिए अनुकूल वातावरण बनाया और भारत के विभाजन के समय मेवों के विरुद्ध धार्मिक आधार पर की गई सांप्रदायिक हिंसा ने तबलीग आंदोलन को स्वीकार्यता प्रदान करने का काम किया।

चौहान[9] ने अपने शोध पत्र 'Kinship Principles and the Pattern of Marriage Alliance: The Meos of Mewat' में बताया है कि मेवात के मेवों में रिश्ते-नातों, विवाह संस्कार तथा सामाजिक-सांस्कृतिक परंपराओं व प्रथाओं के नियम और उनका स्वरूप, उस क्षेत्र की हिंदू

जातियों के समान ही नियमों व सिद्धांतों से दृढ़ता से जुड़े है परंतु विवाह की कुछ प्रथाएं इस्लामी विशेषताओं को प्रदर्शित करती हैं। मेवों की संस्कृति और प्रथाओं में हिंदू संस्कृति व इस्लाम का 'विचित्र मिश्रित' प्रभाव है। परंतु अब यह समुदाय अपनी रीति-रिवाजों, परंपराओं व प्रथाओं को बदलने के लिए दबाव का सामना कर रहा है जिनमें आर्थिक व धार्मिक कार्यों का विशेष योगदान है। शोध पत्र में लेखक ने इस्लामी पुनरुत्थान के प्रमुख कारणों को रेखांकित करते हुए लिखा है कि धार्मिक शिक्षा व तबलीगी जमात के प्रभाव से अब इस समुदाय के लोगों में धर्म का महत्व बढ़ गया है। इस प्रभाव के कारण मेवों ने हिंदू रीति-रिवाजों, परंपराओं व प्रथाओं को तो त्याग दिया परंतु रिश्ते-नातों के नियमों का पालन आज भी करते हैं।

अली[10] ने अपने शोध प्रबंध 'Islamic Revivalism: A Study of the Tablighi Jamaat in Sydney' में तबलीगी जमात की कार्यप्रणाली, सक्रियता, विस्तार व प्रभाव आदि को रेखांकित किया है। शोधार्थी ने उन प्रमुख कारकों का भी उल्लेख किया है जिनके कारण उत्तर-पश्चिमी भारत के मेवात क्षेत्र से शुरू होकर आज तबलीगी जमात पश्चिम के यूरोपीय देशों तक में अपनी धार्मिक गतिविधियों का विस्तार कर सका है। अध्ययन में भारत से बाहर के देशों में तबलीगी जमात की स्वीकार्यता व लोकप्रियता पर भी प्रकाश डाला है।

खान[11] **ने** अपने शोध प्रबंध 'मेवात क्षेत्र का आर्थिक विकास- एक विश्लेषण' में तबलीग आंदोलन के संस्थापक मौलाना इलियास कांधलवी, निज़ामुद्दीन मरकज़ और मेवात में इनकी गतिविधियों आदि को विस्तार से बताया है। शोध अध्येता ने तबलीग जमात के बुनियादी उसूलों का उल्लेख करते हुए बताया है कि मेवात में इस आंदोलन का मुख्य ध्येय मेव लोगों को इस्लाम के प्रति आस्थावान बनाना और आर्य समाज द्वारा चलाये गये धर्मांतरण के प्रयासों से उदार दृष्टिकोण वाले मुसलमानों को बचाना रहा है। उन्होंने मेव लोगों की संस्कृति, समाज और आर्थिक क्रिया-कलापों पर तबलीग जमात के व्यापक प्रभावों को भी रेखांकित किया हैं।

सैनी एवं सहारिया[12] ने अपने शोध आलेख 'मेवात में तबलीग जमात' में बताया है कि जमात के लोग मुस्लिम गांवों की मस्जिदों में रात्रि विश्राम करते हैं और वहां के स्थानीय मुसलमानों को नमाज पढ़ने, रोजा रखने एवं इस्लाम के सिद्धांतों के अनुरूप जीवन जीने को प्रेरित करने का काम करते हैं। आलेख में उल्लेख किया है कि जमात के प्रभाव के कारण मेव लोग उनकी उदार मिश्रित संस्कृति से दूर हुए हैं और आस्थावान मुसलमान होने के साथ-साथ भाग्यवादी हो गये हैं, परिणामस्वरूप आर्थिक विकास की मुख्यधारा से कट गये हैं।

विश्लेषण : मेवात में तबलीगी आंदोलन की शुरुआत का श्रेय मौलाना इलियास कांधलवी को जाता है। मौलाना इलियास ने यह अनुभव किया था कि जो मुसलमान लोग दूर-दराज के गाँव-देहात में रह रहे हैं, उन्हें इस्लाम के सिद्धांतों के बारे में बहुत कम ज्ञान है। उस समय कुछ मुसलमान जातीय समूह, गैर-इस्लामिक परंपराओं व रीति-रिवाजों को अपनाये हुए थे। उन लोगों में तथा उन जातीय समूहों में इस्लाम धर्म के सही विचारों का संचार करने का काम कुछ उलेमाओं व मौलवियों के भरोसे रहकर कर पाना संभव नहीं था। इस्लाम मजहब की मान्यताओं के अनुसार प्रत्येक मुसलमान का यह कर्त्तव्य है कि वह लोगों को अच्छाइयों से अवगत कराए एवं बुराइयों को छोड़ने के लिए कहे। लोगों को अल्लाह का शुक्रगुजार होना चाहिए और अपने ईमान का पक्का होना चाहिए। मौलाना इलियास के शब्दों में 'तबलीग से अभिप्राय पैगम्बर मुहम्मद साहब के संदेशों को अपने स्वयं के जीवन में अपनाते हुए उनका विस्तार करना है।[13]

मौलाना इलियास कांधलवी और तबलीगी आंदोलन : तबलीग आंदोलन के प्रणेता हजरत मौलाना इलियास का जन्म 1302 हि. (1885 ई.) में कांधला में हुआ था। मौलाना इलियास के वालिद का नाम मौहम्मद इस्माईल था। मौलाना इस्माईल साहब दिल्ली स्थित हजरत निजामुद्दीन औलिया की दरगाह में रहते थे। मौलाना इस्माईल वर्तमान निजामुद्दीन कॉम्पलेक्स में स्थित 'बंगलावाली' मस्जिद के इमाम थे। मौलाना इलियास के पिता मौलाना इस्माईल साहब धार्मिक शिक्षा दिया करते थे। उन्होंने निजामुद्दीन में कई मेव विद्यार्थियों को पढ़ाया था और मौलाना उनसे बहुत प्रभावित थे। मौलाना इस्माईल साहब के परिवार की इस्लाम में गहरी आस्था थी और वे शरियत व हदीस के अनुसार अपना जीवन जीते थे। बचपन का कुछ समय मौलाना इलियास ने निजामुद्दीन में रहकर गुजारा था। बचपन में ही वे हाफ़िज-ए-कुरान हो गये थे। सन् 1919 में मौलाना

इलियास ने निजामुद्दीन मरकज़ का कामकाज संभाला था। क्योंकि मदरसा आर्थिक तंगी के दौर से गुजर रहा था इसलिए मौलाना इलियास ने गांव-गांव जाकर लोगों से मदद की गुजारिश की और उन्हें दीन पर चलने की दावत दी। जुलाई 1944 ईस्वी में दिल्ली में आपका इंतकाल हो गया।[14]

तबलीग आंदोलन के बुनियादी उसूल :

तबलीग आंदोलन के छः बुनियादी उसूल हैं -

1. कलमा : प्रत्येक मुसलमान को यह गवाही देना कि 'अल्लाह के अलावा कोई इबादत के लायक नहीं है और मौहम्मद साहब अल्लाह के सच्चे रसूल व पैगम्बर हैं'। कलमा एकेश्वरवाद की स्थापना पर बल देता है।

2. नमाज : प्रत्येक मुसलमान को निर्धारित समयानुसार दिन में पांच वक्त पाबंदगी से नमाज अदा करनी चाहिए। नमाज इस्लाम का सबसे बुनियादी स्तंभ है जो ईश्वर के प्रति समर्पण व्यक्त करने का माध्यम या पद्धति है। प्रत्येक बालिग मुसलमान पुरुष व महिला पर दिन में पांच वक्त नमाज की अदायगी फ़र्ज है।

3. इल्म व जिक्र : इस्लाम धर्म में इल्म (Knowledge) को बहुत महत्त्व दिया है। हदीस में इल्म हासिल करने के लिए यात्रा करने वालों का बहुत ऊँचा मुकाम बताया है। इस्लाम में इल्म (ज्ञान) के लिए दूर देशों तक में जाने की बात कही है। मजहब के ज्ञान यानि कुरान व हदीस के ज्ञान के साथ-साथ दुनियावी जरूरतों के लिए भी ज्ञान प्राप्त करना पुण्य माना गया है। कुरान व हदीस को पढ़कर व समझकर शरियत के दायरे में रहकर ज्ञान प्राप्त करना और ख़ासतौर से ऐसा ज्ञान जो आप स्वयं के साथ-साथ समाज व मानवता को फ़ायदा पहुंचा सके, लोगों की जिन्दगी में बेहतरी ला सके, किसी बीमारी के उपचार का ज्ञान, वस्तुओं को बेहतर तरीके से बनाने का ज्ञान आदि इंसान के मरने के बाद की जिंदगी में उसके रुतबे व मर्तबे को ऊँचा करेगा।

4. इकराम-ए-मुस्लिम (Respect for all Muslims) -
इकराम-ए- मुस्लिम का अभिप्राय यह है कि पृथ्वी पर मौजूद समस्त मुसलमानों का सम्मान करना एक सच्चे मुसलमान के लिए आवश्यक है। अन्य धर्मों के लोगों को इज्जत देना, उनका मुसीबत में ध्यान रखना, उनके बीबी-बच्चों व बुजुर्गों को सम्मान देना भी प्रत्येक मुसलमान का दायित्व है। इस्लाम के अनुसार जो लोग दूसरों की मदद करते हैं, अल्लाह उनकी मदद अवश्य करता है।

5. इख़लास-ए-नीयत (Sincerity of Intention) -
इंसान की नीयत, उसके इरादे पाक साफ होने चाहिए। व्यक्ति के मन व मस्तिष्क में कोई बुरे विचार नहीं होने चाहिए। इस्लाम के अनुसार अल्लाह सर्वज्ञाता है। ईश्वर के यहाँ आपके कार्य का महत्त्व उस कार्य से संबंधित आपकी नीयत व इरादों के आधार पर होगा। अच्छी नीयत से किये जाने वाले कार्यों को ईश्वर स्वीकार करता है और उनका पुण्य मिलता है परन्तु गलत इरादे या बुरी नीयत से जो काम किया जाता है वह नाजायज होता है और गुनाह है। हदीस के अनुसार 'अल्लाह आपके दिल व दिमाग के इरादों को जानता है', बाहरी हाव-भाव से प्रेरित कार्यों को अल्लाह ने गलत करार दिया है।

6. तबलीग : तबलीग का अर्थ है अपने घर-परिवार तथा आस-पास के लोगों को धर्म पर चलने के लिए प्रेरित करने के बाद घर-परिवार से दूर के लोगों को इस्लाम धर्म के अनुसार दीन पर चलने के लिए बुलाना और धार्मिक उपदेश देना।[15] दूर-दराज यात्रा करके लोगों को अल्लाह का पैगाम देना, दीन-ए-इस्लाम के मुताबिक, जिंदगी गुजारने के लिए प्रेरित करना प्रत्येक मुसलमान का कर्त्तव्य है। मौलाना इलियास का कहना था कि अल्लाह पर यकीन को कायम रखने, अल्लाह में पूर्ण आस्था रखते हुए अच्छे और बुरे की समझ के लिए तथा औरों को समझाने के लिए प्रत्येक मुसलमान को कुछ समय निकालना चाहिए।

मौलाना इलियास का मानना था कि एक या कुछ व्यक्ति तो मदरसे में रहकर दीन व इस्लाम अच्छे से सीख सकते हैं परंतु सभी मुसलमान न तो मदरसे में आ सकते हैं और न ही धार्मिक किताबों का अध्ययन करके दीन को समझने की सलाहियत रखते हैं। सामान्यतः अधिकांश लोग कार्य की व्यस्तता या फिर गुमराही के कारण दीन को समझने, उसकी पैरवी करने और उसके अनुरूप जीवन व्यतीत करने के लिए समय नहीं निकाल पाते हैं। इसलिए मौलाना इलियास चाहते थे कि मेवात के लोग एक जमात (समूह) बनाकर गांव-गांव जाकर लोगों को दीन व इस्लाम के बारे में समझाएं जिससे वे लोग भी गुमराही और अंधेरों से बाहर निकल सकें।[16]

मेवात और मौलाना इलियास : मौलाना इलियास के वालिद मौलाना इस्माईल साहब वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने हजरत निजामुद्दीन मदरसे में कुछ मेव छात्रों को

पढ़ाया था। उस दौर में मेवाती लोग हजरत निजामुद्दीन के उर्स में आया करते थे। एक बार कुछ मेवाती मजदूरी करने के लिए दिल्ली में आये थे। उनकी सादगी से प्रभावित होकर मौलाना इस्माईल ने उनसे महीने भर मदरसे में रहने को कहा जिसके लिए उन्हें पूरे महीने की तनख्वाह देने का वादा किया था। यह घटना निजामुद्दीन मरकज व मेवातियों के बीच रिश्ते का आधार मानी जाती है। मौलाना इलियास के निजामुद्दीन मरक़ज (मदरसा) का प्रमुख बन जाने के बाद उनका मेवातियों से बराबर संपर्क बना रहा।

भारतीय मीडिया की चर्चा में तबलीगी जमात : दिल्ली स्थित हजरत निजामुद्दीन मरकज़ को दुनिया में तबलीगी जमात का सबसे बड़ा केंद्र माना जाता है। इस्लामी शिक्षा के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से, यहां पर लोग साल भर देश-विदेश से आते-जाते रहते हैं। वर्षभर नियमित रूप से मरकज़ से 'जमातों' का आना-जाना लगा रहता है और साल में कई बार इस्लामी आयोजन भी होते रहते हैं। इसी तरह का एक सालाना इजलास मार्च 13-15, 2020 दिल्ली स्थित निजामुद्दीन मरकज़ में हुआ था। जिसमें उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, तमिलनाडु, केरल सहित देश के विभिन्न भागों से लोग आए थे। इसके अलावा मलेशिया, इंडोनेशिया, सऊदी अरब और किर्ग़िज़स्तान सहित अन्य देशों के 5,000 से अधिक प्रतिनिधियों ने इसमें भाग लिया था। अचानक 23 मार्च, 2020 को भारत के प्रधानमंत्री ने संपूर्ण देश में 'कोविड लॉक डाउन' की घोषणा एवं इसके तुरंत प्रभाव से लागू होने की बात कही। जिसके कारण मरकज़ में ठहरे हुए देशी-विदेशी तबलीगी वहां से जा न सके।[17]

निजामुद्दीन मरकज़ मार्च, 2020 में कोरोना के बीच तबलीगी जमात के इजलास के कारण चर्चा में आया था। भारत में मार्च 2020 में जब कोरोना वायरस संक्रमण के मामले आने शुरू हुए थे, तब मीडिया के एक वर्ग ने दिल्ली स्थित तबलीगी जमात के मरकज़ को इसके लिए ज़िम्मेदार ठहराना शुरू कर दिया था। तबलीगी प्रकरण में भारतीय मीडिया के एक हिस्से का निष्ठुर सांप्रदायिक चरित्र व चेहरा सामने आया जो उस समय कुछ दिनों से इसे एक अलग ही रंग देने की जुगत में लगा हुआ था। इसमें कोरोना महामारी की चिंता से अधिक एक समुदाय विशेष के प्रति नफ़रत का भाव पैदा करना और इस वैश्विक महामारी के लिए मुसलमानों को जिम्मेदार ठहराने की कोशिश नज़र आई। हमेशा की तरह ये तथाकथित राष्ट्रवादी पत्रकार इस महामारी में भी 'हिंदू-मुस्लिम' ढूंढ़ने में कामयाब हो गए। जब ये बात सामने आई कि संक्रमित में से कुछेक लोगों ने दिल्ली के निजामुद्दीन मरकज़ के इजलास में हिस्सा लिया था; सोशल मीडिया पर सक्रिय एक वर्ग विशेष ने पूरी बहस को कोविड-19 महामारी से हटाकर हिंदू-मुसलमान की ओर मोड़ दिया और इसे ''कोरोना जिहाद'' और "जमात जिहाद" जैसे नाम दे दिए गए।[18] बहुत से न्यूज़ चौनलों और अख़बारों ने भी इस मुद्दे को साम्प्रदायिक रंग देने में कोई कसर नही छोड़ी। महामारी के पूरे घटनाक्रम को एकदम से घुमा कर दूसरी दिशा में मोड़ दिया गया। सरकार और तंत्र की नाकामियों से ध्यान भटकाने के 'अपने कॉर्पोरेट दायित्व' की पालना में और सांप्रदायिक एजेंडे पर काम करते हुए ये सिर्फ उस समुदाय को ढूंढने की कोशिश में लगे रहे, जिसे कोरोना फैलाने का जिम्मेदार ठहरा सकें। तबलीगी प्रकरण पर सुनवाई करते हुए माननीय मुंबई हाईकोर्ट ने अपनी एक टिप्पणी में कहा था कि "तबलीगी जमात को कोरोना संक्रमण के मामले में बली का बकरा बनाया गया है।" माननीय न्यायालय की इस टिप्पणी के तबलीगी जमात के साथ-साथ संपूर्ण मुस्लिम समुदाय के लिए गंभीर निहितार्थ हैं।

तबलीग आंदोलन का मेव समुदाय पर प्रभाव : तबलीग जमात आंदोलन की शुरुआत 1926 में मौलाना इलियास ने की थी। शुरुआत में इस आंदोलन को अधिक सफलता नहीं मिली थी, परंतु भारत की आज़ादी और विभाजन के समय देशभर में हुए सांप्रदायिक दंगों (1947-1949) तथा उसके बाद के काल में इसके प्रभाव में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। आर्य समाज के 'शुद्धिकरण' अभियान से बचाव के रूप में शुरू हुआ यह आंदोलन मेवात मे बहुत लोकप्रिय हुआ; विशेष रूप से मेवों की उदार धार्मिक पहचान व मिश्रित संस्कृति के बावजूद देश विभाजन के समय केवल मुस्लिम पहचान के आधार पर हिंसा, आगजनी व विस्थापन की पीड़ा को भोगने के बाद ये लोग इस्लामीकरण की ओर उन्मुख हुए और अपनी धार्मिक आस्था को सुदृढ़ करके आस्थावान मुसलमान बनने की ओर आगे बढ़े।[19] तबलीगी जमात से प्रेरित व प्रभावित मेव समुदाय अपनी जातीय पहचान से इतर इस्लामीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत धीरे-धीरे अपने पुराने रीति-रिवाजो, परंपराओं व जीवन पद्धति को

बदलने के लिए प्रेरित हुआ।[20] मेवात और मेव समुदाय के सन्दर्भ में तबलीग आंदोलन वास्तव में एक समाज सुधार व धार्मिक रूपांतरण का आंदोलन था; इस आधार पर तबलीगी आंदोलन ने मोटे तौर से मेव समुदाय पर दो तरह के प्रभाव डाले हैं-

समाजिक- सांस्कृतिक प्रभाव[21]

1. तबलीग आंदोलन से प्रभावित होकर देहाती अशिक्षित मेव किसानों ने नमाज पढ़ना शुरू कर दिया, ख़ास तौर से जुमे के दिन अदा की जाने वाली सामूहिक नमाज के मेव लोगों के लिए व्यापक निहितार्थ रहे हैं।
2. तबलीगी जमात के प्रभाव के कारण मेव लोगों की हिंदू उत्सवों में भागीदारी कम हो गई। इसका कारण भारत की आज़ादी और विभाजन के समय देशभर में हुए सांप्रदायिक दंगों के दौरान बड़े पैमाने पर मेव लोगों को धार्मिक पहचान के आधार पर निशाना बनाया गया था। इन घटनाओं से आहत होकर मेवों ने श्रद्धापूर्वक हिंदू उत्सवों को मनाने तथा उनमें भाग लेने की अपनी परंपराओं से दूरी बना ली।
3. सांस्कृतिक परिवर्तन के रूप में मेव लोगों ने गैर-मुस्लिम परंपराओं का धीरे-धीरे त्याग कर दिया। पीर-पचबीरों की मजारों पर जाना, घरों की दीवारों पर हिंदू दैवीय प्रतीकों का चित्रण, शादी-विवाह की गैर-इस्लामिक रस्मों आदि को छोड़ दिया।

आर्थिक प्रभाव : मेव समुदाय के आर्थिक विकास पर तबलीग जमात आंदोलन के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव देखने को मिलते हैं, जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण उल्लेखनीय प्रभाव निम्नलित हैं-

1. तबलीग जमात के आध्यात्मिक दर्शन से प्रभावित मेव लोगों ने सांसारिक जीवन की भौतिक उन्नति के प्रयासों की बजाय आध्यात्मिक श्रेष्ठता के मार्ग को अपनाया, जिसकी परिणति में ये आधुनिक प्रगति एवं आर्थिक विकास के लाभों से वंचित रह गये।
2. धार्मिक शिक्षा पर बल देने के कारण एक प्रकार से तबलीग जमात ने आधुनिक विज्ञान व तकनीकी एवं कौशल आधारित शिक्षा प्राप्त करने के मार्ग में अवरोधक का काम किया; विशेष रूप से बालिका शिक्षा के मार्ग में। जो बालक-बालिकाएं आधुनिक वैज्ञानिक शिक्षा प्राप्त करके समाज के आर्थिक विकास में सहभागी बनकर प्रगतिशीलता के वाहक बन सकते थे, उन्हें धार्मिक शिक्षा तक सीमित कर दिया।
3. अल्लाह के प्रति पूर्ण समर्पण तथा भाग्यवादी दृष्टिकोण से प्रेरित तबलीगी लोग बचत व निवेश की सोच एवं समझ से दूर होकर संतोषी भाव से संचालित होते हैं। इस कारण ये लोग आज के समय की जटिल आर्थिक चुनौतियों का सामना कर पाने की समझ तक नहीं बना सके जबकि ईश्वर ने व्यक्ति के विवेक के सही प्रयोग एवं कर्म आधारित प्रतिफल का संदेश दिया है। तबलीगी जमात की इस सोच और उसके अनुरूप व्यवहार का मेव समुदाय के आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।
4. तबलीगी के रूप में प्रदेश व देश के दूसरे क्षेत्रों में यात्राएं करने के कारण मेवों के संपर्क का दायरा बढ़ गया। परिणामस्वरूप बाहरी दुनिया में हो रहे परिवर्तनों से उनके जीवन और व्यवहार में भी बदलाव आना स्वभाविक था। इस अर्थ में तबलीग जमात ने व्यक्तिगत गतिशीलता को बढ़ाने का काम किया।
5. तबलीग में शामिल होकर देशभर में दूरदराज के क्षेत्रों तक यात्राएं करने से मेव लोगों के गैर-मेव मुसलमानों से संपर्क व संबंध बने, इससे मेवों में कुछ सामाजिक गतिशीलता आई। मेवों ने अन्य मुसलमानों की जीवन शैली, आर्थिक क्रिया-कलाप, व्यवसाय आदि से सीखा क्योंकि अन्य लोग कई क्षेत्रों में मेवों से अधिक प्रगतिशील थे।

निष्कर्ष : उपर्युक्त विवरण की विवेचना से यह तथ्य उभरकर आता है कि तबलीग आंदोलन के प्रभाव में आकर मेव समुदाय ने सामाजिक व धार्मिक परिवर्तन की प्रक्रिया के पथ पर चलकर सदियों से चली आ रही अपनी 'विशिष्ट मिश्रित पहचान' से मुक्त होकर अपने को इस्लामी विचारधारा में समाहित कर लिया। तबलीग जमात के दर्शन में व्यवहारिक वास्तविक जीवन की सुख-समृद्धि, आर्थिक विकास व सामाजिक प्रगति के पथप्रदर्शक उपायों की बजाय मृत्यु के बाद के जीवन को कामयाब बनाने का विचार है। इस एक पक्षीय एवं एकांगी दर्शन से प्रेरित होकर मानव कल्याण के वास्तविक पक्ष- आर्थिक कल्याण एवं भौतिक प्रगतिशीलता की अवधारणा

की उपेक्षा के दृष्टिकोण को अपनाने के परिणामस्वरूप मेव समुदाय के लोग आर्थिक विकास के क्षेत्र में पिछड़ते चले गये। बीसवीं शताब्दी में सम्पूर्ण विश्व के साथ जब भारत के लोग आधुनिक विज्ञान व तकनीकी प्रगति से लाभांवित होकर सामाजिक व आर्थिक विकास के पथ पर तेजी से बढ़ रहे थे तब 'मेव' और मेवात धार्मिक परिवर्तन की प्रक्रिया के दौर से गुजर रहे थे, संभवतः उसी का खामियाजा बाद की पीढ़ियां भुगत रही हैं।

अंत में यह कहा जा सकता है कि मेवों पर तबलीग जमात के प्रभाव का एक सकारात्मक उल्लेखनीय पक्ष यह रहा है कि जो मेव कौम इससे पहले लगभग पूरी तरह अनपढ़ थी, वह धीरे-धीरे धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने के मार्ग पर चलकर ही सही परंतु शिक्षा की और उन्मुख तो हुई। शिक्षा चाहे वो पूर्णतया धार्मिक ही क्यों न हो व्यक्ति के सोचने व काम करने के तरीके को अवश्य प्रभावित करती है। इस अर्थ में मेव कौम को लेकर तबलीगी जमात आंदोलन के इस योगदान को भी हम कभी अनदेखा नहीं कर सकते हैं।

सन्दर्भ

1. Agrawal, Pratap C., 'Islamic Revival in Modern India: The Case of the Meos', EPW, 1969, 4 (42): 1677-81.
2. Ahmed, Imtiaz (ed.), 'Caste and Social Stratification among the Muslims in India', Manohar Book Service, New Delhi, 1973, pp.61-71.
3. Mathur, Y.B., 'Muslims and Changing India', Trimurti Publication New Delhi, 1972, pp. 181-83 and 186-87.
4. सैनी, कैलाश चंद एवं कुसुम सिंह सहारिया, 'मेवात में तबलीग आंदोलन', चिराग-ए-मेवात, मेवाती साहित्य अकादमी संस्थान, अलवर, 2016, पृ. 62-68.
5. Agrawal, Pratap C., op.cit., pp.1677-81.
6. Ali, Hashim Amir, 'Meos of Mewat: Old Neighbours of New Delhi', Oxford and IBH Publishing Company, New Delhi, 1970
7. Shams, Shamsuddin, 'Meos of India: Their Customs and Laws', Deep & Deep Publications, New Delhi, 1983
8. Mayaram, Shail, 'Resisting Regimes- Myth, Memory and the Shaping of a Muslim Identity', Oxford University Press, New Delhi, 1997
9. Chouhan, Abha, 'Kinship Principles and the Pattern of Marriage Alliance: The Meos of Mewat', Sociological Bulletin; 52 (1), 2003, pp. 71-90.
10. Ali, Jan A., 'Islamic Revivalism: A Study of the Tablighi Jamaat in Sydney', Ph.D. Thesis, University of New South Wales, 2006
11. खान, वाहिद, 'मेवात क्षेत्र का आर्थिक विकास-एक विश्लेषण', पीएच.डी. शोध प्रबंध, अर्थशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, 2008
12. सैनी, पूर्वोक्त, पृ. 62-68.
13. Ali, Jan A., op.cit., pp. 136-38.
14. Mayaram, Shail, op.cit., pp. 228-30.
15. Shams, Shamsuddin, op.cit., pp. 184-85.
16. खान, वाहिद, पूर्वोक्त, पृ. 47-49.
17. https://www.aljazeera.com/news/2021/3/25/tablighi-jamaat-members-held-for-spreading-covid-stuck-in-india
18. https://www.orfonline.org/expert-speak/covid19-indian-muslims-69519/
19. Chouhan, Abha, op.cit., pp. 71-90.
20. Chawla, Abhay, 'Routing the Rootless Orality and the Meo Identity', Ruminations- The Andrewth Journal of Literature St. Andrew College, Mumbai, 2017, pp. 18-29.
21. Ali, Hashim Amir, op.cit., pp. 39 – 40.

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

क्रान्तिकारी जतिन दास की ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों का एक समीक्षात्मक अध्ययन

❑ प्रवीन कुमार

सूचक शब्द : जतिन दास, भारत के मैक्स्विनी, काकोरी प्रकरण, भूख हड़ताल, लाहौर षडयंत्र केस, पहला शहीद।

क्रान्तिकारी आन्दोलन की जन्मभूमि बेशक महाराष्ट्र मानी जाती है किन्तु यदि कर्मभूमि बंगाल को माना जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए, क्योंकि बंगाल में क्रान्तिकारी आन्दोलन को नई दिशा व दशा मिली, लेकिन आज भी भारत में अनेक ऐसे क्रान्तिकारी हैं जिनके द्वारा लिए गये कार्यो को भारतीय इतिहास में वह स्थान नहीं मिल सका जिसके वे वास्तव में अधिकारी थे। क्रान्तिकारी शहीद जतिन दास भी उनमें से एक हैं जिनकी भारतीय स्वाधीनता संघर्ष में मुख्य भूमिका रही है, जिन्होंने अपने अल्प जीवन काल में राष्ट्रवाद का एक उच्च्य आदर्श प्रस्तुत करके भारतीयों के मन में स्वजागरण की भावना जागृत की।

क्रान्तिकारी आन्दोलन की जन्मभूमि बेशक महाराष्ट्र मानी जाती है किन्तु यदि कर्मभूमि बंगाल को माना जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए, क्योंकि बंगाल में क्रान्तिकारी आन्दोलन को नई दिशा व दशा मिली लेकिन आज भी भारत में अनेक ऐसे क्रान्तिकारी हैं जिनके द्वारा लिए गये कार्यो को भारतीय इतिहास में वह स्थान नहीं मिल सका जिसके वे वास्तव में अधिकारी थे। क्रान्तिकारी शहीद जतिन दास भी उनमें से एक हैं जिनकी भारतीय स्वाधीनता संघर्ष में मुख्य भूमिका रही है, जिन्होंने अपने अल्प जीवन काल में राष्ट्रवाद का एक उच्च्य आदर्श प्रस्तुत करके भारतीयों के मन में स्वजागरण की भावना जागृत की। शिव वर्मा ने अपनी पुस्तक संस्मृतियाँ में बताया कि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन संघ के लिए जतिन दास का मुख्य योगदान धन और अस्त्र-शस्त्रों का प्रबन्ध करना था। वहीं सान्याल ने जतिन को लाहौर केस का पहला शहीद बताया था जिनकी अंतिम यात्रा में लोगों की भीड़ को देख कर ऐसा लगा कि मानो भारत आज ही आज़ाद होने वाला हो।

शोध के उद्देश्य –

1. क्रान्तिकारी आन्दोलन में जतिन दास के योगदान का अध्ययन करना।
2. जतिन दास क्रान्तिकारी आन्दोलन में किन क्रान्तिकारियों से प्रेरित हुए थे, का अध्ययन करना।
3. जतिन दास को भारत के मैक्स्विनी क्यों माना जाता है, का अध्ययन करना।

शोध पद्धति : शोध पत्र की पद्धति बहुआयामी है। इसके लिए विवरणात्मक व समीक्षात्मक शोध पद्धतियों को विशेष रूप से अपनाया गया है। इस शोध कार्य को करने के लिए प्राथमिक व द्वितीयक दोनों स्त्रोतों का प्रयोग किया है। साथ ही मूल स्त्रोतों में गोपनीय सरकारी फाइलों व दस्तावेजों का प्रयोग किया है।

साहित्य समीक्षा :

किरण चन्द्र दास कृत, 'अमर शहीद जतिन दास' पुस्तक में जतिन दास के जीवन के सम्पूर्ण पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। इसमें जतिन दास के परिवार से सम्बन्धित, जीवन, आरम्भिक शिक्षा के साथ-साथ भारतीय स्वाधीनता संघर्ष में उनके अतुलनीय योगदान का संजीव चित्रण प्रस्तुत किया गया है।

सी.एस. वेणु कृत, 'जतिन दास द मार्टियर', यह एक संक्षिप्त जीवन चरित की भांति है। पुस्तक में जतिन दास के विषय में मुख्य जानकारी के साथ उनकी जेल यात्रा का वर्णन मिलता है।

शिव वर्मा ने अपनी पुस्तक 'संस्मृतियाँ', में भगत सिंह, चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव, भगवतीचरण वोहरा के साथ-साथ जतिन दास के संस्मरणों का वर्णन किया है।

सच्चिन्द्रनाथ सान्याल कृत पुस्तक, 'बन्दी जीवन', यह पुस्तक सभी क्रान्तिकारियों के लिए 'गीता' की तरह पवित्र मानी जाती थी जिसमें ब्रिटिश सरकार की अमानवीयता का बड़ा रोचक वर्णन मिलता है। इसी पुस्तक में जतिन दास को लाहौर षडयंत्र केस का पहला शहीद बताया गया है।

❑ शोध अध्येता, इतिहास विभाग, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला (हि.प्र.)

सेडीसन कमेटी रिपोर्ट, 1918 यह रिपोर्ट ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रकाशित की गई थी जो ब्रिटिश विरोधी घटनाओं को समझने में काफी सहायता कर सकती है।

रिपोर्ट ऑफ दि पंजाब डिस्ट्रबेन्सीज, अप्रैल, 1919 जो ब्रिटिश सरकार द्वारा तत्कालीन क्रान्तिकारी गतिविधियों को लेकर जारी की गई। इसमें अमृतसर, फिरोजपुर, लाहौर, जालंधर और मुल्तान का क्रोनोलोजीकल ब्यौरा दिया हुआ है इसमें घटना सम्बन्धित मानचित्र भी दिए हैं।

1857 में भारत की स्वतंत्रता के लिए की गई प्रथम क्रान्ति यद्यपि पूर्णतः कामयाब नही हो सकी तथापि यह अपनी असफलता के बावजूद भारतीयों में कभी न खत्म होने वाली स्वजागरण की लहर पैदा कर गई। फलस्वरूप अनेक विद्रोह ब्रितानी साम्राज्य को समाप्त करने के लिए आरम्भ हुऐ थे, जिनमें क्रान्तिकारी आन्दोलन अपनी अलग ही पहचान रखता है। क्योंकि भारतीय क्रान्तिकारी आत्म बलिदान के लिए सदैव तैयार रहते थे, इसलिए क्रान्तिकारी आन्दोलन के प्रति नौजवान स्वतः ही उनके आदर्शों, विचारों और कार्यविधि की तरफ आकर्षित होते गये। अगर हम ध्यान से दृष्टि डालें तो क्रान्तिकारियों ने ही ब्रिटिश साम्राज्य के असली चरित्र, चाल और चेहरे को भारतीय जनता के सामने प्रस्तुत किया था। क्रान्तिकारी आन्दोलन की जन्म भूमि बेशक महाराष्ट्र मानी जाती है किन्तु यदि कर्मभूमि बंगाल को मानें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए। लेकिन आज भी भारत में अनेक ऐसे क्रान्तिकारी हैं जिनके द्वारा लिए गये कार्यो को भारतीय इतिहास में वह स्थान नहीं मिल सका जिसके वे वास्तव में अधिकारी थे। क्रान्तिकारी शहीद जतिन दास भी उनमें से एक हैं जिनकी भारतीय स्वाधीनता संघर्ष में मुख्य भूमिका रहीं है। जिन्होंने अपने अल्प जीवन काल में राष्ट्रवाद का एक उच्च्य आदर्श प्रस्तुत किया था जिसने भारतीयों के मन में स्वजागरण की भावना जागृत की।[1] क्रान्तिकारी जतिन दास का जन्म कलकत्ता में 27 अक्तूबर, 1904 को हुआ था।[2] जतिन दास के पिता जी का नाम बंकिम बिहारी दास और माता जी का नाम श्रीमती सुहासिनी देवी था उनकी सात संतानें थीं जिनमें 3 पुत्रों व एक पुत्री की बचपन में ही मृत्यु हो गई थी। बाकी तीन जीवित सन्तानों में सबसे बड़े जतिन दास, छोटे भाई किरण दास के साथ-साथ लावन्या नामक एक बहन भी थी जिससे दोनों भाईयों को बेहद प्यार था।[3] उनके व्यक्तित्व के बारे में शिव वर्मा ने अपनी पुस्तक 'संस्मृतियाँ' में कुछ इस प्रकार लिखा है कि 'दास गंभीर, शान्त, अल्प किन्तु मृदुभाषी स्वभाव के थे। यद्यपि वे बहुत कम बोलते थे फिर भी उनके व्यवहार में ऐसा आकर्षण था जिसके कारण थोड़े समय में प्रायः सभी के साथ ऐसे घुल मिल जाते थे कि मानो उनका परिचय बहुत पुराना हो।'[4] इसी समय बंगाल विभाजन से सरकार का विरोध करते हुए अरविन्दो घोष ने 'बंगाल विभाजन को भारत में अब तक हुए सबसे बड़े अवसर के रूप में माना क्योंकि कोई भी घटना भारत की सुप्त अवस्था से नही जगा सकती थी जिस प्रकार इसने जगाया।'[5]

क्रान्तिकारी जतिन दास खुदीराम बोस, प्रफुल्ल चाकी, कनाईदत्ता, सत्येन्द्रनाथ बोस, अनन्त कन्हरे, गणेश पिंगले और जतिन मुखर्जी आदि क्रान्तिकारियों से बहुत प्रभावित हुऐ जिनके बारे में पिता के माध्यम से सुना था। जो लगातार भारत माता की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे।[6] जतिन दास जैसे-जैसे बड़े होते गऐ ब्रितानी साम्राज्य की दमनकारी नीतियों से परिचित होते चले गये। इस प्रकार पिताजी द्वारा मिली प्रेरणादायक शिक्षा से उनका व्यक्तित्व स्वतंत्रता पथ की ओर बढ़ता चला गया।[7]

दूसरी तरफ सरकार का मानना था कि भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन अंग्रेजों के लिए हानिकारक बनकर उनका अस्तित्व समाप्त न करदे इसलिए सरकार उनका दमन करने के लिए कोई कसर नही छोड़ना चाहती थी। अंग्रेजों ने महायुद्ध के समय 1915 में 'डिफेंस ऑफ इण्डिया एक्ट' बनाया था जो 1919 में समाप्त होने वाला था। लिहाजा सरकार इस की अवधि पूरी होने से पूर्व क्रान्तिकारियों के लिए कोई सख्त कदम उठाना चाह रही थी। भारतीय रक्षा अधिनियम द्वारा एक मसौदा बनाकर विधेयक बनाने की बात रखी गई थी जिसे मार्च, 1919 में दिल्ली की विधानसभा में पारित किया गया सर सिडनी रौलेट इस आयोग के अध्यक्ष बनाऐ गये जिस कारण इसे रौलेट एक्ट कहा गया था। इसके सचिव मि.जे.वी. होज को बनाया गया था जो बंगाल के आई.सी.एस. अधिकारी थे।[8]

यहाँ बताना आवश्यक है कि कमेटी की बैठक जनवरी, 1918 की शुरूआत में कलकत्ता में आयोजित की गई जिसमें रिकार्डिंग के लिए कैमरा लगाया गया था। जिसमें तय किया गया था कि भारत में क्रान्तिकारी षडयंत्रों के अस्तित्व और विस्तार से जुड़ी सरकार के कब्जे में मौजूद

सभी दस्तावेजी साक्ष्यों तक इसकी (आयोग) पहुंच होगी और इसे ऐसे अन्य साक्ष्यों के साथ पूरक किया जाएगा जिन्हें वह जरूरी समझे।' इस आदेश के साथ इसे भारत के राजपत्र में जुलाई 1918 में प्रकाशित की गई थी।[9]

इस बिल के द्वारा बंगाल, महाराष्ट्र तथा पंजाब की क्रान्तिकारी गतिविधियों पर लगाम लगाने का काम करना था। इसके द्वारा तय किया गया कि क्रान्तिकारियों का दमन करने के लिए कोई ठोस कदम उठाऐ जाने की आवश्यकता है। वहीं दूसरी तरफ जतिन दास भी अन्य बंगाली युवकों के साथ ब्रितानी साम्राज्य के विरोधी रवैये के विरूद्ध गतिविधियों में भागीदारी कर रहे थे, क्योंकि जतिन दास कांग्रेस के बड़े नेता चितरंजन दास जी का बहुत आदर व सम्मान करते थे। इसी बीच जतिन ने अपनी पढ़ाई के लिए 'साऊथ सुब्बर्न कॉलेज में इन्टर आर्ट्स की कक्षा में प्रवेश लिया।[10] वर्तमान में इस कॉलेज को आशुतोष कॉलेज के नाम से जाना जाता है।[11]

इसी बीच बिल का विरोध करते हुए पंजाब में स्थिति बिगड़ने से स्थान-स्थान पर विरोध प्रदर्शन आरंभ हो गये लेकिन लोगों ने किसी भी प्रकार की हिंसात्मक कार्यवाही नहीं की अपितु वे शांतिपूर्ण तरीके से अपनी बात रख रहे थे। देखते ही देखते लोगों की संख्या हजारों में पहुंचने लगी थी। स्वयं हंटर कमेटी ने भी लिखा था कि 'भीड़ के पास लाठियां या लड़ने का अन्य कोई सामान नहीं था और उन्होंने रास्ते में यूरोपीयन्स के साथ बदसलूकी भी नहीं की।'[12] इस प्रकरण के बाद 11 अप्रैल को अमृतसर शहर का नियंत्रण जनरल डायर को सौंप दिया गया जिसने बिना किसी घोषणा के मार्शल लॉ लागू कर दिया। अगले दिन अमृतसर के निवासियों को चेतावनी दी कोई भी रात 8 बजे के बाद बाहर नही निकलेगा।[13]

13 अप्रैल, 1919 जनरल डायर ने 50 मशीनगन से लैस सैनिकों के साथ जलियांवाला बाग में प्रवेश किया। हथियारों से लैस पुलिस के जवानों को देखकर लोगों का बैचेन होना स्वाभाविक ही था। ऐसे में डायर ने गोली चलाने का आदेश दे डाला जो जनसभा पूरी तरह निहत्थी व शान्तिपूर्ण तरीके से अपनी बात रख रही थी। जनरल डायर ने 10 मिनट तक 1650 राउण्ड गोलिया चलाकर लाशों के ढेर लगा दिये। सरकारी आंकड़े बताते हैं कि मरने वालों की संख्या 379 थी।[14] इस भयंकर हत्याकांड के बाद सरकार के रवैये से तंग आकर असहयोग का रास्ता अपनाने की बात होने लगी थी। असहयोग की योजना का आरंभ अगस्त माह में हुआ था। इसके पश्चात सितम्बर में कलकता में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। चितरंजन दास ने परिषदों का बहिष्कार करना राष्ट्रीय हित के लिए हानिकारक बताया था।[15]

असहयोग आन्दोलन के अंतर्गत सरकारी उपाधियों व अवैतनिक पदों का त्याग, सरकारी विद्यालयों और महाविद्यालयों का त्याग करना और विभिन्न प्रान्तों में राष्ट्रीय विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की स्थापना और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार और स्वदेशी का प्रचार सम्मिलित किऐ गये[16] इसी दौरान गांधी जी ने आन्दोलन का आह्वान करते समय वायदा किया कि एक वर्ष के भीतर ही स्वराज्य की प्राप्ति हो जाऐगी। इस घोषणा के पश्चात आन्दोलन तीव्र होता चला गया जिसके कारण सी.आर. दास, मोती लाल नेहरू, राजेन्द्र प्रसाद,बिट्ठल भाई पटेल तथा वल्लभाई पटेल ने अपनी वकालत छोड़ दी। इन सबका अनुशरण करते हुऐ नवयुवकों ने भी स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों का बहिष्कार करना आरंभ कर दिया जिनमें भगत सिंह, योगेशचन्द्र चटर्जी, भगवतीचरण वोहरा, यशपाल, शिव वर्मा के साथ-साथ जतिन दास का नाम भी उल्लेखनीय है।[17]

इसी दौरान काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, राष्ट्रीय कॉलेज लाहौर, दिल्ली में जामिया मिलिया इस्लामिया और अलीगढ़ में राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई थी। इनमें लाहौर का नेशनल कॉलेज सबसे प्रमुख माना जा सकता है क्योंकि यहां भगत सिंह, शिव वर्मा, राजगुरू, भवतीचरण, सुखदेव जैसे क्रान्तिकारी पढ़े थे जिन्होंने क्रान्ति का रास्ता यहीं से तय करना आरंभ किया था। इस सन्दर्भ में यशपाल ने अपनी पुस्तक सिंहावलोकन में लिखा कि 'नेशनल कॉलेज के वातावारण में राजनीतिक प्रवृतियों को छिपाने की आवश्यकता नहीं थी। इसकी स्थापना का उद्देश्य ही कांग्रेस के कार्यक्रम द्वारा स्वराज्य प्राप्त के लिए काम करने वाले योग्य कार्यकता तैयार करना था।'[18]

इसी बीच विदेशी कपड़ों का बहिष्कार सबसे कारगर साबित हो रहा था। युवक-युवतियाँ विदेशी कपड़े बेचने वाली दुकानों पर धरना दे रहे थे। जिसके कारण लोगों को जेलों में डाला जा रहा था। वहीं कलकता में बड़े बाजार (बौरा बाजार) में विदेशी कपड़ों की दुकान पर जतिन दास को भी नवयुवकों के साथ धरना देते हुये

पुलिस द्वारा पकड़ लिया गया किन्तु कुछ समय पश्चात उन्हें छोड़ दिया गया। लेकिन दूसरी बार फिर प्रदर्शन करते वक्त जतिन दास को गिरफ्तार करके हुगली जेल में एक माह रखा गया था। इस तरह जतिन दास की पहली गिरफ्तारी असहयोग आन्दोलन के दौरान हुई थी।[19] जेल से रिहा होने के पश्चात जतिन घर पहुंचे तो पिता बंकिम बिहारी दास ने कहा 'अगर तुम्हें यही सब करना है तो जाओ, मेरे घर से निकल जाओ। मैं समझ लूँगा कि तुम मेरे लिए मर गऐ हो। अगर तुम्हें मेरे घर पर रहना है तो पढ़ना होगा और आदमी बनना पड़ेगा।' जतिन ने अपने पिता से कहा कि 'मेरी शिक्षा प्रतीक्षा कर सकती है पर स्वाधीनता एक क्षण भी इन्तजार नहीं कर सकती इसलिए मैं अपने रास्ते (स्वतंत्रता के) पर ही चलूँगा।'[20]

इसी दौरान गांधी जी ने मार्च, 1921 में 'यंग इण्डिया' में एक लेख लिखा जिसमे कहा कि हमारे पास सभी मुसलमान, सभी जातियों के लोगों, सभी कारीगर एवं निम्न जातियों के व्यक्तियों के नाम होने चाहिए।[21] इसके पीछे गांधी जी की इच्छा थी कि प्रत्येक भारतीय बिना किसी भेदभाव के स्वतः भारतीय स्वाधीनता संघर्ष से जुड़कर आन्दोलन को गति प्रदान करे। गांधी जी के प्रयत्नों से ही कांग्रेस एक संयुक्त जनाधार प्राप्त कर पाई थी जो ब्रितानी साम्राज्य के विरूद्ध खड़ी हो रही थी। असहयोग आन्दोलन इस दिशा में पहला जनान्दोलन बना जिसने 1857 की क्रान्ति के पश्चात विदेशी शासन की नींद हराम कर दी थी।

लेकिन भारतीयों का यह उत्साह ज्यादा दिन तक नहीं चल सका था। उतर प्रदेश के गोरखपुर स्थित चौरी-चौरा नामक स्थान में 5 फरवरी, 1922 को पुलिस व आन्दोलनकारियों में झड़प हो गई। परिणामस्वरूप भीड़ ने 21 सिपाहियों व एक थानेदार सहित पुलिस थाने को आग लगा दी जिसमें सभी पुलिसकर्मी मारे गऐ हिंसा की घटना होने पर गांधी जी ने 12 फरवरी, 1922 को आन्दोलन समाप्त करने की घोषणा कर दी इसके पश्चात सभी स्थानों पर गांधी जी की आलोचना होने लगी।[22] लोगों को लगा कि गांधी जी में नेतृत्व की क्षमता नहीं रह गई है। सुभाष चन्द्र बोस ने लिखा कि उस समय जब जनता का उत्साह अपनी चरम सीमा पर था। भारतीयों को मैदान छोड़ने का आदेश देना राष्ट्रीय दुर्भाग्य से कम नहीं कहा जा सकता था।[23]

इस घटना के परिणामस्वरूप बंगाल, संयुक्त प्रान्त और पंजाब के शिक्षित युवा भारत की स्वतंत्रता हेतु एक नये मार्ग और तरीकों की तलाश करने लगे थे, क्योंकि गांधी जी ने एक वर्ष में स्वराज्य प्राप्ति का जो वायदा किया था जिसमे वे पूर्णतः असफल रहे थे। वहीं दूसरी तरफ नवयुवकों का अहिंसक साधनों से भी मोह भंग हो चुका था। अतः ये सब नवयुवक क्रान्तिकारी मार्ग की तरफ आकर्षित होने लगे। 1922 के पश्चात आत्मशक्ति, सारथी और बिजली जैसे बंग्ला समाचार पत्रिकाएं पुनः छपने लगीं जिनमें क्रान्तिकारियों के बलिदानों का गौरवपूर्ण वर्णन किया जाता था।[24] इसके अतिरिक्त जतिन दास ने भी कॉलेज में पढ़ाई जारी रखने के लिए पुनः प्रवेश लिया साथ ही कांग्रेस के रचनात्मक कार्यों से जुड़ गए जिसके कारण बड़े-बड़े नेताओं से सम्पर्क हुआ जिनका सानिध्य पाकर उन्होंने स्वयं को क्रान्ति पथ की ओर समर्पित कर दिया। इनमें सबसे मुख्य नाम रासबिहारी बोस के सहायक और प्रमुख शिष्य सचिन्द्रनाथ सान्याल का आता था। यहाँ बताना आवश्यक है कि सचिन्द्रनाथ सान्याल एक जाने-माने क्रान्तिकारी थे जिन्होंने अनेक ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों में भाग लिया जिसके कारण उन्हें दो बार काले पानी की सजा भी हुई थी। असहयोग आन्दोलन की असफलता के पश्चात सचिन्द्रनाथ पुनः क्रान्तिकारी आन्दोलन को आरंभ करना चाहते थे इसके लिए उन्होंने अनेक स्थानों का भ्रमण भी किया था। बंगाल में अनेक युवकों से सम्पर्क हुआ जिनमें से एक जतिन दास भी थे। इन्होंने युवकों में देशभक्ति की भावना जागृत करने हेतु अगस्त, 1922 में 'बन्दी जीवन' नामक एक पुस्तक लिखी जो 'क्रान्तिकारियों की गीता' के साथ-साथ उत्तर भारत में 'क्रान्ति का उद्योग' भी मानी जाती थी।[25]

मन्मथनाथ गुप्त जतिन के विषय में कुछ इस प्रकार लिखते हैं कि 'इन्हीं दिनों की एक घटना है। एक युवती को पठान परेशान कर रहा था। जतिन ने जब देखा कि युवती सहमी हुई व भयभीत हो रही थी लेकिन फिर भी पठान लगातार परेशान किये जा रहा था तो जतिन ने झट से एक घूंसा उसके मुंह पर दे मारा जिससे उसकी नाक से खून निकलने लगा।' इसी प्रकार दूसरी घटना हुई देशबन्धु चितरंजन के घर के पास एक सभा हो रही थी, जिसमें पुलिस वाले भी आऐ हुऐ थे एक महिला ने उनके सामने वन्दे मातरम् के नारे लगाना आरंभ कर दिया जिसके कारण पुलिस आयुक्त मिस्टर कींड बेंत से

महिला पर वार करने के लिए आगे बढ़े तो जतिन दास ने तभी पुलिस आयुक्त के हाथ से बेंत छीन लिया और बेंत लेकर चितरंजन दास के घर पहुंच गये और उनके सामने सारी घटना का जिक्र किया। देशबन्धु ने कहा 'यह गांधी जी के सिद्धान्तों के विरूद्ध है यह अहिंसा नहीं है।' देशबन्धु ने फैसला लिया कि बेंत पुलिस वाले को वापस कर दिया जाऐ। किन्तु सवाल था कि बेंत वापस करने कौन जाऐगा तो जतिन दास ने स्वयं जाकर बेंत लौटाने की इच्छा जाहिर की। उनके साहस को देखकर सी.आर. दास भी बहुत खुश हुऐ थे।[26]

ये घटनाएँ दर्शाती हैं कि जतिन दास अन्याय के विरूद्ध बोलने अथवा खड़े होने से कभी पीछे नहीं हटते थे। क्योंकि क्रान्तिकारी सभी प्रकार के अन्याय और भेदभाव के विरूद्ध लड़ रहे थे। इसी समय बंगाल का दक्षिण हिस्सा बाढ़ की चपेट में आ गया था। सुभाष चन्द्र बोस ने बाढ़ पीड़ितों के लिए राहत शिविरों का आयोजन कराया जिसमें जतिन दास ने भी सराहनीय कार्य किये थे। सन्ताहार के राहत शिविरों में सबसे मुख्य भूमिका में जतिन दास ही नजर आऐ थे। यही कारण रहा कि प्रान्तीय कांग्रेस नेता, उनके दोस्त, बंगाल के लोग जतिन को अपना चहेता मानने लगे थे। इसी के कारण जतिन दास को दक्षिण कलकत्ता कांग्रेस समिति का सहायक सचिव चुना गया था।[27]

इसी बीच 1924 में चितरंजन दास द्वारा चलाऐ गऐ तारकेश्वर सत्याग्रह में जतिन दास ने सक्रियता से भाग लिया जो मन्दिरों में महन्तों के भ्रष्टाचार के विरूद्ध चलाया गया था, जिसको लेकर सी.आर. दास व महन्तों के बीच वार्तालाप भी चल रहा था। सी.आर. दास के आह्वान पर सैंकड़ों स्वयंसेवक आन्दोलन से जुड़ गए थे। आन्दोलन की विशालता के कारण पुलिस ने गोलियां भी चलाईं तो काफी लम्बे संघर्ष के पश्चात प्रभात गिरी को महन्त बनाया गया। वे कांग्रेस के फैसले का पालन करने के लिए तैयार हुए और तय किया गया कि तारकेश्वर तीर्थस्थल का सारा पैसा तीर्थ यात्रियों के लिए खर्च किया जाऐगा। शेष राशि विभिन्न राष्ट्र निर्माण की गतिविधियों में व्यय होगी।[28]

वहीं दूसरी तरफ समय-समय पर जतिन दास का सम्पर्क सचिन्द्रनाथ सान्याल के साथ होता रहता था। क्योंकि सचिन दा की प्रेरणा से ही जतिन ने क्रान्तिकारी संगठन के लिए काम करना आरंभ किया था। भारत में क्रान्तिकारी गतिविधियों को पुन संचालित करने के लिए क्रान्तिकारी संगठन की आवश्यकता अनुभव की गई जिसके कारण सचिन सान्याल ने विभिन्न क्रान्तिकारी संगठनों के नेताओं के साथ एक बैठक दक्षिण कलकत्ता नेशनल स्कूल के भवन में आयोजित की। इस बैठक में निर्णय लिया गया कि विभिन्न दलों एवं संगठनों को मिलाकर एक अखिल भारतीय क्रान्तिकारी संगठन बनाना चाहिए।[29] इस दिशा में अक्तूबर, 1924 को युवा क्रान्तिकारियों ने कानपुर में 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन संघ' की स्थापना की, जिसमें सचिन सान्याल, राम प्रसाद बिस्मिल, योगेश चटर्जी आदि प्रमुख क्रान्तिकारी सम्मिलित हुए थे।[30]

क्रान्तिकारी दल के नामकरण के पश्चात लक्ष्य, कार्यक्रम आदि पर लम्बा विचार विमर्श किया गया था। सचिन सान्याल और रामप्रसाद बिस्मिल ने भी संघ की नियमावली बनाने के लिए वार्तालाप किया जिनका वर्णन जितेन्द्रनाथ सान्याल ने अपनी पुस्तक 'अमर शहीद भगत सिंह' में दिया कि सर्दियों के समय राम प्रसाद बिस्मिल इलाहाबाद में सचिन सान्याल से मिलने उनके घर आये। उन्होंने तीन दिनों तक विचार करते देखा तो पता चला वे क्रान्तिकारी दल (हि.रि.ए.) की नियमावली व उद्देश्य तैयार कर रहे थे।[31] दल के संविधान में बताया गया ऐसी व्यवस्था को समाप्त करना है जो मनुष्य के शोषण पर आधारित हो। दल में कार्य की दृष्टि से प्रचार, लोक संग्रह, धन संग्रह और शस्त्र संग्रह को भी सम्मिलित किया गया था। धन की प्राप्ति के लिए बल प्रयोग करना भी उचित बताया गया था।[32]

इसके पश्चात सचिन सान्याल ने गांधी जी के नाम खुला पत्र लिखा जो 12 फरवरी, 1925 को यंग इण्डिया, अहमदाबाद से प्रकाशित हुआ था जिमसे उन्होने गाँधी जी से क्रांतिकारियों की आलोचना न करने की बात की और कहा कि यदि आप उनकी सहायता नहीं कर सकते हैं तो कम से कम उनके प्रति असहनशीलता भी न दिखाएं।[33]

यहां बताना आवश्यक है कि सान्याल ने गांधी जी को पत्र इसलिए लिखा कि भारतीय क्रान्तिकारी एक बार फिर सशस्त्र क्रान्ति का मार्ग अपना कर भारत माता की मुक्ति हेतु संघर्षरत होंगे क्योंकि अंग्रेजों को अहिंसक साधनों से नहीं अपितु हिंसक साधनों से भगाया जा सकता था। अब वक्त आ गया है कि ईंट का जवाब पत्थर

से देना होगा। इसी बीच सचिन सान्याल ने भारतीयों में स्वजागरण की भावना विकसित करने के उद्देश्य से क्रान्तिकारी लेख लिखे जिनके नाम थे 'पीला पर्चा' इसमें हिन्दुस्तान रिपब्लिकन संघ के नियमों का वर्णन किया गया। सरकारी दस्तावेजों में इसे 'येलो लीफलेट' कहा गया था क्योंकि यह पीले पर्चे पर छपा था। दूसरा पर्चा था क्रान्तिकारी (दी रिवोल्यूशनरी)। इन दोनों लेखों को छापने व पूरे भारत में वितरण करने का दायित्व जतिन दास के ऊपर था। क्रान्तिकारी नामक लेख के प्रकाशन एवं वितरण का कार्य पूरे भारतवर्ष में एक ही दिन में किया गया था जिसमें जतिन दास की सहायता पारितोष बैनर्जी तथा विश्वनाथ मुखर्जी ने की थी।[34]

शिव वर्मा ने अपनी पुस्तक संस्मृतियां में बताया कि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन संघ के लिए जतिन दास का मुख्य योगदान था धन और अस्त्र-शस्त्रों का प्रबन्ध करना। उन्होंने सबसे पहले कुछ यूरोपियन्स फर्मों में छोटी-छोटी डकैतियों द्वारा 6 माऊजर पिस्तौल खरीदे, जिनमें से दो पिस्तौल को बनारस केन्द्र योगेश चन्द्र चटर्जी व मन्मथनाथ गुप्त के पास भेजा गया। इसके अलावा 4 पिस्तौल पण्डित राप्रसाद बिस्मिल के पास भेज दिऐ गऐ थे।[35] इसके अतिरिक्त जतिन ने और भी रिवाल्वर व पिस्तौल जमा करने में काफी सफलता प्राप्त की जिसमें बनारस के कालीपद मुखर्जी काफी सहयोग कर रहे थे। हथियारों की प्राप्ति के लिए जतिन दास ने खिदरपुर गोदी के पास चाय और पान-बीड़ी की दुकान खोल ली थी ताकि दूसरे देशों से क्रान्तिकारी जो गोला बारूद और निषिद्ध सामान लाते थे उन्हें सम्भाल कर सही ठिकानों पर पहुँचाया जा सके।[36] इसके पश्चात जतिन दास ने इण्डो बर्मा पैट्रोलियम कम्पनी जो कि ओड़तल्ला में टालीगंज रोड़ पर स्थित थी, के कैशियर से 3000 रुपये लूटने में सफलता प्राप्त की।[37]

यहां बताना आवश्यक है कि काकोरी घटना से पहले भी पैसों की आवश्यकता के लिए जतिन दास ने डकैतियां की थीं जिसका प्रयोग हथियारों को खरीदने में किया गया था। इन सबको बड़ी बहादुरी व सफाई के साथ पूर्ण किया गया था। इन्हीं दिनों हिन्दुस्तान प्रजातान्त्रिक संघ के सदस्य कुछ बड़ी घटना करने की योजना बना रहे थे। इसलिए उन्होंने सरकारी खजाना लूटने की योजना बनाई इस कार्य के लिए रामप्रसाद बिस्मिल की अध्यक्षता में एक कार्य समिति का गठन किया गया था। बिस्मिल का विचार था कि धन प्राप्ति के लिए हिंसात्मक साधनों को अपनाना चाहिए। मन्मथनाथ गुप्त ने लिखा कि हम लोगों के पास चार नये माऊजर पिस्तौल थे और कुछ अन्य छोटे हथियार थे। हर पिस्तौल में 50 से अधिक कारतूस जो स्पष्ट करते हैं हम लोग पूरी तैयारी के साथ आए थे।[38]

9 अगस्त, 1925 को काकोरी के निकट 8 डाऊन जो सहारनपुर-लखनऊ पैसेन्जर ट्रेन थी, में रेल विभाग का खजाना, जिसमें कुल 4500 रूपये रखे हुऐ थे को क्रान्तिकारियों द्वारा लूट लिया।[39] यह घटना भारतीय इतिहास में काकोरी षड्चंत्र के नाम से जानी गई थी। इस घटना में लगभग 10 लोग सम्मिलित थे जिनमें रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिडी, चन्द्रशेखर आजाद के साथ जतिन दास भी सम्पर्क में थे। पुलिस की व्यापक छानबीन के पश्चात 40 लोगों की गिरफ्तारी हुई किन्तु चन्द्रशेखर आजाद व राजेन्द्र लाहिडी अब तक पुलिस की गिरफ्त से बाहर थे।[40] सरकार द्वारा चन्द्रशेखर आजाद को काकोरी लूट के पश्चात फरार घोषित करके हजारों रूपयों का ईनाम रखा गया था किन्तु आजाद इसे बड़े हल्के में ले कर झांसी में एक मोटर कम्पनी में काम सीख रहे थे। वे मोटर साइकिल चलाने की परीक्षा झांसी के पुलिस अधीक्षक को दे आए और उनसे मोटर ड्राइवरी का लाइसेंस भी ले आऐ थे।[41]

वहीं दूसरी तरफ राजेंद्र लाहिडी कलकत्ता में जाकर छिप गऐ थे जिनका गुप्त ठिकाना सिर्फ जतिन दास को मालूम था। लेकिन पुलिस उनकी तलाश जारी रखे हुए थी। कलकत्ता में राजेन्द्र लाहिडी बम बनाने का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे लेकिन असावधानी के कारण बम फट गया जिसके कारण दक्षिणेश्वर मार्ग पर स्थित बम फैक्ट्री से उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उनके अतिरिक्त नौ अन्य साथी भी गिरफ्तार हुऐ किन्तु जतिन दास पुलिस को चकमा देकर भाग निकलने में सफल हुऐ थे।[42] इसके पश्चात काकोरी मामले में दोषी करार देकर रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिडी, रोशन सिंह और अशफाक उल्ला खां को फांसी की सजा दी गई। इसके अतिरिक्त मुकुन्द लाल को 10 वर्ष और मन्मथनाथ गुप्त को 14 वर्ष का कठोर कारावास सुनाकर जेल में बन्द कर दिया गया था। यहाँ ध्यान देना जरूरी है कि फांसी की सजा हाईकोर्ट की स्वीकृति मिलने के बाद दी जानी थी। इसके विरूद्ध अपील करने के लिए क्रांतिकारियों को एक

सप्ताह का समय दिया गया था।[43]

इस प्रकार काकोरी की व्यापक गिरफ्तारियाँ होने से क्रान्तिकारी गतिविधियाँ कुछ समय के लिए थम सी गई थीं। लेकिन बंगाल में जतिन दास भूमिगत गतिविधियों द्वारा ब्रितानी साम्राज्य की नींद हराम किऐ हुऐ थे। वहीं सरकार उन दिनों जतिन के बारे में क्या सोचती थी? इसका उत्तर स्पष्ट तौर से सरकारी दस्तावेजों से मिलता है जो काकोरी केस में पुलिस ने तैयार किऐ थे। इनमें इस प्रकार वर्णन मिलता है सचिन सान्याल ने दो विद्रोहात्मक पर्चे लिखे थे जिनमें से एक था क्रान्तिकारी, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है, तथा दूसरा था 'देशवासियों के प्रति निवेदन' जो बंगाली में लिखा गया था, इन दोनों को सरकार ने जब्त कर लिया था। उन्हें 25 फरवरी, 1925 को भवानीपुर कलकत्ता से गिरफ्तार कर लिया गया था। सचिन पर 'क्रान्तिकारी' पत्र के वितरण का अपराध सिद्ध हुआ जिसके अंतर्गत उन्हें दो साल की सजा सुनाई गई थी।[44]

वहीं दूसरी तरफ सरकार को सचिन सान्याल के दो अन्य सहायक होने की जानकारी मिली जिनकी सहायता से इन लेखों का वितरण किया गया था जिसमें एक का नाम रोबिन (जतिन दास का दल का नाम) और दूसरे का गोरा (विश्वनाथ मुखर्जी) था। क्रान्तिकारियों ने मेरठ में एक बैठक बुलाई जिसमे भावी रणनीतियां तैयार की गईं जो भारत में एक सशस्त्र विद्रोह की शुरूआत को लेकर थीं। इसी दौरान जब जतिन विद्यासागर कॉलेज में बी.ए. के चतुर्थ वर्ष में पढ़ रहे थे। उन्हें नवम्बर, 1925 को काकोरी षडयंत्र केस के साथ-साथ दक्षिणेश्वर बम केस के सिलसिले में गिरफ्तार कर लिया गया था। लेकिन जतिन की पहचान न होने के कारण सरकार कोई मुकदमा नहीं चला सकी।[45]

लेकिन ब्रितानी सरकार उनको किसी भी तरह से मुक्त नहीं करना चाहती थी अतः जतिन दास को बंगाल आर्डिनेंस 1818 के लिए नजरबन्द करके रख दिया गया। इस अध्यादेश में प्रावधान था कि बंगाल में बढ़ती क्रान्तिकारी गतिविधियां समाप्त करना, जिसके अंतर्गत अनेक नवयुवकों को गिरफ्तार किया जाने लगा तो असेम्बली में इसके विरूद्ध बोलते हुए जे.एम. सेन गुप्त ने कहा कि 'हम 1818 के रेगुलेशन के दुरूपयोग और बंगाल अध्यादेश के निरंकुश अधिनिर्णय और निषेधात्मक प्रभाव के बिना गिरफ्तारी की कड़ी निंदा करते हैं। इसके लिए असेम्बली के अन्दर और बाहर लगातार विरोध बढ़ता जा रहा है। बंगाल प्रान्त की जनता इस गैरकानूनी गिरफ्तारी और बन्दी रोष के प्रति कड़ा रूख अपना रही है।'[46]

जतिन दास को नजरबंद करके मैदिनीपुर जेल में रखा गया जहाँ अत्यधिक गर्मी के कारण लू लगने की वजह से उनकी तबीयत खराब हो गई जिसके पश्चात जतिन को कलकत्ता इलाज के लिए लाया गया। स्वास्थ्य में सुधार के पश्चात उनको मैमन सिंह जेल (बांग्ला देश) में भेज दिया गया। वहाँ जेल अधीक्षक उनको अकारण तंग करने लगे जिसके विरोध में जतिन ने अनशन शुरु कर दिया परिणाम स्वरूप जेल अधीक्षक ने 23वें दिन अपने व्यवहार के लिए माफी मांगी तब कहीं जाकर जतिन दास ने अपना अनशन समाप्त किया था।[47] इस घटना के पश्चात जतिन दास को मियाँवाली जेल, जो बंगाल से सैंकड़ों मील दूर स्थित थी, में स्थानान्तरित कर दिया गया। वहीं दूसरी तरफ फरवरी, 1927 में जतिन के छोटे भाई किरण दास ने दसवीं पास करने के पश्चात क्रान्तिकारी गतिविधियों में भाग लेना आरंभ कर दिया था। इसी दौरान कलकत्ता मैदान में गोला-बारूद खरीदते समय 11 मार्च, 1927 को किरण दास भी गिरफ्तार कर लिए गए। जिनको दिल्ली में नजरबन्द करके रखा गया था।[48]

इसी बीच क्रान्तिकारी गतिविधियों को फिर से आरम्भ करने के लिए भगत सिंह, विजय सिन्हा जैसे अन्य क्रांतिकारियों ने हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक संघ बनाया जो समूचे देश में क्रान्तिकारी गतिविधियों को अंजाम देने वाला था। इसी दल के सदस्यों ने सांडर्स की हत्या करके लाला लाजपत राय की मौत का बदला लिया था। जिसके पश्चात भगत सिंह कलकत्ता गये जहाँ जतिन दास से मुलाकात करके अन्य साथियों को बम बनाने की ट्रेनिंग देने की बात की जिसके परिणामस्वरूप जिन बमों को दिल्ली असेंबली में फेंका गया था उन्हें जतिन दास द्वारा बनाया गया था।[49]

इस घटना के बाद व्यापक छानबीन में भगत सिंह, शिव वर्मा, सुखदेव, बटुकेश्वरदत्त के साथ जतिन दास को भी गिरफ्तार के लिया गया जिसमें 32 क्रांतिकारियों पर लाहौर षडयंत्र के नाम से मुकदमा आरम्भ किया गया जिनमे से 7 सरकारी गवाह बन गये बाकी क्रांतिकारियों को जज के सामने पेश किया गया।[50] वहीं दूसरी तरफ

जेल में क्रांतिकारियों के साथ साधारण कैदियों से भी बुरा व्यवहार किया जाने लगा जिसमे विरूद्ध उन्होंने भूख हड़ताल शुरु कर दी। यहाँ बताना आवश्यक होगा कि जतिन दास के अलावा अन्य किसी भी क्रान्तिकारी को अनशन का अनुभव नही था अतः जतिन ने कहा कि 'भूख हड़ताल का एलान करके हम लोग एक ऐसे संघर्ष में उतर रहे हैं जो एक मायने में बम और पिस्तौल की लड़ाई से कहीं अधिक कठिन है क्योंकि इसमें तिल-तिल कर खुद को मौत की तरफ ले जाना होता है।'[51] भूख हड़ताल के कारण जनमत क्रांतिकारियों के साथ होने से समाचार पत्रों में सरकार की कड़ी निंदा की जाने लगी इसी बीच सरकार ने अमानवीयता की सभी हदें पार कर के अनशनकारियों को जबरन खाना खिलाना आरम्भ किया ताकि इन देशभक्तों का अनशन समाप्त कराया जा सके।

जबरन खिलाये जाने के कारण जतिन दास के फेफड़ों में दूध चला गया जिससे उनकी तबियत खराब होने से सबसे गम्भीर रोगी की सूची में सम्मिलित किया गया। इसी बीच नेहरु ने जतिन दास से की मुलाकात का ब्योरा अपनी आत्मकथा में इस प्रकार दिया, मुझे जेल में कुछ बंदियों से मिलने की आज्ञा दी मैंने पहली बार भगत सिंह और जतिन दास को देखा तो वे सभी बिस्तर पर थे और कमजोरी से बात भी नही कर पा रहे थे जतिन दास किसी युवा लड़की की तरह अभी भी नर्म व कोमल रहे थे जब मैंने उनको देखा तो वे काफी दर्द मे होने के बाद भी दृढ़ निश्चय थे।[52] जतिन ने अपनी लगातार बिगड़ती स्थिति के कारण 13 सितम्बर 1929 अनशन के 63वें दिन ऐतिहासिक शहादत प्राप्त की।[53]

जतिन की शहादत पर अनेक तरीकों से ब्रिटिश सरकार की आलोचना की गई। सचिन्द्र सान्याल ने लाहौर षड्यंत्र का पहला शहीद बताया था। जिन्नाह ने जतिन को महान विभूति करार दिया। वहीं इरविन ने इस महान क्रान्तिकारी की अंतिम यात्रा के बारे में लिखा 'कलकता जुलुस अब तक के जुलूसों में सबसे बड़ा था जिसमें लगभग 6 लाख लोग सम्मिलित हुए थे'[54] इसी बीच आयरलैंड से टेरेंस मैक्स्विनी के परिवार की तरफ से भी जतिन की शहादत से बाद एक शोक संदेह आया जिसमे जतिन को भारत का मैक्स्विनी बताया गया।[55]

निष्कर्ष : इस प्रकार कहा जा सकता है की जतिन ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। असहयोग आन्दोलन की असफलता से क्रान्ति के मार्ग की तरफ बढ़े। जतिन ने ही काकोरी घटना से पहले पैसे के लिए अनेक कार्य किये थे। असेंबली में जिन बमों का इस्तेमाल भगत सिंह ने किया उनको जतिन दास द्वारा ही बनाया गया था। इसके पश्चात जेल में राजनीतिक बंदी का दर्जा दिलाने हेतु अनशन में ऐतिहासिक शहादत प्राप्त की जिस कारण पूरा देश अपने इस वीर पुत्र के बलिदान पर रोया था इनकी अंतिम यात्रा को देखकर अंदाजा लगाया जा सकता है कि लोगों में मन में कितना आदर था। भारत के प्रमुख नेताओं मोती लाल नेहरु, सुभाष बोस, आदि ने सरकार की निंदा की और आन्दोलन को तीव्र करने का आह्वान किया जिसके कारण अनेक गतिविधियों का संचालन किया गया जिसकी परिणिति 15 अगस्त 1947 को भारत की आजादी के साथ हुई। मन्मथनाथ गुप्त ने जतिन दास के सर्वोच्च बलिदान पर पुस्तक लिखी जिसे जब्त कर लिया गया था उसमे एक शेर था जो यहाँ सार्थक होगा-

'सर देकर राहें इश्क में ऐसा मजा मिला
मगर हसरत ये रह गई कि कोई और सर न था'

सन्दर्भ

1. दास, किरण चन्द्र, 'अमर शहीद जतिन दास', 'हरियाणा लोक सम्पर्क', प्रकाशन विभाग, चण्डीगढ़, 1980, पृ. 15
2. जुनेजा, एम.एम, 'मृत्यु विजयी यतीन्द्रनाथ दास', मोडर्न पब्लिसर्स, मोहाली, 2013, पृ. 27
3. वडैच, मालविन्द्र सिंह, 'प्रोफाईल ऑफ ए मार्टियर जतिन दास', यूनिस्टार बुक्स, मोहाली, 2015, पृ. 19
4. वर्मा, शिव, 'संस्मृतियां', राहुल फाऊण्डेशन, लखनऊ, 2020, पृ. 139
5. रायचौधरी, गिरीजा शंकर, 'श्री अरिविन्दो बांग्लार स्वदेशी युग', नवभारत प्रकाशन, कलकत्ता.1958, पृ. 369
6. बोस, वी. 'शहीद जतिन दास', सेण्ट्रल पुस्तकालय, नई दिल्ली, 1979, पृ. 6
7. दास, किरण चन्द्र, पूर्वोक्त, पृ. 16
8. सेडीसन कमेटी रिपोर्ट, भारत सरकार, 1918, पृ. 2
9. सेडीसन कमेटी रिपोर्ट, भारत सरकार, 1918, पृ. 4
10. दास, किरण चन्द्र, पूर्वोक्त, पृ. 17
11. अधिकारिक वेबसाईट ऑफ आशुतोष कॉलेज, कलकत्ता, प. बंगाल
12. हंटर कमेटी रिपोर्ट (डिसआर्डर इंक्वायरी कमेटी रिपोर्ट) 1919-1920, भारत सरकार

13. मित्तल सतीश चन्द्र व प्रशान्त गौरव, 'जलियांवाला बाग नरसंहार- एक ऐतिहासिक विश्लेषण', प्रकाशन विभाग, अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना, नई दिल्ली, 2019, पृ.43
14. द इण्डियन एनुअल रजिस्टर, वोल्यूम-1, 1919
15. गुप्ता, हेमेन्द्र नाथ, 'देशबंधु चितरंजन दास', प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्ली, 1960, पृ. 47
16. सीतारमैय्या, पट्टाभि, 'काँग्रेस का इतिहास, भाग-1' सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, 1986 पृ. 156
17. चन्द्र, विपिन, 'नेशनलिज्म एण्ड कलोनियलिज्म इन मोडर्न इण्डिया', ओरियण्ट लोंगमैन लि., नई दिल्ली, 1979, पृ. 224, यह भी देखें मन्मथनाथ गुप्त, 'भारत के क्रान्तिकारी', पेंगुइन रैण्डम हाऊस इण्डिया, गुड़गांव, 2012, पृ. 143
18. यशपाल, 'सिंहावलोकन भाग-1', लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007,पृ. 41
19. गुप्त मन्मथनाथ, पूर्वोक्त, पृ. 143, यह भी देखें - किरण चन्द्र दास, पूर्वोक्त, पृ. 16
20. गुप्त मन्मथनाथ, 'क्रान्तिकारियों का वैचारिक इतिहास', निधि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980, पृ. 135
21. यंग इण्डिया, 30 मार्च, 1921
22. रॉय, सत्यम एम, 'भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1983, पृ. 277
23. बोस, सुभाषचन्द्र, 'द इंडियन स्ट्रगल 1920-42', ऑक्सफोर्ड युनीवर्सिटी प्रेस, लन्दन, 1997, पृ. 81-82
24. सरकार, सुमीत, 'आधुनिक भारत (1885-1947)', राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, 2016, पृ. 271
25. सान्याल, सचिन्द्रनाथ, 'बन्दी जीवन', आत्मा राम एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 1922, पृ. 1
26. गुप्त, मन्मथनाथ, पूर्वोक्त, पृ. 136
27. द इण्डियन एनुअल रजिस्टर, 1929, पृ. 25 यह भी देखें सी.एस. वेणु, पूर्वोक्त, पृ. 21
28. फाईल संख्या 25/1924, गृह विभाग (राजनीति), भारत सरकार, यह भी देखें हेमेन्द्र नाथ दास गुप्ता, पूर्वोक्त, पृ. 106
29. वर्मा शिव, पूर्वोक्त, पृ. 136
30. फाईल संख्या 375/1925, (गृह विभाग, राजनीति) भारत सरकार
31. सान्याल, जितेन्द्रनाथ, 'अमर शहीद सरदार भगत सिंह', नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2017, पृ. 30य जितेन्द्र नाथ सान्याल, 'सरदार भगत सिंह', विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, पृ. 15-16
32. फाईल संख्या 375/1925, पृ. 2 (गृह विभाग राजनीति), भारत सरकार
33. यंग इण्डिया, अहमदाबाद, 12 फरवरी, 1925; शिव वर्मा, 'भगत सिंह की चुनी हुई कृतियां', समाजवादी साहित्य सदन, कानपुर, 1987, पृ. 240
34. वर्मा, शिव, संस्मृतियां, पूर्वोक्त, पृ. 135
35. वही, पृ. 135
36. दास, किरण चन्द्र, पूर्वोक्त, पृ. 70
37. वर्मा, शिव, पूर्वोक्त, पृ. 137
38. गुप्त, मन्मथनाथ, 'भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास', शहीद ग्रन्थ माला, दिल्ली, 1960, पृ. 243
39. हेल, एच.डब्ल्यू, 'ब्रिटिश रिकार्ड्स ऑफ रिवोल्यूशनरी एक्टीविटी इन इण्डिया' वोल्यूम-3, 1917-1936, यूनिस्टार बुक्स, मोहाली, 2017, पृ. 67
40. फाईल संख्या 192/1929, के. डब्ल्यू-1 (गृह विभाग-राजनीति), भारत सरकार।
41. माहौर, भगवान दास, 'यश की धरोहर', आत्माराम एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 1968, पृ. 68
42. फाइल संख्या 385/1925, (गृह विभाग-राजनीति), भारत सरकार
43. फाइल संख्या 78/1925, काकोरी षडयंत्र केस, भाग-1, जजमेण्ट ऑफ स्पेशल सेशन जज, पृ. 114; मनमथनाथ गुप्त, भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास, पृ. 243
44. फाईल संख्या 385/1925, (गृह विभाग-राजनीति), भारत सरकार; सचिन्द्रनाथ बक्शी, वतन पर मरने वालों का, ग्लोबल पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2009, पृ. 123
45. दास, किरण चन्द्र, पूर्वोक्त, पृ. 20-21 मन्मथनाथ गुप्त, भारत के क्रान्तिकारी, पूर्वोक्त, पृ. 144 (यह भी देखें)
46. वेणु, सी.एस. 'जतिन दास द मार्टियर', चनिया प्रकाशन,मद्रास, 1979 पृ. 21
47. शिव वर्मा, 'संस्मृतियां', पूर्वोक्त, पृ.139; मन्मथनाथ गुप्त, भारत के क्रान्तिकारी, पूर्वोक्त, पृ. 145
48. वडैच, मालविन्द्र जीत, पूर्वोक्त, पृ.23
49. लाहौर षड्यंत्र केस प्रोस्सिडिंग, फाइल संख्या 754, 1929-30, वाल्यूम-4
50. फाईल संख्या 72/1930, गृह विभाग (राजनीति), भारत सरकार
51. गुप्त, मन्मथनाथ, 'क्रान्तिकारियों का वैचारिक इतिहास', पूर्वोक्त पृ. 141
52. नेहरु, जवाहरलाल, 'आत्मकथा', जोनलेन बोडले हेड, लन्दन, 1936, पृ.193.
53. फाइल संख्या 21/63/1929, गृह विभाग (राजनीति), भारत सरकार
54. वही
55. बोस, सुभाष, पूर्वोक्त, पृ. 179

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

छत्तीसगढ़ की पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व एवं महिला सशक्तीकरण : एक समीक्षात्मक अध्ययन

❑ डॉ. अनुपमा सक्सेना
❖ दीपक कुमार कश्यप

वर्तमान भारत में 73वें संविधान संशोधन लागू हुए लगभग 30 वर्षों से अधिक हो गया है। इस संशोधन में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान रखा गया था, ताकि ग्रामीण स्तर पर महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को बढ़ाया जा सके और महिलाओं का सशक्तीकरण हो सके। परिणामस्वरुप वर्तमान में लाखों महिलाएं पंचायत प्रतिनिधि के रुप में अपनी भूमिका निभा रहीं हैं, जिससे ग्रामीण स्वशासन में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता बढ़ी है और महिला सशक्तीकरण हो रहा है। पंचायती राज के माध्यम से लाखों स्त्रियाँ जो लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में भाग ले रहीं हैं वे अंततः हमारी समग्र राजनीति के चरित्र को प्रभावित कर रहीं हैं। पूरे विश्व में प्रजातंत्र की दुनिया में यह एक अनोखा अनुभव है जिसमें निचले स्तर की महिलाएं राजनीतिक पदों पर बैठने तथा कानून बनानें, निर्णय लेने तथा शासन में सहभागिता के उपयुक्त पायी गई हैं और उनके शैक्षणिक, व्यवहारिक तथा सामाजिक आर्थिक स्तर का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा है। छत्तीसगढ़ में 2008 से महिलाओं का आरक्षण 50 प्रतिशत कर दिया गया है, जिसके परिणाम हमें 2019 में पंचायती राज मंत्रालय के प्रतिवेदन में देखनें को मिलते हैं, जिसमें पंचायतों में महिलाओं का राजनीतिक प्रतिनिधत्व 58.78 प्रतिशत है जो यह दर्शाता है कि महिलाओं का पंचायतों में प्रतिनिधित्व महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को बढ़ाता है जिससे महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा मिला। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य छत्तीसगढ़ की पंचायतों में महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व से आए महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन का अध्ययन करना है एवं यह पता लगाना है, कि महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व ने किन माध्यमों से महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा दिया है।

सूचक शब्द : राजनीतिक प्रतिनिधित्व, महिला सशक्तीकरण, पंचायती राज, छत्तीसगढ़।

महिला सशक्तीकरण से तात्पर्य महिलाओं को पुरुषों के बराबर वैधानिक, मानसिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में निर्णय लेने की स्वतंत्रता से है। उनमें इस प्रकार की क्षमता का विकास करना चाहिए, जिसमें वे अपने जीवन का निर्वाह अपने अनुसार कर सकें एवं उनके अंदर आत्मविश्वास और स्वाभिमान जागृत हो। महिला सशक्तीकरण एक बहुआयामी एवं निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, इसका उद्देश्य एक न्यायपूर्ण एवं सम समाज की स्थापना करना है, क्योंकि लिंगगत समानता को सुशासन की कुंजी कहा जाता है।[1] निर्वाचित निकायों में महिलाओं के लिए सकारात्मक कदमों को समुदाय के भीतर समता के रुप में देखा जाना चाहिए। महिलाओं के आरक्षण के प्रावधान की चर्चा पहली बार 1974 में भारत में “महिलाओं की स्थिति” पर गठित समिति के अंतर्गत चर्चा उठी थी। स्थानीय स्तर पर समिति ने सिफारिश की थी, कि गांवों के स्तर पर महिला परिषदों का गठन किया जाए, इन इकाइयों के गठन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था, कि महिलाएं अधिक से अधिक संख्या में राजनीतिक प्रक्रिया में हिस्सेदारी करें।[2] आज भारत में पंचायती राज व्यवस्था लागू है और स्वशासन की इन बुनियादी इकाइयों में महिलाओं को 33 फीसदी आरक्षण भी प्राप्त है। पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण एक नई व्यवस्था है, लेकिन भारत में पंचायती राज व्यवस्था का इतिहास काफी पुराना है। यह एक प्रामाणिक तथ्य है, कि प्राचीन काल से ही भारत में ग्राम सभाएं अस्तित्व में थीं और गांव में रहने वाली सभी जातियों के प्रतिनिधि इस ग्राम सभा के सदस्य हुआ करते थे। बौद्धकाल में भी गांवों में ऐसी संस्थाएं अस्तित्व में थी और इनके प्रतिनिधियों का चुनाव खुली सभा में हुआ करता था। बाद के समय में भारत पर मुसलमान शासकों और अंग्रेजों ने सदियों तक राज किया, लेकिन सैकड़ों सालों की गुलामी भी भारत की ग्राम सभाओं के मूल को नष्ट नहीं कर पायी। आजादी के आंदोलन के समय जब राष्ट्रपिता महात्मा गांधी देशभर का घूम-घूमकर दौरा कर रहे थे, तो उन्होने गांवों की दुर्दशा देखी और वहां पंचायतों की जरुरत

❑ प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)
❖ शोध अध्येता, राजनीति विज्ञान विभाग, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

अनुभव की। महात्मा गांधी आजादी के साथ ही ग्राम संस्थाओं को वैधानिकता प्रदान करना चाहते थे, ताकि ग्राम समाज आत्म निर्भर, प्रशासनिक व न्यायिक इकाई के रुप में काम कर सके। भारत के संविधान में तो पंचायती राज व्यवस्था का उल्लेख किया गया था, लेकिन इस व्यवस्था को धरातल पर नहीं उतारा जा सका, क्योंकि पंचायती राज का प्रावधान हमारे संविधान के नीति-निदेशक तत्वों में दिया गया था और इस प्रकार यह राज्य सरकार के लिए बाध्यकारी नहीं था। इसके बाद पंचायती राज संस्थाओं के स्वरुप संरचना, अधिकार एवं निर्वाचन संबंधी विभिन्न विषयों पर विचार करने हेतु कई समितियों का गठन अलग-अलग समय पर किया गया। इस संदर्भ में महिला आरक्षण बलवंतराय मेहता समिति, अशोक मेहता समिति, योजना आयोग की जी. वी.के. राव समिति और एल. एम. सिंघवी समिति, के हाथों से गुजरता हुआ पंचायती राज विधेयक 10 अगस्त 1984 को लोकसभा में पारित हो गया। भारतीय संविधान का यह 64वां संशोधन लोकसभा से तो पारित हो गया था, लेकिन किन्हीं कारणवश यह राज्यसभा से पारित नहीं हो सका। इसके बाद फिर समितियां गठित करने की प्रक्रिया चली और अंततः यह 73वें संविधान संशोधन विधेयक के रुप में संसद से पारित हो गया। इस प्रकार भारत में पंचायती राज व्यवस्था को वैधानिक मान्यता मिल गयी। 20 अप्रैल, 1993 को इसके द्वारा पंचायत स्तर पर महिलाओं को 33 फीसदी आरक्षण भी दिया गया था। इस महिला आरक्षण में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्ग की महिलाओं के लिए भी स्थान आरक्षित हैं। आज पंचायत स्तर पर महिलाओं को आरक्षण दिया जा चुका है, लेकिन सत्ता में महिलाओं की भागीदारी की स्थिति में कोई बहुत ज्यादा बदलाव नहीं आया है, क्योंकि अधिकतर महिला प्रतिनिधित्व मात्र रबर-स्टैम्प ही बनकर रह गयी हैं उनके नाम पर राजनीति उनके पुरुष रिश्तेदार ही करते हैं। भारत में आज अगर हम पंचायती राज को फलते-फूलते देख रहे हैं तो इसका श्रेय हमारी संसद को जाता है, जिसने सन 1991 में संविधान में संशोधन करके विधिवत रुप से पंचायती राज की आधारशिला रखी।[3] इन महिलाओं को राजनीति में लाने के लिए उठाया गया कदम सकारात्मक भेदभाव कहा जा सकता है। पंचायती राज व्यवस्था ने महिलाओं के स्वयं के बारे में सोच बदलने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जैसा कि पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने पंचायत प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए कहा कि पंचायती राज की सबसे बड़ी सफलता यही है कि उसमें महिलाओं का राजनैतिक व सामाजिक सशक्तीकरण किया है जो आधुनिक युग में विश्व इतिहास में एक अनोखा उदाहरण है। पंचायतों में निर्वाचित महिलाएं नेतृत्व गुण व नारीवादी सोच के माध्यम से कामकाज में बदलाव ला रही हैं। ये महिलाएं, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, घरेलू हिंसा, नशामुक्ति, उत्पीड़न और बुनीयादी सुविधाओं के विकास सरीखे मुद्दों को प्राथमिकता देती है, क्योंकि उनकी आवश्यकताएं उसी प्रकार की हैं। देश के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए महिला सशक्तीकरण अति आवश्यक है और इसी कारण देश के विकास के लिए महिलाओं को मुख्यधारा में लाना सरकार की प्रमुख चिन्ता रही है। महिला सशक्तीकरण सम्पूर्ण भारत के विकास के लिए आवश्यक है।[4] पंचायतों में महिलाओं के अधिकारों, शक्तियों व उत्तरदायित्वों के बारे में पंचायत की कार्यवाही करने के लिए विभिन्न नियमों व कानूनों के बारे में वित्तीय गैर-वित्तीय संसाधन इकट्ठा करने के बारे में तथा विकेंद्रीकरण योजना तैयार करने के बारे में केन्द्र सरकार, राज्य सरकार एवं विभिन्न स्वैच्छिक संस्थाएं महिलाओं को प्रशिक्षण दे रहीं हैं, जिसके परिणामस्वरुप महिलाओं की सोच व समझ का विस्तार हुआ है और वे पंचायतों में अपनी भूमिका प्रभावी ढंग से निभा रही हैं, जो यह ढाढ़स बंधाते हैं, कि महिलाएं भले ही अशिक्षित हैं व अनेक समस्याओं से ग्रस्त हैं, फिर भी उन्होंने ग्रामींण समाज में नए उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। भविष्य में जैसे-जैसे महिलाएं प्रशिक्षण प्राप्त करने से व पंचायतों की बैठकों में भाग लेने के माध्यम से इकट्ठा होगी, कम मुखर महिला प्रतिनिधियों पर मुखर महिलाओं का प्रदर्शनकारी प्रभाव पड़ेगा, जो उनकी पंचायतों की भूमिका को सकारात्मक रुप से प्रभावित करेगा।[5]

साहित्य समीक्षा :

राकेश शर्मा[6] नें अपनी ग्रंथ "पंचायती राज तब और अब" में बताया है, कि महिलाओं के अंदर आई जागरुकता का सबसे बड़ा कारण उन्हें पंचायत में मिला प्रतिनिधित्व है। महिला सरपंच स्त्री-पुरुष भेदभाव पर विशेष दृष्टि रखती हैं, इसलिए महिलाओं पर होने वाले अत्याचार उजागर हो रहे हैं। महिलाओं ने ग्रामीण

विकास के कई प्रतिमान स्थापित किये हैं। निर्वाचित महिला प्रतिनिधि महिला संगठनों और नागरिक समाज की एंजेसियों से शक्तिदायक समर्थन और क्षमता पाकर धरातल स्तर पर प्रतिनिधित्व की प्रक्रिया को जन्म दे रही हैं। पंचायती राज संस्थाओं में परोक्ष और प्रत्यक्ष रुप से 60 लाख महिलाओं के प्रतिनिधित्व ने सामाजिक लामबंदी की प्रक्रिया को तेजी दी है और महिलाएं निजी और सार्वजनिक स्थानों में अपनी भूमिका को नए तरीके से गढ़ रही हैं। यह भी माना जा रहा है, कि पंचायतों में महिला आरक्षण देने के प्रयोग के सकारात्मक नतीजे आ रहे हैं, क्योंकि महिलाओं ने न केवल राजनीतिक कौशल प्राप्त किया है, बल्कि वे महिलाओं के हितों की प्रभावी समर्थक भी बनी हैं।

महिपाल[7] ने अपने ग्रंथ "पंचायत में महिलाएंः चुनौतियां और संभावनाएं" में बताया है कि पंचायतों को 73वें संविधान संशोधन के बाद कार्य करते हुए 2 दशक से अधिक समय बीत चुका है। लेकिन उनकी अनेक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक चुनौतियां है, जिनके कारण वे प्रभावी ढंग से अपनी भूमिका निभा नहीं पाईं हैं। देश के उत्तरी राज्यों में तो प्रधान पति या सरपंच पति तक नया पद ही सृजित हो गया है। इस सबके अलावा पंचायतों को स्वयं भी वांछित अधिकार व शक्तियां प्रदान नहीं की गई हैं। यही कारण है, कि पंचायतें स्वयं में ही स्वायत्त शासन की संस्थाओं के रुप में उभरकर नहीं आई, जिसके कारण महिलाएं उनमें स्वतंत्र रुप से कार्य भी नहीं कर पाई हैं। इन चुनौतियों के बावजूद महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों व स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा चलाए गए अनेक प्रशिक्षण एवं क्षमतावर्धन कार्यक्रमों के अच्छे परिणाम सामने आए हैं।

धर्मवीर चंदेल[8] ने अपने ग्रंथ "पंचायती राज और महिला सहभागिता" में अध्ययन के अंतर्गत बताया है कि पंचायतों में महिलाओं को उपलब्ध 33 प्रतिशत आरक्षण ने भारत में लगभग आधी आबादी को राजनीतिक सशक्तता प्रदान करने का कार्य किया है, राजनीति में महिलाओं को आरक्षण ने हर स्तर पर महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि की है, आज पंचायती राज का परिदृश्य बदल रहा है। महिलाएं अपनी भूमिका को सफलतापूर्वक निभाने के लिए आवश्यक दक्षता प्राप्त कर रहीं हैं, इस प्रकार पंचायती राज संस्थाओं एवं स्थानीय नगर निकायों में महिलाओं को सुनिश्चित प्रतिनिधित्व से महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

वंदना बंसल[9] ने अपने ग्रंथ "पंचायती राज में महिला भागीदारी" में मध्यप्रदेश के मुरैना जिले के अध्ययन में बताया है कि पंचायतों में आरक्षण के कारण ग्रामीण शक्ति ढांचे के पारंपरिक प्रतिनिधित्व के स्वरुप में परिवर्तन आया है। महिलाओं के प्रवेश ने ग्रामीण ढांचे में उच्चजाति के लोंगो का नियंत्रण को भी ढीला कर दिया है तथा कुछ सीमा तक निर्णय निर्माण को भी प्रभावित किया है। पंचायती राज में महिला आरक्षण के अनुभव के द्वारा यह देखा गया है कि, महिलाओं की राजनीति में भागीदारी बढ़ाने की यह काफी सफल प्रयास है। पंचायती राज में इसके लागू होने से कई क्रांतिकारी परिवर्तन आए हैं। महिलाओं में जागरुकता आई और उनमें स्वावलंबन की स्थिति का जन्म हुआ है।

मिन्नी मिन्नी[10] ने अपनी पुस्तक "Women Empowerment Through Panchayati Raj" में बिहार के समस्तीपुर जिले के अध्ययन में बताया है कि महिलाओं की पंचायती राज संस्थाओं के द्वारा स्थानीय राजनीति में भागीदारी ने स्थानीय प्रशासन में गुणात्मक परिवर्तन किए हैं। पंचायत में महिला जनप्रतिनिधियों द्वारा पुरुषों की तुलना में सामाजिक कल्याण की प्रक्रिया में ईमानदारी एवं गंभीरता से काम किया गया है। बहुत सारे क्षेत्र हैं जहां महिला पंचायत प्रतिनिधि सदस्य ने छात्राओं के लिए प्राथमिक शिक्षा प्रबंधन, स्वच्छता, स्वास्थ्य, पीने का पानी की व्यवस्था की है, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि महिलाओं द्वारा संस्था में भागीदारी ने उनके आत्मविश्वास को जगाया है, जिससे महिलाओं को शारीरिक और मानसिक दोनों रुप से मजबूत किया है, लेकिन इसके आगे और भी मूलभूत विकास और परिवर्तन करना बाकी है। महिलाएं पंचायत सदस्य ने अपना योगदान अपने पंचायत में बहुत बढ़ चढ़ किया है, जैसे लड़कियों के प्राथमिक शिक्षा, भूमि सुधार, सड़क जैसी आधारभूत सुविधाओं को बढ़ावा दिया है। महिलाओं की पंचायती राज में प्रवेश ने महिलाओं को एक ऐसा मंच प्रदान किया है, जिसके माध्यम से महिलाओं के सशक्तीकरण को बढ़ावा मिला है।

सौम्या सिंह[11] ने अपनी ग्रंथ "Woman's Participation In Grass Root Level of Panchayati Raj" में उत्तर

प्रदेश के रायबरेली प्रदेश के अध्ययन के दौरान बताया है कि पंचायती राज संस्थाओं के जमीनी स्तर पर निर्वाचित महिला सदस्य आमतौर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी कर रही हैं। यह भागीदारी महिलाओं के लिए एक आंतरिक मूल्य होता है, जो अपने आप में भविष्य की कार्रवाई का मार्गदर्शन करता है। पंचायत में महिला भागीदारी जवाबदेही सुनिश्चित करती है और नीतियों और कार्यक्रमों को अधिक सफलता प्रदान करती है। पंचायती राज में महिलाओं के प्रतिनिधित्व ने महिलाओं की सोच को एक नई दिशा प्रदान की है, जिससे वे अपनी अलग पहचान बना पा रही हैं, और साथ ही इससे महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा मिल रहा है।

शोध के उद्देश्य

1. छत्तीसगढ़ की पंचायतों में महिलाओं की राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अध्ययन करना।
2. छत्तीसगढ़ की पंचायतों में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता का अध्ययन करना
3. छत्तीसगढ़ के पंचायतों में महिलाओं की राजनीतिक जागरुकता का अध्ययन करना ।
4. छत्तीसगढ़ के पंचायतों में महिला आरक्षण से महिलाओं के जीवन में आए परिवर्तन का अध्ययन करना।

शोध पद्धति : प्रस्तुत शोध पत्र में छत्तीसगढ़ की पंचायतों में महिलाओं के प्रतिनिधित्व का अध्ययन प्राथमिक समंकों पर आधारित है, जिसमें प्रतिचयन के प्रथम स्तर पर छत्तीसगढ़ के 28 जिलों में बिलासपुर जिले का चयन संभावनामूलक प्रतिचयन के अंतर्गत स्तरीयकृत निदर्शन प्रणाली से किया गया है। प्रतिचयन के द्वितीय स्तर पर असंभावनामूलक प्रतिचयन के अंतर्गत उधेश्यपूर्ण प्रतिचयन के आधार पर बिलासपुर जिले के बिल्हा विकासखंड के 10 महिला सरपंचों के ग्राम पंचायतों (बैमा, बरतोरी, बेलतरा, चकरभाठा, झलफा, कर्मा, मंगला, मोहरा, सरवानी, उरतुम) को चयनित किया गया है। उपर्युक्त चयनित ग्राम में ग्रामीण समाज की पूरी विशेषताएं पाई जाती हैं, और सभी ग्राम पंचायतों की भौगोलिक स्थिति, जनसंख्या, व्यवसाय लगभग समान है। इस तरह से चयन किया गया है, ताकि निष्कर्ष निकालते समय किसी भी प्रकार का पक्षपात न हो। इन ग्राम पंचायतों में महिला सरपंचों से प्रश्नावली के माध्यम से आयु, जाति, शैक्षणिक योग्यता, व्यवसाय, परिवारों का स्वरुप, वैवाहिक स्थिति, राजनीतिक पृष्ठभूमि विषयों पर उनसे बात करके जानकारी एकत्र की गई है। इस अध्ययन में मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों पद्धतियों का भी प्रयोग कर विश्लेषण किया गया है। तथ्य संकलन हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोतों का प्रयोग किया गया है। जहां प्राथमिक स्त्रोतों के लिए प्रश्नावली एवं साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग किया गया है, वहीं द्वितीयक स्त्रोतों के लिए पुस्तकों, शोध पत्रिकाओं, शोध ग्रंथों एवं इंटरनेट का उपयोग किया गया है।

विश्लेषण : गणतंत्र के रुप में उभरने के पश्चात् देश की शासन व्यवस्था को चलाने के लिए लोकतांत्रिक प्रणाली को स्वीकार किया गया है। जिसके लिए स्थानीय स्तर से राष्ट्रीय स्तर की संस्थाएं स्थापित की गई हैं। लोकतांत्रिक प्रणाली को मान्यता मिलने के कारण भारत के अधिकार एवं सत्ता पर किसी अभिप्राप्त वर्ग या किसी सीमित शासक वर्ग का एकाधिकार नहीं होता है। समाज के सभी वर्गों को शासन व्यवस्था में भाग लेने व प्रवेश के समान अवसर प्रदान किए गए हैं और संपूर्ण समाज को इस अधिकार का भागीदार बनाने का प्रयास किया गया है। भारतीय लोगों को राजनीतिक क्षेत्र के विभिन्न अधिकारों जैसे - मतदान का अधिकार, निर्वाचित होने का अधिकार प्रदान किया गया है। स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए पंचायतों में उनके लिए 33 प्रतिशत आरक्षण सुनिश्चित किया गया है, जिससे महिलाओं की राजनीतिक क्षेत्र में भागीदारी बढ़ सके।[13]

सारणी 1

महिला सरपंचों का आयु के आधार पर वर्गीकरण

आयु	प्रतिशत
18 - 30	20
31 -45	60
46 -60	20
60 से ऊपर	0

प्रस्तुत तालिका 1 से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह प्रदर्शित होता है, कि महिला सरपंचों की आयु संबधित पंचायत में सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन को प्रभावित करती हैं या नहीं। पूर्व में हुए अध्ययन एवं साहित्यिक समीक्षा के अनुसार, जिन ग्राम पंचायतों में कम आयु की महिला सरपंच होती है, वहां विकास का कार्य ज्यादा होता है, और वह ज्यादा सक्रिय होकर अपने ग्राम पंचायत में सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन करती हैं।

जबकि प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत यह ज्ञात हुआ कि 31 से अधिक आयु की महिला सरपंच भी अपने पंचायतों में बेहतर कार्य कर रहीं है, क्योंकि उनके पास अनुभव ज्यादा है एवं ग्राम पंचायत की राजनीति को बहुत समय से देख रही हैं और साथ ही अपने ग्राम पंचायतों में आने वाली सारी चुनौतियों का सामना कर चुकी हैं, अतः उनको पता है, कि अपने ग्राम पंचायत में कार्य बेहतर तरीके से कैसे कराया जा सकता हैं। प्रस्तुत सारणी से यह ज्ञात होता है, कि वर्तमान समय में पंचायती राज में चुनावी आरक्षण के बाद महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता बढ़ी है, जो कहीं न कहीं महिलाओं के सशक्तीकरण को बढ़ावा दे रहा है।

महिला सरपंचों का जातीय विवरण : बिल्हा विकासखंड में जनपद पंचायत के अंतर्गत ग्राम पंचायतों की संरचना ऐसी थी, कि जिसमें केवल अन्य पिछड़ा वर्ग के महिला सरपंचों का चयन किया गया क्योंकि अन्य जाति में महिला और पुरुष सरपंचों की संख्या कम थी, जिससे उनके सरपंचों का तुलनात्मक अध्ययन करना संभव नहीं था। स्वयं के द्वारा बनाए गए पैमाने में अन्य जाति के सरपंचों का उपयुक्त चयन नहीं हो पा रहा था। शोधकर्ता द्वारा शोध क्षेत्र के चयन से पहले मूल अध्ययन (Pilot Study) द्वारा यह अनुभव किया गया है, कि महिला सरपंचों की जातियां उनके पंचायतों में कार्य करने की शैली को किसी भी प्रकार से प्रभावित नहीं करती है, लेकिन साहित्यिक समीक्षा के अनुसार यह पाया गया कि पंचायती राज में सभी जाति के महिलाओं को आरक्षण ने समाज के पारंपरिक ढांचे में परिवर्तन किया है पंचायतों में आरक्षण के कारण ग्रामींण शक्ति ढांचे के पारंपरिक प्रतिनिधित्व कें स्वरुप में परिवर्तन आया है। महिलाओं के प्रवेश ने ग्रामीण ढंाचे में उच्चजाति के लोगों का नियंत्रण को भी ढीला कर दिया है। तथा कुछ सीमा तक निर्णय निर्माण को भी प्रभावित किया है।[9]

सारणी 2

महिला सरपंचों की शैक्षणिक योग्यता

शैक्षणिक योग्यता	प्रतिशत
8वीं पास	40
10वीं पास	20
12वीं पास	20
स्नातक	10
परास्नातक	10

प्रस्तुत सारणी 2 के अनुसार अध्ययन में पाया गया है, कि महिला सरपंचों का शैक्षणिक स्तर उनके ग्राम पंचायत के कार्य शैली को प्रभावित करता है, ज्यादा पढ़ी महिला सरपंच अपने ग्राम पंचायत में कम पढ़ी महिला सरपंच से बेहतर कार्य करती हैं, एवं अपने अधिकार के बारे में ज्यादा जानती हैं और उनका प्रयोग भी करती हैं। शोधकर्ता द्वारा जब महिला सरपंचों से प्रश्नावली के माध्यम से जानकारी ली गयी, तो यह यही प्रमाणित हुआ, कि जिन महिला सरपंचों की शैक्षणिक योग्यता ज्यादा है, वे अपने ग्राम पंचायत में कम पढ़ी महिला सरपंचों से अच्छा कार्य कर रही हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि शैक्षणिक योग्यता का कार्य शैली में प्रभाव पड़ता है। पंचायती राज में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता ने महिलाओं की शैक्षणिक योग्यता को बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जो एक सकारात्मक स्थिति की ओर इंगित करता है कि आने वाले कुछ वर्षों के बाद महिला सरपंचों की शैक्षणिक योग्यता का प्रतिशत बढ़ेगा जिससे वो सरकार द्वारा ग्राम पंचायतों में लायी जा रही सरकारी योजनाओं के बारे में उपयुक्त जानकारी एवं उनका क्रियान्वयन बेहतर तरीके से कर पायेगी।

महिला सरपंचों के पति के व्यवसाय : महिला सरपंचों के पति का व्यवसाय पूरी तरह से कृषि पर निर्भर है, इसलिए महिला सरपंच अपने पति पर पूरी तरह निर्भर है, जिसका प्रभाव हमें महिला सरपंचों के ग्राम पंचायत के कार्यों में उनके पति के हस्तक्षेप के माध्यम से देख सकते हैं। शोधकर्ता के द्वारा जब महिला सरपंचों से प्रश्नावली के माध्यम से जानकारी ली गयी तो यह पाया गया कि अधिकतर महिला सरपंचों के ग्राम पंचायतों में कार्यों की पूरी जानकारी उनके पति को अधिक थी, जबकि महिला सरपंचों में जानकारी का अभाव था। कई महिला सरपंचों ने यह भी बताया कि उनका ग्राम पंचायत संबंधी पूरा कार्य उनके पति देखते हैं। वे केवल हस्ताक्षर करने का काम करती हैं, जो यह दर्शाता है कि महिला सरपंचों का व्यवसाय उनके पंचायत संबंधी कार्य को प्रभावित करता है। क्योंकि ग्रामीण इलाकों में महिलाओं का ज्यादा समय कृषि कार्य करने में चला जाता है, जिस कारण महिला सरपंच द्वारा अपने ग्राम पंचायतों के कार्यों में पूर्णतः भाग नहीं ले पाती हैं।

महिला सरपंचों के धर्म के आधार पर वर्गीकरण : सभी महिला सरपंच हिन्दू धर्म से संबंधित है। अभी तक के

पंचायती राज संबंधी अध्ययन में धर्म के आधार पर पंचायती राज में महिलाओं की राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अध्ययन नहीं हुआ है एवं किसी भी धर्म के राजनीतिक प्रतिनिधित्व का प्रभाव पंचायती राज में नहीं देखा गया है।

सारणी 3

महिला सरपंचों के परिवारों का स्वरुप

परिवारों का स्वरुप	प्रतिशत
एकाकी	10
संयुक्त	90

प्रस्तुत सारणी 3 के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है, कि महिला सरपंचों के परिवारों का संयुक्त होना उनके ग्राम पंचायत संबंधी कार्यों में बाधा पहुंचाता है। शोधकर्ता के द्वारा जब महिला सरपंचों से जानकारी ली गयी कि महिला सरपंचों का बहुत ज्यादा समय अपने पारिवारिक कार्यों में चला जाता है, और शेष समय वह अपना निजी कार्य करती है जिस कारण सक्रिय रुप से वे पंचायत के कामों में अपना समय नहीं दे पाती है जिसका लाभ उनके पति उठाते हैं, और अपने तरीके से ग्राम पंचायतों का कार्य करते हैं, महिला सरपंच तो केवल प्रतिनिधि के रुप में कार्य कर पाती हैं। लेकिन फिर भी पंचायती राज में महिलाओं के पंचायत में प्रतिनिधित्व ने महिलाओं की राजनीतिक रुचि में आंशिक वृद्धि की है, जो दर्शाता है कि महिला सरपंच अपने ग्राम पंचायतों के कार्यों का क्रियान्वयन बेहतर तरीके से नहीं कर पा रही हैं लेकिन आने वाले कुछ वर्षों के बाद सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिलेगा।

महिला सरपंचों की वैवाहिक स्थिति : प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत सभी 100 प्रतिशत महिला सरपंच विवाहित हैं, जो मुख्यतः ग्रामीण परिवेश में संयुक्त परिवार का महत्व बताता है जिसके कारण परिवार में हो रहे विवाद को घर में ही सुलझा लिया जाता है जिससे तलाकशुदा एवं बहिष्कृत होने का खतरा कम हो जाता है, जिससे महिला सरपंच अपनी निजी समस्याओं से दूर होकर अपना ज्यादातर समय ग्राम पंचायतों विकास के कार्यों में लगाती हैं। जो किसी भी समाज के लिए एक स्वस्थ वातवरण की द्योतक होती है।

सारणी 4

महिला सरपंचों की राजनीतिक पृष्ठभूमि

राजनीतिक पृष्ठभूमि	प्रतिशत
परिवार से संबंधित	10
कोई दूर का रिश्तेदार	30
कोई नहीं	60

प्रस्तुत सारणी 4 से स्पष्ट होता है कि महिलाओं के सरपंच बनने में वे अपने किसी न किसी राजनीतिक पृष्ठभूमि से प्रभावित हुई हैं। एक महिला सरपंच के पिता पूर्व में ग्राम पंचायत में सरपंच रह चुके हैं, जबकि तीन महिला सरपंचों की राजनीति उनके ससुराल से चल रही है, जिसमें ग्राम पंचायत के कार्यों का निर्वहन उसके देवर एवं बेटे द्वारा किया जाता है। शेष 6 महिला सरपंचों को पहली बार आरक्षण के कारण मौका मिला है और उनका पूरा कार्य उनके एवं उनके पति द्वारा किया जाता है। हालांकि इसमें महिला सरपंचों को हर महीने ग्राम पंचायत बैठक की अध्यक्षता का अवसर मिलता है और समय-समय पर बड़े सरकारी कर्मचारियों के दौरे के दौरान उनको गांव का प्रतिनिधित्व करने का अवसर प्राप्त होता है, जिससे उनके अंदर की नेतृत्व क्षमता का विकास हुआ है।

निष्कर्ष :- लोकतांत्रिक संस्थाओं में ग्राम स्तर पर महिला प्रतिनिधित्व बढ़ा है। महिलाओं की सहभागिता 73वें संविधान संशोधन का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम है। परिणामस्वरुप आज लाखों महिलाएं पंचायत प्रतिनिधि के रुप में अपनी भूमिका निभा रहीं हैं जिससे ग्रामीण स्वशासन में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता बढ़ी है, जिसके फलस्वरुप महिला नेतृत्व का विकास हुआ है। धरातलीय आंकड़ों और चुनावी रुझानों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि दस से पंद्रह वर्षों के बाद महिला प्रतिनिधित्व पंचायती राज संस्थाओं में पूरे देश के पचास प्रतिशत से अधिक सीटों पर होगा। भारत में महिलाओं की निष्ठा और नेतृत्व क्षमताओं को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता मिली है, जो महिला नेतृत्व के लिए आशा की एक किरण है।[13] प्रस्तुत शोध अध्ययन में यह पाया गया है, कि सरकार द्वारा महिला सशक्तीकरण के लिए बहुत सारे प्रयास एवं सकारात्मक कानून बनाए गयें हैं किन्तु मात्र कानून बनाने से महिलाओं का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सशक्तीकरण नहीं हो सकता। इसलिए लचीली एवं

प्रभावी रणनीतियों को अपनाने की आवश्यकता है। इसके लिए हमें यह बात आत्मसात एवं अंगीकार करनी होगी कि महिलाओं के सशक्तीकरण की दिशा में किए गए सभी प्रयास पुरुष विरोधी नहीं है, वरन् यह विकास का अनिवार्य घटक हैं। यह प्रयास महिलाओं के साथ-साथ सम्पूर्ण समाज के सशक्तीकरण के लिए आवश्यक हैं क्योंकि जब तक आधी आबादी का सशक्तीकरण नहीं होगा तब तक पूरे समाज का सशक्तीकरण सम्भव नहीं है। पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी देश के विकास में संतुलन एवं समावेशी विकास को बढ़ावा देगी जिससे अंततः भारतीय लोकतंत्र को मजबूती मिलेगी। महिलाओं का सभी स्तरों पर निर्णय लेने तथा क्रियान्वयन में सक्रिय सहभागिता से समता एवं न्यायपूर्ण विकास की प्राप्ति हुई है। उनमें अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत बढ़ी है इनके व्यक्तित्व में परिवर्तन आया है और आत्मविश्वास बढ़ा है तथा रचनात्मक कार्यक्रमों में इनकी भागीदारी बढ़ी है। महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण जीवन के सभी क्षेत्रों में सतत् विकास पारदर्शी तथा उत्तरदायी सरकार एवं देश के संतुलित विकास को बढ़ावा देगा, जिससे अंततः भारतीय लोकतंत्र में विकेंन्द्रीयकरण की प्रक्रिया को मजबूती मिलेगी। ग्रामीण महिलाओं की सभी स्तरों पर निर्णय एवं नीति निर्माण तथा क्रियान्वयन में सक्रिय सहभागिता के बिना समानता, सामाजिक न्याय एवं लोकतांत्रिक आदर्शों की प्राप्ति नहीं होगी। कानून संरचनात्मक असमानता को दूर नहीं कर सकते, लेकिन वे निश्चित रुप से सामाजिक परिवर्तन में सहायता कर सकते हैं। हमें समतामूलक और न्यायसंगत समाज को प्राप्त करने के लिए अहिंसा और गैर पूर्वाग्रह की संस्कृति पर जागरुकता लाने की आवश्यकता है। हमें प्रणालीगत सुधार करने की आवश्यकता है न कि व्यक्तिगत मामलों से अपनी सफलता को सीमित करने की। राजनीतिक भागीदारी न केवल महिलाओं के विकास और सशक्तीकरण का प्रतीक है बल्कि यह आगे भी जागरुकता पैदा करती है और बड़े पैमाने पर उनके और सामाजिक हितों को बढ़ावा देने के लिए राजनीतिक क्षेत्र का एक हिस्सा होने के लिए अन्य महिलाओं को प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार पंचायती राज में महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व नें मौन क्रांति के रुप में ग्रामीण महिला सशक्तीकरण को विभिन्न तरीके से बढ़ावा दिया है। इसने अब पुरुष मानसिकता को भी बदल दिया है, समय के साथ महिलाएं राजनीतिक कौशल प्राप्त कर रही हैं। पंचायती राज में महिलाओं की वर्तमान में सहभागिता देखते हुए यह कहा जा सकता है, कि आने वाले समय में महिलाओं की स्थिति में बेहतर परिणाम तभी प्राप्त होंगे, जब दृढ़ प्रतिज्ञ महिलाएं स्वयं अपने आपको सशक्त बनाने का प्रयास करेंगी और इसमें उन्हें समाज के प्रबुद्ध वर्ग का प्रोत्साहन मिलेगा।

संदर्भ

1. कोठारी रजनी, 'राजनीति की किताब', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ. 107
2. आर्या साधना, मेनन निवेदिता, लोकनीता जिनी, 'नारीवादी राजनीतिः संघर्ष एवं मुद्दे', हिंदी माध्यम कार्यान्यवन निर्देशालय, नई दिल्ली 2001, पृ. 344-345
3. सिंह निशांत, 'महिला राजनीति और आरक्षण', ओमेगा पब्लिकेशन, दिल्ली, 2016, पृ. 98-99
4. पाण्डेय जितेन्द्र, 'महिला सशक्तीकरण एवं पंचायती राज', राधा कमल मुखर्जीः चिंतन परंपरा, वर्ष 21 अंक 2, जुलाई-दिसम्बर 2019, पृ. 12
5. महिपाल, 'पंचायत में महिलाएंः चुनौतियां एवं संभावनाएं', राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, 2017 पृ. 181
6. शर्मा राकेश, 'पंचायती राजः अब और तब' जान्हवी प्रकाशन, दिल्ली, 2016
7. महिपाल, पूर्वोक्त, पृ. 40
8. चन्देल नरेन्द्र कुमार, 'पंचायती राज और महिला सहभागिता', अविष्कार पब्लिशर्स, राजस्थान, 2016
9. बंसल वंदना, 'पंचायती राज में महिला भागीदारी', कल्पाज पब्लिकेशन, दिल्ली, 2003
10. Thakur Minni, 'Women Empowerment Through Panchayati Raj Institutions', Concept Publishing Company, New Delhi , 2013
11. Singh Saumya, 'Women's Participation in Grass Root Level of Panchayati Raj', New Royal Book Company, Lucknow, 2013, pp. 35
12 बिष्ट निर्दोषिता, 'महिला सशक्तीकरण तथा महिलाओं की राजनीतिक सहभागिताः एक समाजशास्त्रीय अध्ययन' राधा कमल मुखर्जीः चिंतन परंपरा, वर्ष 23 अंक 2, जुलाई-दिसम्बर 2021, पृ. 173
13. मैथ्यु जॉर्ज, 'भारत में पंचायती राजः परिप्रेक्ष्य और अनुभव', अरुणोदय प्रकाशन, दिल्ली, 2003, पृ. 80

भारत चीन संबंध : संघर्ष के प्रमुख द्विपक्षीय मुद्दे

❑ बृजेश चंद्र श्रीवास्तव

सूचक शब्द : द्विपक्षीय मुद्‌दे, सीमा विवाद, जल विवाद।

यह शोध पत्र उन द्विपक्षीय मुद्दों पर केंद्रित है जो दो एशियाई दिग्गजों भारत और चीन के शांतिपूर्ण उदय के लिए दोनों राज्यों के मध्य संबंधों में बाधा डालते हैं और विवाद की स्थिति उत्पन्न करते हैं। उदाहरण के लिए सीमा विवाद, जल विवाद, तिब्बत में निर्वासित सरकार का मुद्दा आदि। सीमा विवाद में ऐतिहासिक मैकमोहन रेखा की विवादित स्थिति को बताया गया है व सीमा विवाद को सवेंदनशील मुद्दा बताते हुए इसके तत्काल समाधान की आवश्यकता बताई गई है। जल विवाद में चीन से भारत की ओर बहने वाली नदियों और उससे होने वाले विवाद की व्याख्या विस्तारपूर्वक की गई है। तिब्बत में निर्वासित सरकार के मुद्दे पर दलाई लामा और तिब्बती शरणार्थियों की स्थिति के बारे में और चीन के लिए तिब्बत के महत्व को इंगित किया गया है। इस शोध पत्र में यह बताने का प्रयास किया गया है कि चीन व भारत के वर्तमान सम्बन्ध उन्हें प्रतिद्वंद्वियों या भागीदारों के रूप में बातचीत करने के लिए किस प्रकार प्रेरित करते हैं।

भारत और चीन के मध्य वर्तमान संबंधों में अत्यंत अनिश्चितता और अस्पष्टता है क्योंकि दोनों देशों की पारस्परिक ऐतिहासिक घटनाओं के कारण इनमें संदेह और अविश्वास के भाव निहित हैं जिसके कारण इन्होंने क्षेत्रीय शक्तियों के रूप में उभरने के तरीकों के विभिन्न दृष्टिकोणों को अपनाया है। भारत और चीन, दुनिया के दो सबसे बड़े विकासशील देश, विशेष रूप से घरेलू विकास के क्षेत्र में कई हितों को आपस में साझा करते हैं। वे तीव्र गति से आर्थिक विकास की अवधि का अनुभव कर रहे हैं। हालांकि, दोनों राज्य वैश्विक अर्थव्यवस्था पर अपने नए गहन प्रभाव को देखते हुए दुनिया में अपनी भूमिका को परिभाषित करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। दोनों एक बहु-ध्रुवीय दुनिया की धारणा को बढ़ावा देते हैं जिसमें वे संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ बड़े खिलाड़ियों के रूप में कार्य कर सकते हैं। भारत में चीन के रणनीतिक हित एक शांतिपूर्ण अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण को बनाए रखने की इच्छा से हैं, जो सभी राज्यों और विशेष रूप से पड़ोसियों(भारत)के साथ दोस्ताना संबंध बनाने, चीन विरोधी ब्लॉक्स के गठन की दिशा में किसी भी प्रयास को रोकने और अंततः अपने आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिए नए बाजार, निवेश के अवसर और संसाधनों को विकसित करते हैं। चीन एक सुसंगत तरीके से अपनी घरेलू समस्याओं को हल करना चाहता है। इन सभी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, विवादित द्विपक्षीय मुद्दों के बावजूद चीन के लिए भारत के साथ दोस्ताना संबंध होना आवश्यक है। दूसरी तरफ, आंतरिक विकास पर भारत का अपना ध्यान चीन के साथ सकारात्मक संबंध पैदा करने के लिए प्रोत्साहित करता है। हालांकि, चीन के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाने के लिए भारत के भीतर वातावरण भारत-चीन संबंधों की ऐतिहासिक विरासत के कारण कुछ हद तक मिश्रित रहता है। जहाँ कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (मार्क्सवादी) जैसे वामपंथी पक्षों ने हमेशा चीन के साथ मित्रवत् संबंध माना है, वहीं दक्षिणपंथी दलों और सुरक्षा एजेंसियों के भीतर कुछ लोग चीन को एक प्रमुख सुरक्षा खतरे के रूप में देखते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में, यहां उन क्षेत्रों को बताना प्रासंगिक होगा जिसमें दोनों पक्ष एक-दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं और जो उनके बीच अविश्वास, संदेह और गलतफहमी का एक प्रमुख स्रोत हैं।[1] भारत और चीन के मध्य द्विपक्षीय मुद्दों में कुछ बाह्य कारक हैं जो अभी भी इनके संबंधों को प्रभावित करते हैं, उदाहरण के लिए, सीमा और तिब्बत के मुद्दों को अधिक महत्व देना और हाल ही में, चीन और भारत के बीच द्विपक्षीय संबंधों में जल का मुद्दा भी सामने आया है।[2] ये द्विपक्षीय मुद्दे न केवल अपने वर्तमान संबंधों पर प्रभाव डालेंगे बल्कि अपने भविष्य के संबंधों पर भी नकारात्मक प्रभाव डालेंगे यह इस क्षेत्र में और उसके बाहर शांति और स्थिरता की प्रक्रिया को भी प्रभावित करेगा।

शोध प्रविधि : प्रस्तुत शोध पत्र गुणात्मक शोध पद्धति पर

❑ शोध अध्येता, राजनीति विज्ञान विभाग, हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

आधारित है। इस शोध पत्र में तुलनात्मक पद्धति के साथ ही अंतरवस्तु विश्लेषण (Content Analysis Method) पद्धति का प्रयोग किया गया है। शोध पत्र में व्याख्यात्मक व विश्लेष्णात्मक प्रणाली का प्रयोग किया गया है।

शोध के उद्देश्य :

1. भारत और चीन के मध्य उभरती क्षेत्रीय व वैश्विक प्रतिद्वंदिता का विश्लेषण करना।
2. भारत और चीन के मध्य प्रमुख परम्परागत और गैर परम्परागत सुरक्षा मुद्दों की व्याख्या करना।

भारत और चीन संबंधों में प्रमुख चुनौतियांः

भारत और चीन के मध्य सम्बन्धों में अनेक चुनौतियां विद्यमान हैं, जिनमे प्रमुख चुनौतियां निम्न हैंः

1. दोनों देशों के मध्य मुख्य चुनौती सीमा का मुद्दा है, जिससे समय समय पर दोनों देशों के मध्य विवाद देखा जा सकता है, जैसे डोकलाम विवाद, अरुणांचल प्रदेश के विभिन्न स्थानों को लेकर विवाद आदि ।
2. भारत और चीन के मामले में, जल का मुद्दा दो राज्यों के मध्य प्रमुख चुनौती बनता जा रहा है।कई रणनीतिक विचारक तर्क दे रहे हैं कि भविष्य में जल से संबंधित विवाद दोनों देशों के बीच संघर्ष का प्रमुख स्रोत होगा।
3. तिब्बत ,भारत और चीन के मध्य एक प्रमुख चुनौती है क्योंकि दलाई लामा को लेकर चीन भारत के प्रति आशंकित रहता और तिब्बत से निकलने वाली नदियों के जल के प्रयोग को लेकर भारत चीन के प्रति संदेहपूर्ण नजरिया अपनाता है।

प्रमुख संघर्ष के मुद्दे और चुनौतियां

सीमा विवाद : दोनों देशों के मध्य मुख्य समस्या सीमा का मुद्दा है, जो ऐतिहासिक है। सीमा का मुद्दा मैकमोहन रेखा की विवादित स्थिति में निहित है, जो भारत और तिब्बत के बीच की सीमा को परिभाषित करता है। भारत इस समझौते को अपने क्षेत्रीय दावे के आधार के रूप में मान्यता देता है, जबकि चीन ने 1914 के शिमला सम्मेलन में खींची गई मैकमोहन रेखा की वैधता पर आपत्ति जताई क्योंकि चीन का मानना है कि वह शिमला समझौते का पक्षकार नहीं था, इसलिए वह शिमला समझौते द्वारा सीमांकित सीमा को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है। भारत का दावा है कि 1963 के चीन-पाकिस्तान सीमा समझौते के अंतर्गत पाकिस्तान द्वारा चीन को सौंपे गए 5180 वर्ग किलोमीटर सहित जम्मू और कश्मीर के 43,180 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर चीन का कब्जा है। दूसरी ओर चीन अरुणाचल प्रदेश में भारत के कब्जे वाले 90,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर दावा करता है। चीन के लिए अक्साई चिन के महत्व के कारण दोनों पक्षों के बीच सीमा विवाद को हल करने में उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई है क्योंकि यह तिब्बत और चीन के झिंजियांग प्रांत और भारत के अरुणाचल प्रदेश के बीच की मुख्य कड़ी है जो भारत के उत्तर-पूर्वी में विद्रोह प्रभावित क्षेत्र में स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण है।

1962 के युद्ध के बाद कई दशकों तक चीन और भारत के बीच संबंध शत्रुतापूर्ण रहे। अस्सी के दशक के उत्तरार्ध (फरवरी 1987) में भारत द्वारा अरुणाचल प्रदेश को राज्य का दर्जा दिए जाने के बाद चीन इसे दक्षिण तिब्बत का हिस्सा होने का दावा करता है, जिसके कारण द्विपक्षीय संबंधों पर शत्रुता इस हद तक बढ़ गई कि एक और सीमा युद्ध होने की आशंका होने लगी।चीन ने अरुणाचल प्रदेश के आबादी वाले क्षेत्रों में विशेष रूप से ट्वांग में प्रमुख क्षेत्रीय रियायतों का दावा किया क्योंकि चीनी दावा करते हैं कि यह तिब्बती बौद्ध धर्म का केंद्र है, क्योंकि छठे दलाई लामा का जन्म वहीं हुआ था। उसी तरह, जैसे चीन धार्मिक आधार पर अरुणाचल प्रदेश की वापसी चाहता है। भारत तिब्बत में पवित्र कैलाश मानसरोवर की वापसी की मांग करता है, क्योंकि यह हिंदू धर्म से जुड़ा एक पवित्र स्थान है।[3] हालांकि, समग्र सीमा संबंधों ने 1993 और 1996 में दोनों राज्यों के बीच सीमा समझौते के बाद सुधार करना शुरू किया। तब से, दोनों पक्ष सीमा मुद्दे पर काम करने के लिए सहमत हुए हैं और हल निकाला हैं कि सीमा मुद्दे पर किसी भी असहमति को समग्र द्विपक्षीय संबंधों को प्रभावित करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। दोनों पक्षों ने सीमा के साथ आत्मविश्वास निर्माण उपायों (सीबीएमएस) का भी पालन किया है जिसमें पारस्परिक सैनिक कटौती, स्थानीय सैन्य कमांडरों की नियमित बैठकें और अन्य आत्मविश्वास के उपाय सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त, 2003 में सीमा विवादों के हल के लिए एक अतिरिक्त कदम उठाया गया था जब दोनों पक्षों ने सीमा मुद्दे को हल करने के लिए विशेष प्रतिनिधियों को नियुक्त किया था।[4] चूंकि, तब विशेष प्रतिनिधियों ने सीमा मुद्दे को हल करने के लिए वार्ता की श्रृंखला आयोजित की, लेकिन अब तक कोई भी सफलता हासिल नहीं की गई

है। यहां मुख्य कारण यह है कि अस्थिर चीन को अपने इरादे के बारे में अनिश्चितता और अपनी क्षमताओं के बारे में संदेह में रखने पर भारत के अच्छे व्यवहार को सुनिश्चित करने के लिए रणनीतिक लाभ प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, एक अस्थिर सीमा समकालीन चीनी हितों के लिए भी उपयुक्त है, क्योंकि पश्चिमी क्षेत्र में चीन के दावें कश्मीर पर भारत-पाकिस्तान विवाद से जटिल है, और चीन, भारत को चीन और पाकिस्तान से दो मोर्चों पर रणनीतिक दबाव में सम्मिलित करना चाहता है।[5] साथ ही इसे यहां ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यद्यपि भारत ने चीन के एक हिस्से के रूप में तिब्बत को लोकप्रिय स्तर पर मान्यता दी है, लेकिन भारत के भीतर तिब्बती कारण के लिए महत्वपूर्ण सहानुभूति बनी हुई है। सुरक्षा खतरों और राष्ट्रीय हितों के कारण, दोनों पक्ष विवादित क्षेत्र पर अपने दावों के साथ समझौता करने को तैयार नहीं है। हालांकि, इसे एक बार फिर से दोहराया जा सकता है कि भारत के दृष्टिकोण से, 'भारत के संबंधों में तिब्बत एक महत्वपूर्ण मुद्दा नहीं है क्योंकि भारत सरकार न तो दुस्त्साहक है और न ही तिब्बत के राजनीतिक कारणों को उकसाने वाली है।[6] भारत के लिए, सीमा मुद्दे को हल करना तिब्बत की स्थिति से अधिक महत्वपूर्ण है। यही कारण है कि 2003 में प्रधान मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी की चीन की यात्रा के दौरान भारत ने औपचारिक रूप से तिब्बत को चीन के एक अभिन्न अंग के रूप में मान्यता दी थी। हालांकि हाल के वर्षों में चीन ने भारत के साथ सीमा मुद्दे की दिशा में अधिक आक्रामक नीति दिखायी है। मई 2007 में, चीनी सरकार ने एक भारतीय अधिकारी को चीन जाने के लिए वीजा से केवल इसलिए इंकार कर दिया कि वह अरुणाचल प्रदेश से थे जिसे चीन अपना क्षेत्र मानता हैं। इसके अतिरिक्त, पीपल्स लिबरेशन सेना (पीएलए) की एलएसी पर अतिक्रमणों की मीडिया रिपोर्ट आती रही है। हाल में विवादित सीमाओं पर आक्रामक नीति में वृद्धि हुई है जिससे चीन-भारत सीमा वार्ता में तेजी से शिथिलता आई हैं और सीमावर्ती मुद्दे पर 'मिनी-शीत युद्ध' प्रमुख रूप से दिखाई दे रहा था। मार्च, 2009 में चीन ने अरुणाचल प्रदेश के विकास के लिए नियत एशियाई विकास बैंक (एडीबी) से भारत को 2.9 अरब डॉलर के ऋण को अवरुद्ध करने का प्रयास किया।[7] जून, 2007 में चीन ने अरुणाचल प्रदेश पर दावा जारी रखा और उसके विदेश मंत्री ने फिर से जोर दिया कि यहां भारतीयों की उपस्थिति चीन को अरुणाचल प्रदेश का दावा करने से नहीं रोकती है। दूसरी तरफ, भारत अरुणाचल प्रदेश को भारतीय संघ के एक अभिन्न अंग के रूप में मानता है जो 1987 में संवैधानिक रूप से और अरुणाचल प्रदेश के लोगों की सहमति के अनुसार भारतीय संघ के साथ विलय हो गया है इसलिए, भारत अरुणाचल प्रदेश पर अपनी स्थिति पर दृढ़ है और यह संभावना नहीं है कि भारत इस मुद्दे पर चीन से कोई भी समझौता करेगा।

हाल ही में भारत के गृह मंत्री अमित शाह के अरुणाचल दौरे पर चीन ने आपत्ति दर्ज की जिसपर विदेश मंत्रालय ने कहा कि अरुणाचल प्रदेश भारत का अभिन्न और अविभाज्य हिस्सा था, है और हमेशा रहेगा। यह बयान गृह मंत्री अमित शाह की राज्य की यात्रा पर चीन द्वारा आपत्ति जताने के बाद आया है।मंत्रालय ने कहा, 'इस तरह की यात्राओं पर आपत्ति करना उचित नहीं है और इससे उपर्युक्त वास्तविकता नहीं बदलेगी।'

इस प्रकार, चीन और भारत के बीच सीमा मुद्दा सवेंदनशील मुद्दों में से एक है और इसके तत्काल समाधान की आवश्यकता है ताकि दुनिया के इस हिस्से में कुछ लंबे समय तक चलने वाली शांति लाई जा सके।

चीन और भारत के बीच जल का मुद्दा : हर काल में, जल को एक मूल्यवान वस्तु माना जाता था और यह मानव अस्तित्व के लिए आवश्यक है। इसीलिए, इसका आधिपत्य संसाधन के रूप में राष्ट्रों को शक्ति प्रदान करता है। भू-राजनीतिक यांत्रिकी में अनोखापन और अधिकार जल को एक रणनीतिक वस्तु बनाता है और एक रणनीतिक संपत्ति के रूप में इसकी भूमिका को अधिक अनदेखा नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, इस संदर्भ में देखा जाए तो जल समकालीन विश्व के संदर्भ में विवाद और सहयोग दोनों का स्रोत बन सकता है।

चीन और भारत के मामले में, जल का मुद्दा दो राज्यों के बीच चिंता का प्रमुख क्षेत्र बनता जा रहा है। वास्तव में, कई रणनीतिक विचारक तर्क दे रहे हैं कि भविष्य में जल से संबंधित विवाद दोनों देशों के बीच संघर्ष का प्रमुख स्रोत होगा। बड़े बांध बनाने और नदियों के पानी को अपने फायदे के लिए मोड़ने की चीन की योजना से भारत में असंतोष है। चूँकि चार नदियाँ हैं जो चीन

से भारत में बहती हैं, दोनों देशों को जल बंटवारे और इन नदियों से होने वाले अन्य लाभों के बारे में बेहतर समझ होनी चाहिए। हालाँकि, इन नदियों पर चीन का सामरिक लाभ उसके लिए कई अन्य मुद्दों पर भारत को प्रतिसंतुलित करना संभव बनाता है। दोनों देशों के बीच जल के मुद्दों का गहरा विश्लेषण उसके लिए बेहद प्रासंगिक है।

चीन से भारत की ओर बहने वाली नदियाँ

तिब्बत के नागरी क्षेत्र में कैलाश पर्वत की चार दिशाओं से भारतीय उपमहाद्वीप में चार नदियाँ उतरती हैं।[8]

1. 'तकोक खबाब' कैलाश पर्वत के पूर्व में उत्पन्न होती है और नागरी के ऊपरी क्षेत्र से नीचे त्सांग की घाटी तक बहती है, जहां यह यारलुंग डागपो के माध्यम से गिरने वाली मध्य तिब्बत की किइचु नदी में मिल जाती है। इसके बाद यह नामचांग बरवे पर्वत के दाईं ओर हस्टैंग में बहती है और भारत के पूर्वी क्षेत्र से बहती हुई ब्रह्मपुत्र बन जाती है। यह फिर बांग्लादेश में और अंत में बंगाल की खाड़ी में उतरती है।
2. 'मा चा खबाब' कैलाश पर्वत के उत्तर में उत्पन्न होती है और पुरंग के क्षेत्र से नेपाल में और फिर उत्तर प्रदेश राज्य के माध्यम से भारत में बहती है। यह गंगा में विलीन हो जाती है और बंगाल की खाड़ी में समाप्त हो जाती है।
3. 'लंगुचेन खबाब' कैलाश पर्वत के उत्तर में उत्पन्न होती है और नागरी क्षेत्र के धापा थोडिंग से होकर बहती है और हिमाचल प्रदेश में रामपुर और कन्नूर घाटी से होते हुए सतलज नदी बन जाती है और फिर पंजाब में पाकिस्तान से होते हुए अरब महासागर में बह जाती है।
4. 'सेंगे खबाब' कैलाश के पश्चिम में उत्पन्न होती है और नगरी गार से होकर बहती है और फिर लद्दाख, कश्मीर और फिर पाकिस्तान से होते हुए अंत में अरब महासागर में बहती हुई सिंधु बन जाती है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, तिब्बत में विशाल जल संसाधन चीन की तिब्बत नीति का एक महत्वपूर्ण कारक है। इसके अलावा, तिब्बत पर चीन की क्षेत्रीय स्थिति का भारत के साथ वर्तमान और भविष्य के जल मुद्दों पर महत्वपूर्ण प्रभाव है, जो कि चीन की तुलना में एक निचला नदी तट है। जल संसाधनों पर चीन का यह रणनीतिक लाभ वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलएसी) और चीन के अलग-अलग पदों के साथ जुड़ा हुआ है।

उन क्षेत्रों पर दावा जो भारत के हिस्से हैं, दोनों के बीच जल के मुद्दे को और जटिल करते हैं। हालाँकि, अधिक से अधिक जटिल समस्या यह है कि चीन व तिब्बत के बीच जल संसाधनों से संबंधित कोई समझौता नहीं है। तिब्बत से भारत में बहने वाली नदियों के ऊपरी क्षेत्रों में वर्तमान या प्रस्तावित जल संबंधी विकास और परियोजनाओं पर कोई विश्वसनीय जानकारी नहीं है।

भारत निचला नदी तट होने के कारण, यारलुंग त्संगपो पर नियोजित किसी भी बड़ी भंडारण परियोजना के लिए असुरक्षित होगा। दोनों देशों के बीच राजनीतिक स्थिति के कारण, यह कल्पना करना कठिन है कि चीन बिजली घरों से फिर से विनियमित प्रवाह को तुरंत नदी में प्रवाहित करके एक जिम्मेदार ऊपरी नदी तट की भूमिका निभा रहा है। चीन की उपभोग आवश्यकताओं और जल की लंबी दूरी के हस्तांतरण से निस्संदेह न केवल भारत बल्कि बांग्लादेश के हितों को भी नुकसान होगा।[9] 1997 में संयुक्त राष्ट्र महासभा में अंतर्राष्ट्रीय जल पाठ्यक्रमों के गैर-नौवहन संबंधी उपयोगों के कानून के विरूद्ध चीन ने मत किया है। बाढ़ नियंत्रण के लिए हाइड्रोलॉजिकल डेटा साझा करने पर हाल के दिनों में भारत और चीन के समझौते के बावजूद, चीनी सरकार इसे साझा करने में सुसंगत नहीं हैं। ब्रह्मपुत्र पर एक बांध सहित तिब्बत में कई जल परियोजनाओं के निर्माण के लिए, चीनी वैज्ञानिकों ने हाल ही में सीमा पार तिब्बती नदियों का एक व्यापक उपग्रह अध्ययन पूरा किया है, जो उनके जल निकासी घाटियों की लंबाई को मापने के अलावा उनके सटीक स्रोतों का निर्धारण पूरा कर चुका है। ब्रह्मपुत्र के मार्ग का मानचित्रण करने के अलावा, चाइनीज एकेडमी ऑफ साइंसेज (CAS) के शोधकर्ताओं ने सिंधु के प्रवाह के बारे में भी विवरण एकत्र किया, जो भारत और पाकिस्तान से होकर बहती है और इसके साथ ही साल्वीन और इरावदी नदियाँ, जो बर्मा से होकर बहती हैं इनका भी विवरण एकत्र किया।[10]

तिब्बत में निर्वासित सरकार का मुद्दा : तिब्बत का मुद्दा अभी भी चीन की कूटनीति के लिए एक संवेदनशील और जटिल मुद्दा है। यहाँ भारत की विशेष भूमिका और चीन के लिए तिब्बत के महत्व को इंगित करते हुए

चीन द्वारा तिब्बत की 'मुक्ति' का एक संक्षिप्त विवरण प्रदान किया गया है। वर्तमान दौर में चीन, तिब्बत मुद्दे पर भारत के दृष्टिकोण से संतुष्ट नहीं हैं, विशेष रूप से दलाई लामा और निर्वासित सरकार के आवास से। हालाँकि भारतीय पक्ष ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि तिब्बत चीन का हिस्सा है और कहा है कि दलाई लामा भारत में राजनीतिक गतिविधियों को अंजाम नहीं दे सकते हैं, बीजिंग भारत की तिब्बती नीति के प्रति अत्यधिक शंकालु है, और आलोचना करता है कि भारत तिब्बत पर चीनी संप्रभुता को मान्यता देने हेतु बहुत अनिच्छुक रहा है। दूसरी ओर, भारत ने तिब्बत मुद्दे से निपटने में सतर्क रुख अपनाया है और 'तिब्बत कार्ड' खेलने को लेकर दुविधा का सामना कर रहा है।

निर्वासन में तिब्बत के केंद्रीय प्रशासन (सीटीए) के अध्यक्ष लोबसांग सांगे के अनुसार भारत 'विस्तारवादी' चीन को रोकने में एक सक्रिय और प्रमुख भूमिका निभाने और तिब्बत के मुद्दे को हल करने में मदद करने का कार्य कर सकता है। उनके अनुसार, इसी 'विस्तारवादी' नीति के कारण ही चीन अब लद्दाख की तरफ बढ़ने लगा है। सांगे ने कहा कि पीएलए द्वारा सैन्य आक्रामकता इस क्षेत्र में पहली बार नहीं है और अंतिम बार नहीं होगी, इसलिए भारत के लिए अपनी 'एक चीन' नीति की समीक्षा करने का समय आ गया है। उन्होंने कहा कि तिब्बत पर आक्रमण करने के बाद, चीन ने पूरे क्षेत्र का सैन्यीकरण कर दिया है और अब दक्षिण चीन सागर में भी शांति भंग कर रहा है। तिब्बत पर नियंत्रण करने के बाद चीन ने नेपाल के इलाकों पर कब्जा करना शुरू कर दिया है और अब उसकी दृष्टि लद्दाख और भूटान पर है जो इस क्षेत्र के लिए खतरनाक है। उन्होंने कहा कि तिब्बत पर कब्जा भारत और चीन के बीच तनाव का मुख्य कारण है और नई दिल्ली को बीजिंग के साथ अपनी समस्याओं को हल करने के लिए तिब्बत मुद्दे को हल करने में मदद करनी चाहिए।[11]

तिब्बती धार्मिक और सांस्कृतिक रूप से भारत के करीब हैं और हमारी भारत के साथ कभी कोई सीमा नहीं थी। तिब्बत दक्षिण एशिया के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।[12] तिब्बत ने ऐतिहासिक रूप से भारत और चीन के बीच बफर के रूप में काम किया है और तिब्बत पर कब्जा करने के बाद अब चीन लद्दाख के क्षेत्रों पर कब्जा करने की ओर बढ़ रहा है। विभिन्न कारणों से भारत का बहुत कुछ दांव पर लगा है, उसे हस्तक्षेप करना चाहिए और तिब्बत के मुद्दे को हल करने के लिए नेतृत्व करना चाहिए।

भारत को जाने वाली सभी प्रमुख नदियाँ तिब्बत से निकलती हैं और चीन इन नदियों के प्रवाह को भारत में पानी रोकने के लिए मोड़ रहा है। पंचशील के सिद्धांतों पर चलने की बजाय चीन ने हमेशा भारत के साथ विश्वासघात किया है। इसने तिब्बत पर कब्जा कर लिया, इसने भारत के साथ युद्ध को मजबूर कर दिया। चीन का मानना है कि भारत दलाई लामा को भारत में धर्मशाला में निर्वासन में सरकार के रूप में मान रहा है जो चीन की सीमा से सिर्फ 200 मील दूर है।[13] इसके अलावा, भारत में 1,00,000 से अधिक तिब्बती शरणार्थियों की उपस्थिति और दलाई लामा को आश्रय प्रदान करने की भारत की निरंतर इच्छा चीन-भारत संबंधों में जलन का एक निरंतर स्रोत है, साथ ही चीन ने आरोप लगाया कि दलाई लामा और उनके सहयोगी तिब्बतियों को उकसा रहे हैं। उदाहरण जैसे इंटरनेट पर 'आत्मदाह गाइड' का प्रचार करके आत्महत्याएं और चीन के खिलाफ 'खुले तौर पर चीनी सीमा के भीतर तिब्बतियों को आत्मदाह करने के लिए प्रोत्साहित करना'। चीन ने दलाई लामा पर मार्च 2012 में चीनी राष्ट्रपति और 21 मई 2013 में चीनी प्रधानमंत्री की यात्रा के दौरान भारत में एक तिब्बती निर्वासित द्वारा आत्मदाह के विरोध के पीछे होने का आरोप लगाया।[14] इसलिए दलाई लामा की उपस्थिति और भारत में उनकी चीन विरोधी गतिविधियों का भारत-चीन संबंधों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सुझाव-समाधान : क्षेत्रीय स्थिरता और सहयोग बनाये रखने हेतु संघर्ष के जो भी प्रमुख द्विपक्षीय मुद्दे भारत और चीन के मध्य विद्यमान हैं उनको आपस में मिलकर समाधान करने की आवश्यकता है, हालांकि इस दिशा में प्रयास भी किये गए हैं परन्तु धरातल स्तर पर अभी आपेक्षिक सफलता नहीं मिली है अतः नयी सोच और रणनीति के आधीन समाधान निकाला जाना चाहिए, समाधान निम्न हो सकते है :

1. सीमा विवाद में चीन को विस्तारवादी नीति का त्याग करते हुए उदार नीति को अपनाना चाहिए भारत के साथ उसे अपने दीर्घकालीन लाभ को देखना चाहिए और सीमा विवाद के क्षेत्रों का नए सिरे से आपसी सहमती से दोनों देशों के मध्य वितरण

करना चाहिए ,चीन भारत बांग्लादेश के मध्य हुए भूमि सीमा करार (लैंड बौन्ड्री एग्रीमेंट) 2015 से एक सबक ले सकता है और ऐसा ही करार भारत के साथ करके सीमा विवाद को सुलझाया जा सकता है।

2. भारत और चीन के मध्य जल साझाकरण को लेकर कोई भी औपचारिक संधि नहीं है अगर जल साझाकरण के मुद्दे को लेकर दोनों देश औपचारिक संधि कर ले तो जल विवाद के मुद्दे का भी काफी हद तक समाधान किया जा सकता है।
3. तिब्बत में निर्वासित सरकार के मुद्दे के समाधान हेतु सभी हितधारकों को एक मंच पर आकर अंतर्राष्ट्रीय हस्तक्षेप जैसे सयुंक्त राष्ट्र आदि द्वारा समाधान किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष : निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि चीन के साथ भारत का लंबे समय से चला आ रहा सीमा विवाद, विशेष रूप से अरुणाचल प्रदेश पर चीन का दावा, जिसके माध्यम से ब्रह्मपुत्र नदी बहती है, जल के मुद्दों पर सहयोग के सार्थक रास्ते में आता है। यहां यह कहा जा सकता है कि दोनों राज्यों के बीच सीमा का और जल का मुद्दा एक-दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। भविष्य में, चीन द्वारा भारत पर दबाव बनाने और सीमा प्रश्न पर रियायतें लेने के लिए जल का एक उपकरण के रूप में उपयोग करने की संभावना है। इस प्रकार, सीमा मुद्दों के अलावा जल प्रमुख मुद्दा होगा, जो दुनिया के दो सबसे बड़े राज्यों भारत और चीन के मध्य भविष्य के संबंधों को निर्धारित करेगा।[15] इसके अलावा, चीन के तिब्बत क्षेत्र से भारत में आने वाली जीवनदायिनी नदियाँ दोनों के बीच सहयोग या संघर्ष की प्रमुख प्रेरक होंगी।

सन्दर्भ

1. Singh, S. 'India–China Relations: Perception, Problems, Potential', South Asian Survey, 15(1), 2008, pp. 83-98.
2. Pak, J. H. 'China, India, and War Over Water', The US Army War College Quarterly: Parameters, 46(2), 2016, p. 7.
3. Malik, M. 'India-China Relations: Giants Stir, Cooperate and Compete, Special Assessment: Asia's bilateral Relations'. Asia-Pacific Center for Security Studies, 2004, p. 5.
4. Fonathan Holslag, 'China and India Prospects for Peace', Columbia University Press, New York, 2010, pp. 113-114.
5. Dinesh L., 'Indo-Tibet-China Conflict', Kalpaz Publication, New Delhi, India, 2008, pp. 98-99.
6. Ramachandran, K. N., Santhanam, K., & Kondapalli, S., 2000. 'India-China Interactions. Asian Security and China, 2010, p. 279. Roemer, S. 2008. The Tibetan Government-in-exile: Politics at large. Routledge, pp. 70-71.
7. Joshi Shashank, 'China and India: Awkward Ascents', Orbis, 2011, pp. 558-576.
8. IDSA Task Force Report, 'Water Security for India: The External Dynamics', Institute of Defense Studies and Analysis, New Delhi, 2010, p. 47.
9. China Maps Brahmaputra, Indus for Dams (August, 24, 2011), The Times of India, New Delhi, India.
10. Xie, L., Zhang, Y., & Panda, J. P. 'Mismatched Diplomacy: China–India Water Relations Over the Ganges–Brahmaputra–Meghna River Basin'. Journal of Contemporary China, 27(109), 2018, pp. 32-46.
11. Fonathan Holslag, 'China and India Prospects for Peace', Columbia University Press, New York, December, 2009, pp. 45-52.
12. Ardley, J. 'Learning the Art of Democracy? Continuity and Change in the Tibetan Government-in-exile'. Contemporary South Asia, 12(3), 2003, pp. 349-363.
13. Roemer, S., 'The Tibetan Government-in-exile: Politics at Large, Routledge, 2008, pp. 142-145.
14. Dalai Lama behind Tibet Protest self-immolation, says China (March, 26, 2012) The Telegraph.
15. Kumar, A. 'Future of India-China Relations: Challenges and Prospects'. Revista UNISCI, (24), 2010, pp. 187-196.

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

भारतीय समाज में सामाजिक कलंक के रूप में मासिक धर्म : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

❑ प्रतिमा चौरसिया
❖ कालिंदी सिंह

सूचक शब्द : मासिक धर्म, स्वच्छता प्रबंधन, सामाजिक कलंक, सांस्कृतिक वर्जना, पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था।

प्रस्तुत अध्ययन के अंतर्गत यह दर्शाया गया है कि मासिक धर्म एक जैविक प्रक्रिया के रूप में महिलाओं के लिए अद्वितीय घटना है परंतु इससे संबंधित विभिन्न धार्मिक व सांस्कृतिक वर्जनाओं के कारण यह सामाजिक कलंक का प्रमुख स्रोत भी है जिसे समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से प्रसारित किया जाता है। अनेक समाजों में मासिक धर्म के विषय में विभिन्न प्रकार की मान्यताएं हैं। भारत में यह विषय आज तक वर्जित होने के कारण युवा लड़कियां मासिक धर्म से संबंधित सूचना के लिए अपनी मां, बहन व दोस्त पर निर्भर होती हैं परंतु इससे जुड़ी गोपनीयता व शर्म के कारण यह सूचना अक्सर आंशिक व गलत होती है साथ ही आवश्यक सुविधाओं व संसाधनों के अभाव के कारण यह उनकी जीवन शैली, शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव डालती है। प्रस्तुत शोध पत्र मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया का उचित ज्ञान व स्वच्छता प्रबंधन के विषय में जागरूकता प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करके इससे जुड़ी विभिन्न सांस्कृतिक व धार्मिक वर्जनाओं को तोड़ने की आवश्यकता पर बल देता है।

मासिक धर्म महिलाओं के जीवन की एक स्वस्थ एवं सामान्य प्रक्रिया होने पर भी विश्व भर में मासिक धर्म को कलंकित किया जाता है। यूनिसेफ के अनुसार प्रत्येक माह, विश्व भर में लगभग 1.8 बिलियन महिलाएं मासिक धर्म से प्रभावित होती हैं तथा आधी महिला वैश्विक आबादी की लगभग 26 प्रतिशत महिलाएं प्रजनन आयु समूह की हैं परंतु मासिक धर्म से संबंधित कलंक, वर्जनाएं एवं मिथक किशोर लड़कियों व लड़कों को इसके विषय में वास्तविक जानकारी विकसित करने में बाधा उत्पन्न करती हैं। परिणामस्वरूप लाखों लड़कियां एवं महिलाएं अपने मासिक धर्म चक्र का सम्मानजनक तरीके से स्वास्थ्य प्रबंधन करने में असमर्थ होती हैं।[1] मासिक धर्म से संबंधित नकारात्मक सामाजिक मानदंड को बदलने, चुप्पी व वर्जना को तोड़ने तथा जागरूकता बढ़ाने के लिए, विश्व भर में 28 मई को 'मासिक धर्म स्वच्छता दिवस' के रूप में मनाया जाता है। मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन के विषय में लोगों को जागरूक करने के लिए 2013 में जर्मन नॉन प्रॉफिट ऑर्गेनाइजेशन WASH यूनाइटेड द्वारा मासिक धर्म स्वच्छता दिवस प्रारंभ किया गया था। वर्ष 2022 में इसका थीम था '2030 तक मासिक धर्म को जीवन का एक सामान्य तथ्य बनाना' अर्थात इसका व्यापक लक्ष्य 2030 तक एक ऐसे विश्व का निर्माण करना जहां प्रत्येक महिला को बिना किसी शर्म के आत्मसम्मान व आत्मविश्वास के साथ अपने मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन को नियंत्रित करने का अधिकार प्राप्त हो।[2]

मासिक धर्म एक जैविक प्रक्रिया : मासिक धर्म महिलाओं के लिए सामाजिक कलंक या अभिशाप न होकर एक सामान्य प्राकृतिक जैविक प्रक्रिया है, जो मानव जीवन के स्थायीकरण को सुनिश्चित करता है। प्रकृति ने महिलाओं की शरीर रचना इस प्रकार की है कि उनके साथ प्रजनन प्रणाली जुड़ी हुई है। मासिक धर्म उनके शरीर को संभावित गर्भावस्था के लिए तैयार करने के लिए होता है, लड़की के जन्म के साथ ही उसके अंडाशय में लगभग चार लाख अपरिपक्व अंडे होते हैं जिसे ओवा कहते हैं। यौवन के समय यह अंडा परिपक्व हो जाता है जिसे ओवम कहते हैं तथा साधारणतः प्रत्येक माह एक अंडा अंडाशय से फैलोपियन ट्यूब के माध्यम से गर्भाशय की ओर बढ़ता है जिसे ओवल्यूशन कहते हैं यदि

❑ सहायक आचार्य समाजशास्त्र विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)
❖ विभागाध्यक्ष, गृह विज्ञान विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

अंडे को निषेचित नहीं किया जाता है तो गर्भाशय की दीवार में प्रत्यारोपित हुए बिना यह अलग हो जाता है तथा अनिषेचित अंडे के अवशेष गर्भाशय से योनि के माध्यम से रक्त व उत्तक के रूप में स्रावित होते हैं जो मासिक धर्म चक्र की एक स्वस्थ्य एवं प्राकृतिक प्रक्रिया है।[3]

अध्ययन का औचित्य- प्रस्तुत अध्ययन मासिक धर्म से संबंधित विभिन्न विश्वासों एवं दृष्टिकोण को समझने के लिए समाज के विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक एवं व्यवहारिक पहलुओं का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करने का प्रयास करता है। मासिक धर्म से जुड़ी विभिन्न सांस्कृतिक एवं धार्मिक वर्जनाएं, प्रथाएं व कलंक के लिए इसके आसपास की चुप्पी जिम्मेदार है, जिस कारण उचित ज्ञान के अभाव में महिलाओं के स्वास्थ्य व कल्याण प्रभावित होते हैं। यह अध्ययन निम्न सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि की छात्राओं द्वारा मासिक धर्म के दौरान उनके सामने आने वाली विभिन्न चुनौतियों पर केंद्रित है साथ ही मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया का उचित ज्ञान व स्वच्छता प्रबंधन के विषय में जागरूकता प्रदान करके विभिन्न सांस्कृतिक व धार्मिक वर्जनाओं को तोड़ने का एक प्रयास है।

साहित्य समीक्षा-

अनुरीता जालान तथा अन्य[4] ने अपने अध्ययन में दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के संदर्भ में मासिक धर्म से संबंधित विभिन्न सांस्कृतिक व धार्मिक वर्जनाओं को प्रस्तुत किया है। भारत में भी मासिक धर्म वर्जित विषय होने के कारण इस विषय में सूचना का प्रमुख स्रोत लड़कियों के लिए उनकी मां, बहन व दोस्त होती हैं, जिनको स्वयं इसके विषय में पर्याप्त ज्ञान नहीं होता है तथा इससे जुड़ी शर्म व गोपनीयता के कारण किशोरियों को इसके विषय में आंशिक जानकारी दी जाती है जिनका उनके शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है साथ ही उनका यह अध्ययन मासिक धर्म से जुड़े कलंक व चुप्पी को तोड़ने की आवश्यकता पर बल देता है।

सिन्हा तथा पौल[5] ने अपने अध्ययन में अपशिष्ट संचय के विषय में बताया है। भारत में अनुमानित 121 मिलियन लड़कियां व महिलाएं औसतन आठ डिस्पोजल सैनिटरी नैपकिन का उपयोग करती हैं तथा उपयोग के पश्चात इसका निस्तारण कचरे के डिब्बे में, खुली जगह जैसे- नाले व कुएं में साथ ही पैड को जलाकर, दफनाकर व शौचालय में फ्लश आदि करके किया जाता है। परिणामस्वरूप प्रत्येक महीने लगभग 1.021 बिलियन पैड का डिस्पोजल होता है जिसका पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह अध्ययन सेनेटरी नैपकिन के बढ़ते उपयोग के कारण उत्पाद को पुनः उपयोगी बनाने पर ध्यान देने की मांग करता है।

कंप्रिहेंसिव रूरल हेल्थ[6] ने अपनी रिपोर्ट में मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन के उत्पाद को दो श्रेणियों में विभाजित किया है- एकल उपयोग डिस्पोजल उत्पाद जिसके अंतर्गत सेनेटरी नैपकिन व टेंम्पोन आते हैं तथा पुनः प्रयोज्य उत्पाद जिसके अंतर्गत कपड़े के पैड व मासिक धर्म कप आदि आते हैं। भारत में मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों के कारण मासिक धर्म प्रबंधन हेतु बाजार में विभिन्न विकल्पों के होने के बावजूद मासिक धर्म कप के उत्पाद का प्रयोग नहीं किया जाता है क्योंकि इसके द्व ारा लड़की के कौमार्य को साबित करने वाले हायमन को हानि पहुंचने की संभावना होती है जो कि सांस्कृतिक अपेक्षाओं के कारण एक लड़की को कलंकित कर सकता है।

बैरिंगटन तथा अन्य[7] ने अपने शोध लेख में प्रस्तुत किया है कि उच्च आय वाले देशों में मासिक धर्म का अनुभव किस प्रकार किया जाता है। सभी के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा व लैंगिक समानता आवश्यक होते हुए भी उच्च आय वाले देशों में नई नीतियों को वास्तव में मासिक धर्म संबंधी स्वास्थ्य आवश्यकताओं को पूरा करने में संघर्ष का सामना करना पड़ता है। अपने निष्कर्ष में उन्होंने बताया है कि मासिक धर्म के अनुभव का एक एकीकृत माडल विकसित कर उसका उपयोग उन तरीकों पर महत्व देकर अनुसंधान, नीति और अभ्यास निर्णय को सूचित करने के लिए किया जा सकता है जिसके माध्यम से महावारी के अनुभव को सकारात्मक व नकारात्मक रूप में प्रकट किया जा सकता है।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. महाविद्यालय की छात्राओं के मासिक धर्म के व्यक्तिगत अनुभवों एवं स्वच्छता प्रबंधन का अध्ययन करना।
2. पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में समाज द्वारा निर्मित मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया को सामाजिक कलंक के रूप में प्रस्तुत किए गए प्रतिमानों का विश्लेषण करना।

शोध पद्धति- प्रस्तुत अध्ययन में वर्णनात्मक शोध प्ररचना का प्रयोग करते हुए तथ्यों का संकलन प्राथमिक एवं

द्वितीयक दोनों आंकड़ों के आधार पर किया गया है। शोध के निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए पूर्व में किए गए अध्ययनों के आधार पर निर्मित प्रश्नों की साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों को संकलित किया गया है तथा द्वितीयक आंकड़ों को प्राप्त करने के लिए विषय से संबंधित विभिन्न प्रकाशित पुस्तकों, शोध पत्रों व पत्रिकाओं की सहायता ली गई है साथ ही समसामयिक मुद्दों व अनुभवों को प्राप्त करने के लिए इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री का भी प्रयोग किया गया है।

अध्ययन का क्षेत्र- प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेश का मेरठ जिला है। समय व धन सीमा को ध्यान में रखते हुए मेरठ जिले में स्थित सभी महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राओं का अध्ययन करना व्यवहारिक नहीं था अतः अध्ययन के समग्र के रूप में मेरठ जिले में स्थित एक महाविद्यालय की स्नातक प्रथम वर्ष की कुल 479 छात्राओं को लिया गया है। अध्ययन हेतु उत्तरदात्रियों का चयन गैर संभावना प्रतिदर्श की सुविधापूर्ण निदर्शन विधि द्वारा किया गया हैं। प्रस्तुत अध्ययन में निदर्शन के रूप में महाविद्यालय की 17 से 22 वर्ष के आयु वर्ग की कुल 50 छात्राओं का चयन किया गया है तथा निदर्शन में केवल उन्हीं छात्राओं को सम्मिलित किया गया जो साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अपने अनुभवों को साझा करने के लिए तैयार थीं।

नैतिक दायित्व- एक शोधकर्ता के नैतिक दायित्व के रूप में सभी उत्तरदात्रियों को पूर्ण गोपनीयता का आश्वासन दिया गया था, इसलिए शोध पत्र में कहीं पर भी उनके नामों को उद्धृत नहीं किया गया वरन् उनके अनुभवों को काल्पनिक नाम से प्रस्तुत किया गया है। साथ ही साक्षात्कार के पश्चात उन्हें महिलाओं के शरीर की जैविक प्रक्रिया, मासिक धर्म, स्वच्छता का महत्व, सेनेटरी नैपकिन का प्रयोग व डिस्पोजल के साथ-साथ मासिक धर्म के प्रबंधन के लिए बाजार में उपलब्ध वैकल्पिक सामग्री के विषय में वैज्ञानिक जानकारी प्रदान की गई।

विश्लेषण -

परिचयात्मक विवरण -

उत्तरदात्रियों की सामाजिक आर्थिक स्थिति-

अध्ययन में सम्मिलित 42 प्रतिशत उत्तरदात्री निम्न आय वर्ग समूह से, 46 प्रतिशत उत्तरदात्री मध्यम आय वर्ग समूह से तथा 12 प्रतिशत उत्तरदात्री उच्च आय वर्ग समूह से संबंधित हैं। इसके अंतर्गत एक तथ्य यह भी स्पष्ट होता है कि निम्न आय वर्ग समूह की अधिकांश छात्राएं मासिक धर्म के दौरान कपड़े का उपयोग करती थी क्योंकि वो सेनेटरी नैपकिन का खर्च उठाने का सामर्थ्य नहीं रखती थीं। वहीं मध्यम वर्ग से संबंधित कुछ छात्राएं सेनेटरी नैपकिन के उच्च कीमत के कारण कपड़े व नैपकिन सुविधानुसार दोनों का उपयोग करती थीं। अध्ययन में सम्मिलित 84 प्रतिशत छात्राएं हिंदू धर्म व 16 प्रतिशत छात्राएं इस्लाम धर्म से संबंधित हैं तथा प्रत्येक उत्तरदात्री ने इस बात को स्वीकार किया है कि वे अपने मासिक धर्म के दौरान विभिन्न वर्जनाओं का पालन करती हैं तथा उस समय मंदिर या मस्जिद नहीं जातीं। विचारणीय तथ्य यह है कि अधिकांश उत्तरदात्रियों ने बिना किसी संदेह के इन प्रतिबंधों को स्वीकार कर उनका पालन किया। छात्राओं के पारिवारिक स्वरूप के अंतर्गत 50 प्रतिशत छात्राएं संयुक्त परिवार से तथा 50 प्रतिशत छात्राएं एकाकी परिवार से संबंधित हैं। जातिगत स्थिति को देखकर यह स्पष्ट होता है कि 30 प्रतिशत छात्राएं सामान्य वर्ग, 44 प्रतिशत छात्राएं अन्य पिछड़ा वर्ग तथा 26 प्रतिशत छात्राएं अनुसूचित जाति से संबंधित हैं साथ ही 36 प्रतिशत छात्राएं ग्रामीण क्षेत्र, 60 प्रतिशत छात्राएं नगरी क्षेत्र व मात्र 4 प्रतिशत छात्राएं कस्बा क्षेत्र में निवास करती हैं।

रजोदर्शन (मासिक धर्म का प्रारंभ) की आयु -

तालिका-1

रजोदर्शन की आयु

छात्राओं के रजोदर्शन की आयु	आवृत्ति	प्रतिशत
11-12 वर्ष	01	2
12 -13 वर्ष	14	28
13-14 वर्ष	27	54
14-15 वर्ष	03	06
15-16 वर्ष	03	06
16-17 वर्ष	02	04
योग	50	100

उपर्युक्त तालिका 1 में प्रदर्शित तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 54 प्रतिशत उत्तरदात्रीयों ने यह बताया है कि उनके मासिक धर्म का प्रारंभ 13-14 वर्ष की आयु में हुआ था तथा 28 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने 12-13 वर्ष की आयु में, 6 प्रतिशत ने 14-15 वर्ष की आयु में, 6 प्रतिशत ने 15-16 वर्ष की आयु में, 4 प्रतिशत ने 16-17 वर्ष की आयु में व मात्र 2 प्रतिशत

उत्तरदात्रीयों ने 11-12 वर्ष की आयु में इसका प्रथम अनुभव किया था। अध्ययन में एक तथ्य यह भी स्पष्ट होता है कि जिन किशोरियों के मासिक धर्म का प्रारंभ 14-15 वर्ष की आयु में या उसके पश्चात हुआ था उनमें से अधिकांश को इस प्रक्रिया के विषय में पूर्व से ही ज्ञान था वहीं दूसरी ओर जिनके मासिक धर्म का प्रारंभ 14-15 वर्ष की आयु से पूर्व हुआ था उनमें से अधिकांश उत्तरदात्री इस प्रक्रिया से अनभिज्ञ थीं।

रजोदर्शन से पूर्व मासिक धर्म का ज्ञान -

तालिका -2

रजोदर्शन से पूर्व मासिक धर्म का ज्ञान

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	22	44
नहीं	28	56
योग	50	100

उपर्युक्त तालिका 2 में प्रदर्शित किए गए तथ्यों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 56 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने यह स्वीकार किया है कि उन्हें रजोदर्शन से पूर्व इस प्रक्रिया के विषय में कोई जानकारी नहीं थी क्योंकि उनकी माताएं इस विषय पर सदैव पर मौन रहीं तथा उनकी महावारी शुरू होने के पश्चात इस विषय पर बात करना उनके लिए अनिवार्य हो गया। इसके पीछे यह तर्क स्पष्ट होता है कि उनकी माताओं द्वारा भी इस विषय में उन्हें पूर्व ज्ञान नहीं दिया गया था तथा समाज द्वारा निर्मित सांस्कृतिक वर्जनाओं व प्रतिबंधों के कारण उन्होंने इस विषय पर मौन धारण कर लिया परिणामस्वरूप उनकी बेटियों को रजोदर्शन के समय गंदगी, तनाव व चिंता की अनुभूति हुई। इस संदर्भ में एक लड़की ने अपने रजोदर्शन के अनुभव को अभिव्यक्त करते हुए कहा -

"उस समय मुझे बहुत अजीब सा अनुभव हो रहा था मुझे लगा कि कोई असाध्य बीमारी हो गई है इसलिए मैं अपने कमरे में बंद होकर घंटो रोई और डर के कारण किसी से कुछ कह भी नहीं पा रही थी।"

वहीं दूसरी ओर 44 प्रतिशत उत्तरदात्रियों को इसके विषय में पूर्व से ही ज्ञान होने के कारण उन्होंने अपने अनुभवों को साझा करते हुए बताया कि वह रजोदर्शन से पूर्व ही एक सीमा तक इसके लिए मानसिक रूप से तैयार थीं तथा उन्होंने कोई ऐसा असाधारण अनुभव नहीं किया जैसा अनुभव उन उत्तरदात्रियों ने किया जिन्हें इसके विषय में पूर्व से ज्ञान नहीं था।

सूचना का प्रथम स्रोत -

तालिका -3

सूचना का प्रथम स्रोत

सूचना का प्रथम स्रोत	आवृत्ति	प्रतिशत
परिवार	30	60
मित्र	14	28
स्कूल	04	08
टेलीविजन और इंटरनेट	02	04
योग	50	100

उपर्युक्त तालिका 3 के माध्यम से प्रदर्शित होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 60 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के लिए मासिक धर्म के विषय में सूचना का प्रथम स्रोत उनके परिवार के ही सदस्य थे, जिसके अंतर्गत मुख्य रूप से उनकी मां, बड़ी बहन तथा भाभी आदि सम्मिलित थीं, वहीं दूसरी ओर 28 प्रतिशत उत्तरदात्रियों को पहली बार अपनी मित्र से इस संबंध में जानकारी प्राप्त हुई थी। 8 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने बताया कि उन्हें मासिक धर्म के विषय में उनके स्कूल से पता चला था जब सेनेटरी नैपकिन की एक कंपनी उनके स्कूल में अपने उत्पाद का प्रचार करने के लिए आयी थी। उनमें से एक लड़की ने अपने अनुभव को साझा करते हुए बताया कि -

''जब वे मेरे स्कूल में आए थे उस वक्त मैं कक्षा 8 में पढ़ती थी तथा मुझे इसके विषय में कोई जानकारी नहीं थी और मेरे स्कूल में लड़के भी पढ़ते थे इसलिए हम सभी लड़कियों को किसी दूसरी क्लास में ले जाया गया तथा कंपनी से जो दीदी आई थीं उन्होंने हमें इसके विषय में बताया कि इसका इस्तेमाल क्यों और कैसे करते हैं तथा हम सभी लड़कियों को एक - एक पैड का पैकेट दिया गया जिसे हमें बैग के अंदर रखने को कहा गया और लड़कों को दिखाने से मना किया गया।"

यह अनुभव दर्शाता है कि हमारे समाज में विभिन्न लिंगों के मध्य सांस्कृतिक खाई किस प्रकार सेक्स, कामुकता, मासिक धर्म, प्रजनन व इससे संबंधित किसी भी विषय पर खुलकर बात करने की अनुमति नहीं देती है। इसके अतिरिक्त 4 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के लिए टेलीविजन और इंटरनेट मासिक धर्म से संबंधित सूचना का प्रथम स्रोत था।

मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया का ज्ञान -

तालिका -4

मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया का ज्ञान

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	04	08
नही	46	92
योग	50	100

अध्ययन में सम्मिलित अधिकांश उत्तरदात्रियों को मासिक धर्म के विषय में सिर्फ व्यवहारिक ज्ञान प्रदान किया गया था जैसे मासिक धर्म क्या है तथा इसका प्रबंधन कैसे करते हैं परंतु उन्हें मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया के विषय में कोई ज्ञान नहीं था जब उनसे इसके विषय में पूछा गया कि एक स्त्री को प्रत्येक माह मासिक धर्म क्यों होता है तो उनके अनुसार यह प्रक्रिया उनके शरीर से गंदे रक्त को साफ करती है। जैसा की तालिका 4 में दर्शाया गया है कि अध्ययन में सम्मिलित 92 प्रतिशत उत्तरदात्रियों को मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया के विषय में कोई ज्ञान नहीं था तथा मात्र 8 प्रतिशत उत्तरदात्रीयों को इसके विषय में पता था तथा यह ज्ञान भी उन्हें किताबों व इंटरनेट से प्राप्त हुआ था।

मासिक धर्म प्रबंधन एवं स्वच्छता

तालिका -5

मासिक धर्म प्रबंधन विकल्पों का प्रयोग

मासिक धर्म प्रबंधन विकल्प	आवृत्ति	प्रतिशत
सेनेटरी नैपकिन	38	76
कपड़ा	11	22
मेंस्ट्रूअल कप	01	02
योग	50	100

मासिक धर्म का प्रबंधन करने के लिए महिलाएं विभिन्न विकल्पों का प्रयोग करती हैं। अध्ययन में सम्मिलित 76 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ अपने मासिक धर्म के दौरान सेनेटरी नैपकिन का प्रयोग करती हैं। उनमें से 22 प्रतिशत छात्राएं अपने मासिक धर्म का प्रबंधन करने के लिए कपड़े का प्रयोग करती हैं क्योंकि उन्हें कपड़ा अधिक आरामदायक लगता है तथा वे इसका प्रयोग किशोरावस्था से ही करती आ रही हैं, साथ ही कुछ उत्तरदात्रियों ने यह भी स्वीकार किया की सेनेटरी नैपकिन महंगा होने के कारण वे इसका व्यय वहन नहीं कर पाती अतः सुविधानुसार वे घर पर कपड़े का प्रयोग करती हैं तथा जब बाहर जाना होता है तभी पैड का इस्तेमाल करती हैं तथा कुछ उत्तरदात्रियाँ पैड का खर्च न उठा पाने के कारण सिर्फ कपड़े का ही प्रयोग करने के लिए विवश हैं वही कुछ उत्तरदात्रियों ने यह भी बताया कि वे पैड का इस्तेमाल करना नहीं जानती इस कारण वे कपड़े का प्रयोग करती हैं। मात्र 2 प्रतिशत ने यह स्वीकार किया है कि वे अपने मासिक धर्म का प्रबंधन मेंस्ट्रूअल कप द्वारा करती हैं तथा अधिकांश उत्तरदात्री मेंस्ट्रूअल कप के विषय में नहीं जानती थीं वहीं दूसरी तरफ संपूर्ण उत्तरदात्रियों में से कोई भी छात्रा मासिक धर्म के दौरान टैम्पोन का प्रयोग नहीं करतीं इससे यह ज्ञात होता है कि टैम्पोन व मेंस्ट्रूअल कप को सेनेटरी नैपकिन जितना विज्ञापित और प्रचारित नहीं किया जाता है, इस कारण अधिकांश उत्तरदात्रियों को इसके विषय में कोई जानकारी नहीं है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मासिक धर्म प्रबंधन में सेनेटरी नैपकिन सबसे लोकप्रिय विकल्प है।

पैड बदलने की आवृत्ति -

तालिका-6

पैड बदलने की आवृत्ति

पैड बदलने की आवृत्ति	आवृत्ति	प्रतिशत
6-8 घंटे	30	60
8-12 घंटे	16	32
12-16 घंटे	04	08
योग	50	100

पैड बदलने की आवृत्ति मासिक धर्म स्वच्छता का एक प्रमुख संकेतक है। प्रस्तुत अध्ययन में सम्मिलित 60 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने यह बताया है कि वे 6-8 घंटे में अपना पैड बदलती हैं जैसा कि तालिका 6 में दर्शाया गया है। 32 प्रतिशत उत्तरदात्री 8-12 घंटे के अंतराल में अपना पैड बदलती हैं वहीं 8 प्रतिशत छात्राएं 12-16 घंटे के पश्चात पैड बदलने को विवश हैं क्योंकि कुछ उत्तरदात्रियों ने यह स्वीकार किया है कि कई बार घर से बाहर होने पर सार्वजनिक स्थानों पर शौचालय के अभाव के कारण वे चाह कर भी अपना पैड नहीं बदल पातीं। हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था ने शुरू से ही मासिक धर्म को गोपनीय बना के रखा अतः कई छात्राओं को गोपनीयता व वर्जना के कारण सार्वजनिक स्थानों पर पैड बदलना कठिन लगता है। अध्ययन में सम्मिलित मात्र 42 प्रतिशत छात्राएं ही पैड बदलने के लिए सार्वजनिक स्थानों का प्रयोग करती हैं तथा 58 प्रतिशत छात्राएं पैड बदलने के लिए सार्वजनिक स्थानों का प्रयोग शौचालय के अभाव व सामाजिक सांस्कृतिक वर्जना के कारण नहीं

कर पातीं। अतः विवश होकर वे कई घंटों के पश्चात अपना पैड बदलती हैं जो उनमें अनेक प्रकार के संक्रमण को विकसित करने में सहायक होता है।

महावारी के समय कालेज जाना –

तालिका –7

महावारी के समय कॉलेज जाना

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	31	62
नही	19	38
योग	50	100

उपर्युक्त तालिका 7 में दिए गए तथ्यों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 62 प्रतिशत छात्राएं इस दौरान कॉलेज नहीं जातीं। इस संदर्भ में उन्होंने बताया कि पेट दर्द, तनाव, अधिक रक्तस्राव, घबराहट, उल्टी, थकान, चिड़चिड़ापन व कपड़े पर दाग लगने के डर से वह कॉलेज जाने से बचती हैं साथ ही कुछ छात्राओं ने यह भी स्वीकार किया है कि उनका घर कालेज से दूर होने के कारण वे इस दौरान यात्रा नहीं करना चाहती इसलिए वे कालेज नहीं जाती हैं। वहीं दूसरी ओर अध्ययन में सम्मिलित 38 प्रतिशत छात्राओं ने यह बताया कि वह इस दौरान कालेज जाती हैं परंतु उनमें से कुछ छात्राओं ने यह भी स्वीकार किया है कि पहले दिन जब दर्द व रक्त स्राव अधिक होता है तथा वह ठीक महसूस नहीं करती हैं तो वह भी यदि जरूरी ना हो तो कालेज या बाहर जाने से बचती हैं।

तालिका –8

महावारी के दौरान अनुभव

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
पेट दर्द	30	56
चिड़चिड़ापन व मिजाज में बदलाव	16	26
असहज भाव जैसे उल्टी, घबराहट, सिर दर्द व चक्कर	04	18
योग	50	100

प्रस्तुत अध्ययन में तालिका 8 में प्रदर्शित तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदात्रियों ने महावारी के दौरान होने वाले अपने अनुभव को साझा किया है जिसमें से 56 प्रतिशत छात्राओं ने बताया है कि वे इस दौरान गंभीर पेट दर्द व कमर दर्द तथा 26 प्रतिशत छात्राओं ने कहा कि वह इस समय चिड़चिड़ापन व स्वभाव में बदलाव जैसी नकारात्मक भावना का अनुभव करती हैं, वहीं 18 प्रतिशत छात्राओं ने इस दौरान होने वाले असहज भाव जैसे उल्टी, घबराहट, सिर दर्द व चक्कर आदि को प्रकट किया। एक छात्रा ने अपने अनुभव को साझा करते हुए बताया –

"मैं महावारी के इन चार-पांच दिनों के दौरान विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण का अनुभव करती हूं।"

महावारी के दौरान होने वाले दर्द को कम करने के लिए छात्राओं द्वारा विभिन्न उपाय किए जाते हैं जैसे घरेलू उपायों में सिकाई, गर्म दूध में हल्दी डालकर पीना, गुड़ की चाशनी का उपयोग करना साथ ही कुछ छात्राओं द्वारा इस दौरान दवाइयों व इंजेक्शन का भी प्रयोग किया जाता है तथा एक छात्रा ने यह भी बताया कि इस दौरान होने वाले गंभीर पीड़ा को कम करने के लिए उसे हॉस्पिटल तक जाना पड़ता है।

मासिक धर्म एक सामाजिक कलंक –

प्रस्तुत अध्ययन मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया के साथ ही पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था के सामाजिक सांस्कृतिक मानदंडों और परंपराओं में दृढ़ता से निहित तथ्यों पर प्रकाश डालता है। सांस्कृतिक रूप से निर्मित वर्जना व प्रतिबंधों को स्कूली शिक्षा से प्राप्त जीव विज्ञान के ज्ञान की तुलना में कहीं अधिक गहराई से आत्मसात किया जाता है तथा संस्कृति सरलता से आंतरीकृत हो जाती है व हमारे विश्वास प्रणाली का हिस्सा बन जाती है क्योंकि दैनिक जीवन किताबी ज्ञान की तुलना में संस्कृति व धर्म द्वारा निर्देशित होती है। मासिक धर्म से संबंधित वर्जना व चुप्पी संस्कृति द्वारा थोपा गया सामाजिक कलंक है, शक्तिशाली पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था हमारे समाज में इस प्रकार हावी है कि जैविक प्रक्रिया जैसे मुद्दों को जो मानव नियंत्रण से परे हैं उसे लैंगिक असमानता से जोड़कर प्रतिबंध, वर्जना, निषेध व चुप्पी के माध्यम से बढ़ावा देता है तथा महिलाओं की कामुकता एवं गतिशीलता को प्रतिबंधित करके उनकी भावनाओं को अपने वश में करने का प्रयास करता हैं।[8]

महावारी के विषय में बात करने में शर्मिंदगी का अनुभव

तालिका–9

महावारी के विषय में वार्तालाप का अनुभव

शर्मिंदगी का अनुभव होता है	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	33	66
नहीं	17	34
योग	50	100

उपर्युक्त तालिका 9 से प्रदर्शित है कि अध्ययन में सम्मिलित उत्तरदात्रियों में से 66 प्रतिशत छात्राओं ने यह स्वीकार किया है कि उन्हें इस विषय में बात करने में शर्मिंदगी का अनुभव होता है क्योंकि इस विषय में बात करना सदैव वर्जित रहा है तथा मुख्य रूप से पुरुषों से इसे छुपा कर रखा जाता है। वहीं 34 प्रतिशत छात्राएं यह मानती हैं कि वे इस विषय में बात करने पर शर्मिंदगी का अनुभव तो नहीं करती हैं परंतु यदि किसी पुरुष से इस विषय में बात करना तो असहज अवश्य अनुभव करती हैं। क्योंकि अध्ययन में सम्मिलित सभी छात्राएं अविवाहित हैं अतः लगभग सभी ने यह स्वीकार किया है कि वे घर पर अपने पिता, भाई या किसी अन्य पुरुष से इस विषय में बात करने में असहज अनुभव करती हैं तथा सिर्फ एक लड़की ने अपने अनुभव को साझा करते हुए बताया -

"एक बार जब मेरा पीरियड आया था तो घर पर मम्मी नहीं थी इसलिए मैंने अपने बड़े भाई को इस बारे में बताया और उसे पैड लेने के लिए बाहर भेजा। उस वक्त यह बताने में मुझे बहुत शर्मिंदगी अनुभव हो रही थी लेकिन विवशता में मुझे यह बताना पड़ा परंतु अब मैं इस बारे में अपने भाई से बहुत आराम से बात कर लेती हूं।" अध्ययन के अंतर्गत छात्राओं ने यह भी बताया कि माहवारी के दौरान उन्हें सबसे ज्यादा चिंता इस बात की होती है कि कहीं उनके कपड़े पर कोई दाग न लग जाए क्योंकि हमारे समाज में इस लाल रंग को सामाजिक कलंक के रूप में देखा जाता है तथा इस शर्मिंदगी से बचने के लिए वह पीरियड आने से पूर्व ही सावधानीपूर्वक पैड साथ लेकर चलती हैं जिससे कि किसी के द्वारा उनका मजाक ना बने और उन्हें शर्मिंदगी का अनुभव ना करना पड़े। इसके साथ ही एक समस्या यह भी है कि सेनेटरी नैपकिन जो महिलाओं के महावारी प्रबंधन में सहायक होता है तथा इस दौरान होने वाले इन्फेक्शन से उन्हें सुरक्षित करता है परंतु सांस्कृतिक रूप से निर्मित वर्जनाओं एवं प्रतिबंधों का प्रभाव हमारे समाज पर कुछ इस प्रकार हावी है कि पैड खरीदते समय भी शर्मिंदगी का अनुभव किया जाता है तथा इस शर्मिंदगी से बचने के लिए दुकानदार पैड को सदैव पेपर से लपेट कर या काले रंग के प्लास्टिक में देते हैं। कुछ छात्राओं ने यह स्वीकार किया है कि शर्मिंदगी के कारण वे पैड खरीदने स्वयं नहीं जाती हैं बल्कि अपनी माँ, बहन व भाईं के द्वारा मंगवाती हैं।

मासिक धर्म से संबंधित सामाजिक निषेध व टैबू -

तालिका -10

मासिक धर्म से संबंधित सामाजिक निषेध

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हां	49	98
नहीं	01	02
योग	50	100

उपर्युक्त तालिका 10 में प्रदर्शित तथ्यों से यह स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित मात्र 2 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ किसी भी प्रकार के वर्जना का पालन नहीं करती हैं वहीं दूसरी ओर 98 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने यह स्वीकार किया है कि वे अपने माहवारी के दौरान सांस्कृतिक वर्जना का पालन करती हैं जिसके अंतर्गत अधिकांश उत्तरदात्रियों ने बताया कि वह महावारी के दौरान धार्मिक स्थलों पर नहीं जाती है व पूजा नहीं करती है तथा कुछ ने बताया कि इस दौरान उनके लिए प्रतिबंधित खाद्य पदार्थों को स्पर्श करना वर्जित होता है। कुछ उत्तरदात्रीयों ने यह तर्क दिया है कि धार्मिक स्थलों में देवी मां भी निवास करती हैं तथा वह खुद इस अवस्था से गुजरती होंगी तो फिर क्यों एक महिला को इस दौरान मंदिर में प्रवेश एवं पूजा पाठ करने से रोका जाता है।

इस संदर्भ में सबरीमाला केस का उदाहरण जीवंत है जिसके अंतर्गत सर्वप्रथम केरल उच्च न्यायालय ने 1991 में 10 वर्ष से लेकर 50 वर्ष तक की आयु की महिलाओं का सबरीमाला मंदिर में प्रवेश प्रतिबंधित कर दिया था क्योंकि वह मासिक धर्म की उम्र के थे। उसके पश्चात भारत की सुप्रीम कोर्ट ने 28 दिसंबर 2018 को किसी भी आधार पर महिलाओं के खिलाफ भेदभाव ना हो इसका हवाला देते हुए उन्होंने इसे धार्मिक भेदभाव करार दिया तथा महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध हटा कर ऐतिहासिक फैसला दिया।[9]

भारतीय संविधान में धार्मिक स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार के अधीन पुरुष एवं महिला को समान अधिकार प्राप्त है परंतु वास्तव में भारत की महिलाओं को धार्मिक संस्थाओं का कम समर्थन मिलता है। मासिक धर्म की जैविक प्रक्रिया महिलाओं के लिए अद्वितीय घटना है परंतु जैविक घटना होते हुए भी यह सदैव सामाजिक सांस्कृतिक वर्जनाओं व मिथकों से घिरी हुई होती है तथा पितृसत्तात्मक समाजों में मासिक धर्म से संबंधित वर्जनाओं व चुप्पी के निर्माण के

कारण माहवारी का अनुभव करने वाली महिलाओं को अक्सर दैनिक आधार पर सामाजिक गतिविधियों में भाग लेने से प्रतिबंधित किया जाता है। इस प्रकार का बहिष्कार मुख्य रूप से धार्मिक विश्वासों से उपजा है जो महिलाओं को उनके मासिक धर्म के दौरान 'अशुद्ध' मानता है तथा इस प्रकार के अंधविश्वास के कारण उन्हें रसोई व पूजा घर में प्रवेश एवं संरक्षित खाद्य पदार्थों को छूने से रोका जाता है। इसके साथ ही मासिक धर्म के आसपास सांस्कृतिक मिथक अक्सर यौन प्रजनन के संबंध में चुप्पी व शर्मिंदगी के कारण लोग इस विषय पर बात नहीं करते हैं व लिंग विरोधी संस्कृति तथा पर्याप्त मासिक धर्म सुरक्षा विकल्पों की कमी के कारण लोगों में जागरूकता का अभाव होता है फलस्वरूप महिलाओं की शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक स्थिति व जीवन शैली पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।[10]

मासिक धर्म के संदर्भ में सरकार द्वारा की गई पहल–

भारत सरकार द्वारा 90 के दशक में मासिक धर्म के विषय में जागरुकता का प्रसार करने के साथ ही स्वच्छता प्रबंधन हेतु सेनेटरी नैपकिन के प्रचार–प्रसार पर काफी कार्य किया गया था परंतु कुछ समय पश्चात सामाजिक दबाव के परिणामस्वरूप इसे बंद कर दिया गया, वहीं स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा 2010 में ग्रामीण लड़कियों के लिए सेनेटरी नैपकिन रियायती दर पर प्रदान करने के लिए पायलट योजना 'फ्री पैड योजना' का प्रारंभ 20 राज्यों के 152 जिलों में की गई, जिसके अंतर्गत 6 रू. की दर से 6 सेनेटरी नैपकिन का एक पैकेट आशा कार्यकर्ताओं द्वारा दिया जाता था।

मासिक धर्म स्वच्छता प्रबंधन के साथ किशोर लड़कियों के स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार करने के उद्देश्य से केंद्र सरकार ने 'सबला योजना' को प्रारंभ किया तथा दूसरी ओर केंद्र सरकार ने 2014 में, 243 मिलियन किशोरों के स्वास्थ्य एवं स्वच्छता में सुधार करने के उद्देश्य से 'राष्ट्रीय किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रम' को प्रारंभ किया, जिसके अंतर्गत मासिक धर्म स्वच्छता को भी कार्यक्रम के एक अभिन्न अंग के रूप में सम्मिलित किया गया था तथा स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत गांवों में मासिक धर्म स्वच्छता के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु विशेष महत्व दिया गया जिसके अंतर्गत सार्वजनिक शौचालयों में सेनेटरी नैपकिन डिस्पेंसरी की भी स्थापना की गई।

फिल्मों द्वारा लोगों की सोच को बदलने में काफी सहायता मिलती है, वर्ष 2018 में बनी अक्षय कुमार की फिल्म पैडमैन ने भी मासिक धर्म स्वच्छता के प्रति सुदूर गांव के लोगों को जागरूक करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस फिल्म के परिणामस्वरूप सरकार द्वारा सेनेटरी पैड पर 12 प्रतिशत जीएसटी को कर मुक्त कर दिया गया। यही नहीं मासिक धर्म के प्रति समाज के दृष्टिकोण को बदलने व इस विषय पर बिना किसी शर्म के खुलकर बात करने हेतु सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रमों के अंतर्गत जागरूकता अभियान चलाया जा रहा है।[11]

मासिक धर्म के दौरान अवकाश के संदर्भ में उच्चतम न्यायालय का निर्णय – महिलाओं ने अपने स्वास्थ्य एवं कल्याण की दशा में सुधार करने के उद्देश्य से सरकार के समक्ष अपनी समस्या को रखा फलस्वरूप मातृत्व अवकाश को सवैतनिक 12 सप्ताह से बढ़ाकर 26 सप्ताह कर दिया गया।[12] इसी दिशा में एक याचिकाकर्ता द्वारा मासिक धर्म के दौरान होने वाले पीड़ा से राहत दिलाने के उद्देश्य से इस दौरान अवकाश प्रदान करने के लिए सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दाखिल की गयी। इंडोनेशिया, दक्षिण कोरिया, जापान, जांबिया व स्पेन में इस नीति को श्रम कानूनों के अंतर्गत सम्मिलित किया गया है तथा भारत में भी केरल व बिहार राज्य में यह व्यवस्था पहले से ही क्रियांवित है परंतु भारत के मुख्य न्यायाधीश डी. वाई. चंद्रचूड़ की अध्यक्षता वाली तीन न्यायाधीशों की खंडपीठ ने इस संदर्भ में केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय से संपर्क करके नीति तैयार कराने के लिए दिशा निर्देश दिया है। लैंगिक समानता की राह में आने वाली प्रत्येक बाधा को दूर किया जाना चाहिए तथा एक ऐसी दुनियाँ का निर्माण करने का प्रयास करना चाहिए जहां प्रत्येक के लिए बेहतर वातावरण हो तथा यह सुनिश्चित करना व्यापक समाज एवं सरकार का दायित्व होगा कि कोई भी वर्ग वंचित न रह जाए तथा सभी का सर्वांगीण विकास हो सके।[13]

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निशुल्क सेनेटरी पैड के वितरण का निर्देश : सर्वोच्च न्यायालय ने हाल ही में अपने एक फैसले में स्कूलों की छात्राओं को मुफ्त सेनेटरी पैड देने का निर्देश दिया जो कि एक स्वागत योग्य कदम है। ग्रामीण और शहरी दूरस्थ क्षेत्रों में माहवारी स्वच्छता के प्रति जागरूकता का अभाव व विपन्नता के कारण लड़कियों की माहवारी के दौरान स्वच्छता का ध्यान नहीं दिया जाता फलस्वरूप वे अनेक संक्रामक रोगों का शिकार होती हैं।

लड़कियां माहवारी के दौरान स्वच्छता के लिए आवश्यक सुविधाएं ना होने के कारण स्कूल छोड़ देती हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने विद्यालय में पढ़ने वाली लड़कियों के लिए माहवारी स्वच्छता प्रबंधन हेतु मानक संचालन प्रक्रिया और एक राष्ट्रीय मॉडल तैयार करने का केंद्र सरकार को निर्देश दिया। जिसके अंतर्गत 6 से 12 तक की कक्षाओं में पढ़ने वाली छात्राओं को मुफ्त सैनिटरी पैड देने के साथ ही स्कूलों व शिक्षण संस्थाओं को पैड्स के लिए वेंडिंग मशीन लगाने से लेकर पैड्स के निस्तारण के लिए समुचित व्यवस्था करनी होगी।[14]

निष्कर्ष – पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था मासिक धर्म के दौरान महिलाओं की गतिशीलता को बाधित कर लैंगिक समानता पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करती है तथा एक जैविक प्रक्रिया को शर्म व कलंक के साथ जोड़ना निराशाजनक तथ्य है। अधिकांश छात्राओं को मासिक धर्म के जैविक प्रक्रिया का ज्ञान न होने के कारण वह इसे ईश्वरीय घटना से जोड़ती हैं तथा इस दौरान विभिन्न वर्जनाओं का पालन करती हैं। इसके अतिरिक्त मासिक धर्म प्रबंधन उत्पाद महंगे होने के कारण कई गरीब छात्राओं को विवश होकर महावारी के दौरान गंदे कपड़े का प्रयोग करना पड़ता है जो संक्रामक रोगों का कारण बन कर उनके स्वास्थ्य पर गंभीर खतरा उत्पन्न कर सकता है साथ ही सैनेटरी नैपकिन के उचित निस्तारण ना होने के कारण पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचाता है। सेनेटरी नैपकिन के निर्माण के गुणवत्ता का मानक 1980 के बीआईएस पर आधारित है जो कि काफी पुराना है। अतः सरकार को सेनेटरी नैपकिन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए उचित एवं नवीन नीतियों का निर्धारण करना चाहिए जिसके अंतर्गत पैड का निर्माण सिंथेटिक सामग्री और रसायन युक्त न होकर बायोडिग्रेडेबल पर आधारित होना चाहिए जिससे इसे सरलता से डिस्पोज किया जा सके तथा महिलाओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने के साथ ही पर्यावरण भी सुरक्षित रह सके।[15] मासिक धर्म नारी जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है अतः लोगों में जागरूकता का प्रसार करके मासिक धर्म के विषय में समाज में फैली हुई भ्रांतियों को समाप्त करने की आवश्यकता है, इसके लिए घरों तथा विद्यालयों में इस विषय पर खुलकर चर्चा करना चाहिए जिससे महिलाओं के अंदर की झिझक को समाप्त किया जा सके तथा न केवल सरकार को बल्कि देश के आम नागरिकों को भी समाज से रूढ़िवादिता को समाप्त करने के लिए इस कार्य में सहयोग देना चाहिए।

सन्दर्भ

1. https://www.un
2. icef.org/documents/guidance-menstrual-health-and-hygiene21-03-2023, 07:48 PM
3. https://menstrualhygieneday.org/about/about-mhday/ 05-02-2023, 08:52 PM.
4. Bhatt, M., 'Menstruation: A biological phenomenon and not a Social Stigma, Period', IACHSS 3rd International Academic Conference on humanities and social science, Berlin, Germany,2019,pp.29-32
5. Jalan, A., Baweja, H., Bhandari, M., Kahmei, S., Grover, A., 'A Sociological Study of the Stigma and Silences around Menstruation', Vantage: Journal of Thematic Analysis, New Delhi, 2020. pp.47-65.
6. Sinha, R.N., Paul, B. 'Menstrual health management in India: The concerns', Indian Journal of Public Health, 2018. 62(2), 71-74.
7. Comprehensive Rural Health Project, 'Comprehensive Rural Health Project (CRHP), Jamkhed, India, Village History: Nimbodi. Jamkhed', Maharashtra: Worley, J.2019.
8. Barrington DJ, Robinson HJ, Wilson E, Hennegan J, 'Experiences of menstruation in high income countries: A systematic review, qualitative evidence synthesis and comparison to low- and middle-income countries', PLOS ONE 16(7): e0255001,2021. https://doi.org/10.1371/journal.pone.0255001
9. Das, Mitoo.' Menstruation as Pollution: Taboos in Simlitola', Assam. Indian Anthropologist, 2008.pp. 38(2), 29-42.
10. https://en.m.wikipedia.org/wiki/Entry_of_women_to_Sabarimala, 26-02-2023, 08:53 PM.
11. https://www.unfpa.org/menstruationfaq,02-04-2023, 09:56 PM.
12. https://www.dhyeyaias.in/current-affairs/perfect-7-magazine/menstrual-hygiene-campaign,25-02-2023, 05:13 PM.
13. https://www.thehindu.com/news/national/supreme-court-refuses-to-entertain-pil- seeking-menstrual-pain-leave-for-female-students-and-working-women/article66548297.ece, 24-02-2023, 08:40 PM.
14. https://labour.gov.in/sites/default/files/Maternity izfr'kr20Benefit izfr'kr20Amendment izfr'kr20Act izfr'kr2C2017 izfr'kr20.pdf, 25-03-2023,03:39PM.
15. https://www.thehindu.com/news/national/sc-asks-centre-to-frame-uniform-national- policy-to-provide-sanitary-pads-for-girls-in-schools-in-india/article66720191.ece, 10-04-2023,06:30 PM.

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

गोदना-प्रिय जनजाति बैगा के गोदना में परिवर्तन
(छत्तीसगढ़ राज्य के खैरागढ़-छुईखदान-गंडई जिले के विशेष संदर्भ में)

❑ श्रीमती सोमेश्वरी कुमारी वर्मा
❖ डॉ. हेमलता बोरकर वासनिक

सूचक शब्द : गोदना, गुदना, देहकला, अलंकरण, वैद्यकी, देव प्रकोप, रूप-रेखा, बैगा जनजाति।

भारत की विशेष पिछड़ी जनजाति बैगा गोदना के लिए जानी जाती है। बैगा महिलाओं के जीवन में गोदना परम्परागत अमिट देहकला के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी संचरित होता रहा है। कठिन पीड़ा और दुःख सहकर भी बैगा औरतें गोदना गुदवाती हैं। गोदना गुदवाना सौन्दर्य भावना के साथ-साथ धार्मिक एवं सांस्कृतिक विश्वासों से भी जुड़ा हुआ है। गोदना वह अभिव्यक्ति है जो बैगा जनजाति को अपने समुदाय से जुड़ाव की भावना हेतु प्रेरित करती है तथा जिसमें व्यक्ति के सुरक्षा भाव अंतर्निहित होते हैं। प्रस्तुत अध्ययन खैरागढ़-छुईखदान-गण्डई (के.सी.जी.) जिले के बैगा जनजाति के गोदना पर केन्द्रित है। बैगा महिलाओं की पहचान 'गोदना' आज भी प्रासंगिक है लेकिन बाह्य संपर्क, शिक्षा, शहरीकरण का प्रभाव, बदलते परिवेश एवं विचारों में परिवर्तन के कारण इसके प्रति आकर्षण में कमी आई है। बैगा जनजाति की बदलती सोच नें इन्हें संस्कृति की मूल जड़ों से काटकर फैशन एवं भौतिकता की भावना से जोड़ दिया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन प्राथमिक एवं अनुभवजन्य शोधों पर आधारित है जिसमें बैगा जनजाति के गोदना में परिवर्तन को जानने हेतु समय को आधार बनाते हुए गोदना गुदवाने के कारण, प्रेरणा, आयु तथा गुदवाए गए अंगो का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। गोदना-प्रिय बैगा जनजाति के गोदना में परिवर्तन का यह अध्ययन गोदना के प्राचीन पहचान के कारणों व महत्व के नष्ट होने की दृष्टि से विशेष रूप से विचारणीय हो जाता है।

जनजाति समुदाय की परम्परायें मनमोहक, आकर्षक, जीवंत एवं विविधताओं से भरी हैं। जनजाति अपनी मौलिकता एवं कल्पनाशीलता के लिए जानी जाती है। भारत में कुल जनसंख्या के 8.6 प्रतिशत भाग में जनजातियाँ निवास करती हैं। भारत में कुल 705 अनुसूचित जनजतियों मे से 75 जनजातियॉ विशेष पिछड़ी जनजातियॉ है। छत्तीसगढ़ राज्य में कुल जनसंख्या का लगभग एक-तिहाई जनजाति निवास करती हैं। छत्तीसगढ़ की कुल 42 जनजातियों में 5 केन्द्र सरकार तथा 2 राज्य सरकार द्वारा मान्य विशेष पिछड़ी जनजाति हैं। बैगा जनजाति छत्तीसगढ़ की एक विशेष पिछड़ी जनजाति है। बैगा समृद्ध सांस्कृतिक विरासत कलात्मक परम्पराओं एवं जीवंत लोककलाओं के लिए जानी जाती है। बैगा छत्तीसगढ़ में सर्वाधिक कवर्धा, खैरागढ़-छुईखदान-गंडई, बिलासपुर, मुंगेली तथा कोरिया जिलें मे रहते हैं। छत्तीसगढ़ में बैगा जनजाति की कुल जनसंख्या 89,744 है तथा छुईखदान में बैगा परिवारों की कुल जनसंख्या 4357 है।[1]

बैगा अपने को ''बाघ का भाई'' शब्द से संबोधित करते हैं। प्रारंभ से ही ये जंगल को अपना घर समझते आये हैं तथा वहॉ के पेड़-पौधे, जीव-जन्तु तथा जंगली जानवरों के सहचर हो गये हैं। यह मूलरूप से जंगल पर निर्भर जनजाति है। इनके जीवन में शिक्षा, स्वास्थ्य तथा आवास का पूर्णतः अभाव रहा है। बैगा अपनी अर्थव्यवस्था के लिए शिकार, वैद्यकी, वनोपज तथा बेवाड़ कृषि पर निर्भर रहे हैं। शारीरिक बनावट की दृष्टि से बैगा जनजाति हृष्ट-पुष्ट, गठीला बदन, चपटी नाक, श्याम वर्ण, चौड़े ललाट तथा मध्यम कद के होते हैं। बैगा पुरूष प्रधान समाज है परन्तु सबको स्वतंत्रता और समानता का अधिकार प्राप्त है। बैगा जनजाति की विशेष पहचान उसकी गोदना है।

गोदना :- गोदना अर्थात् बैगा स्त्री का सौन्दर्य, श्रृंगार, आत्मा का अलंकरण, धर्म तथा संस्कार का प्रतीक, बीमारियों से मुक्ति तथा मरणोपरांत स्वर्ग लोक में साथ जाने वाली देहकला है।

❑ शोध अध्येत्री समाजशास्त्र एवं समाज कार्य अध्ययनशाला पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)
❖ सह प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाज कार्य अध्ययनशाला पंडित रविशंकर शुल्क विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

गोदना को बोलचाल की भाषा में गुदना भी बोला जाता है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है गुदाना या चुभाना। गोदना कपाल से लेकर पैर तक गुदवाया जाता है। बैगा जनजाति में गोदना गुदवाने के पीछे निम्न कारण हैं:-

1. सौन्दर्य प्राप्ति हेतु
2. समाज में सम्मान हेतु
3. बीमारी, तंत्र-मंत्र तथा प्राकृतिक दैव प्रकोप से बचने हेतु
4. प्रजनन क्षमता में वृद्धि हेतु
5. मृत्योपरान्त साथ जाने हेतु
6. परम्परागत प्रथा के संचालन हेतु

गोदना गुदने की प्रक्रिया :- बैगा महिलाओं को गोदना गुदने का कार्य देवार या बादी जाति की महिलाएँ करती हैं। देवार एवं बादी जाति की महिलाओं को गोदना गुदन का ज्ञान विरासत में मिला होता है। गोदने गुदने का कार्य सर्दी और गर्मी के मौसम में सर्वाधिक किया जाता है। गोदना गुदने के लिए सुइयों का गुच्छा तथा काले रंग के मिश्रण का प्रयोग करते हैं। काले रंग के मिश्रण को तैयार करने हेतु काला तिल और सरई की गोंद को मिलाकर काजल तैयार करते हैं। इस काजल में बीजा या भिलवा का रस डालते हैं।

गोदना गुदने से पहले शरीर पर काजल से रूप-रेखा बनाई जाती है तत्पश्चात् सुइयों के गुच्छों को काले पानी के मिश्रण में डुबोकर शरीर पर गुदा जाता है। गुदवाने मे दर्द होता है तथा खून भी निकलता है। गुदने के पश्चात् गोबर के पानी से उस स्थान को धोते हैं और हल्दी तेल लगाते हैं। गोदना गोदने की प्रक्रिया जब शुरू होती है तो उसे पूरा करके ही उठ सकते हैं।

गोदना गुदवाने की आयु:- बैगाओं में गोदना लंबी रेखाओं पर आधारित होती है। सामान्यतः 5 से 25 वर्ष के बीच गोदना गुदवाया जाता है। छोटी आयु में छोटे आकृति तथा बड़ी आकृति के गोदने बड़ी आयु में गुदवाये जाते हैं।

आयु	शरीर का अंग
5 से 15 वर्ष के बीच	कपाल (माथा, कपाड़)
16 से 30 वर्ष के बीच	पीठ (पुखड़ा), जांघ, हाथ, पैर आदि
विवाह पश्चात	छाती

साहित्य समीक्षा :- भारत में गोदना पर कुछ विद्वानों द्वारा अध्ययन किया गया है जिनमें गोदना के महत्व, कारण एवं प्रक्रिया को समझाया गया है :-

ममता सिरमौर[2] ने अपने शोध 'लोक संस्कृति में गोदना एक समाजशास्त्रीय अध्ययन' में छत्तीसगढ़ के रायपुर, दुर्ग, जांजगीर जिले के अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत 380 गोदना गुदवाई हुई महिला उत्तरदाताओं का चुनाव किया तथा साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से जाति, परिवार, विवाह, शिक्षा, आय तथा व्यवसाय के आधार पर गोदना का विश्लेषण प्रस्तुत किया है'।

अर्चना रानी[3] ने लोककला पत्रिका में लोक कलाओं में अंग आलेखन : लीला गोदना में बताया कि जनजातीय संस्कृति में गोदना के विभिन्न रूप होते हैं। ये शुभ, मोहक, रोग-निवारक, उर्वरता, प्रजनन तथा उत्सवों का प्रतीक होता है।

अनिल कुमार पाण्डेय[4] ने बैगा समुदाय में बदलते परिवेश के कारण गोदना परम्परा के प्रति उनमें पहले जैसा उत्साह नही रहा। गोदना गुदने तथा उपयोग किये जाने वाले रंगों में बदलाव आया है। पाण्डेय का मानना है कि गोदना के बदलते स्वरूपो के कारण इनका संरक्षण करना आवश्यक है।

अजय कुमार चतुर्वेदी[5] ने छत्तीसगढ़ राज्य के बस्तर, सरगुजा, कांकेर, कवर्धा तथा जयपुर जिले में निवास करने वाली जनजातियों में गुदवाई जाने वाली गोदना के प्रकारों का वर्णन किया है।

मनीष कुमार कुर्रे[6] ने 'छत्तीसगढ़ में आदिवासी एवं गोदना प्रथा' में गोदना का इतिहास, गोदना के प्रकार, गोदना गीत, गोदना का महत्व तथा बस्तर में गोदना प्रथा का उल्लेख किया है। इनका मानना है कि वर्तमान में गोदना गुदवाने की प्रक्रिया में बदलाव आया है।

बलदाऊ राम सिंह[7] ने 'दक्षिण कोसल टूडे' में छत्तीसगढ़ में पारंपरिक देहा लेखन गोदना और अंतर्भाव में गोदना की परम्परा का विकास इससे जुड़ी लोक कथायें, सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताएँ तथा शारीरिक इलाज के रूप में इसका वर्णन किया है।

प्रियंका साहू[8] ने गोदना के वैज्ञानिक दृष्टिकोण से व्याख्या की है। उन्होने गोदना की अवधारणा, विस्तार व नियम, गुदनांकन के प्रकार तथा गुदनांकन विधि का विवरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने गोदना को सिर्फ श्रृंगारपरक संस्कार की नही अपितु इसके वैज्ञानिक ज्ञान तथा महत्व को भी प्रदर्शित किया है।

नवीन परिवेश में गोदना :- शरीर का इतना दर्द भरा

श्रृंगार विश्व की किसी भी जनजाति में नही होगा। बैगा जनजाति के लोग विकसित दुनिया से दूर जंगल एवं पहाड़ों के बीच रहते आये हैं जिनसे संपर्क करना अत्यंत कठिन था लेकिन वर्तमान में बैगा समाज के जीवन में जनमाध्यमों की पहुँच का दायरा विस्तृत हुआ है। शासन की सहायता बैगा बहुल क्षेत्रों में सड़क, बिजली, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा रोजगार संबंधित विभिन्न योजनाएं संचालित की जा रही हैं। मूल आवश्यकताओं की पूर्ति तथा शिक्षा के कारण बैगा समाज में एक चेतना उत्पन्न हुई है जिसके कारण बैगा जनजाति सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिवर्तन की दौर से गुजर रही हैं। परिवर्तन एक सार्वभौमिक घटना है तथा यह कम या ज्यादा सभी समाजों में पाया जाता है।

बैगा जनजाति में गोदना लोकप्रिय है लेकिन शिक्षा जागरूकता, बाह्य हस्तक्षेप, सस्ते एवं सुलभ सौन्दर्य प्रसाधन तथा नवीन आभूषणों की उपलब्धता के कारण बैगा जनजाति में गोदना का महत्व समय के साथ-साथ कम होता जा रहा है। बैगा प्राचीन काल से वर्तमान तक परिवर्तन के विभिन्न दौर से गुजर रही है।

अतः प्रस्तुत शोध अध्ययन में गोदना-प्रिय जनजाति बैगा के गोदना मे परिवर्तन की स्थिति के आकलन हेतु समय विभाजन के आधार पर अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्यः-

1. गोदना गुदवाने की आयु, प्रेरणा और कारण में परिवर्तन को ज्ञात करना।
2. नवीन परिवेश मे गोदना के बदलते स्वरूपों का ज्ञात करना।

अध्ययन पद्धति :- प्रस्तुत शोध के अध्ययन हेतु छत्तीसगढ़ राज्य के खैरागढ़-छुईखदान-गण्डई जिले के छुई खदान तहसील के बैगा जनजाति बहुल निवास वाले चार गाँवों सरोधी, समुदपानी, हाथीझोला तथा गेरूखदान का अध्ययन हेतु चयन किया गया है। छुई खदान तहसील से इन चारों गांवों की दूरी क्रमशः 59 कि.मी., 58 कि.मी., 55 कि.मी. तथा 38 कि.मी. है। इन चारों गांवों सरोधी, समुदपानी, हाथीझोला तथा गेरूखदान में क्रमशः 88 बैगा परिवार, 72 बैगा परिवार, 85 बैगा परिवार तथा 73 बैगा परिवार निवास करते हैं।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु 45 वर्ष से अधिक आयु वाले उत्तरदाताओं का चयन किया गया है जिससे 25 वर्ष पूर्व तथा वर्तमान की स्थिति के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर ज्ञात परिवर्तनों को स्पष्ट किया जा सके। तथ्यों के संकलन हेतु दैव निदर्शन पद्धति द्वारा बैगा बहुल ग्राम सरोधी, हाथीझोला, समुदपानी तथा गेरूखदान से क्रमशः 20-20 परिवारों (कुल 80 बैगा परिवार) का चयन उत्तरदाता के रूप में किया गया है।

अध्ययन के अंतर्गत प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति, अवलोकन तथा समूह परिचर्चा का उपयोग किया गया है तथा द्वितीयक तथ्यों कें संकलन हेतु शासकीय दस्तावेज अध्ययन संबंधी पुस्तकें, शोध पत्र तथा सामचार पत्र-पत्रिकाओं का उपयोग किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन में बैगा के गोदना मे परिवर्तन को कुछ प्रश्नों द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है :-

1. बैगा महिलायें गोदना किसकी प्रेरणा से गुदवाती हैं?
2. गोदना गुदवाने के पीछे मुख्य कारण क्या हैं?
3. गोदना गुदवाने की आयु क्या है?
4. गोदना किस अंग में गुदवाये जाते हैं?

उपर्युक्त प्रश्नों की व्याख्या निम्न तालिकाओं में प्रस्तुत की जा रही है :-

तालिका क्रमांक 01

गोदना गुदवाने हेतु प्रेरणा

प्रेरणा	वर्तमान समय में		25 वर्ष पूर्व	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
स्वेच्छा	52	65	0	0
रिश्तेदार या मित्रों के कारण	0	0	0	0
परिवारिक परम्परा	28	35	80	100
कुल योग	80	100	80	100

उपर्युक्त तालिका क्रमांक-1 से विदित होता है कि वर्तमान सयम में 65 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा गोदना के लिए प्रेरणा हेतु स्वयं की इच्छा को महत्व दिया गया है तथा 35 प्रतिशत उत्तरदाता पारिवारिक परम्परा को गोदना के

लिए प्रेरणा के रूप में चुना है। 25 वर्ष पूर्व की स्थिति में देखे तो सभी उत्तरदाता गोदना के लिए प्रेरणा के रूप में पारिवारिक परम्परा को चुनते थे। अतः तुलनात्मक दृष्टि से देखे तो पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में गोदना गुदवाने हेतु स्वयं की इच्छा को ज्यादा महत्व दिया जाने लगा है।

तालिका क्रमांक 02

गोदना गुदवाने के कारण

कारण	वर्तमान समय में		25 वर्ष पूर्व	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
मरणोपरान्त साथ जाता है	80	100	17	21.2
सुंदरता हेतु	0	0	0	0
बीमारी या बुरी नजर	0	0	0	0
उपरोक्त सभी कारण	0	0	63	78.8
कुल योग	80	100	80	100

बैगा जनजाति में गोदना की समृद्ध परम्परा के पीछे प्रमुख कारणों को तालिका क्रमांक-2 मे स्पष्ट किया गया है जिससे यह ज्ञात होता है कि वर्तमान समय में गोदना गुदवाने के कारणों में मरणोपरान्त साथ जाता है, कारण को सभी उत्तरदाता मानते हैं। 25 वर्ष पूर्व की स्थिति में देखें तो 78.8 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा सुन्दरता, बीमारी या बुरी नजर से बचाव तथा मरणोपरान्त साथ जाता है, कारण को तथा 21.2 प्रतिशत उत्तरदाता मरणोपरान्त साथ जाता है, कारण को मानते थे। अतः तुलनात्मक दृष्टि से देखे तो पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में गोदना गुदवाने के पीछे मरने के बाद ये साथ जाता है, कारण को सभी उत्तरदाता मानते हैं।

तालिका क्रमांक 03

गोदना गुदवाये गये अंग

अंग	वर्तमान समय में		25 वर्ष पूर्व	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
चेहरा	0	0	0	0
हाथ-पैर	72	90	0	0
संपूर्ण शरीर पर	8	10	80	100
कुल योग	80	100	80	100

तालिका क्रमांक 03 से स्पष्ट होता है कि वर्तमान समय में गोदना गुदवायें गये अंगो में सर्वाधिक 90 प्रतिशत उत्तरदाता हाथ-पैर में गोदना गुदवाये हैं तथा 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सम्पूर्ण शरीर पर गोदना गुदवाया है। **25 वर्ष** पूर्व की स्थिति में देखें तो सभी उत्तरदाता सम्पूर्ण शरीर पर गोदना गुदवाते थे। अतः तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में बैगा जनजाति के सम्पूर्ण शरीर पर गोदना गुदवाने में अपेक्षाकृत 90 प्रतिशत की कमी आई है।

तालिका क्रमांक 04

प्रथम गोदना गुदवाने की आयु

आयु	वर्तमान समय में		25 वर्ष पूर्व	
	आवृत्ति	प्रतिशत	आवृत्ति	प्रतिशत
1 से 15 वर्ष तक (बचपन)	11	13.7	80	100
16 से 30 वर्ष तक (युवा)	69	86.3		
कुल योग	80	100	80	100

बैगा महिलाओं को गोदना के आधार पर उनकी आयु को जाना जा सकता है अर्थात् प्रत्येक आयु के अनुसार गोदना निश्चित होता है। उपरोक्त तालिका क्रमांक-4 में प्रथम गोदना गुदवाने की आयु का उल्लेख किया गया है जिससे ज्ञात होता है कि वर्तमान समय में 86.3 प्रतिशत अर्थात् अधिकांश उत्तरदाताओं द्वारा 16 से 30 वर्ष अर्थात् 'युवावस्था' में प्रथम गोदना गुदवाया जाता है तथा 13.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा 1 से 15 वर्ष अर्थात् 'बचपन' में गोदना गुदवाया जाता है। 25 वर्ष पूर्व की स्थिति में देखे तो सभी उत्तरदाताओं द्वारा 1 से 15 वर्ष तक अर्थात् 'बचपन' में गोदना गुदवाया जाता था। अतः तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में 'युवावस्था' में प्रथम गोदना गुदवाया जाता है।

निष्कर्ष : बैगा जनजाति में गोदना की लोकप्रियता पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में कम होती जा रही है। आज गोदना गुदवाने की आयु में परिवर्तन हुआ है। अब गोदना बचपन की जगह युवावस्था में गुदवाना पसंद किया जा रहा है। गुदना गुदवाने के अंधविश्वासों में अपेक्षाकृत कमी आई है तथा वर्तमान में पारिवारिक परंपरा की अपेक्षा, स्वयं की इच्छा से ही बैगा महिलायें गोदना गुदवाती हैं। सम्पूर्ण शरीर पर गुदवाने की जगह हाथ-पैर में गोदना गुदवाया जा रहा है।

अतः उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि गोदना के नियमों मे शिथिलता आई है। गोदना गुदवाने की भावनाओं में परिवर्तन के साथ ही बैगा जनजाति के जीवन में गोदना आज भी प्रासंगिक बना हुआ है।

सन्दर्भ

1. छत्तीसगढ़ शासन आदिम जाति तथा अनुसूचित जाति विकास विभाग, वार्षिक प्रशासनिक प्रतिवेदन, 2018-19
2. सिरमौर ममता, 'लोक संस्कृति में गोदना एक समाजशास्त्रीय अध्ययन' (छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ में) अप्रकाशित शोध प्रबंध पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.), 2008
3. रानी अर्चना, 'लोककलाओ में अंग आलेखन : लीला गोदना', लोककला, अक्टूबर-दिसम्बर, 2010 पृ. 28-30
4. पाण्डेय अनिल कुमार, 'बदलते परिवेश में बैगा जनजाति की गोदना परम्पराएँ', मीडिया मीमांसा, जुलाई-सितम्बर-2016, पृ. 53-58
5. चतुर्वेदी अजय कुमार, 'छत्तीसगढ़ में गोदना प्रथा', https://www.sahapedia.org/chatataisagadha-maen-gaodanaa-parathaa-social-role-tattooing-chhattisgarh
6. कुर्रे, मनीष कुमार, 'छत्तीसगढ़ के आदिवासी एवं गोदना प्रथा' 2020, https://www.hindikunj.com/2020/04/chattishgarh-aadivasi-godna.html?m=1
7. सिंह, राम बलदाऊ, 'छत्तीसगढ़ में पारम्परिक देहा लेखन गोदना और अंतर्भाव', दक्षिण कोसल टूडे (2020) http://dakshinkosaltoday.com/traditional-godana-writing-tattoo-and-intuition-in-chhattisgarh/
8. साहू, प्रियंका, 'आदिवासियों में गोदना संस्कार, एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण', 2020 http://www.socialresearchfoundation.com/upoadreserchpapers/7/391/2101160448041st%20priyanka%20sahu%2013260.pdf

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

भारतीय सनातन संस्कृति का विश्लेषण : वैदिक काल से आधुनिक काल

❑ डॉ. ज्योति
❖ अतुल

भारतीय सनातन संस्कृति एक वर्णनात्मक संस्कृति है, जिसका इतिहास काफी महान व प्राचीन रहा है। वर्णात्मक इसलिए क्योंकि, सनातन संस्कृति में सिर्फ़ बातों का उल्लेख किया गया है न कि निर्धारण; महान इसलिए क्योंकि, इसने भारत की अन्य संस्कृतियों के साथ मिलकर अपना व अन्य संस्कृतियों का अस्तित्व बनाए रखा; प्राचीन इसलिए क्योंकि, ये संस्कृति हजारों सालों से चली आ रही है। भारतीय सनातन संस्कृति के संबंध में अधिकांश अध्ययन हुए हैं परंतु, मूल रुप से ये अध्ययन ऐतिहासिक, विकासात्मक, आध्यात्मिक व सांस्कृतिक तो रहे हैं किन्तु, राजनीतिक रुप से नाम मात्र रहा है इसलिए इस विषय को राजनीतिक दृष्टिकोण से देखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र के अंतर्गत इसके विकास, इसके सामने आई चुनौतियों, इसके साथ हुए अन्याय व इस घमासान में इसने अपने आपको किस तरह बनाए रखा इत्यादि बिंदुओं पर ध्यानपूर्वक चर्चा की गई है। इस विषय के संबंध में ऐतिहासिक, वर्णनात्मक व विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है जिसके माध्यम से देखा गया कि, कैसे भारतीय सनातन संस्कृति ने अपने विकास मार्ग में आई चुनौतियों; अपने साथ हुए अन्याय का डटकर सामना किया व अपने आपको बनाए रखा।

सूचक शब्द : भारतीय सनातन संस्कृति, औपनिवेशिक काल में सांस्कृतिक अन्याय, हिंदू नवोत्थान।

भारतीय समाज अत्यंत प्राचीन व पारंपरिक है, जिसका प्रमाण भारतीय सनातन संस्कृति के स्वरूप; चैतन्य- विश्वास, विचार, सोच जो कि इसके भौतिकवाद अर्थात व्यवहारिक रूप- एकता, परिवर्तन का नियम, अहिंसा एवं असांप्रदायिकता इत्यादि गुणों में दिखाई देता है। भारतीय सनातन संस्कृति का यह स्वरूप वैदिक काल से प्राचीन काल के अंत तक निर्मित होता है और इसी स्वरूप के साथ आने वाले विदेशी आक्रमणों, सामाजिक कुरीतियों, गुलामी व अपने साथ हुए सांस्कृतिक अन्याय का सामना कर पाई। इस प्रक्रिया में भारतीय समाज द्वारा सनातन संस्कृति को आत्मसात करने में कई प्रकांड विद्वानों की अहम भूमिका रही है जिस कारण सनातन संस्कृति की समृद्धि, वैज्ञानिकता एवं आध्यात्मिकता का प्रभाव रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में हमारा मूल तर्क है कि भारतीय सनातन संस्कृति अपने गुणों के आधार पर ही अपने सामने आई चुनौतियों, सांस्कृतिक अन्याय का सामना कर पाई है और आज तक अपने अस्तित्व को बनाए रख पाई है। **लेख** में, विशेष-रूप से पर तीन प्रश्नों पर गम्भीर रूप से चिंतन किया गया हैं। पहला- संस्कृति क्या है? दूसरा- संस्कृति को सनातन संस्कृति के संदर्भ में समझते हुये, सनातन संस्कृति के गुणों का विकास कैसे हुआ? तीसरा- सनातन संस्कृति को प्राचीन काल के अन्त से, मध्य व आधुनिक काल तक किन-किन चुनौतियों का सामना करना पड़ा व कैसे सामना किया और इसका क्या प्रभाव पड़ा? इन महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तरों के माध्यम से कई महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत होने का अवसर मिलता है कि, भारतीय संस्कृति ने विदेशी आक्रमणों का सामना किया, मुगलों की साम्प्रदायिक नीति का सामना कर, अपने गुणों के माध्यम से मुस्लिम जनता व शासक को प्रभावित किया, भारतीय सामाजिक कुरुतियों का सामना किया, अंग्रेजों द्वारा किये गये सांस्कृतिक अन्याय को समझते हुए उसका सामना कर जवाब दिया।

शोधपत्र का उद्देश्य

1 भारतीय सनातन संस्कृति के गुणों के विकास का अध्ययन करना।

2 भारतीय सनातन संस्कृति ने अपने विकास में आई चुनौतियों व अन्याय का किस तरह सामना कर अपने आपको बनाए रखा; उसका अध्ययन करना।

शोध प्रविधि : तथ्यों व विचारों को व्यवस्थित रूप प्रदान

❑ सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, सप्त सिन्धु परिसर, देहरा, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, कांगड़ा, (हि.प्र.)
❖ शोध अध्येता, राजनीति विज्ञान विभाग, सप्त सिन्धु परिसर, देहरा, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला, कांगड़ा, (हि.प्र.)

करना प्रस्तावित शोध पत्र की प्रमुख पद्धति रही है। शोध पत्र को व्यवस्थित रूप से अध्ययन करने के लिए द्वितीय स्रोत महत्त्वपूर्ण रहे हैं जिसके लिए; राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाते हुए ऐतिहासिक, वर्णनात्मक व विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

संस्कृति क्या है?

संस्कृति शब्द मूल रूप से संस्कृत भाषा का शब्द है, जो दो शब्दों 'सम' + 'कृति' से मिलकर बना है। इसमें सम का अर्थ समान और कृति का अर्थ क्रिया या कार्य है। इन दोनों शब्दों को मिला दिया जाए, तो इसका अर्थ, समान कार्य करना। "जब समूह या समूह में रहने वाले व्यक्तियों के द्वारा, धर्म, भाषा, परम्पराए, रीति-रिवाज़, नियम, मिथ, नैतिकता, सामूहिक स्मृतियाँ इत्यादि का समान रूप से पालन किया जाता है, तो इससे एक संस्कृति का निर्माण होता है"।[1] संस्कृति के ये सामूहिक मूल्य, समूह व समूह में रहने वाले व्यक्तियों के लिए, जीवन का एक तरीका बनते हैं, जिसके अनुसार ये अपना जीवन व्यतीत करते हैं। इन मूल्यों को दो भागों में बांट सकते हैं, जिसमें पहला भाग, जो लचीला होता है जिसमें संगीत, खानपान, विश्वास, व्यवहार, परम्परा इत्यादि आते हैं। इनकी विशेषता यह है कि, इसमें परिवर्तन किया जा सकता है और इस परिवर्तन से संस्कृति का विकास होता है। दूसरा भाग, जो कठोर होता है जिसमें धर्म, भाषा, रीति-रिवाज़ इत्यादि आते हैं। इनकी विशेषता यह है कि इसमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता है और यही गुण एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति से अलग करते हैं और साथ ही पहचान के चिह्नों के रूप में काम भी करते हैं।

संस्कृति के इन मूल्यों का विकास कुछ वर्षों, दशकों का परिणाम नहीं होता, प्रत्युत, कई शताब्दियों, हजारों वर्षों का परिणाम होता है। ''संस्कृति के इन मूल्यों को, समूह के अंदर रहने वाले सदस्य, आने वाली पीढ़ियों को हस्तांतरित करते हैं और ये हस्तांतरण पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहता है जिससे संस्कृति बनी रहती है। पंडित दीन दयाल उपाध्याय इसे संस्कृति का चित्ति कहते हैं। मूल्यों का हस्तांतरण ऐसा नहीं है कि, समान रूप से होता है, प्रत्युत, ये हस्तांतरण जो है; बदलाव के साथ भी हो सकता है।"[2]

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन कहते हैं कि ''संस्कृति किसी भी समाज का एक मजबूत आधार होती है, जो समाज में रहने वाले लोगों को विषम व प्रतिकूल परिस्थितियों में एक आधार प्रदान कर संतुलन व दृढ़ता प्रदान करती है''।[3] एस. आबिद हुसैन कहते हैं कि ''संस्कृति किसी एक समाज में पायी जाने वाली उच्चतम मूल्यों की वह चेतना है, जो सामाजिक प्रथाओं, व्यक्तियों की चित्तवृत्तियों, भावनाओं, मनोवृत्तियों, आचरण के साथ-साथ, उसके द्वारा भौतिक पदार्थों को विशिष्ट स्वरूप दिए जाने में अभिव्यक्त होती है।''[4]

भारतीय/सनातन संस्कृति

भारतीय/सनातन संस्कृति पर विचार करने से पहले, कुछ विशेष बातों का उल्लेख करना आवश्यक है, कि इस बिन्दु के अंतर्गत भारत के सांस्कृतिक इतिहास को तीन भागों में या कालों में विभाजित कर प्राचीन, मध्य व आधुनिक काल में व्यापक रूप से देखा जाएगा। किन्तु, यहाँ यह स्मरण रखना आवश्यक है कि, भारतीय इतिहास के इन तीन काल खण्डों का समय की दृष्टि से यूरोपीय काल-खण्डों से मिलान नहीं होता है। प्राचीन काल का आरम्भ सुव्यवस्थित रूप से, वैदिक काल से होता है, जो दसवीं शताब्दी के अंत तक चलता है। मध्यकाल-ग्यारहवीं शताब्दी से अठारहवीं शताब्दी तक चलता है। आधुनिक काल-उन्नीसवीं शताब्दी से वर्तमान तक चलता है, किन्तु सनातन संस्कृति का वर्णन स्वतंत्रता-काल 1947 तक ही किया जाएगा। इन तीनों काल खण्डों में सनातन संस्कृति का स्वरूप कैसा रहा है? संस्कृति के मूल्यों में क्या-क्या परिवर्तन आया है? इत्यादि प्रश्नों पर विचार किया जाएगा।

प्राचीन काल में भारतीय/सनातन संस्कृति

सनातन संस्कृति का प्रारंभ वैदिक काल से होता है, जिसमें आर्यों का बहुत बड़ा योगदान होता है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि आर्य कहाँ से आए है? क्या आर्यों का भारत पर आक्रमण हुआ है? ये सभी प्रश्न शोध का विषय हैं। किन्तु, जब सनातन संस्कृति का निर्माण हो रहा था; आर्यों के द्वारा तो उस समय भारत में कई जाति के लोग- नीग्रो, औष्ट्रिक, द्रविड इत्यादि मौजूद थे और वैदिक काल में ही इन सबके बीच समन्वय शुरू हो जाता है। ये समन्वय, कई रूपों में हो रहा था, जैसे जाति, धर्म व रीति-रिवाज़, भाषा इत्यादि। जाति के संदर्भ में आर्यों ने जो जाति प्रथा चलाई उसे भारत की अन्य जातियों ने स्वीकार किया; जिससे हिन्दू समाज का निर्माण हुआ। इसके अलावा समन्वय की प्रक्रिया में

''भारत की हर जाति के जो, रीति-रिवाज़ व धर्म, वो हर किसी को प्रभावित कर रहे थे। जिसका प्रमाण इस बात में है कि आज बहुत सी रीतियाँ है, धार्मिक अनुष्ठान है, जिसका उल्लेख वेदों में नहीं मिलता, उनके बारे में विद्वानों का मत है कि या तो वे आर्येत्तर सभ्यता की देन है''.... ''भाषा के रूप में देखें तो तमिल परम्परा के अनुसार संस्कृत और द्राविड़ भाषाएँ एक ही उद्गम से निकली हैं। किटेल ने अपनी कन्नड़-इंगलिश-डिक्शनरी में ऐसे कितने शब्द गिनाए हैं, जो तमिल-भंडार से निकलकर संस्कृत में पहुँचे थे।''[5]

समन्वय की इस प्रक्रिया का सनातन संस्कृति पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा बल्कि इस प्रक्रिया के चलते सनातन संस्कृति का निर्माण होता है और साथ ही सनातन संस्कृति में एकता का गुण विकसित होता है, जिससे आर्यों सहित जो अन्य जातियाँ थीं, ये सब एक-दूसरे में समाहित हो जाती हैं। इनके बीच जाति, धर्म, भाषा, रीति-रिवाज़ को लेकर जो मेलजोल, एकता पैदा होती है, वही सनातन संस्कृति/ भारतीय संस्कृति कहलाती है। सनातन संस्कृति के इस गुण को देख, विचारकों द्वारा अलग-अलग रूप में इसकी प्रशंसा की। सी.ई.एम. जोड़ ने लिखा कि ''मानव जाति को भारतवासियों ने जो सबसे बड़ी चीज़ वरदान के रूप में दी है, वह अनेक प्रकारों के विचारों के बीच समन्वय करने को तैयार रहे हैं और सभी प्रकार की विविधताओं के बीच एकता कायम करने की उनकी लियाकत और ताकत लाजवाब रही है।''[6] मैक्समूलर ने लिखा है कि... हम यूरोपीय लोगों के आन्तरिक जीवन को अधिक समृद्ध, अधिक पूर्ण और अधिक विश्वसनीय, संक्षेप में अधिक मानवीय बनाने का नुस्खा हमें किसी जाति के साहित्य में मिलेगा, तो बिना हिचकिचाहट के मेरी उँगली हिन्दुस्तान की ओर उठ जाएगी।[7]

सनातन संस्कृति, एकता-मेलजोल के गुण के साथ आगे बढ़ती है और अपने अन्दर एक और गुण, जिसे परिवर्तन का नियम कहते हैं, को विकसित करती है। वास्तव में वैदिक काल में, वैदिक समाज सुखभोगी था। यहाँ पर कर्मकाण्ड अर्थात् यज्ञ को महत्वपूर्ण माना जाता था। ऐसे में वैदिक काल में वेदों में कई ऐसे महत्वपूर्ण प्रश्न उठाए गए जैसे कर्म, कर्मफलवाद, मोक्ष, मुक्ति, परमात्मा ये सब क्या है? सृष्टि का निर्माण कैसे हुआ? इत्यादि। किन्तु, उस पर विस्तार से चर्चा नहीं की गई और इस आधार पर कई विद्वानों द्वारा वेदों को अपूर्ण माना गया है। कि वैदिक समय प्रगतिशील समय था। उपनिषदों में जिन प्रश्नों को खोजा गया, हो सकता है कि, वैदिक समय में उन प्रश्नों पर चर्चा करना जरूरी नहीं माना गया हो। किन्तु, इस आधार पर वेदों को अपूर्ण कहना अनुचित है। सनातन संस्कृति को अनुभव हुआ कि, अब इन प्रश्नों पर चर्चा होनी चाहिए तो उपनिषदों में चर्चा हुई। इस तरह अपने अन्दर, समय के अनुसार परिवर्तन किया और अपना विकास कर अपने को सुदृढ़ किया। परिवर्तन का ये गुण आज भी भारतीय संस्कृति की सुन्दरता बनी हुई है, जिसे देख रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है भारतीय संस्कृति का जो रूप था, आज भी मूलतः वह वैसा ही है। मिस्र, बेबिलोन और यूनान में भी प्राचीन सभ्यताएँ उठी थीं, किन्तु काल ने उन्हें ध्वस्त कर दिया। केवल भारत ही एक ऐसा देश है, जिसका अतीत कभी मरा नहीं। वह बराबर वर्तमान के रथ पर चढ़कर भविष्य की ओर चलता रहा है।[8]

सनातन संस्कृति, एकता और परिवर्तन के नियम के गुण के साथ, वर्तमान के रथ पर बैठकर, भविष्य की ओर बढ़ती है और एक ओर गुण अपने अंदर विकसित करती है, और वो है, अहिंसा। मैं, यहाँ दो बिन्दुओं पर चर्चा करना चाहता हूँ। पहला- ये कि, सनातन संस्कृति में समय के साथ-साथ जो गुण जुड़ते जा रहे है, ऐसा नहीं है कि, वो गुण सनातन संस्कृति में नहीं थे, प्रत्युत ये गुण मौजूद थे, किन्तु दबे स्वरूप में या फिर लोग इनसे अनभिज्ञ थे। दूसरा- ये कि, जैन और बौद्ध धर्म आए है, ऐसा नहीं है कि वो सनातन संस्कृति, धर्म के विरूद्ध या उसे अलग हैं, प्रत्युत, ये दोनों धर्म, सनातन संस्कृति की ही शाखा हैं और सनातन धर्म में जो गुण दबे-रूप में था, उसका विकास कर सनातन धर्म की सेवा की। वो गुण है, अहिंसा।

जैन और बौद्ध धर्म के आने से पहले ही अहिंसा की बात प्रचलित थी जिसका प्रमाण श्री कृष्ण है। श्री कृष्ण ने कहा ''सबसे उत्तम यज्ञ वह है जिसमें किसी भी जीव की हत्या नहीं होती, प्रत्युत, जिस यज्ञ के द्वारा मनुष्य अपना जीवन परोपकार में लगा देता है।''[9] किन्तु, अहिंसा का ये गुण अंकुरित ही था, क्योंकि वैदिक काल की जो यज्ञ परम्परा थी वो समाज पर हावी थी। लेकिन, जब जैन धर्म और बौद्ध धर्म का उदय हुआ तो, सनातन

संस्कृति का अहिंसा का गुण इन धर्मों की मान्यताओं के कारण विकसित होता है। इस तरह, सनातन संस्कृति में एकता, परिवर्तन के नियम के साथ-साथ अहिंसा का गुण भी जुड़ा जाता है। इसलिए कहते हैं कि ''जैन-बौद्ध धर्म का सनातन धर्म पर क्या प्रभाव पड़ा, इसका उत्तर अगर हम एक शब्द में देना चाहें तो वह शब्द 'अहिंसा' है और यह अहिंसा शारीरिक ही नहीं मानसिक भी रही है।''[10]

इस तरह देखा जा सकता है कि, प्राचीन काल जिसमें सनातन संस्कृति का निर्माण होता है, विकास होता है, और समृद्ध रूप में उभरकर आती है। सनातन संस्कृति के ये गुण आज भी जीवित हैं, किन्तु प्राचीन काल से ही विदेशी आक्रमणों और भारतीय सामाजिक कुरीतियों के कारण सनातन संस्कृति के गुणों पर दुष्प्रभाव पड़े। इसके कारण सनातन संस्कृति का जो वास्तविक रूप था, वो कहीं धुंधला पड़ने लगा, जिसके कारण सनातन संस्कृति एक नये और विकृत रूप में प्रदर्शित होने लगी। किन्तु भारतीय विद्वानों ने सनातन संस्कृति के ऊपर जो नया और विकृत रूप चढ़ा हुआ था, उसे आधुनिक काल में उतारकर सनातन संस्कृति का नवोत्थान किया।

विदेशी आक्रमण/मुस्लिम आक्रमण का आरम्भ आठवीं शताब्दी से होता है और लगभग चार-सौ वर्ष तक चलता है। इसी बीच, भारतीय समाज में कई कुरीतियों का भी जन्म होता है। इन कुरीतियों का जन्म और विकास कैसे होता है? इस विषय पर चर्चा नहीं करेंगे और ये शोध का विषय भी है। किन्तु मुस्लिम आक्रमण-सामाजिक कुरुतियाँ और भारत पर मुस्लिम राज इन तीनों बातों का बड़ा ही गहरा सम्बन्ध है। इन तीनों मुद्दों के बीच इस गहरे सम्बन्ध को एक प्रश्न, हिंदु क्यों हारा? के उत्तर से समझ सकते हैं। हिन्दुओं के हारने के पीछे राजनीतिक चेतना का अभाव, सर्वनाशी अन्धविश्वास एवं जाति प्रथा, ये तीन महत्वपूर्ण कारणों से हिन्दू हारे। राजनीति चेतना का अभाव का अर्थ है, अलबैरुनी के अनुसार ''हिन्दू जन्मजात अहिंसक थे''।[11] अर्थात् अपनी सीमा के बाहर जाकर लड़ने की उनके यहाँ परम्परा नहीं थी बल्कि, सबसे उत्तम रक्षा यह है कि आक्रामक पर उसके घर में हमला करो, इस नीति पर हिन्दुओं ने कभी नहीं किया। सर्वनाशी अन्धविश्वास में धर्म को लेकर कई अन्धविश्वास घटनाएँ हैं, यहाँ दो घटनाओं पर चर्चा आवश्यक है **पहली :** सिन्ध पर सन् 712 में मुसलमानों का कब्जा हुआ, तब ब्राह्मणों को यह नहीं सूझा कि राजाओं को इस खतरे से आगाह करें अथवा प्रजा को इस विपत्ति से भिड़ने के लिए तैयार करें। उलटे, उन्होंने विष्णु-पुराण में कल्कि-अवतार की कथा घुसेड दी और जनता को यह विश्वास दिलाया कि, सिन्धु तट, दाविकोर्वी, चन्द्रभागा तथा कश्मीर प्रान्तों का उपभोग व्रात्य, म्लेच्छ और शुद्र करेंगे..।[12] दूसरी, जयचन्द्र ने लिखा सुबुक्तगीन और जयपाल शाह के बीच सन् 986 ई. में जो लड़ाई हुई, उसमें हिन्दू सेना बड़ी ही वीरता से लड़ी थी। कई दिनों तक संघर्ष के बाद भी हिन्दू जब नहीं थके, तब हिन्दू सेना जिस चश्मे का पानी पीती थी, तुर्कों ने उसमें शराब मिला दी। हिन्दू सेना शराब से गन्दे हुए पानी को पीने को तैयार न थी, इसलिए हार मानकर उसने सन्धि कर ली।[13]

राजनीतिक चेतना का अभाव, धार्मिक अन्धविश्वास के साथ हिन्दुओं की कमजोरी उनका जात-पात में बँटा रहना था। विपत्ति में यदि वैश्य है, तो राजपूत उसकी मदद नहीं करेंगे और विपत्ति में यदि एक गोत्र का ब्राह्मण है, तो दूसरे गोत्र वाला ब्राह्मण अलग खड़ा होगा। इसलिए डुराँट लिखते हैं कि- जात-पात के भेद-भावों से दुर्बल हो जाने के कारण ही हिन्दू जाति आक्रमणों के सामने विवश होती गई। आक्रमकों के प्रहार सहते-सहते उसकी अवरोध की शक्ति का दिवाला निकल गया... जातियों में शक्ति के लिए प्रेम होना ठीक है, किन्तु, उन्हें अपनी बारूद को गीला होने देना नहीं चाहिए।[14]

इस तरह, हिन्दुओं में राजनीतिक चेतना के अभाव नें, मुस्लिम आक्रमण को सुदृढ़ किया। दूसरी ओर, धर्म-जाति के रूप में जो सामाजिक कुरूतियाँ अपनी जड़े जमाते हुए, भारत में फैल रही थीं, उसके कारण सनातन संस्कृति कमजोर पड़ रही थी, जिसका प्रभाव मुगलों का भारत पर राज। इस तरह प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति का निर्माण हुआ, सुदृढ़ और समृद्ध भी हुई, किन्तु कुछ विनाशकारी कारणों से सनातन संस्कृति के गुण कमजोर हुए लेकिन जीवित रहे।

मध्यकाल में सनातन संस्कृति :- प्राचीन काल में सनातन संस्कृति के जो गुण थे, कुछ विशेष कारणों से, कमजोर तो पड़े किन्तु जीवित अवश्य थे। मुहम्मद गोरी ने सन् 1192 में, भारत के हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान को पराजित कर दिल्ली को जीता, काशी का पतन सन् 1194 ई. में हुआ और सन् 1196-97 में बंगाल

मुसलमानों के अधीन हो गया। इस तरह धीरे-धीरे भारत में मुगलों का शासन स्थापित हो गया। मुगलों के शासन में, इनकी साम्प्रदायिक नीति के कारण सनातन संस्कृति का एक ओर गुण देखने को मिलता है ओर वो है, असाम्प्रदायिकता की नीति।

मुस्लिम शासन, जैसे-जैसे, भारत में फैल रहा था; तो मुस्लिम शासक के द्वारा, साम्प्रदायिकता की नीति को ही अपनाया जा रहा था। जिसमें हिन्दू जनता के धर्म, रीति-रिवाज़ परम्परा को कमतर माना गया। इनके साथ भेदभाव की नीति अपनाई, जो कहीं न कहीं सनातन संस्कृति को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कर रही थी। जैसे गैर मुस्लिम प्रजा मुसलमानी पोशाक नहीं पहनेगी, गैर-मुस्लिम प्रजा अपने मुर्दो को लेकर जोर से विलाप न करे। जियाउद्दीन बरनी ने शासक को, शिकायत लिखी की ''कुछ थोड़े से टर्को के बदले सुल्तान काफिरों को धर्म की स्वतंत्रता देते रहेंगे तो हिन्दुस्तान में इस्लाम का झंडा बुलन्द नहीं रह सकेगा।''[15] इस तरह, मुस्लिम शासकों के द्वारा भारत में साम्प्रदायिक नीति को अपनाया और बढ़ाया गया। सर यदुनाथ सरकार ने लिखा है कि, ''इस्लामी राज्यतंत्र के अनुसार सभी गैर-मुस्लिम जनता शत्रु है तथा उसकी संख्या और शक्ति को समाप्त कर देना मुस्लिम शासक का प्रधान कर्तव्य है।''[16] किन्तु, मुस्लिम शासकों की साम्प्रदायिक नीति और इस नीति के माध्यम से किये गये, अत्याचारों के कारण भारत के किसी भी मुसलमान विद्वान ने मुसलमानों के अत्याचारों को अनुचित बताने अथवा उनके द्वारा, साम्प्रदायिक कारणों से गैर-मुसलमान भारतीयों पर किये गये अत्याचारों की आलोचना नहीं की। किन्तु, भारत की परम्परा असाम्प्रदायिक राज्य की रही है। अगर ऐसा नहीं होता तो, इस देश में जो जैन और बौद्ध धर्म पनपे, इनका विकास हुआ वो कभी नहीं होता। यहाँ तक कि, मुगल शासन, इस्लाम धर्म भारत में प्रवेश तक नहीं कर पाता। दूसरी बात इतिहास में ऐसा कोई प्रमाण भी नहीं मिलता जो बताए कि, भारतीय राज्य साम्प्रदायिक रहा हो। अलबैरूनी ने कहा कि ''हिन्दू जन्म-जात अहिंसक थे। अनेक धर्मों का स्वागत करते-करते वे धार्मिक मामलों में बहुत ही सहिष्णु हो गए थे।''[17]

भारत की विशेषता है कि नवागन्तुक इस देश में बस जाते हैं, उन्हें समाज में खपाने की वह, कोई न कोई, राह निकाल लेता है। यह राह और मार्ग सनातन संस्कृति के माध्यम से ही सम्भव हो पाता है और हुआ है। सनातन संस्कृति, प्राचीन काल के अंत तक आते-आते कमजोर पढ़ी किन्तु, इसके गुण जीवित थे। इन्हीं गुणों के कारण हिन्दुओं ने मुस्लिम शासकों द्वारा, अपने प्रति किये गये अत्याचारों का अहिंसा के माध्यम से उत्तर दिया और एकता व परिवर्तन के नियम के माध्यम से मुस्लिम संस्कृति, इस्लाम धर्म को अपने अन्दर समाहित कर एकता का पुनः उदाहरण स्थापित किया। इस प्रक्रिया में कई महान विद्वानों का योगदान रहा है, जैसे अमीर खुसरों, सन्त कबीर इत्यादि के माध्यम से एकता व परिवर्तन की प्रक्रिया सुदृढ़ हुई। इसके अतिरिक्त, मुस्लिम शासक जब सनातन संस्कृति से परिचित होते हैं, तो इन पर भी काफी गहरा और सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसका प्रमाण बाबार ने हुमायूँ के लिए जो वसीयतनामा लिखा है; उसे पता चलता है; जिसमें बाबर हुमायूँ को उपदेश देता है कि हिन्दुस्तान में अनेक धर्मों के लोग बसते हैं। भगवान को धन्यवाद दो कि उन्होंने तुम्हे इस देश का बादशाह बनाया है.... सभी धर्मों की भावना का ख्याल रखना। गाय को हिन्दू पवित्र मानते हैं, अतएव, जहाँ तक हो सके गोवध नहीं करवाना और किसी भी सम्प्रदाय के पूजा के स्थान को नष्ट नहीं करना।[18]

सनातन संस्कृति से मुस्लिम शासक ही प्रभावित नहीं हुए, बल्कि मुस्लिम जनता के मिथक, खान-पान, रीति-रिवाज़, भाषा इत्यादि भी प्रभावित हुए। सनातन संस्कृति का प्रभावित होना, सनातन संस्कृति के परिवर्तन के नियम को दर्शाता है, जो सनातन संस्कृति की असाम्प्रदायिकता की नीति को प्रदर्शित करता है।

मिथ-हिन्दुओं की देखा-देखी मुसलमान जनता भी गाजी, मियाँ, पाँच पीर, ख्वाजा आदि कल्पित देवताओं की पूजा करने लगे। कश्मीर में कई मुस्लिम राजे सती-प्रथा को मानते थे। खान-पान में, पान खाने की आदत, फलों से अचार तैयार करने की प्रथा इत्यादि मुसलमानों ने हिन्दुओं से ली। रीति-रिवाज- में चीरा और पाग मुसलमानों ने हिन्दुस्तानियों से लिया और बदले में, कसे-चुस्त पायजामें राजपूतानियों ने मुस्लिम से लिये। इसके अतिरिक्त, सौभाग्यवती मुस्लिम स्त्रियाँ माँग में सिन्दूर, नाक में नथ, हाथ में शंख की चूड़ियाँ पहनने लगी। साथ ही बिहार में मुसलमान छठ का व्रत रखने लगे (आज भी रखते हैं) और बंगाल में वे शीतला-माता

की पूजा करने लगे[19] भाषा में - हिन्दी कवियों की भाषा नीति, जैसे गोसाई तुलसीदास की रामायण में खोजा जा सकता है- रामायण हिन्दू-संस्कृति का महाग्रन्थ है।... इस ग्रन्थ का सम्मान भी वैसा ही है जैसा सम्मान बाइबिल अथवा कुरान का देखा जाता है। किन्तु, ऐसे धार्मिक काव्य में भी हम अरबी और फारसी शब्दों के निःसंकोच प्रयोग अनेक स्थानों पर पाते हैं, जो इस बात का प्रमाण है कि गोसाई जी में भाषा को लेकर साम्प्रदायिकता की गन्ध तक नहीं थी।[20]

हिन्दी में अरबी और फारसी शब्द, जिसमें अरबी और फारसी के विशेषणों, क्रिया विशेषण और संज्ञा-वाचक शब्दों में ''हिन्दी ने बड़ी ही उदारता से स्वीकार किया। जैसे- पायजामा, रूमाल, जल्द, बिल्कुल, यानी, बेशक आदि।''[21]

इस प्रकार, प्राचीन काल के अंत से कमजोर हुई सनातन संस्कृति, मध्यकाल में, जिसे मुगलों की गुलामी का काल भी कहते हैं उसमें प्रवेश करती है और अपने अहिंसा, एकता, परिवर्तन के नियम, असाम्प्रदायिकता के गुणों के माध्यम से इस्लामिक संस्कृति को प्रभावित करते हुए और होते हुए आगे बढ़ती है; एक नई गुलामी का सामना करने के लिए अपने को तैयार करती है और वो है- अंग्रेजों की गुलामी। इसे हम, उपनिवेशवाद के साये में सनातन संस्कृति पर किये गये अन्याय का काल कहेंगे।

आधुनिक काल (उन्नीसवीं शताब्दी से स्वतंत्रता तक 1947) में सनातन संस्कृतिः- आधुनिक काल का आरम्भ उन्नीसवी शताब्दी से ही शुरू हो जाता है, किन्तु मध्यकाल के अंत तक, पुर्तगालियों का आगमन, ईस्ट इण्डिया कम्पनी का 1600 ईस्वी में भारत में स्थापित होना इत्यादि घटना हो चुकी थी। पुर्तगालियों व ईस्ट इण्डिया कम्पनी का मुख्य रूप से दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आगमन हुआ था। पहला- भारत में व्यापार करना, दूसरा- ईसाई धर्म का भारत में प्रचार करना। इन उद्देश्यों की पूर्ति मध्यकाल के अंत से ही शुरू हो जाती है और उन्नीसवीं शताब्दी तक आते-आते उद्देश्यों की पूर्ति तो निरंतर बनी रही, किन्तु, साथ ही भारत को एक और नई गुलामी व शासन का सामना करना पड़ा, जिसे अंग्रेजी शासन या ब्रिटेन की गुलामी कहते हैं। यहाँ, एक बिन्दु पर ध्यान दिलाना आवश्यक है, कि मुस्लिम शासन और अंग्रेजी शासन के दौरान, सनातन संस्कृति को काफी चोट पहुँची है। किन्तु, मुस्लिम शासन और अंग्रेजी शासन में काफी अन्तर था। अर्थात् मुस्लिम शासन के दौरान कुछ शासक ऐसे थे, जिन्होंने इस्लामिक कट्टरता के कारण, भारतीय लोगों के साथ, उनकी संस्कृति के साथ काफी अन्याय किया किन्तु, मुस्लिम शासन के दौरान कई ऐसे शासक भी रहे, जो सनातन संस्कृति से प्रभावित हुए, यहाँ तक की मुस्लिम जनता भी काफ़ी प्रभावित हुई जिसके चलते सनातन संस्कृति बनी रही। अंग्रेजी शासन में ऐसा कुछ नहीं दिखाई देता, कि अंग्रेजी हुकूमत सनातन संस्कृति से प्रभावित हुई हो। बल्कि, अंग्रेज जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, भारत में आते है, तो उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, ये भारत में राजनीतिक व आर्थिक अन्याय तो करते है, साथ ही, सांस्कृतिक अन्याय भी करते है! राजीव भार्गव अपने लेख, हाउ शुड वी रेस्पोंड टू द कल्चरल इंजस्टिस ऑफ कॉलोनियलिजम? में कहते हैं कि ''भारत में, सरकारी नौकरियों में, शिक्षा के क्षेत्र में सीटों को आरक्षित कर, सकारात्मक क्रिया-कार्यक्रम कर राजनीतिक व आर्थिक अन्याय की तो भरपाई की गई, किन्तु सांस्कृतिक अन्याय, जिसे भार्गव ने Grave Psych-cultural Injustice और थॉमस ने नेटल एलिनेशन कहते हैं।''[22] इसकी भरपाई अभी तक ठीक से नहीं हो पाई और कैसे सांस्कृतिक अन्याय की भरपाई होगी?''

सांस्कृतिक अन्याय क्या है? प्रत्येक समूह, उस समूह में रहने वाले व्यक्तियों का एक धर्म, भाषा, परम्परा, रीति-रिवाज़, नियम, मिथस, सामूहिक स्मृतियाँ इत्यादि होती हैं। इन सभी मूल्यों का योग ही, संस्कृति कहलाती है। यही संस्कृति जो है, उस समूह, उस समूह में रहने वाले व्यक्तियों की पहचान बनती है, कि, वो कौन है। प्रत्येक समूह अपने इन सांस्कृतिक मूल्यों के साथ जीवनयापन करता है और आने-वाली पीढ़ियों में इन मूल्यों को हस्तांतरित करता है। हस्तांतरण की ये प्रक्रिया ऐसा नहीं है कि, समान-रूप से ही होती है, बल्कि ये हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में बदलाव के साथ भी होता है, क्योंकि संस्कृति के मूल्य कभी भी स्थाई नहीं होते, बल्कि, उनमें भी परिवर्तन आता है। किन्तु, ये परिवर्तन जब उसी समूह के लोगों द्वारा होता है, उनकी समझ, उनकी योग्यता के अनुसार तो फिर, यह प्रक्रिया सही और सहज होती हैं और ये सांस्कृतिक न्याय है। किन्तु, यही बदलाव जो है, किसी अन्य सांस्कृतिक समूह के लोगों द्वारा अपनी शक्ति का इस्तेमाल कर जबरदस्ती

करवाया जाता है, जिसे की समूह में रहने वाले व्यक्ति अपने सांस्कृतिक मूल्यों के अनुसार अपना जीवन व्यतीत नहीं कर पाते और फिर आने वाली पीढियां भी जन्म से अपने सांस्कृतिक मूल्यों में अपना जीवन नहीं व्यतीत कर पाती है, तो उसे ही सांस्कृतिक अन्याय कहते हैं। जिसे राजीव भार्गव ने Grave Psych-Cultural Injustice और थॉमस ने नेटल एलिनेशन कहा।

आधुनिक युग में, जब भारत पर अंग्रेजी शासन स्थापित था, अप्रत्यक्ष व प्रत्यक्ष रूप से, तब उस समय भारतीय लोगों के साथ भी सांस्कृतिक अन्याय हुआ, जैसे कि, अफ्रीका में हुआ था। सांस्कृतिक अन्याय कैसे हुआ है? या सांस्कृतिक अन्याय किस तरह से किया? इन प्रश्न पर विचार करेंगे। अंग्रेजों ने भारत के साथ दो आधार पर सांस्कृतिक अन्याय किया है, जिसमें पहला आधार, शिक्षा व्यवस्थाः- भारतीय शिक्षा व्यवस्था काफी समृद्ध थी, जहाँ पर भारतीय लोगों को, जो सनातन मूल्य थे, सनातन परम्परा थी इत्यादि का ज्ञान दिया जाता था। तत्कालीन शैक्षिणक स्थिति पर ऐडम की जो रिपोर्ट निकली थी, उसमें बताया गया कि ''बंगाल-बिहार में हर चार सौ व्यक्तियों पर एक स्कूल था।''[23] सन् 1821 ई. में मद्रास के गवर्नर सर टॉमस मुनरो ने जो जाँच करवाई थी, उससे पता चलता था, कि, ''मद्रास की सवा-करोड़ जनसंख्या में कोई दो लाख लोग विद्यालयों में पढ़ रहे थे।''[24] भारत की समृद्ध शिक्षा व्यवस्था को देख, अंग्रेजी शासन ने इसे बर्बाद करने की सोची, जिसमें पहला कदम, लॉर्ड मैकॉले के परामर्श से लार्ड विलियम वेंटिक ने अपनी सन् 1835 ई. वाली घोषणा में यह घोषणा की कि भारतवर्ष में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होगा, जिसके कारण अब भारतीयों को पश्चिमी शिक्षा, पश्चिमी मूल्यों का ज्ञान दिया जाने लगा। इसे, भारतीय युवा अपनी पारम्परिक शिक्षा से दूर होते गए और एक नव-शिक्षित युवक वर्ग उभरा जिसके द्वारा सनातन परम्परा, ज्ञान को घटिया समझा जाने लगा। साथ ही, इन नव-शिक्षित युवकों द्वारा सनातन धर्म छोड़कर ईसाई धर्म का प्रचार किया जाना शुरू हो गया। इस प्रकार, अंग्रेजी शासन के द्वारा भारतीय शिक्षा व्यवस्था को तो बर्बाद किया ही गया, साथ ही, भारतीय लोगों को उनकी सनातन संस्कृति, मूल्यों से भी दूर कर दिया गया।

भारतीय सामाजिक कुरूतियों को आधार बनानाः- प्राचीन काल के अंत तक आते-आते सनातन संस्कृति के गुण कमजोर पढ़ने लगे थे, किन्तु, फिर भी सनातन संस्कृति, वर्तमान के रथ पर बैठकर भविष्य की ओर बढ़ रही थी। किन्तु, इसके साथ-साथ भारतीय समाज की कुरीतियाँ भी आगे बढ़ते हुए, मजबूत हो रही थी, जिसके कारण, आधुनिक काल (उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ) तक आते-आते इतनी मजबूत हो गई, कि, सनातन संस्कृति का जो वास्तविक रूप है, उसे छुपाकर खुद भारतीय संस्कृति के रूप में प्रस्तुत हुई। यहाँ यह बात ध्यानयोग्य है, कि, यह बात सत्य है कि भारतीय सामाजिक कुरीतियों ने वास्तविक सनातन संस्कृति का रूप लेकर समाज में प्रस्तुत हुई। किन्तु, यह बात अंग्रेजी हुकूमत कई रिपोर्ट जैसे विलियम एडम की रिपोर्ट के माध्यम से समझ आ गई थी, कि, ये जो सनातन संस्कृति है, ये वास्तविक सनातन संस्कृति नहीं है, बल्कि, ये भारतीय सामाजिक कुरीतियाँ है। परन्तु अंग्रेजी शासन ने इस सत्य को छूपाकर जो सामाजिक कुरूतियाँ सनातन संस्कृति के रूप में प्रस्तुत हो रही थीं, उसे ही भारत में, भारत के लोगों के सामने तो प्रस्तुत किया, साथ ही विश्व स्तर पर भी प्रस्तुत किया। जिससे ये, अपने हितों की पूर्ति कर सकें। यह अंग्रेजी शासन की 'व्यवस्थित सोच' थी। इस व्यवस्थित सोच के कारण कई पश्चिमी विचारकों ने भारतीय संस्कृति पर टीकाएँ की, जिसमें से प्रमुख जे. एस.मिल भी थे जिन्होंने भारतीय इतिहास और ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास का अध्ययन कर इन दो देशों के लोगों के बीच अंतर बताते हुए कहा कि "श्वेत शासक भौतिक रूप से समृद्ध है, सभ्य है, इनका विश्वास, धर्म भी सर्वोच्च है जबकि जो शासित (भारतीय) लोग, अश्वेत, अल्पविकसित, असभ्य, इनका विश्वास, धर्म इत्यादि निम्न है।"[25] इस तरह पश्चिमी विचारकों द्वारा जब भारतीय सभ्यता, सनातन संस्कृति पर ये सब टीकाएँ की गई तो इसका भारतीय समाज पर बुरा प्रभाव पड़ता है-

भारत में जो अभिजात वर्ग था, उसे जब पता चलता है कि, उनकी जो संस्कृति है वो घटिया है, तो उनका आत्म-विश्वास, आत्म प्रतिष्ठा टूट जाती है, जिसके कारण ये अपनी संस्कृति को छोड़कर अंग्रेजी संस्कृति को अपना लेते हैं। फैनन ने इन्हें ''ब्लैक स्किन एण्ड वाइड मास्क'' की संज्ञा दी। एलबर्ट मैमी ने कहा कि, ''स्वयं की स्वतंत्रता के लिए इन्होंने स्वयं को ही बर्बाद कर दिया।'' जिन लोगों ने भारतीय संस्कृति को नहीं छोड़ा,

उन्हें इन अभिजात लोगों के द्वारा ही निम्न मान लिया गया।[26]

इस तरह, अंग्रेजों द्वारा सनातन संस्कृति को समझते हुये भी भारतीय सामाजिक कुरीतियों को ही सनातन संस्कृति के रूप में प्रस्तुत किया और स्वतंत्रता, समानता, अधिकार, न्याय जैसे नये मूल्यों के आधार पर, जोकि, सनातन संस्कृति में प्राचीन काल से ही मौजूद थे; भारतीय लोगों को अपनी संस्कृति थोपकर उन्हें उनकी संस्कृति से अलग कर देना, सनातन संस्कृति के मूल्यों से अलग कर देना ही सांस्कृतिक अन्याय कहलाया।

हमे लगता है, कि, इस सांस्कृतिक अन्याय का, भारतीय समाज पर दो तरह का प्रभाव पड़ा। जिसमें पहला : सकारात्मक प्रभाव :- अंग्रेजों द्वारा सामाजिक कुरीतियों व भारतीय शिक्षा व्यवस्था को ढहाकर, अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था लागू की, तो इसे, भारतीय लोगों के साथ सांस्कृतिक अन्याय तो हुआ, किन्तु, इस अंग्रेजी व्यवस्था के कारण, भारतीय लोग अपनी ही सामाजिक कुरीतियों, प्रथाओं से अवगत हुए और इन सामाजिक कुरीतियों के कारण, सनातन संस्कृति का जो वास्तविक रूप छुप गया, जिसके कारण, भारतीय लोग अपनी सनातन संस्कृति को भूलते जा रहे थे, इससे फिर से परिचित होने, इसके ज्ञान से परिचित होने का मौका मिला। इसे हिन्दू-नवोत्थान कहा गया, जिसके दो उद्देश्य थे।

पहला : समाज सुधारना :- उन सामाजिक कुरूतियों से जिसने हिन्दु समाज को बुरी तरह प्रभावित किया है।

दूसरा, सनातन संस्कृति को फिर से पुर्नजीवित करनाः- जो कहीं न कहीं भारतवासी अपनी ही कुरुतियों व गुलामी के कारण भूल गये थे। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कई पश्चिमी व भारतीय प्रकांड विद्वानों का योगदान रहा है, जिन्होंने भारतीय संस्कृति का गहन अध्ययन कर उसके गुणों को भारतवासियों व दुनिया के सामने रखा। यहाँ विशेषता की बात है, कि, ऐसा नहीं है कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति एक ही दम हो गयी बल्कि जैसे-जैसे विद्वानों ने सनातन संस्कृति का अध्ययन किया, वैसे-वैसे उसकी व्याख्या कर विद्वानों ने सैद्धान्तिक पक्ष रखा, तो, कईयों ने सनातन संस्कृति के गुणों को आत्मसात कर उसका व्यवहारिक पक्ष दिखाया। पश्चिमी विचारक, जोहान, फिक्टे और पाल दूसान ने कहा कि ''वेदान्त के सत्य को संसार का सबसे बड़ा सत्य माना।'' नीत्शे को जब मनुस्मृति देखने को मिली, तब उसने भी ''मनुस्मृति को बाइबिल से अनेक गुना श्रेष्ठ स्वीकार किया।'' जोंस संस्कृत भाषा के अद्‌भुत भक्त थे; उन्होंने कहा कि, "संस्कृत परम अद्‌भुत भाषा है। वह यूनानी से अधिक पूर्ण और लातीनी से अधिक सम्पन्न है।"[27]

भारतीय विचारक, राजाराम मोहन राय द्वारा ब्रह्म समाज, महादेव गोविन्द रनाडे द्वारा प्रार्थना समाज, स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा आर्य समाज इत्यादि की स्थापना कर सामाजिक कुरीतियों के कारण जो वैदिक सनातन संस्कृति छुप गई थी, उसके वास्तविक रूप को बाहर निकालकर, फिर से स्थापित किया और यह बताया कि, जो सामाजिक कुरीतियाँ हैं जो न तो सनातन संस्कृति है और न ही सनातन संस्कृति में विद्यमान है। किन्तु, यहाँ विशेष बात यह है कि, इन विद्वानों द्वारा धर्म के उसी पक्ष को छुआ गया, जिसे, वे ईसाई से, उनकी आलोचना से हिन्दू धर्म को बचा सके। लेकिन आगे चल कर ऐनी बेसेंट ने वेदों के साथ-साथ उपनिषद्, पुराण, गीता इत्यादि ग्रन्थों के मूल को उजागर कर भारतीय संस्कृति का पूर्णरूप सामने रखा और सन् 1914 ई. में एक भाषण में कहा कि ''चालीस वर्षों के सुगम्भीर चिन्तन के बाद मैं यह कह रही हूँ कि विश्व के सभी धर्मो में हिन्दू धर्म सनातन धर्म, से बढ़कर पूर्ण, वैज्ञानिक, दर्शनयुक्त एवं आध्यात्मिकता से परिपूर्ण धर्म दूसरा और कोई नहीं है।"[28]

अभी तक, इन पश्चिमी व भारतीय विचारकों द्वारा सनातन संस्कृति के पक्ष में जितनी भी बातें रखी जा रही थीं, वो सैद्धान्तिक थीं, जिसे भारतीय लोगों पर इतना प्रभाव नहीं पड़ रहा था, जितना कि पड़ना चाहिए था। किन्तु, आगे चलकर भारतीय विद्वानों व विचारकों ने सनातन संस्कृति को अपने जीवन में आत्मसात कर, भारतीय जनता को काफी प्रभावित किया। इसकी शुरूआत, रामकृष्ण परमहंस ने की और बाद में, स्वामी विवेकानन्द ने अहम भूमिका निभायी। इन्होंने 7 साल पूरे भारत का भ्रमण किया, जिसे 'परिव्रज्या' कहा जाता है। इस भ्रमण में स्वामी जी ने भारत की समस्याओं जैसे-अन्धविश्वास, सामाजिक कुरीतियों को पहचाना और कहा कि, ''भारत की इन समस्याओं का हल ज्ञान के माध्यम् से हो सकता है और ये ज्ञान-वैज्ञानिक व अध्यात्मिक हो, तभी सम्भव हो सकता है।''[29] ''विवेकानन्द के उपदेशों से ही भारतवासी अपने पतन की गहराई भाप सके, अपने शारीरिक क्षय एवम् आधिभौतिक विनाश, अपनी

क्रियाविमुखता और आलस्य तथा अपने पौरूष के भयानक ह्रास को पहचान सके और विवेकानन्द की वाणी में ही सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का जन्म हुआ।''[30] महात्मा गांधी ने भी सनातन संस्कृति के गुण अहिंसा का राष्ट्रीय आंदोलनों में प्रयोग कर देश की स्वतंत्रता में एक प्रमुख भूमिका निभाई।

इस तरह, इन प्रकांड विद्वानों ने अपने अथक प्रयासों से सनातन संस्कृति को न केवल परिष्कृत किया, बल्कि, इनके द्वारा सनातन संस्कृति को व्यावहारिक रूप देकर लोगों को उससे परिचित कराया, कि, सनातन संस्कृति जो सामाजिक कुरीतियों के पीछे छिप गई थी, वो कितनी 'समृद्ध, वैज्ञानिक एवम् आध्यात्मिक' हैं। इस तरह सांस्कृतिक अन्याय के कारण, सनातन संस्कृति का फिर से नवोत्थान होता है। यही इसका सकारात्मक प्रभाव है।

किन्तु, दूसरा जो नकारात्मक प्रभाव है, इसे भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यह बात सत्य है कि, सांस्कृतिक अन्याय को भारतीय विद्वानों ने सकारात्मक रूप में लेते हुए, सनातन संस्कृति का नवोत्थान किया। किन्तु अंग्रेजी हुकूमत के सांस्कृतिक अन्याय का जो नकारात्मक प्रभाव पड़ा, वो आज भी भारतीय राजनीति, समाज एवम् संस्कृति में नासूर बना हुआ है- साम्प्रदायिकता, भाषावाद इत्यादि के रूप में। इस घटना को देख ऐसा लगता है, कि, 1947 के बाद से इतिहास अपने आपको फिर से दोहरा रहा है। फिर से, सनातन संस्कृति के नवोत्थान की जरूरत है और इस नवोत्थान में इस बार भारतीय विद्वानों से ज्यादा, सनातन संस्कृति को समझने वाली सरकार अपनी अहम भूमिका अदा करेगी।

निष्कर्षः निःसंदेह, यह बात सत्य है, कि, सनातन संस्कृति एक महान संस्कृति थी, है, और रहेगी। ये, महानता इसके गुणों जैसे एकता, परिवर्तन का नियम अहिंसा, असाम्प्रदायिकता, सर्वधर्म समभाव इत्यादि में समाहित है। अंत में दो बातों का उल्लेख करना आवश्यक है। पहली बात यह है कि, सनातन संस्कृति, धर्म में जितनी भी बातों का जिक्र किया गया उसका सिर्फ वर्णन (डिस्क्रिप्शन) किया गया है, जबकि, अन्य संस्कृतियों में, इनके धर्म में जितनी भी बातों का जिक्र किया गया, उसका निर्धारण (प्रिस्क्रिप्शन) किया गया है और आवश्यक माना गया है। कहने का अभिप्राय यह है कि सनातन संस्कृति व धर्म में जिन भी बातों का जिक्र किया गया है, उसका सिर्फ वर्णन किया गया है, कि, व्यक्तियों को अपना जीवन इन सिद्धान्तों के आधार पर व्यतीत करना चाहिए, यहाँ कहीं भी यह नहीं कहा कि व्यक्ति को इन्हीं सिद्धान्त के आधार पर अपना जीवन व्यतीत करना ही होगा। क्योंकि सनातन संस्कृति व धर्म में व्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण माना गया है। व्यक्ति अपने हिसाब से जीवन-यापन कर सकता है। तो इसलिए सनातन संस्कृति, धर्म में डिस्क्रिप्शन को आवश्यक माना गया है जोकि इसे कट्टर बनाने से रोकता है। किन्तु, वहीं अगर हम अन्य संस्कृतियों व धर्मों में देखे उदाहरण के लिए अब्राहमिक मज़हबों में तो यहाँ पर जीन बातों का जिक्र किया गया है, उसमें, इन बातों को निर्धारित किया गया है, कि, अगर इस धर्म को मानने वाले लोग ऐसा नहीं करते है, तो, उन्हें दण्ड दिया जाएगा। इस तरह से संस्कृतियाँ कट्टरता की ओर बढ़ती हैं। सनातन धर्म, संस्कृति में 'वर्णन' को आवश्यक माना गया है, ये, इसकी खूबसूरती है किन्तु, इस विशेषता के कारण सनातन संस्कृति, धर्म को हमेशा से कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा है, जिस पर सुगम्भीर रूप से चिन्तन करने की आवश्यकता है।

दूसरी बात, सनातन संस्कृति के सम्बन्ध में जिन गुणों का वर्णन किया गया है, उसे हिन्दू समाज/सनातनी समाज ने उसे हमेशा से अपूर्ण रूप में, इसके एक ही पहलू को समझा है और उस पर अमल किया है। कहने का अभिप्राय है कि, 'अहिंसा' जो सनातन संस्कृति का ही गुण है, जिसका वर्णन भगवत गीता के एक श्लोक ''अहिंसा परमो धर्मः, धर्म हिंसा तदैप चा'' में किया गया है, जिसका अर्थ है कि, अहिंसा ही परम धर्म है लेकिन अगर धर्म पर कोई खतरा आता है तो हिंसा करना भी धर्म है। लेकिन सनातनी समाज ने हमेशा से इसके आधे अर्थ को समझकर ही इस पर अमल किया है कि हिंसा नहीं करनी चाहिए, जिसे कारण भारत को हमेशा कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा है उदाहरण के लिए समय-समय पर विदेशी आक्रमणों का सामना करना, मुगलों की गुलामी का सामना करना। जभी वीर सावरकर ने अपनी हिंदुत्व की किताब में इसे ''सद्गुण-विकृति'' की संज्ञा दी।[31] सावरकर कहते हैं कि सनातन संस्कृति के ये गुण तो अच्छे है, लेकिन हिन्दू समाज ने इसके अधूरे अर्थ को समझकर इन्हें विकृति कर दिया। कहने का अभिप्राय मेरा यहाँ यह है कि, आवश्यकता यह है कि हिन्दू समाज को कैसे सनातन गुणों का पूरा अर्थ

समझाया जाए और इस प्रक्रिया में कौन महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा?

उपर्युक्त बिन्दुओं पर सुगम्भीर रूप से चर्चा करने की आवश्यकता है, अगर ऐसा नहीं होता है, तो इतिहास अपने-आपको फिर से दोहराएगा एक नए रूप में!

सन्दर्भ

1. Bhargava, R, How should we respond to the cultural in justice of colonialism?, Oxford University press, 2007, P. 5.
2. वही, पृ.6
3. प्रसाद, ईश्वरी और शैलेन्द्र शर्मा, 'प्राचीन भारतीय संस्कृति कला राजनीति धर्म तथा दर्शन', मीनू पब्लिकेशंस, 20 म्योर रोड इलाहबाद, 1966, पृ, 21.
4. हुसैन,एस.आबिद, 'भारतीय राष्ट्रीय संस्कृति', राष्ट्रीय पुस्तक न्याय, न्यू दिल्ली, 2014, 1987, पृ. 31
5. दिनकर, रामधारी सिंह, 'संस्कृति के चार अध्याय', लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2010, 1956, 1962, पृ, 51-65.
6. वही, पृ. 85
7. वही, पृ. 85-86
8. वही, पृ. 91
9. वही, पृ. 107
10. वही, पृ. 119
11. विष्णु पुराण, अंश4, अध्याय 24-98.
12. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 229
13. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ.232
14. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 235
15. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 239
16. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 238
17. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 237
18. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 251
19. प्रसाद राजेन्द्र सिंह, 'खंडित भारत', प्रभात प्रकाशन, न्यू दिल्ली, 2018, पृ. 67-68
20. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ.325
21. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ.326
22. James, P.S, understanding evil: American slavery, the Holocaust, and the conquest of the American Indian, Jstor, volume106 No.2 january 1996, PP. 424-448.
23. धर्मपाल, 'भारत का स्वधर्म', भारत पीठम, चांडक निवास, शास्त्री चौक बैचलर रोड वर्धा, 1994, पृ. 32-66.
24. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 362
25. Guha, R, 'Dominance without Hegemony: History and Power in Colonial India', Oxford University Press, Delhi, 1998, P.3.
26. Bhargava, op.cit., p.8-28.
27. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ.375
28. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 413
29. वर्मा, वी. पी, 'आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन', लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2014, 1987, 2009, पृ. 177-217
30. रामधारी सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 436
31. सावरकर विनायम दामोदर, 'हिन्दुत्व', प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020, पृ. 78

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023
Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

समकालीन परिदृश्य में कृषि में महिला किसानों की भूमिका एवं समस्याएँ : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

❑ डॉ. आभा मिश्रा

सूचक शब्द : कृषि, महिला किसान, समकालीन व्यवस्था।

प्रस्तुत शोध लेख में एक किसान के रूप में महिलाओं की भूमिका, समस्याएं व महिला किसान के आधार पर उनकी पहचान आदि का समग्र विश्लेषण भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में चित्रित करने का प्रयास किया गया है। वर्तमान समय में अवलोकन करें तो महिलाएं सामाजिक तथा पारिवारिक सहभागिता के साथ ही खेती किसानी अर्थात कृषि सम्बंधित कार्यों में भी पुरुषों का सहयोग कर रहीं हैं। आज महिलाएं कृषि कार्यों में संलग्न ही नहीं हैं अपितु कृषि प्रबंधन में भी अपनी उपस्थिति अंकित कर रही हैं, लेकिन फिर भी समाज में एक महिला किसान के रूप में उनकी भूमिका गौण है। लेख में उक्त के सन्दर्भ में उन सभी कारकों की छानबीन की गयी है और निष्कर्षतः यही परिलक्षित हुआ है कि किसान के रूप में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका के पश्चात् भी अदृश्यता के पीछे लैंगिक मानदंड मुख्य रहे हैं। समाज में आज भी यह सामाजिक धारणा है कि किसान पुरुषों को ही माना जाता है और महिलाओं की उनके सहयोगी के रूप में ही देखा जाता है जबकि कृषि कार्यों में पुरुषों के साथ साथ महिलाओं की भी सूक्ष्म भूमिका होती है, इसके बाद भी भू स्वामित्व आदि में महिलायें अभी भी लैंगिक असमानता की शिकार हैं।

भारतीय समाज प्रारंभ से ही कृषि आधारित व्यवस्था वाला देश रहा है और सम्पूर्ण विश्व में भारत को एक कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता रहा है। आज भी भारत की अधिकांश जनसंख्या गावों में ही निवास करती है और देश की अर्थव्यवस्था के प्रमुख आधारस्तंभ में कृषि भी समावेशित है। यदि हम भारतीय समाज के सन्दर्भ में यह कहें कि यहाँ की सबसे बड़ी इकाई गांव ही है और मानव सभ्यत्ता के विकसित होने में कृषि की अमूल्य भूमिका रही है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस सन्दर्भ में महात्मा गाँधी का यह कथन उल्लेखनीय है कि भारत की आत्मा गावों में ही बसती है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में प्राचीन काल से ही लोगों का मुख्य पेशा पशुपालन, खेती किसानी आदि रहा है जिसमें किसानों का महती योगदान रहा है। भारतीय सन्दर्भ में यदि ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में यदि कृषि संस्कृति पर दृष्टिपात करें तो किसान ही मूलाधार रहा है तथा इसमें किसानों के साथ ही उनके परिवार की महिलाओं की भूमिका भी बहुमूल्य रही है। यद्यपि कृषि कार्य में महिला किसानों ने सदैव से ही अपने श्रम का योगदान दिया है परन्तु वर्तमान में भी उनकी भूमिका नगण्य ही है। महिला किसान ही नहीं अपितु किसानों के सन्दर्भ में भी समकालीन भारतीय समाज पर यदि समग्र रूप से दृष्टिपात करें तो यही अवलोकित होता है कि आज वर्तमान समय में कहीं न कहीं शारीरिक श्रम का स्थान या उपयोगिता मानसिक श्रम द्वारा ले लिया गया है। यह स्थिति किसान हो या महिला किसान दोनों की ही क्षरणयुक्त दशा का सूचक है और महिला किसान का स्थान तो पहले से ही मात्र पुरुष किसान की सहयोगी के रूप में ही रहा है।

अध्ययन का उददेश्यः-

1. भारतीय समाज के सन्दर्भ में कृषि व्यवस्था में महिला किसानों की भूमिका को विश्लेषित करना।
2. कृषि कार्य में संलग्न महिला किसानों की समस्याओं को उल्लेखित करना।

शोध प्रविधि :- प्रस्तुत शोध पत्र अध्ययन की प्रकृति के आधार पर विश्लेषणात्मक शोध प्रविधि पर आधारित है जिसमें मुख्यतः भारतीय कृषि व्यवस्था में महिला किसानों को विश्लेषित व उनके प्रभाव का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। अध्ययन की प्रकृति के आधार पर प्रस्तुत अध्ययन में द्वितीयक स्रोत के अंतर्गत सन्दर्भ पुस्तकें, शोध लेख व शोध पत्र, समाचार पत्र, संबंधित कृषि रिपोर्ट, वेबसाइट आदि से आंकड़े एकत्रित किये गए हैं।

❑ सहायक आचार्य समाजशास्त्र, श्रीमती बी.डी. जैन गर्ल्स पी.जी. कालेज, आगरा छावनी (उ.प्र.)

किसान : एक अवधारणात्मक परिचय

किसान को ऐतिहासिक रूप में परिभाषित करना यद्यपि एक दुरूह कार्य है, क्योंकि इसके बारे में कोई सर्वमान्य परिभाषा आज तक नहीं बन पायी है कि सही मायने में किसान कौन है और किसे इस श्रेणी में रखा जाए। समाजशास्त्रीय अर्थ में देखें तो किसान शब्द से तात्पर्य एक ऐसे व्यक्ति से है जिसका प्रकृति से सीधा सम्बन्ध हो तथा जो कृषि कार्य में संलग्न हो और वह कृषि कार्य के माध्यम से ही अपना जीवनयापन करता हो। अर्थात किसान वह व्यक्ति है जिसकी आजीविका का स्रोत कृषि है और वह लाभ हेतु नहीं अपितु उत्पादन हेतु खेती करता हो। सामान्यतः एक किसान छोटे पैमाने पर उत्पादन का कार्य करता है। रेडफील्ड ने किसान को परिभाषित करते हुए कहा है कि- "वे ग्रामीण लोग जो जीवन निर्वाह के लिए अपनी भूमि पर नियंत्रण बनाये रखते हैं और उसे जोतते हैं तथा कृषि जिनके जीवन के परम्परागत तरीके का एक भाग है और जो कुलीन वर्ग या नगरीय लोगों की ओर देखते हैं और उनसे प्रभावित होते हैं, जिनके जीवन जीने का ढंग उन्हीं के समान हैं, लेकिन कुछ अधिक सभ्य प्रकार का।"[1] समाजशास्त्र में कृषक समाज या किसान के बारे में सर्वप्रथम रोबर्ट रेड्फील्ड ने विचार व्यक्त किये हैं।

महिला किसान कौन है?

महिला किसान किसे कहते हैं इस पर चर्चा होते ही हमारे मानस पटल पर कृषि कार्य में संलग्न अर्थात खेतों में निराई, रोपाई, फसल काटती हुई महिला का चित्र प्रतिबिंबित होता है। उक्त कार्यों में संलग्न महिलाओं को अधिकांशतः किसान के स्थान पर पुरुष सहायक या कृषि श्रमिक के तौर पर ही माना जाता है, जबकि इन्हीं कार्यों में संलग्न पुरुषों को किसान कहा जाता है। इस लैंगिक अंतर का मूलभूत कारण है भूमि पर मालिकाना अधिकार जो कि प्रायः पुरुष किसान का ही रहता है। बाज़ार की परिभाषा में किसान होने का तात्पर्य भूमि स्वामित्व से होता है न की उसमें श्रम कौन कर रहा है, इसीलिए कृषि में सहभागी होने पर भी महिलाओं को किसान का पूर्णरूपेण स्थान नहीं मिल पाया है। "जबकि कृषि क्षेत्र में 80 प्रतिशत आर्थिक रूप से सक्रिय महिलाएं हैं व इनमें से 33 प्रतिशत महिलाएं कृषि श्रमिक हैं व 48 प्रतिशत स्वरोजगारी महिला किसान हैं।"[2] अतः महिला किसान की परिभाषा में आज भी वही श्रमिक महिलाएं सम्मिलित हो पाती हैं जो कृषि जोत या भू स्वामित्व में हैं। उत्तर प्रदेश में महिला किसानों का भूमि पर स्वामित्व मात्र 6.5 प्रतिशत है जिसमें अधिकांश वही महिलाएं हैं जो की विधवा हैं या मायके से भू संपत्ति प्राप्त की हैं।

साहित्य समीक्षा :

अग्रवाल, एस.[3] ने अपने अध्ययन में उन सभी महिलाओं किसानों से साक्षात्कार के द्वारा उनके संघर्ष को व सरकारी योजनाओं से क्या लाभ हुआ आदि के प्रभाव द्वारा उनकी वर्तमान की स्थिति को विश्लेषित किया है, कि कैसे समाज में उन्होंने एक किसान की पत्नी के रूप में नहीं अपितु एक आत्मनिर्भर व स्वंतत्र महिला किसान के रूप में अपनी उपस्थिति परिलक्षित की है।

शशि बाला[4] ने अपने अध्ययन में कृषि क्षेत्र में लैंगिक असमानता को विश्लेषित किया है। आपने शोध अध्ययन में उन सभी समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया है जिनका सामना महिलाओं द्वारा एक श्रमिक या किसान होने के कारण कृषि क्षेत्र में किया जाता है। आपके अनुसार महिलाओं द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर हो या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हो, कृषि ऐसा क्षेत्र है जहां बड़ी संख्या में महिलाएं भी पुरुषों के साथ श्रम करती हैं, लेकिन यदि महत्व व अधिकार की बात की जाए तो पुरुष किसान की तुलना में कृषि कार्य में संलग्न महिला श्रमिक व किसानों की भूमिका एवम् अधिकार गौण ही है। अंततः यह अध्ययन लैंगिक आधार में एक निष्पक्ष अध्ययन का प्रयास रहा है।

एस. वर्मा[5] ने कृषि क्षेत्र में कार्यरत महिला श्रमिकों के क्रियाकलाप व उनकी भूमिका एवं सम्बंधित समस्याओं का अध्ययन भारतीय परिदृश्य में किया है। इस अध्ययन में निष्कर्षतः यही परिलक्षित हुआ है कि महिला कृषि श्रमिकों या किसानों को पुरुष किसानों की तुलना में अधिक असमानतापूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ता है तथा कार्य क्षेत्र में भी दोहरी भूमिका का निर्वहन करना पड़ता है।

डेहरिया, शोभा राम[6] आपने कृषि में महिलाओं की भूमिका एवं उनके योगदान का अध्ययन छत्तीसगढ़ राज्य के बस्तर जनपद के अंतर्गत आने वाले ग्राम के सन्दर्भ में किया है। इस अध्ययन में तथ्य रूप में आपने पाया कि कृषि में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है तथा वे ग्रामीण अर्थ व्यवस्था की रीढ़ है, परन्तु फिर भी उन्हें समाज में कृषि श्रमिक शक्ति नहीं माना जाता है तथा

सक्रिय भूमिका के बाद भी परिवार के पुरुष कृषक के समतुल्य नहीं माना जाता है।

कृषि कार्यों में महिलाओं की सहभागिता :- भारतीय समाज के सन्दर्भ में देखें तो कृषि क्षेत्र में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, फिर भी बहुधा वह कामकाजी महिलाओं में सम्मिलित नहीं रहती हैं। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार "भारतीय कृषि में महिलाओं का योगदान लगभग 32 प्रतिशत है। पूर्वोत्तर एवं केरल जैसे राज्यों में तो कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं का योगदान पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक है। आज लगभग 7.5 करोड़ महिलाएं दूध उत्पादन एवं पशु प्रबंधन में उल्लेखनीय भूमिका निभा रहीं है।"[7] उपर्युक्त आंकड़ों के आधार पर देखें तो कृषि एवं सम्बंधित क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन के पश्चात् भी उन्हें महिला किसान के रूप में न देखकर पुरुष किसान की सहयोगी या सहायक ही समझा जाता है, जबकि यदि कृषि कार्यों में महिलाओं को भी श्रमिक के स्थान पर पुरुषों के समतुल्य देखा जाए तो इससे उत्पादन में वृद्धि हो सकती है जिससे स्वयं किसान व देश दोनों ही लाभान्वित होंगे। कृषि क्षेत्र में महिलाओं की सहभागिता का एक दूसरा पहलू यह भी है कि मुख्यतः खेती बाड़ी के अतिरिक्त गृह संचालन से जुड़े वे सभी कार्यों जैसे- भोजन हेतु राशन का प्रबन्ध करना, जलावन की लकड़ी का प्रबन्ध, पशुओं के लिए आहार या चारे का प्रबन्ध करना, पीने के पानी का प्रबन्ध करना इत्यादि दिन प्रतिदिन की सभी गतिविधियों के संपादन में महिलाओं की केंद्रीय भूमिका है। इसके अतिरिक्त यदि आज भी महिलाओं की सामुदायिक सहभागिता, आर्थिक स्वतंत्रता व स्वामित्व की बात करें तो उनकी पहुँच नगण्य है जिसके पीछे एक मुख्य कारक यह भी है कि कृषि से सम्बंधित समस्त कार्यों में व स्वामित्व में पुरुषों की भागीदारी महिलाओं से उच्च है जो कि निम्नांकित तालिका द्वारा अग्रांकित है।

लैंगिक आधार पर भारत में परिचालन जोत की संख्या व संचालित क्षेत्र

श्रेणीगत आकार	लिंग	परिचालन जोत संख्या	संचालित क्षेत्र
सीमांत	पुरुष महिला	85383 14716	32659 5214
लघु	पुरुष महिला	22303 3469	31286 4813
अर्द्ध मध्यम	पुरुष महिला	12318 1645	33182 4353
मध्यम	पुरुष महिला	4995 543	28586 3078
बड़ा	पुरुष महिला	753 66	12071 1035

स्त्रोत : कृषि संगणना 2015-16

उपर्युक्त तालिका द्वारा प्रदर्शित हो रहा है कि परिचालन जोत धारक महिलाएं उनकी संख्या एवं महिलाओं द्वारा संचालित क्षेत्र का प्रतिशत प्रत्येक श्रेणी में पुरुषों की तुलना में न्यूनतम रहा है। यद्यपि यहाँ पर यह उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है कि परिचालन जोत धारक महिलाओं के भागीदारी के प्रतिशत में उत्तरोतर वृद्धि हुई है, जो कि भारतीय समाज व कृषि अर्थव्यवस्था हेतु सकारात्मक संकेत है। उपर्युक्त वृद्धि को प्रतिशतता के आधार पर निम्नाकित ग्राफ द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

वर्षवार जोत धारक महिलाओं का प्रतिशत

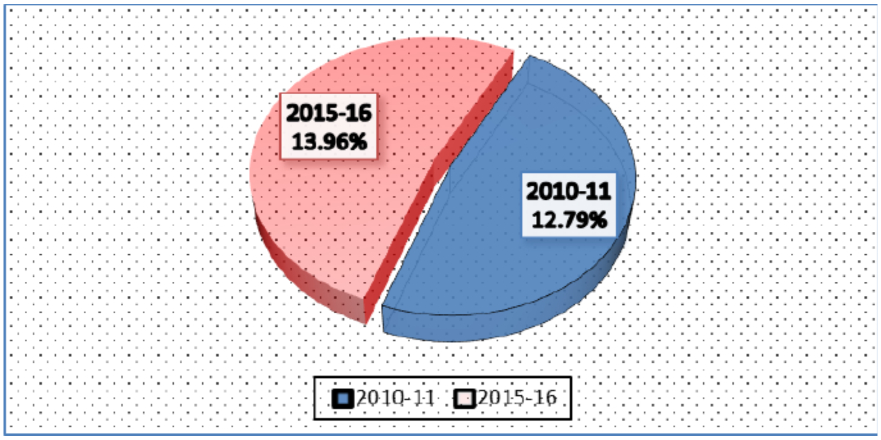

स्रोत- कृषि संगणना 2015-16। इसी अनुक्रम में देश में 11वीं कृषि संगणना 2021-22 का शुभारंभ 28 जुलाई 2022 को किया गया है जोकि तीन चरणों में संचालित की जा रही है। (L=ksr agcensus.nic.in)

उपर्युक्त ग्राफ के माध्यम से परिचालन जोत धारक महिलाओं की सहभागिता को वर्षवार प्रतिशत के साथ दर्शाया गया है जिससे यह स्पष्ट है महिलाओं का प्रतिशत 2010-11 में 12.79 प्रतिशत था जो कि वर्ष 2015-16 की कृषि संगणना में बढ़कर 13.96 प्रतिशत हो गया है। इसके साथ ही महिलाओं द्वारा संचालित क्षेत्र की प्रतिशतता में वर्षवार वृद्धि अंकित की गयी है। अतः यह महिलाओं की सुदृढ़ता की ओर एक बेहतर कदम है।

अतः यदि महिलाओं को भी कृषि में बराबर का दर्जा मिले एवं विभिन्न कौशल विकास योजनाओं में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाए तो महिला आर्थिक सशक्तीकरण व कृषिगत विकास के लिए यह बेहतर होगा। यद्यपि इस दिशा में सरकार व कृषि मंत्रालय द्वारा प्रयास किये जा रहे हैं, जैसे कि- सहकारी समिति के चुनाव में महिलाओं की सहभागिता व सदस्यता, कृषि भूमि पर पति-पत्नी का संयुक्त पट्टा होने पर बल देना जिससे संस्थागत ऋण प्राप्त हो सके आदि। इसके अतिरिक्त भी कुछ योजनाओं के अंतर्गत प्रावधान किये जा रहे हैं जिससे पुरुषों की तुलना में महिलाओं को अधिक मदद मिले और उनकी सहभागिता बढ़े। उक्त के सन्दर्भ में कुछ प्रावधान निम्नवत है-

कृषि क्लीनिक एवम् एग्री बिज़नेस केंद्र नामक योजना के अंतर्गत लिए गए बैंक लोन पर सब्सिडी पुरुषों के लिए 36 फीसदी, जबकि महिलाओं के लिए 44 फीसदी है।

इंटीग्रेटेड स्कीम ऑफ़ एग्रीकल्चर मार्केटिंग के अंतर्गत स्टोरेज इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट में पुरुष किसानों को 25 फीसदी की तुलना में महिलाओं हेतु 33.33 प्रतिशत की सहायता दी जाती है।

कृषि मशीनीकरण में मशीनों की खरीद पर महिलाओं को 10 फीसदी ज्यादा आर्थिक सहायता मिल रही है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा पौध संरक्षण एवम् इक्युप्मेंट्स के लिए पुरूषों की अपेक्षा 10 फीसदी अधिक आर्थिक मदद दी जा रही है।[8]

यही नहीं इसके साथ ही कृषि मंत्रालय द्वारा वर्ष 2016 से प्रत्येक वर्ष 15 अक्टूबर को 'महिला किसान दिवस' के रूप में मनाया जाता है, जिसमें महिला किसान खेती बाड़ी से सम्बंधित प्रत्येक गतिविधि में बहुतायत रूप से सहभागिता करती हैं और इन सतत प्रयासों से देश के साथ ही राज्य स्तर पर भी कृषि में महिलाओं के प्रतिशत में बढ़ोत्तरी हुई है।

महिला किसान परिचालन जोत संख्या व क्षेत्र का वितरण

श्रेणीगत आकार	2010-11	2015-16
सीमांत (1 हेक्टयेर से नीचे)	13.63	14.68
लघु (1.00-2.00 हेक्टयेर)	12.15	13.44
अर्ध मध्यम(2.00-4.00 हेक्टयेर)	10.45	11.76
मध्यम (4.00-10.00 हेक्टयेर)	8.49	9.76
बड़ा (10.00 हेक्टयेर से ऊपर)	6.78	7.83
सभी आकार समूह	12.78	13.96

स्रोत- कृषि संगणना2015-16

खेती किसानी के विविध आयामों एवं बदलते परिदृश्य को दृष्टिगत रखते हुए उचित नीतियों का प्रारूप बनाने व

उनके क्रियान्वयन हेतु ही प्रत्येक पांच वर्ष के अंतराल पर कृषि संगणना की जाती है। उपर्युक्त सारणी के आधार पर यदि हम वर्ष 2015-16 एवं वर्ष 2010-11 की संगणना से तुलना करें तो प्रति हेक्टयेर या आकार समूह के आधार पर महिला किसान की खेत मालिक या जोत आकार में वृद्धि हुई है। अतः अब कृषि व्यवस्था में जोत के प्रचालन व प्रबंधन में अधिकाधिक महिला किसान सम्मिलित हो रहीं हैं।

कृषि में महिलाओं की समस्याएं : समकालीन परिदृश्य में यदि हम देखें तो कृषि उत्पादन में महिला किसानों की महत्वपूर्ण भूमिका है, परन्तु फिर भी वह सहायक के रूप में ही जानी जाती हैं जिससे उन्हें विविध बाधाओं का सामना करना होता है। सामान्यतः कृषि क्षेत्र में आज भी लैंगिक असमानता के बने रहने के विविध आयाम हैं, जिनमें से मुख्य कारणों का विवरण अग्रांकित है।

कृषि भूमि का स्वामित्व- महिलाओं का भूमि अपने नाम पर होना या उस पर अधिकार रखना आज भी बहुधा असामान्य ही है, चाहे वह कृषि युक्त भूमि का एक छोटा सा भाग ही क्यों न हो। इसका एक कारण यह भी है कि महिलाओं को आज भी घरेलू कार्यो हेतु ही उपयुक्त माना जाता है अतः कृषि भूमि परिवार के पुरुष किसान के नाम पर ही होती है। इस सन्दर्भ में पी. साइनाथ एवं अनन्या मुख़र्जी के अनुसार- "भारत के ग्रामीण इलाकों में महिलाओं की ज़िन्दगी मुश्किल भरी होती है। घर के काम काज से लेकर खेतों में मजदूरी तक उन्हें ही करनी होती है, लेकिन जब स्वामित्व की बात आती है तो उन्हें परिवार का सदस्य नहीं माना जाता है। सरकार निजी और औद्योगिक प्रोजेक्ट और विशेष आर्थिक क्षेत्र के लिए जबरन जमीन का अधिग्रहण करती है। ऐसे में किसानों का विस्थापन लाखों लोगों की आजीविका को नष्ट कर देता है। ऐसे में जो भी किसान आत्महत्या करते हैं उसका अप्रत्यक्ष असर महिलाओं को झेलना पड़ता है। एक वास्तविकता यह भी है कि आत्महत्या करने वाले महिला किसानों के मामले दर्ज नहीं होते हैं क्योकि उन्हें किसान नहीं माना जाता किसान की पत्नी ही माना जाता है।"[9] ऐसा इसलिए भी होता है कि महिलाओं के पास सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार भी नहीं होता है।

निम्न तकनीकी कुशलता- वर्तमान समय में भी जो महिलाएं कृषि कार्य में संलग्न है वह तकनीकी तौर पर बहुत सुदृढ़ नहीं है। पर्याप्त कौशल का अभाव होना महिला किसानों के लिए अवसरों को सीमित कर देता है। अतः भारत में कृषि क्षेत्र में गैर पारंपरिक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

दोहरी ज़िम्मेदारी- महिला किसान श्रमिकों पर घर परिवार के साथ ही खेती किसानी दोनों की ही ज़िम्मेदारी होती है। इस सन्दर्भ यदि उनकी सामाजिक आर्थिक प्रस्थिति पर विचार करें तो प्रायः हमें निम्न ही दिखायी देती है। तुलनात्मक निम्न स्थिति के साथ ही अतिरिक्त कार्यभार व जागरूकता तथा सुविधाओं के अभाव में महिलाओं का स्वास्थ्य भी उनका हासियाकरण करता है। कृषि कार्यों के सम्बन्ध में हो या घर के निर्णय में दोनों ही स्तर पर अभी भी महिलाएं द्वितीयक ही रहती हैं। अतः वह एक श्रमिक के तौर पर अवैतनिक कार्य ही करती हैं एवं उत्पादन पर कोई दावा भी नहीं कर सकती हैं।

निम्न साक्षरता दर- महिला किसान श्रमिकों में शिक्षा एवं जागरूकता की कमी होने से वे उन सभी लाभों से वंचित हो जाती हैं जो कि सरकार द्वारा प्रदान किया जाता है। इसीलिए कृषि से सम्बन्धित कार्य, बैंक कार्यो आदि में बिचौलियों की संख्या बढ़ जाती है जो कि महिलाओं के लिए अवसर सीमित कर देते हैं।

पितृसत्तात्मक व्यवस्था : उपर्युक्त विश्लेषित सभी समस्याओं के अतिरिक्त भारतीय समाज में पित्रसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था आज भी व्याप्त है जो कि महिलाओं के पारंपरिक समाजीकरण को ही प्रोत्साहन देती है व स्वीकृत भी करती है। पितृसत्तात्मकता के कारण ही संपत्ति व जमीन पर महिला श्रमिक व किसानों को मालिकाना अधिकार नहीं प्राप्त होता जिससे उन्हें बैंक से ऋण नहीं स्वीकृत हो पाता है जिससे एक किसान के रूप में वह स्वयं को स्थापित नहीं कर पाती हैं।

महिला किसानों के सशक्तीकरण हेतु समाधान एवं प्रयासः महिलाओं किसानों के समक्ष जो भी चुनौतियाँ हैं उन्हें कम करने हेतु समय समय पर प्रयास किये जा रहे हैं जिससे उनकी सहभागिता कृषि में बढ़े। इसी सन्दर्भ में कृषि कल्याण मंत्रालय की विविध किसान मित्र योजनाओं के लिए जारी की गयी गाइड लाइन में यह स्पष्ट दिशा निर्देश दिया गया है कि राज्यों को एवं सम्बंधित संस्थाओं को महिला किसानों पर कम से कम 30 प्रतिशत व्यय करना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त कृषि में महिलाओं की भागीदारी सुदृढ़ करने हेतु निम्न अग्रांकित योजनायें सम्मिलित है।

महिला किसान सशक्तीकरण परियोजना- यह योजना राष्ट्रीय किसान नीति के अंतर्गत लायी गयी है। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा यह योजना उन सभी महिलाओं के लिए है जो कि महिला किसान है। इस योजना का उद्देश्य कृषि में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने एवं उत्पादकता बढ़ाने हेतु उपयुक्त निवेश करना है व साथ ही ग्रामीण महिलाओं हेतु स्थायी आजीविका का निर्माण भी किया जा रहा है जिससे सभी महिला किसान व श्रमिक सशक्त हो सकें। इस योजना में 60 प्रतिशत (उत्तर पूर्वी राज्य हेतु 90 प्रतिशत) की वित्तीय सहायता सरकार द्वारा प्रदान की जायेगी। महिला किसान से सम्बंधित सभी लाभार्थी योजनाओं में बजट आवंटन में से 30 प्रतिशत महिलाओं हेतु निर्धारित किया गया है।

इसके अतिरिक्त स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिला किसान की कुशलता में वृद्धि आदि हेतु सरकार वित्त आपूर्ति पर भी ध्यान केन्द्रित कर रही है जिससे विविध निर्णयन में भी महिला किसानों की सहभागिता सुनिश्चित हो सके। कृषि व सम्बद्ध क्षेत्रों में महिला किसान व श्रमिकों में तकनीकी कुशलता बढाने हेतु डी. ए.वाइ. व एन.आर.एल.एम. आदि योजनाओं के अंतर्गत महिला किसानों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त राज्य स्तर पर भी पाठ्यक्रम भी संचालित किये जा रहे हैं।

उपर्युक्त लिखित या सरकारी प्रयासों के अतिरिक्त जमीनी स्तर पर भी कुछ प्रयास अपेक्षित हैं जिससे महिला किसानों की सहभागिता में बढ़ोत्तरी होगी जैसे कि- महिलाओं को भू स्वामित्व का अधिकार देना, वित्तीय ऋण देने की प्रक्रिया में महिला किसान हेतु लचीली विधि अपनाना, जिलेवार महिला किसानों हेतु तकनीकी कुशलता एवं नवीन प्रोद्योगिकी से परिचित कराने हेतु उपबंध करना आदि। इसके साथ ही सकल रूप में "किसानों की आय दोगुनी करने हेतु सरकार द्वारा सात सूत्री योजना भी चलायी गयी है व साथ ही विविध मोबाइल एप जैसे कि- पूसा कृषि मोबाइल एप, फसल बीमा मोबाइल एप, एग्री मार्केट मोबाइल एप आदि शुरू किये गए हैं जो कि किसानों को मौसम, बीज उर्वरक, कीटनाशक आदि की जानकारी देता है एवं वैज्ञानिकों द्वारा राय भी दी जाती है।"[10]

निष्कर्षः निष्कर्षतः सैद्धान्तिक तौर पर देखें अर्थात अंतिम कृषि संगणना के आंकड़ों पर या व्यावहारिक तौर पर दोनों ही स्तरों पर यही परिलक्षित होता है कि समकालीन परिदृश्य में कृषि में महिलाओं की सहभागिता बढ़ी है। आज जब महिलाएं कृषि क्षेत्र में संलग्न हो रही हैं तो उनकी निरंतरता बनी रहे एवं समस्याओं का निराकरण हो इसके लिए सबसे महत्वपूर्ण होगा की उन्हें कृषि भूमि या भू स्वामित्व का अधिकार देना। भूमि का मालिकाना अधिकार होने से महिलायें किसान के रूप में सूचीबद्ध हो जायेंगी, जिससे उन्हें विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत ऋण प्राप्त करने में आसानी होगी व निर्णय लेने का अधिकार भी होगा। निर्णयन का अधिकार एवं तकनीकी सुदृढ़ता महिलाओं की वास्तविक एवं दृष्टिगत किसान के रूप में पहचान सुनिश्चित हो सकेगी।

सन्दर्भ

1. रावत, हरिकृष्ण 'उच्चतर समाजशास्त्र विश्वकोष', रावत पब्लिकेशन्स, 2011, पृ. 346-347
2. वार्षिक रिपोर्ट, कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग, कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण मंत्रालय (भारत सरकार), कृषि भवन, नई दिल्ली, 2020-21, पृ. 260
3. अग्रवाल, संगीता, 'कृषि में महिलाओं की भूमिका', प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2022, पृ. 16
4. बाला, शशि, 'कृषि संकट को समझना : एक लैंगिक परिप्रेक्ष्य', बी. बी. गिरि राष्ट्रीय श्रम संस्थान, नोएडा, 2021, पृ.1-11
5. वर्मा, संजना, 'भारतीय परिदृश्य में महिला कृषि श्रमिकों के क्रिया कलाप एवं समस्याएं', शब्द ब्रम्हा, वॉल्यूम-1, इश्यूज-9, 2013, पृ.35-40
6. डेहरिया शोभा राम, 'कृषक समाज में महिलाओं की भूमिका : एक अध्ययन', राधा कमल मुखर्जी : चिंतन परम्परा. अंक 1, वर्ष 15, जनवरी-जून 2013
7. अग्रवाल, संगीता, पूर्वोक्त, पृ. 21.
8. वही, 22.
9. परमार, शुभ्रा, 'नारीवादी सिद्धांत एवं व्यवहार', ओरिएंट ब्लैकस्वान प्रा. लिमिटेड, हैदराबाद, 2015, पृ. 168
10. सिंह, गजवीर एवं श्वेता, चौधरी, 'किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करने के लिए प्रधानमंत्री की सात सूत्रीय कार्य योजना का संकल्पनात्मक एवं क्रियात्मक स्वरुप', राधा कमल मुखर्जी : चिंतन परम्परा. अंक 1, वर्ष 20, जनवरी-जून 2018, पृ. 33.

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

भावी शिक्षकों की हिन्दी वर्तनी संबंधी समस्याएं : काँगड़ा जिला के संदर्भ में एक अध्ययन

❑ लता कुमारी
❖ डॉ. अनु जी. एस.

सूचक शब्द : भावी शिक्षक या शिक्षक प्रशिक्षु, वर्तनी, हिंदी वर्तनी की समस्या।

वर्तमान समय में हिंदी भाषा का प्रचलन काफी बढ़ा है परन्तु भारत के विद्यालयों में कक्षा कक्ष में विद्यार्थियों द्वारा हिंदी भाषा की वर्तनी के प्रयोग में कई त्रुटियाँ पाई जा रही हैं। वर्तनी संबंधी अधिकांश अशुद्धियाँ लिपि की मानक सीमाओं संबंधी त्रुटियों, हिंगलिश भाषा के अत्यधिक प्रयोग, उदासीनता, असावधानी, अशुद्ध उच्चारण, योग्य शिक्षकों की कमी एवं शिक्षकों की उदासीनता के फलस्वरूप उत्पन्न हो रही हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में शोधार्थियों ने शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में हिंदी वर्तनी संबंधी समस्याओं के वर्तमान स्तर का अध्ययन किया है। जिसके लिए प्राध्यापक वर्ग द्वारा शिक्षक प्रशिक्षुओं की हिंदी वर्तनी का आकलन एवं उनकी वर्तनी संबंधी समस्याओं का विश्लेषण किया गया है। इस अध्ययन में गुणात्मक एवं मात्रात्मक दृष्टिकोण के अंतर्गत केस विश्लेषण विधि एवं विवरणात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग करते हुए काँगड़ा जिले की विभिन्न शिक्षण संस्थानों के प्राध्यापकों एवं आचार्यों से संबंधित जानकारी एकत्र की गई तथा साथ-ही डी.एल.एड. के 60 शिक्षक प्रशिक्षुओं का परीक्षण कर उनकी वर्तनी संबंधी समस्याओं का अध्ययन किया गया। जिसमें यह पाया गया कि उच्च स्तर पर व्याकरण शिक्षण की कमी, अध्यापकों द्वारा उचित संशोधन एवं निरीक्षण कार्यों के अभाव, अभ्यास कार्यों के अभाव, भाषा प्रयोगशाला एवं हिंदी भाषा निर्देशित कार्यशालाओं के अभाव के कारण शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में शिक्षक प्रशिक्षुओं में हिंदी वर्तनी से संबंधित कई समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं जिनका निवारण करना अति आवश्यक है।

भाषा के माध्यम से विचारों का प्रस्तुतीकरण किया जाता है, मौखिक रूप में ये विचार उच्चरित होते हैं तथा लिखित रूप में ये विचार लिपिबद्ध होते हैं। हिंदी भाषा का सबसे महत्वपूर्ण गुण ध्वन्यात्मकता है जिसके कारण हिंदी में उच्चरित ध्वनियों को उसी रूप में लिखा जाता है।[1] इन उच्चरित ध्वनियों को दृश्य रूप में संप्रेषित करने के लिए लिखित चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, वे वर्तनी व लिपि के रूप में जाने जाते हैं। "भाषा की उच्चरित ध्वनियों को निर्धारित क्रम के लिखित प्रतीक-चिह्नों की सार्थक व्यवस्था में लिपिबद्ध करने की प्रक्रिया ही वर्तनी कहलाती है।[2]"

कैलाशचंद भाटिया के अनुसार, 'हिंदी की वर्णमाला पूर्णतः ध्वन्यात्मक होने के कारण हिंदी की वर्तनी की समस्या उतनी गंभीर नहीं जितनी अंग्रेजी की, क्योंकि हिंदी में आज भी लिखित रूप में शब्द अपने उच्चरित रूप से अधिक भिन्न नहीं।'[3] वर्तनी को 'सार्थक भाषिक इकाइयों का 'वर्ण-विन्यास' कहा गया है। भाषा का लिखित रूप वर्तनी है। इन दोनों में ही समय के साथ-साथ कई परिवर्तन आए हैं। नए शब्द, नई संकल्पनाएं व नए प्रयोग होने के कारण वर्तनी में अनेकता उत्पन्न हो रही है। यह अनुभव किया जा रहा है कि अलग-अलग वर्तनी होने के कारण अभिव्यक्ति के लिए किसी एक सार्थक शब्द की मान्यता की आवश्यकता है।[4] क्षेत्रीय या आंचलिक उच्चारण के प्रभाव, अनेकरूपता, भ्रम, परंपरा, अतिशीघ्रता, प्रयत्नलाघव आदि कारणों से शब्द की वर्तनी के शुद्ध रूप विलुप्त हो रहे हैं, जिसके कारण वर्तमान समय में वर्तनी संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।

भोलानाथ तिवारी द्वारा पुस्तक में उद्धत डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल के अनुसार, किसी भी भाषा का प्रयोग जब विभिन्न सामाजिक-शैक्षिक स्तर के लोगों द्वारा किया जाता है तो उसमें अंतर आना स्वाभाविक है। यह अंतर कालांतर में एक समस्या का रूप धारण कर लेता है तथा इससे भाषा की बोधगम्यता पर प्रभाव पड़ता है।[5]

हिंदी भाषा में वर्तनी का वर्तमान रूप

❑ शोध अध्येत्री, शिक्षा स्कूल, हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश)
❖ सह आचार्य, शिक्षा विभाग, नागालैण्ड विश्वविद्यालय (नागालैण्ड)

वर्तमान समय में हिंदी भाषा का प्रचलन काफी बढ़ा है परन्तु भारत के विद्यालयों में कक्षा कक्ष में विद्यार्थियों द्वारा हिंदी भाषा में वर्तनी के प्रयोग में कई त्रुटियाँ पाई जा रही हैं। वर्तनी संबंधी अधिकांश अशुद्धियाँ लिपि की मानक सीमाओं और उनसे जुड़ी हुई भ्रांतियों के परिणामस्वरूप होती हैं। इसके अतिरिक्त मुद्रण प्रणालियों जैसे- टाइपिंग, कंपोजिंग और कंप्यूटर आदि की कमियों से भी उत्पन्न होती हैं।[6] हिंदी भाषा में वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के लिए आज के समाज द्वारा हिंदी व अंग्रेजी में से किसी भी एक भाषा में प्रवीणता के अभाव में इनके मिले जुले रूप अर्थात् हिंगलिश भाषा का प्रचलन होना भी महत्वपूर्ण कारण है[7] जिससे संपूर्ण वाक्य में दोनों भाषाओं के शब्दों का प्रयोग कर अतिशीघ्रता से वक्तव्य पूर्ण करने का प्रयत्न किया जाता है जिसके कारण व्याकरण के नियमों का ह्रास होने लगता है और साथ ही भाषा की मर्यादा भी अस्त व्यस्त हो जाती है। हिंगलिश भाषा को धड़ल्ले से प्रयुक्त करते हुए आज का शिक्षार्थी शिक्षा के क्षेत्र में भी सभ्य भाषा के प्रयोग में पिछड़ते हुए वर्तनी की अशुद्धियों की ओर प्रशस्त हो रहा है। जैसे- कार्य करने में लेट(विलंब) हो जाना, आज मैं फ्री (मुक्त) हूँ, आप तो बड़े हॉट (गर्म) लग रहे हो आदि। इसी प्रकार से क्षेत्रीयता भी भाषा की वर्तनी में आने वाली अशुद्धियों का एक प्रमुख कारण बन जाती है। स्थानीय प्रभाव से शब्द की वर्तनी में काफी प्रभाव पड़ता है। कई प्रदेशों में 'श' के स्थान पर 'स' या 'इस' का प्रयोग, 'ड़' के स्थान पर 'र' का प्रयोग, 'क्ष' के स्थान पर 'कश' या 'छ' का प्रयोग, अर्ध वर्ण के स्थान पर पूर्ण वर्ण के प्रयोग, उचित लिंग वाचक संबोधक शब्दों के प्रयोग की कमी आदि के कारण भी भाषा का अशुद्ध प्रयोग होता है। हिंदी भाषा वर्तनी में अशुद्धियों के और कई कारण हैं जैसे- भाषिक ज्ञान का अभाव, लापरवाही, अशुद्ध उच्चारण, अयोग्य शिक्षक, उचित निरीक्षण एवं संशोधन की कमी आदि। इन अशुद्धियों के कुछ विशेष कारण हैं जिनका संबंध प्रथम रूप में क्षेत्रीय प्रभाव से है जिससे वे अशुद्ध उच्चारण को अपनाते हुए लेखनी में दर्शाते हैं अर्थात् जो अशुद्ध लेखन को जन्म देता है। द्वितीय रूप में विद्यार्थी अशुद्ध वाचन और लेखन इसलिए भी करते हैं क्योंकि अध्यापकों ने इस ओर विशेष ध्यान ही नहीं दिया होता है।[8]

भोलानाथ तिवारी ने सामान्य लोगों और विद्यार्थियों द्वारा लिखते समय की जाने वाली अशुद्धियों के कुछ कारण बताएं हैं जैसे- शुद्ध उच्चारण के ज्ञान का अभाव, स्वर तथा व्यंजन विषयक अशुद्धियाँ, नागरी लिपि के प्रयोग विषयक समुचित जानकारी का अभाव, संधि एवं शब्द-रचना के नियमों की जानकारी का अभाव, व्याकरणिक रूपों का ज्ञान न होना, लिपि की अस्पष्टता, अंग्रेजी वर्तनी का प्रभाव, लेखन में अंकों के प्रयोग के सामान्य नियम की जानकारी का अभाव तथा अति शोधन आदि।[9]

साहित्य समीक्षा :

मल्लिक[10] ने अपने अध्ययन, 'दक्षिण भारत में हिंदी भाषा के कौशल शिक्षण के संदर्भ में प्रचलित वर्तमान प्रविधियांः एक आलोचनात्मक अध्ययन' में यह दर्शाया कि विद्यार्थियों के भाषाई कौशलों का विकास हिंदी अध्यापकों द्वारा कक्षा-कक्ष में हिंदी परिवेश के निर्माण द्वारा ही संभव है। अध्यापक द्वारा दिए ज्ञान, प्रोत्साहन, निर्देशन एवं संशोधन द्वारा ही विद्यार्थियों को हिंदी भाषा के शुद्ध प्रयोग के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

प्रोमिला[11] **ने** अपने अध्ययन, 'माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में हिंदी भाषा के कौशलों का विकास- एक प्रयोगात्मक अध्ययन' में विद्यार्थियों द्वारा हिंदी भाषा के कौशलों के विकास हेतु नवीन शिक्षण प्रारूप के प्रयोग को लाभदायक बताते हुए पत्र-पत्रिकाओं व पुस्तकों के स्वाध्याय पर बल दिया। उनके अनुसार उचित अभिव्यक्ति, प्रश्नोत्तर, पत्र एवं अनुच्छेद लेखन, अनुलिपि व प्रतिलिपि द्वारा विद्यार्थियों के लेखन कौशल का विकास किया जा सकता है।

अग्रवाल एवं बंसल[12] ने अपने अध्ययन, 'प्राथमिक स्तर पर हिंदी भाषा लेखन कौशल का विकास- एक क्रियात्मक अनुसंधान' में यह पाया कि लेखन कौशल के विकास में नवीन शिक्षण पद्धति का प्रयोग विद्यार्थियों के लिए अधिक उपयोगी, प्रभावी एवं विकासशील है।

कुमार[13] **ने** अपने अध्ययन, 'डायग्नोस्टिक टेस्टिंग एंड रेमेडीशन इन रीडिंग एंड राइटिंग कंपोनेंट्स इन इंग्लिश विद द हेल्प ऑफ सेल्फ इंस्ट्रक्शनल मेटेरिअल एट अप्पर एलिमेंटरी लेवल', में दर्शाया कि उचित उपचारात्मक व्यवहार से उच्चारण एवं वर्तनी संबंधित समस्याओं का हल हो सकता है। उनके अनुसार विद्यार्थियों को उचित ज्ञान व जानकारी दी जाने पर उनकी भाषा संबंधी अशुद्धियों का निवारण हो सकता है।

शर्मा एवं प्रधान[14] ने अपने अध्ययन 'डायगनोस्टिक इवेलुएशन एण्ड रिमेडियल प्रोग्राम फॉर इंग्लिश लैंग्लिश टीचिंग टु प्रोस्पैक्टिव टीचर्स' में बी.एड. के शिक्षक प्रशिक्षुओं की अंग्रेजी भाषा में वर्तनी के संबंध में यह दर्शाया कि प्रशिक्षु व्याकरण एवं उच्चारण क्षेत्र में अधिक अशुद्धियाँ करते है जिसकी वजह से वर्तनी में अशुद्धि उत्पन्न हो जाती है।

दहिया[15] ने अपने अध्ययन, 'वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के उपचारीकरण में अध्येता केंद्रित तथा कार्यकलाप-आधारित अधिगम-अध्यापन उपागम की प्रभावशीलता का प्रायोगिक अध्ययन' में यह दर्शाया कि उच्चारण का वर्तनी पर प्रभाव पड़ता है। वर्तनी में सुधार के लिए उच्चारण को शुद्ध करना तथा उचित अध्यापन-अधिगम उपागम का प्रयोग प्रभावी रहता है।

अंदलीब[16] ने अपने अध्ययन में डी.एल.एड के शिक्षक प्रशिक्षुओं पर अध्ययन कर यह पाया कि प्रशिक्षु शब्दों के अर्थ, उपसर्ग, प्रत्यय, समास, संधि-विच्छेद, पर्यायवाची शब्द, विलोम शब्द, अर्थ प्रसार तथा वाक्य प्रयोग के संबंध में अशुद्धियाँ करते हैं जिनका उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के माध्यम से उपचार कर अध्यापक द्वारा प्रशिक्षुओं को शुद्ध लेखन के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

इस प्रकार शिक्षण प्रशिक्षण के प्राथमिक स्तर में प्रशिक्षुओं की भाषागत वर्तनी में शुद्धता एवं स्पष्टता होनी चाहिए, जिसके अभाव में वह प्राथमिक स्तर के विद्यालयी विद्यार्थियों को शुद्ध एवं स्पष्ट लेखन के लिए प्रेरित करने में असमर्थ होते हैं। ये भाषागत अशुद्धियाँ ही भावी शिक्षकों की वर्तनी संबंधी समस्याएं हैं।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्त्व : एक भवन उतना ही मजबूत होता है जितना उसकी नींव सुदृढ़ होती है। उसी प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में शिक्षार्थी ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में उतना ही सशक्त होता है जितना प्राथमिक स्तर में उसके शिक्षण की नींव मजबूत होती है। हमें अपने उभरते भविष्य को साकार करने के लिए शिक्षा के प्राथमिक स्तर को दृढ़ करना पड़ेगा।[17] भाषा को सुदृढ़ करने के लिए भी भाषा अधिगम की आधारभूत अवस्था को मजबूत करने की आवश्यकता है अर्थात् प्राथमिक स्तर में हिंदी वर्तनी को सशक्त बनाकर माध्यमिक एवं उच्चतर स्तर में शिक्षा को सुदृढ़ बनाते हुए शिक्षार्थी उज्ज्वल भविष्य की ओर प्रेरित हो सकता है।

प्रारंभिक शिक्षण प्रशिक्षण एक ऐसा क्षेत्र है जिसकी पहुँच शिक्षार्थी की उस अवस्था तक जाती है जहाँ वह आसानी से वर्तनी एवं व्याकरण के उचित नियमों को समझ कर समझाते हुए शुद्ध वर्तनी के लिए प्रेरित कर सकता है। प्राथमिक स्तर पर सीखी गई भाषा भविष्य में सीखे जाने वाले ज्ञान की आधारशिला है। परंतु भाषा की अशुद्धियाँ ही भावी शिक्षकों की वर्तनी संबंधी समस्याएं बनती जा रही हैं। इसीलिए प्राथमिक स्तर पर हिंदी शिक्षण के लिए प्रशिक्षण ले रहे भावी शिक्षकों अर्थात् शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों का अध्ययन करना अति आवश्यक है।[18]

राष्ट्रीय शिक्षा नीति भी प्रारंभिक एवं माध्यमिक स्कूल पाठ्यचर्या के आधार पर शिक्षार्थियों की इन समस्याओं को ट्रैक करने की बात कहते हुए उनके पढ़ने एवं लिखने संबंधी चिंतन पर अधिक ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रोत्साहित करती है।[19] शिक्षार्थियों की मूलभूत साक्षरता जैसे- पढ़ना, लिखना एवं समझना तथा संख्या ज्ञान पर नए सिरे से जोर देने के लिए शिक्षक-शिक्षा और प्रारंभिक स्तर की पाठ्यचर्या को नए सिरे से डिजाइन किया जाएगा।[20]

प्राथमिक स्तर शिक्षा के आधारभूत ढांचे के निर्माण का समय होता है इसमें शिक्षक विद्यार्थियों को शुद्ध वर्तनी के लिए मार्गदर्शन देकर अशुद्धियों का संशोधन करते हुए उन्हें शुद्ध भाषा के प्रयोग हेतु प्रेरित कर सकता है। परंतु वर्तमान समय में शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में आए प्रशिक्षु वर्ग भी हिंदी भाषा वर्तनी में पूर्ण रूप से निपुण न हो पाने के कारण वह इन अशुद्धियों से अनभिज्ञ रह जाते हैं जिसके फलस्वरूप प्राथमिक स्तर के विद्यार्थी अपनी इन अशुद्धियों को दूर नहीं कर पाते हैं। इस कारणवश विद्यार्थियों में ज्ञान की कमी, आत्मविश्वास की कमी एवं शिक्षा के प्रति अरूचि व उदासीनता उत्पन्न हो जाती है। इन सभी प्रभावों को दूर करने के लिए प्राथमिक शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में भावी शिक्षकों की हिंदी भाषा वर्तनी संबंधी समस्याओं को पहचानना एवं उन्हें दूर करना अति आवश्यक है।

अध्ययन के अनुसंधानात्मक प्रश्न : प्राथमिक शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में भावी शिक्षकों की हिंदी वर्तनी संबंधी समस्या का वर्तमान स्तर क्या है?

अध्ययन के उद्देश्य

1. प्राध्यापक वर्ग के आधार पर प्राथमिक

शिक्षक-प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों की हिंदी वर्तनी संबंधी समस्याओं का अध्ययन करना।

2. प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों द्वारा प्राप्त किए गए अंकों एवं प्रश्न वर्गों के आधार पर उनकी हिंदी वर्तनी संबंधी समस्याओं का विश्लेषण करना।

अध्ययन का सीमांकन

1. प्रस्तुत अध्ययन का सीमांकन केवल हिमाचल प्रदेश के जिला काँगड़ा तक किया गया है।
2. यह अध्ययन केवल हिमाचल प्रदेश में प्राथमिक शिक्षण के प्रशिक्षण हेतु कार्यरत भावी शिक्षकों तक सीमित है।

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु गुणात्मक एवं मात्रात्मक दृष्टिकोण का प्रयोग किया गया है जिसके अंतर्गत केस विश्लेषण विधि एवं विवरणात्मक अनुसंधान की सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। केस अध्ययन के लिए साक्षात्कार एवं सर्वेक्षण विधि के लिए वृत्तांत अभिलेख का प्रयोग कर विभिन्न संस्थानों के प्राध्यापकों एवं आचार्यों से संबंधित विषय पर जानकारी एकत्र की गई।

न्यादर्श : प्रस्तुत अध्ययन हेतु द्वितीयक स्रोतों के रूप में विभिन्न शोधकार्यों, पत्रिकाओं में छपे हुए लेखों और विभिन्न पुस्तकों के अध्ययन से मिली जानकारी का प्रयोग किया गया। साथ ही प्राथमिक स्रोतों के रूप में हिमाचल प्रदेश के काँगड़ा जिला में धर्मशाला क्षेत्र में स्थित विभिन्न शिक्षण संस्थानों जैसे हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, राज्य स्नातक महाविद्यालय धर्मशाला, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान धर्मशाला, राजकीय शिक्षा महाविद्यालय आदि के हिंदी विभाग के प्राध्यापकों एवं जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान के डी.एल.एड. पाठ्यक्रम में अध्ययनरत प्रथम एवं द्वितीय वर्ष के कुल 60 (30 पुरुष एवं 30 महिला) भावी शिक्षकों अर्थात् शिक्षक-प्रशिक्षुओं का अध्ययन किया गया।

शोध उपकरण एवं प्रदत्तों के संकलन की प्रक्रिया : प्रस्तुत अध्ययन हेतु शोधार्थी ने चयनित प्रतिदर्श से उनके मतों को एकत्र करने हेतु एक साक्षात्कार अनुसूची बनाई जिसमें भावी शिक्षकों द्वारा हिंदी वर्तनी संबंधी अशुद्धियों, उनके कारणों, प्रभावों एवं सुझावों से संबंधित प्रश्न सम्मिलित किए गये। इसके साथ ही डी.एल.एड. के प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों द्वारा की जाने वाली अशुद्धियों के विश्लेषण हेतु 'हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण' का प्रयोग कर हिंदी भाषा में मात्राओं, स्वर, व्यंजन, अनुस्वार, अनुनासिक स्वर, संयुक्त एवं द्वित्व व्यंजन, रेफ प्रयोग, लिंग, वचन एवं विभक्ति, ध्वनियों, विराम चिह्न आदि से संबंधित वर्तनी की जांच एवं विश्लेषण किया गया।

प्रथम उद्देश्य पर आधारित केस विश्लेषण : अध्ययन के प्रथम उद्देश्य अर्थात प्राथमिक शिक्षण के क्षेत्र में शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों द्वारा की जाने वाली अशुद्धियों के संबंध में शोधार्थी ने अध्यापन के कार्य में संलग्न उच्चस्तरीय शिक्षण संस्थानों के हिंदी प्राध्यापकों का साक्षात्कार करते हुए उनके विचारों का संग्रह किया।

राजकीय शिक्षा महाविद्यालय, धर्मशाला में हिंदी शिक्षण के कार्य में संलग्न प्राध्यापक ने प्रशिक्षुओं द्वारा की जाने वाली विभिन्न अशुद्धियों को दर्शाया। उनके अनुसार प्रशिक्षु विद्यार्थी मात्राओं एवं व्यंजन संबंधी, अनुस्वार एवं अनुनासिक ध्वनियों में भेद, संयुक्ताक्षर व्यंजनों संबंधी अशुद्धियाँ करते हैं जैसे- श्रीमती के लिए श्रीमति, धन्यवाद के लिए धन्यावाद, आँख के लिए आंख, क्षत्रिय के लिए छत्रिय आदि का प्रयोग करते हुए कई अशुद्धियाँ करते हैं। उन्होंने कहा कि प्रशिक्षु विद्यार्थी असावधानी एवं लापरवाही के कारण भी लिखते समय कई अशुद्धियाँ करते हैं। उन्होंने हिंदी भाषा को अन्य विषयों के लिए आधार भाषा के रूप में दर्शाते हुए कहा कि विद्यार्थियों की इन अशुद्धियों का निवारण अध्यापक प्रयास एवं भाषा प्रयोगशाला के प्रयोग द्वारा किया जा सकता है।

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, धर्मशाला में हिंदी शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में अध्यापन में कार्यरत हिंदी आचार्य ने विद्यार्थियों द्वारा शिक्षण प्रशिक्षण के कार्य में अशुद्धियाँ करने पर चिंता व्यक्त की। उनके अनुसार भावी शिक्षक अपने प्रशिक्षण कार्यकाल के अंतर्गत कई प्रकार की अशुद्धियाँ करते हैं जैसे- स-श-ष, ब-व, च-ज, संयुक्त व्यंजन, रेफ व रकार संबंधी अशुद्धियाँ। इसके लिए उन्होंने अंग्रेजी भाषा के प्रति आकर्षण, पहाड़ी भाषा एवं प्रादेशिक भाषा का प्रभाव, व्याकरणिक ज्ञान का अभाव एवं उचित मार्गदर्शन की कमी को उत्तरदायी माना। उन्होंने शुद्ध लेखन के लिए हस्त एवं मस्तिष्क के संतुलन की आवश्यकता पर जोर दिया। प्रशिक्षुओं की इन अशुद्धियों को दूर करने के लिए समय-समय पर सरकार, NCERT एवं SCERT द्वारा भाषा निर्देशित

कार्यशाला की व्यवस्था एवं पुस्तकों के समीक्षात्मक कार्य में भाषा शिक्षकों को जोड़ने संबंधी प्रावधान पर जोर दिया।

डाइट धर्मशाला में अध्यापन कार्य में संलग्न महिला हिंदी प्राध्यापक ने शिक्षण के क्षेत्र में प्रशिक्षु विद्यार्थियों द्वारा हिंदी वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के संबंध में यह दर्शाया कि ये मुख्यतः संयुक्त व्यंजनों, अनुस्वार एवं अनुनासिक ध्वनियों, मात्रा संबंधी, रेफ-रकार आदि के प्रयोग संबंधी अशुद्धियाँ करते हैं। उन्होंने इन अशुद्धियों का मुख्य कारण प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर अशुद्धि शोधन की कमी, वर्णमाला संबंधी पूर्ण ज्ञान के अभाव एवं अभ्यासात्मक कार्य की कमी को दर्शाया है। उन्होंने शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में प्रशिक्षुओं की इन अशुद्धियों के निवारण के लिए शिक्षक द्वारा प्राथमिकता देते हुए अतिरिक्त समय दिए जाने को आवश्यक समझा। उनके अनुसार शिक्षक के स्वयं ज्ञान और अभ्यास द्वारा विद्यार्थियों को शुद्ध वर्तनी के लिए प्रेरित करना ही आवश्यक कदम है।

राजकीय स्नातक महाविद्यालय, धर्मशाला में अध्यापन कार्य में संलग्न हिंदी विभाग में हिंदी आचार्य ने विद्यार्थियों द्वारा वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के लिए प्रत्येक स्वर एवं व्यंजन के उच्चारण स्थान के ज्ञान की कमी, विद्यार्थियों के पारिवारिक परिवेश और उसके सामाजिक प्रभाव को उत्तरदायी कारक माना है। उनके अनुसार कई विद्यार्थी व्यंजन में सभी वर्गों के पंचम वर्ण के उच्चारण एवं वर्तनी से अनभिज्ञ होते हुए अशुद्धियाँ करते हैं। उन्होंने हिंदी भाषा को वैज्ञानिक लिपि के रूप में दर्शाते हुए कहा कि इस भाषा में हर वर्ण के लिए निश्चित ध्वनि की व्यवस्था है जिसके कारण अशुद्धि होना उचित नहीं है। हिमाचल प्रदेश के विद्यार्थी अल्पप्राण एवं महाप्राण ध्वनियों और मात्राओं में भेद नहीं कर पाते हैं। इन अशुद्धियों के लिए उन्होंने उच्च स्तर की शिक्षा में भाषा शिक्षण के क्षेत्र में व्याकरणिक प्रावधान की कमी को उत्तरदायी माना है।

हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला में कार्यरत हिंदी प्राध्यापक ने विद्यार्थियों द्वारा वर्तनी संबंधी अशुद्धियाँ करने के संबंध में सहमति व्यक्त करते हुए प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर में हुए शिक्षण कार्यों को उत्तरदायी माना। उनके अनुसार विद्यार्थी मुख्यतः स्वर एवं व्यंजन के प्रयोग संबंधी अशुद्धियाँ करते हैं जैसे- प्राप्त के लिए प्रापत, निम्न के लिए निमन, प्रसाद के लिए परसाद, ढ-ड, स-श, ब-व संबंधी अशुद्धियाँ आदि। जिसके लिए उन्होंने प्राथमिक स्तर में आधार शिक्षण की कमी, ज्ञान का अभाव एवं प्रादेशिक भाषा के प्रभाव को मुख्य कारण माना है। इन्होंने स्नातकोत्तर स्तर पर भाषा विज्ञान को व्यावहारिक रूप से पढ़ाने पर जोर दिया। इसके साथ ही प्राथमिक स्तर पर पठन-पाठन एवं लेखन अभ्यास को महत्व देने की बात कही।

उपर्युक्त सभी हिंदी विशेषज्ञों ने उच्च स्तर पर व्याकरण शिक्षण को महत्व देने, अध्यापकों एवं विद्यार्थियों के लिए भाषा निर्देशित कार्यशालाओं के आयोजन, पुस्तकों के समीक्षात्मक कार्य में शिक्षकों को सम्मिलित करना, शिक्षकों द्वारा निरीक्षण एवं संशोधन कार्यों में जटिलता लाने से संबंधित सुझाव दिए।

द्वितीय उद्देश्य पर आधारित विश्लेषण

वृतांत अभिलेख हेतु प्रयुक्त हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण का विश्लेषण

अध्ययन के द्वितीय उद्देश्य अर्थात् प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों की हिंदी वर्तनी संबंधी समस्याओं के विश्लेषण हेतु जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, धर्मशाला में डी.एल.एड. पाठ्यक्रम में अध्ययनरत भावी शिक्षकों की हिंदी भाषा वर्तनी की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करने के लिए वृतांत अभिलेख के माध्यम से उनकी अशुद्धि संबंधी समस्याओं का विश्लेषण किया गया। हिंदी शिक्षक प्रशिक्षुओं की वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के अध्ययन हेतु हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण का निर्माण किया गया। जिसमें कुल 7 वर्ग थे। यह परीक्षण 60 अंकों का था। जिसके लिए डेढ़ घंटे का समय निर्धारित किया गया जिसके माध्यम से भावी शिक्षकों के इस परीक्षण में प्राप्त अंकों एवं परीक्षण में आए प्रश्न वर्गों के आधार पर अशुद्धियों का विश्लेषण किया गया है।

उपकरण विश्लेषण : उपर्युक्त वर्णित उपकरण 'हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण' के निर्माण के पश्चात् इसकी विषय वैधता की जाँच के लिए विषय विशेषज्ञों द्वारा इस परीक्षण का अध्ययन किया गया। इसकी विश्वसनीयता की जाँच हेतु क्रोनबैक अल्फा विधि द्वारा 0.821 मूल्य पर उच्च स्तरीय विश्वसनीयता ज्ञात की गई। जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, धर्मशाला के डी.एल.एड. के प्रथम एवं द्वितीय वर्ष के 60 प्रशिक्षु विद्यार्थियों अर्थात् भावी शिक्षकों पर इस परीक्षण का प्रशासन किया गया। इस

परीक्षण द्वारा प्राप्त परिणामों का विश्लेषण इस प्रकार है-

अंक आधारित विश्लेषण : इस अध्ययन के अंतर्गत डाइट धर्मशाला के डी.एल.एड. के प्रथम एवं द्वितीय वर्ष के 60 शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों ने हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण के 60 अंकों के परीक्षण पत्र में 7 वर्गों के प्रश्नों में प्रथम वर्ष के 06 तथा द्वितीय वर्ष के 08 शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् 23 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षुओं ने हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण में 35 से कम अंक प्राप्त किए। प्रथम वर्ष के 20 एवं द्वितीय वर्ष के 16 शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् कुल 60 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने 45 से कम अंक प्राप्त किए। इसी तरह प्रथम वर्ष के 04 तथा द्वितीय वर्ष के 06 अर्थात् कुल 17 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षुओं ने 46 से अधिक अंक प्राप्त किए। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सभी प्रशिक्षु अर्थात् भावी शिक्षक हिंदी वर्तनी में अशुद्धियाँ कर रहे हैं। इसे तालिका क्रमांक 1 में अंक आधारित विश्लेषण द्वारा दर्शाया गया है-

तालिका - 1 अंक आधारित विश्लेषण

अंक	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	कुल शिक्षक प्रशिक्षु	प्रतिशत
35 से कम अंक	06	08	14	23
45 से कम अंक	20	16	36	60
46 से अधिक अंक	04	06	10	17
कुल	30	30	60	100

प्रश्न वर्ग आधारित विश्लेषण

परीक्षण में दिए गए प्रत्येक प्रश्न वर्ग के आधार पर भी भावी शिक्षकों ने अशुद्धियाँ की, जिन्हें परीक्षण के इन प्रश्न वर्गों में प्रशिक्षुओं द्वारा प्राप्त अंकों की प्रतिशतता को तालिका 2 में प्रश्न वर्ग आधारित विश्लेषण द्वारा दर्शाया गया है-

तालिका - प्रश्न वर्ग आधारित विश्लेषण

प्रश्न वर्ग	प्रथम वर्ष के शिक्षक प्रशिक्षु	द्वितीय वर्ष के शिक्षक प्रशिक्षु	कुल अशुद्धियाँ	
			कुल संख्या	प्रतिशतता
प्रथम वर्ग	26	22	48	80
द्वितीय वर्ग	03	05	08	13
तृतीय वर्ग	25	27	52	87
चतुर्थ वर्ग	22	17	39	65
पंचम वर्ग	30	26	56	93
षष्टम वर्ग	27	24	51	85
सप्तम वर्ग	28	20	48	80

उपर्युक्त तालिका के अनुसार 'हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण' में दिए गए प्रश्न वर्ग के प्रथम वर्ग में प्रथम वर्ष के 26 शिक्षक प्रशिक्षु एवं द्वितीय वर्ष के 22 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ कीं। परीक्षण में द्वितीय वर्ग में प्रथम वर्ष के 03 एवं द्वितीय वर्ष के 05 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ कीं। तृतीय वर्ग में प्रथम वर्ष के 25 एवं द्वितीय वर्ष के 27 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ की। चतुर्थ वर्ग में प्रथम वर्ष के 22 एवं द्वितीय वर्ष के 17 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ कीं। पंचम वर्ग में प्रथम वर्ष के 30 एवं द्वितीय वर्ष के 26 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ कीं। षष्टम वर्ग में प्रथम वर्ष के 27 एवं द्वितीय वर्ष के 24 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ कीं। सप्तम वर्ग में प्रथम वर्ष के 28 एवं द्वितीय वर्ष के 20 प्रशिक्षु विद्यार्थियों ने अशुद्धियाँ कीं।

इस परीक्षण पत्र में प्रत्येक प्रश्न वर्ग के अंतर्गत शिक्षक प्रशिक्षुओं अर्थात् भावी शिक्षकों द्वारा प्राप्त किए गए अंकों एवं उनकी प्रतिशतता का विश्लेषण किया जा सकता है। जिसका वर्णन इस प्रकार है -

प्रथम वर्ग : इस वर्ग में मात्रा, वर्ण एवं रेफ-रकार संबंधी अशुद्धियाँ हैं, जिसमें प्रथम वर्ष के 15 प्रतिशत तथा द्वितीय वर्ष के 22 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने शत-प्रतिशत अंक ग्रहण किए। प्रशिक्षु रेफ-रकार को ध्वनि अनुसार

पहचानने और शुद्ध लिखने में असमर्थ हैं। उदाहरण के लिए इस वर्ग के प्रथम भाग के "आशीर्वाद" शब्द को कुल 24 प्रतिशत प्रशिक्षु विद्यार्थी ही शुद्ध लिखने में समर्थ हुए, जबकि 76 प्रतिशत विद्यार्थियों ने इसे अशुद्ध ही लिखा। अर्थात् इन प्रशिक्षुओं में रेफ-रकार के प्रयोग का ज्ञान नहीं हैं।

द्वितीय वर्ग : इस वर्ग में व्यंजन एवं संयुक्ताक्षरों से संबंधित 6 भागों में 3-3 विकल्प दिए गए। जिसमें एक शुद्ध तथा दो अशुद्ध थे। इस वर्ग में 13 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षुओं ने अशुद्धियाँ कीं तथा 87 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षुओं ने इसका सही उत्तर दिया। इन 13 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने "निर्दोष" शब्द के लिए निर्दोश को शुद्ध समझा। इस प्रकार ये प्रशिक्षु विद्यार्थी संयुक्ताक्षरों के शुद्ध उपयोग से अनभिज्ञ हैं।

तृतीय वर्ग : इस वर्ग में अनुस्वार-अनुनासिक ध्वनियों और द्वित्व व्यंजनों से संबंधित 16 भाग दिए गए, जिनमें 2-2 शब्दों में से शुद्ध शब्द छांटकर लिखना था। इस वर्ग में केवल 13 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने शत-प्रतिशत अंक प्राप्त किए, जबकि 87 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने अशुद्धियाँ कीं। कुल 75 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने अनुस्वार एवं अनुनासिक ध्वनियों संबंधी अशुद्धियाँ कीं। उदाहरण के लिए 60 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने "हंस" शब्द को गलत चुनते हुए "हँस" को शुद्ध माना। इस प्रकार कहा जा सकता है कि अधिकतर शिक्षक प्रशिक्षु अनुस्वार एवं अनुनासिक ध्वनियों में अंतर करने में सक्षम नहीं हैं।

चतुर्थ वर्ग : इस वर्ग के वाक्यों में प्रयुक्त होने वाले लिंग, वचन, कारक, विभक्ति एवं महाप्राण एवं अल्पप्राण ध्वनियों के प्रयोग संबंधी 16 वाक्य दिए गए। ज्यादातर प्रशिक्षुओं ने अनावश्यक कारक के उपयोग को उचित माना। उदाहरण के लिए "बड़ों की आज्ञा को मानना चाहिए" वाक्य में अनावश्यक कारक ('को') को 60 प्रतिशत प्रशिक्षु पहचान नहीं पाए। वही दूसरी ओर वाक्य "ये सभी हमारे देश की रीति हैं" में अशुद्ध वचन - ये तथा रीति को 70 प्रतिशत प्रशिक्षु शुद्ध नहीं कर पाए। इस प्रकार शिक्षक प्रशिक्षु कारक एवं वचन के शुद्ध प्रयोग से भी अनभिज्ञ हैं।

पंचम वर्ग : इस वर्ग में 2 अनुच्छेद दिए गए हैं जिनमें विराम चिह्नों का अशुद्ध प्रयोग दिखाया गया है। प्रशिक्षुओं को प्रत्येक अशुद्धि को शुद्ध करने हेतु आधा अंक निर्धारित किया गया। इन अनुच्छेदों के लिए 12-12 अंक अर्थात् 24 अंक दिए गए हैं। इस वर्ग में कुल 06 प्रतिशत प्रशिक्षु 20 से अधिक अंक प्राप्त कर पाए तथा 80 प्रतिशत प्रशिक्षु शिक्षक 18 से कम अंक प्राप्त कर पाए। इस प्रकार शिक्षक प्रशिक्षु विराम चिह्नों के शुद्ध प्रयोग को पहचानने एवं लिखने में असमर्थ हैं।

षष्टम वर्ग : इस वर्ग में "प्यासा कौआ" नामक कहानी के अनुसार दिए गए आठ वाक्यों में शब्दों को शुद्ध करते हुए वाक्यों को क्रमपूर्वक पुनर्व्यवस्थित करने के लिए कहा गया। जिसमें 50 प्रतिशत प्रशिक्षुओं द्वारा 4 से भी कम अंक प्राप्त किए गए अर्थात् वह क्रमपूर्वक व्यवस्थित करने के साथ-साथ अशुद्धियों को शुद्ध करने में भी असमर्थ रहे। केवल 33 प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षु ही वाक्यों को क्रमपूर्वक व्यवस्थित कर पाए जबकि इन्होंने भी शब्दों को शुद्ध लिखने में त्रुटियाँ की।

सप्तम वर्ग : इस वर्ग में बिल्ली और बंदर के दिए गए चित्र पर आधारित "चालक बंदर" कहानी का लेखन करने के लिए कहा गया। जिसमें 20 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने 5 से अधिक अंक प्राप्त करते हुए कहानी का सफल लेखन किया जबकि 80 प्रतिशत प्रशिक्षुओं ने 5 से कम अंक प्राप्त करते हुए अशुद्ध लेखन का परिचय दिया। जबकि 3 से 4 प्रशिक्षुओं को तो यह कहानी पता ही नहीं थी।

इस हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि शिक्षा के प्राथमिक चरण अर्थात् प्राथमिक शिक्षा के विद्यालयी विद्यार्थियों को भाषा शिक्षण देने जाने वाले डी.एल.एड. के प्रशिक्षु विद्यार्थी अर्थात् भावी शिक्षक हिंदी भाषा की शुद्ध वर्तनी का प्रयोग करने में सक्षम नहीं हैं। इन प्रशिक्षुओं में मात्राओं, स्वरों, व्यंजनों, संयुक्ताक्षरों, लिंग, वचन, कारक, विभक्ति, अनुस्वार एवं अनुनासिक ध्वनियों तथा अल्पप्राण एवं महाप्राण ध्वनियों सहित विराम चिह्नों के शुद्ध प्रयोग का ज्ञान नहीं हैं जिस कारण वे लेखनी अर्थात् वर्तनी में अशुद्धियाँ कर रहें हैं। जिसके मुख्य कारण हिंदी व्याकरण के ज्ञान की कमी, उचित मार्गदर्शन की कमी, लापरवाही, निरीक्षण की कमी तथा प्रादेशिक भाषा का प्रभाव हैं।

इस प्रकार यह पाया गया हैं कि शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में प्राथमिक क्षेत्र के विद्यार्थियों को शुद्ध वर्तनी की शिक्षा देने वाले क्षेत्र अर्थात डी.एल.एड. के शिक्षक प्रशिक्षु, जो प्रारंभिक शिक्षा में डिप्लोमा कर रहे हैं उनकी हिंदी वर्तनी की अशुद्धियों में उपचार की अत्यधिक आवश्यकता है।

परिणामों पर आधारित सुझाव : प्राथमिक शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में हिंदी वर्तनी निपुणता के अध्ययन के लिए उपर्युक्त वर्णित केस अध्ययन एवं वृत्तांत अभिलेख के लिए प्रयुक्त हिंदी वर्तनी निपुणता परीक्षण का प्रयोग किया गया। जिसके आधार पर प्राप्त परिणाम एवं सुझाव इस प्रकार हैं-

सुझाव : प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी हिंदी भाषा के ज्ञान के अभाव, उचित मार्गदर्शन की कमी, अभ्यास कार्य की कमी, लापरवाही, अंग्रेजी के प्रति आकर्षण, दोनों भाषाओं अंग्रेजी एवं हिंदी के पूर्ण ज्ञान के अभाव, उचित निरीक्षण एवं संशोधन कार्यों के अभाव आदि के कारण भाषा के वर्तनीगत प्रयोग में अशुद्धियाँ करते हैं। ये सभी कमियां उच्च स्तर में व्याकरण शिक्षण की कमी के कारण शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी पहुँच जाती हैं। शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में शिक्षण प्रक्रिया पर अत्यधिक ध्यान एवं समय देने के कारण भाषा के शुद्ध प्रयोग पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है जिसके कारण शिक्षक प्रशिक्षु कई प्रकार की भाषा वर्तनी संबंधी अशुद्धियों का सुधार नहीं पाते हैं।

प्रथम उद्देश्य के परिणामों के अनुसार शिक्षार्थी हिंदी भाषा में लेखन के अंतर्गत वर्ण एवं मात्रा, व्यंजन, विभिन्न ध्वनि, शब्द, वाक्य, विराम चिह्न तथा वर्णन संबंधी अशुद्धि करते हैं जिनके कारण उनके द्वारा किए गए लेखन कार्य में समस्याएं अनुभव होती हैं जो उनके शिक्षण संबंधी उद्देश्यों को प्राप्त करने में बाधक होती हैं। स्कूली विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षुओं के द्वारा अशुद्ध उच्चारण के लिए उचित मार्गदर्शन एवं संशोधन कार्य की कमी के कारण भी ये समस्याएं ज्यों की त्यों ही बनी हुई हैं। शुद्ध उच्चारण भी शुद्ध वर्तनी को प्रोत्साहित करता है इसलिए वर्तनी की शुद्धता के लिए उच्चारण को शुद्ध करना भी अति आवश्यक है।

प्राथमिक स्तर के शिक्षार्थियों पर उनके शिक्षकों का अत्यधिक प्रभाव होता है जिसके कारण शिक्षक प्रशिक्षुओं एवं शिक्षकों की हिंदी वर्तनी में की जाने वाली अशुद्धियाँ उनके विद्यार्थी भी ग्रहण कर लेते हैं। इन अशुद्धियों के निवारण के लिए समय-समय पर हिंदी भाषा निर्देशित कार्यशालाओं एवं संगोष्ठियों का आयोजन अनिवार्य रूप से होना चाहिए जिनका इस दिशा में गहन अभाव पाया गया है।

विद्यार्थियों एवं शिक्षक प्रशिक्षुओं की भाषागत समस्याओं को दूर करने के लिए शिक्षण संस्थानों में भाषा प्रयोगशाला का होना अनिवार्य है परन्तु संस्थानों में इनका भी अभाव पाया गया है।

प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर योग्य शिक्षकों के अभाव के कारण भी वर्तनी संबंधी अशुद्धियों में वृद्धि हुई है। शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में भावी हिंदी शिक्षकों को वर्णमाला के उचित एवं शुद्ध लेखन के अभ्यास की व्यवस्था की कमी पाई जा रही है। शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में इन अशुद्धियों के निवारण के लिए उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

निष्कर्ष : उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि हिमाचल प्रदेश के अंतर्गत काँगड़ा जिला के प्राथमिक स्तर में विद्यार्थियों की हिंदी भाषा में वर्तनी संबंधी अशुद्धियों एवं समस्याओं को दूर करने में उनके शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। प्राथमिक स्तर के शिक्षकों को सेवापूर्व एवं सेवाकाल के दौरान हिंदी वर्तनी निपुणता का अभ्यास करवाना चाहिए। शिक्षकों को प्रशिक्षण काल में ही अपनी इन समस्याओं को पहचानने एवं इन्हें दूर करने के लिए हिंदी लिपि का पूर्ण ज्ञान देना, उचित मार्गदर्शन, भाषा के लिखित एवं मौखिक अभ्यास कार्य को प्रोत्साहित करना, प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च सभी स्तरों पर व्याकरण शिक्षण को जटिल करना, भाषा प्रयोगशाला द्वारा उच्चारण को शुद्ध करना, शिक्षार्थियों के हस्त एवं मस्तिष्क के संतुलन को प्रोत्साहित करना, संशोधन कार्य को जटिल बनाना तथा संबंधित कार्यशालाओं एवं संगोष्ठियों के आयोजन कर उनमें शिक्षकों एवं शिक्षक प्रशिक्षुओं की भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है।

वर्तमान समय में कक्षा-कक्ष को सही आकार देने के लिए शिक्षक प्रशिक्षुओं की हिंदी वर्तनी संबंधी अशुद्धियों एवं समस्याओं को दूर करने हेतु उन्हें प्रोत्साहित करना होगा ताकि विद्यार्थी भाषा के शुद्ध रूप का प्रयोग करते हुए अर्थ संगत ज्ञान को ग्रहण कर सके। शिक्षक प्रशिक्षुओं को शिक्षण से पूर्व विषय वस्तु को दृढ़ करना अति आवश्यक है ताकि विद्यालय में शिक्षण कार्य के दौरान उनकी वर्तनी संबंधी अशुद्धियाँ विद्यालयी विद्यार्थियों तक न पहुँचे।

सन्दर्भ

1. भाटिया कैलाशचंद एवं रचना भाटिया, 'हिंदी की मानक वर्तनी', प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2019, पृ.11.
2. तिवारी भोलानाथ एवं किरण बाला, 'हिंदी वर्तनी की समस्याएँ एवं मानकीकरण', अमरसत्य प्रकाशन, दिल्ली, 2018, पृ. 10-11.
3. भाटिया कैलाशचंद एवं रचना भाटिया, पूर्वोक्त, पृ.12.
4. तिवारी भोलानाथ एवं किरण बाला, पूर्वोक्त, पृ.07.
5. तिवारी भोलानाथ एवं किरण बाला, पूर्वोक्त, पृ.146.
6. बाहरी हरदेव., 'हिंदी उद्‌भव, विकास और रूप', किताब महल, 2019, पृ.255-263.
7. तिवारी भोलानाथ एवं किरण बाला, पूर्वोक्त, पृ.8.
8. दहिया इंदू., "वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के उपचारीकरण में अध्येता केंद्रित तथा कार्यकलाप आधारित अधिगम-अध्यापन उपागम की प्रभावशीलता का प्रायोगिक अध्ययन", अन्वेषिकाः भारतीय अध्यापक शिक्षा की शोध पत्रिका, 2015, पृ. 2-3, 21 जून 2019 को रिट्रीव किया गया है- www.ncte-india.org/ncte-new.
9. तिवारी भोलानाथ एवं किरण बाला, पूर्वोक्त, पृ.108-120.
10. मल्लिक स., 'दक्षिण भारत में हिंदी भाषा के कौशल शिक्षण के संदर्भ में प्रचलित वर्तमान प्रविधियां : एक आलोचनात्मक अध्ययन', भाषा प्रौद्योगिकी विभाग, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, पीएच.डी. थीसिस, 2009, 17 नवंबर 2020 को रिट्रीव किया गया है http://shodhganga.inflibnet.ac.in/hdl.handle.net/10603/24600.
11. प्रोमिला, 'माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में हिंदी भाषा के कौशलों का विकास - एक प्रयोगात्मक अध्ययन', शिक्षा विभाग, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, पीएच.डी. थीसिस, 2009, 18 अगस्त 2019 को रिट्रीव किया गया है- http://shodhganga.inflibnet.ac.in/hdl.handle.net/10603/24963.
12. अग्रवाल, एस. एवं एस. बंसल, 'प्राथमिक स्तर पर हिंदी भाषा लेखन कौशल का विकास : एक क्रियात्मक अनुसंधान', प्राथमिक शिक्षक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, त्रैमासिक पत्रिका, जनवरी-अप्रैल 2011, अंक 1, 2011, पृ. 65-71. 28 नवंबर 2020 को रिट्रीव किया गया
13. Kumar, S., 'Diagnostic Testing and Remediation in Reading and Writing Components in English with the help of Self Instructional Material at upper Elementary Level', Department of Education, Maharishi Dayanand University, Ph.D Thesis, 2012, Retrieved on 10 October 2019 from - http://shodhganga.inflibnet.as.in/hdl.handle.net/10603/7946.
14. Sharma, J. & B. Pradhan, 'Diagnostic Evaluation and Remedial Praogramme for English Language Teaching to Prospective Teachers', Research Analysis and Evaluation, December 2013, Vol- V, 51, 2013, p. 22-24. Retrieved on 06 December 2020 from - https://shodhganga.inflibnet.ac.in/browse?type=title&rpp=20&offset=69291.
15. दहिया इंदू., पूर्वोक्त. पृ.1-17.
16. अंदलीब, 'हिंदी माध्यम के शिक्षक-प्रशिक्षुओं की वर्तनीगत अशुद्धियों के निराकरण हेतु उपचारात्मक हस्तक्षेप कार्यक्रम के प्रभाव का प्रयोगात्मक अध्ययन', प्राथमिक शिक्षक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, जुलाई 2018, 42 (अंक-3). 2018, पृ.5-11, 20 फरवरी 2020 को रिट्रीव किया गया है-
17. NEP, 'National Education Policy 2020', Ministry of Human Resourse Development, 2020, p. 18.
18. अंदलीब, पूर्वोक्त. पृ.6-7.
19. NEP, 'National Education Policy 2020', Ministry of Human Resourse Development, 2020, p. 12.
20. Ibid, p. 13.

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

ग्रामीण विकास में शिक्षा की प्रभावशीलता

❑ डॉ. कुशल जैन कोठारी
❖ श्रीमती दीपिका त्रिवेदी

सूचक शब्द : ग्रामीण विकास, समावेशी विकास, शासकीय योजनाएँ, शिक्षा, अर्थव्यवस्था।

भारत गांवों का देश है। भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास के उत्थान के लिये विभिन्न प्रयास किये जा रहे हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में ग्रामीण विकास को देखने के साथ-साथ विकास में शिक्षा की भूमिका का भी अध्ययन किया गया है। शोध-पत्र में शोध प्रविधि के अन्तर्गत दैव निदर्शन विधि से मंदसौर जिले की तहसील भानपुरा की पाँच पंचायतों में से 150 परिवारों का सर्वेक्षण किया गया। शोध के अंतर्गत सर्वप्रथम शिक्षा के स्तर को जानने का प्रयास किया गया है जिसमें 88 प्रतिशत परिवार शिक्षित हैं वही 12 प्रतिशत परिवार अशिक्षित हैं। इसके पश्चात शोध पत्र में ग्रामीण विकास को दर्शाने के लिये मंसौर जिले में संचालित विभिन्न विकास योजनाओं मे से कुछ योजनाओं का चयन किया गया है, सर्वेक्षित पंचायतों में इन योजनाओं को जानने वाले 81.58 प्रतिशत परिवार हैं वहीं योजनाओं से लाभान्वित केवल 70.05 प्रतिशत परिवार ही हैं, इस प्रकार 11.53 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो विकास योजनाओं की जानकारी होने के पश्चात् भी लाभ नही ले पा रहे हैं। कहा जा सकता है कि कहीं न कहीं योजनाओं के प्रति ग्रामीणों की उदासीनता, नियमों की कठोरता, सूचनाओं का अभाव व कर्मचारियों और अधिकारियों का लाभार्थियों के प्रति कठोर दृष्टिकोण भी रहा है। अतः शासन को योजनाओं के प्रति उदासीनता या नकारात्मकता को दूर करने के लिये विभिन्न जागरूकता कार्यक्रम व नियमों का सरलीकरण एवं अधिकारियों को लाभार्थियों के प्रति सरल व्यवहार अपनाना होगा, तभी विकास जन-जन तक पूर्णरूप से संभव होगा। शोध-पत्र में शिक्षा एवं विकास योजना के मध्य सम्बंध जानने का भी प्रयास किया गया है। इस संबंध में देखा गया कि जो परिवार शिक्षित हैं वे शासन की योजनाओं का अधिक लाभ ले रहे हैं। अतः ग्रामीण विकास में शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

ग्रामीण विकास देश के विकास का एक प्रमुख हिस्सा है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का कथन हैं, भारत गांवों का देश हैं, भारत की आत्मा गांवों में निवास करती हैं। ग्रामीण विकास के बिना देश का विकास असंभव है। ग्रामीण विकास का अर्थ एक ऐसी व्यवस्था को स्थापित करना है, जिसमें सभी वर्ग समान हो सभी का विकास संभव हों। राष्ट्रीय आय में ग्रामीण क्षेत्र का बहुत बड़ा अंश होने के बाद भी ग्रामीण क्षेत्र विकास की दौड़ में पीछे है। शासन द्वारा ग्रामीण विकास के लिए अनेक योजनाऐं चलाई जा रही हैं जो ग्रामीणों का उत्थान कर सकें। 2016 में भारत सरकार द्वारा 'ग्रामोदय से भारत उदय' की विचारधारा को विकसित किया गया। शासन द्वारा 2014 में समावेशी विकास योजनाओं को अपनाया गया है, जिसका अर्थ है 'सबका साथ सबका विकास' अर्थात् विकास की दौड़ में कोई भी गांव या शहर पिछड़ा हुआ न हो। इसमें दो महत्वपूर्ण विचारों का समावेश किया गया है। पहला सभी वर्गों के जीवन स्तर में सुधार व प्रगति, तथा दूसरा आय की असमानता को कम करने की बात पर ध्यान केन्द्रित किया गया हैं। शिक्षा प्रणाली ऐसी हो जिसका उद्देश्य अनिवार्य शिक्षा के साथ-साथ गुणवत्तापूर्ण होना भी आवश्यक हो।[1] सतत् विकास का लक्ष्य (4 एस.डी.जी.) जिसका उद्देश्य 2030 तक ''समावेशी और समान गुणवत्ता वाली शिक्षा सुनिश्चित कर सभी के लिए आजीवन सीखने की प्रवृत्ति को निर्मित करना है।' यदि हम ग्रामीण विकास को शिक्षा से जोड़ दें तो यह ग्रामीण विकास को तीव्र करने में मदद करेगा। भारत एक बहुत बड़ा देश है जिसमें परिवार का आधा या एक तिहाई हिस्सा शिक्षा से जुड़े व्यक्तियों का है।[2]

यदि हम यह कहें कि आधुनिक भारत में गांवों का समावेशी विकास शिक्षा के बिना संभव नहीं हैं, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि शिक्षा के बिना ग्रामीण विकास असंभव सा प्रतीत होता हैं। जब हम ग्रामीणों के सर्वागीण विकास की बात करते हैं तो इसके अन्तर्गत ग्रामीणों का औद्योगिक, सामाजिक, आर्थिक, तकनीकी विकास भी सम्मिलित है, जो

❑ प्रोफेसर अर्थशास्त्र विभाग, माता जीजा बाई शासकीय स्तानकोत्तर महाविद्यालय इन्दौर (म.प्र.)
❖ शोध अध्येत्री अर्थशास्त्र विभाग, माता जीजा बाई शासकीय स्तानकोत्तर महाविद्यालय इन्दौर (म.प्र)

केवल शिक्षा के माध्यम से ही संभव है। शिक्षा एक ऐसा शस्त्र है जो विकास का मार्गप्रशस्त करता है। भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी लगभग दो तिहाई जनसंख्या गांवों में निवास करती है। इसलिए भारत के ग्रामीण विकास में शिक्षा के स्तर का मूल्यांकन एक प्रासांगिक विषय हैं। शासन द्वारा ग्रामीण विकास की विभिन्न योजनाएं चलाई जा रही हैं, जो ग्रामीणों का सामाजिक, आर्थिक व तकनीकी विकास कर रही है। इसके बाद भी ग्रामीण क्षेत्र विकास की दौड़ में पिछड़ा हुआ हैं। वस्तुतः इसके पिछड़ेपन का एक प्रमुख कारण ग्रामीण क्षेत्र में उन्नत व व्यवस्थित शिक्षा संस्थानों का अभाव माना जा सकता है। ग्रामीण परिवेश का समग्र रूप से अध्ययन करके ही देश का वास्तविक विकास किया जा सकता हैं। अतः भारत के समग्र विकास के लक्ष्य की परिभाषा ग्रामीण विकास के संदर्भ के बिना कभी भी पूर्ण नही की जा सकती।

जगदीश सक्सेना के शब्दों में ''भारत सरकार की सहायता योजनाओं, कार्यक्रमों और नीतियों के कारण देश के ग्रामीण क्षेत्र आज राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के मुख्य संचालक बन गये हैं 'ग्राम उदय से भारत उदय' की संकल्पना तेजी से साकार हो रही है। परन्तु ग्रामीण अर्थव्यवस्था और ग्रामीण बाजारों में अभी आर्थिक प्रगति की अनेकानेक संभावनाएँ विद्यमान हैं, इनके दोहन के लिए समग्र और समावेशी कदम उठाये जाने की आवश्यकता है। आशा है कि वर्ष 2025 तक भारत को पॉच ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनाने में देश के ग्रामीण क्षेत्र विकास की कुंजी सिद्ध होंगे।''[3]

राशि शर्मा के शब्दों में ''शिक्षा का उद्देश्य केवल संज्ञानात्मक क्षमताओं या शैक्षिक उत्कृष्टता तक ही सीमित नही है बल्कि सामाजिक, नैतिक और भावनात्मक क्षमताओं और प्रवृत्तियों को सुनिश्चित करने के लिए भी है। शिक्षा से अपेक्षा की जाती है वह लोगों को 21वी सदी की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करे इसलिए इसे अनुभवात्मक, समग्र, एकीकृत, अन्वेषण-संचालित, आविष्कार उन्मुख, शिक्षार्थी केन्द्रित, चर्चा आधारित, लचीला और साथ ही आनंददायक होना चाहियें।''[4]

साहित्य समीक्षा :

सुजलाना परमजीत किरण का अध्ययन बताता है कि निरन्तर विकास के क्रम को जारी रखने के लिये देश के सभी नागरिकों की वित्तीय स्थिति को स्थिर रखने पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। इस अध्ययन में परिवारों को बैंक के माध्यम से ऋण, बीमा, बचत व अन्य बैंकिग सेवाओं से जोड़ने का प्रावधान उलेखित किया गया है। भारत सरकार द्वारा इसके लिये अनेक सक्रिय प्रयास किये गये हैं, भारत में वर्ष 2011 में वित्तीय समावेशन के अन्तर्गत 1000 किलोमीटर क्षेत्र में 30.43 शाखाओं का वित्तीय समावेशन किया गया है जो यह स्पष्ट करता है कि भारत सरकार विकास की ओर अग्रसर है परन्तु इसके अधिक विकास के लिये सरकार के साथ-साथ जनता के सहयोग की भी आवश्यकता है।[5]

साजी टी.जी. के शोध लेख के अनुसार भारत समावेशी विकास की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा है, जिसमें सभी वर्ग समान रूप से विकास की ओर अग्रसर हैं, इस शोध में उन सभी तत्वों व कारकों का विश्लेषण किया गया है जो 2004 से 2017 की अवधि के अन्तर्गत समावेशी विकास को एक निश्चित स्वरूप प्रदान करते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में समावेशी विकास अभी भी कई सामाजिक विकास मानकों के सन्दर्भ में कम है जो उभरती हुई अर्थव्यवस्था की तुलना में असमान है। अतः इस शोध कार्य में यह सुझाव दिया गया है कि भारत मे आर्थिक व सामाजिक असमानता और पिछड़े हुए लोगों को समानता के स्तर तक लाने के लिए शासन द्वारा और अधिक सशक्त व मजबूत उपायों की आवश्यकता है।[6]

सिंह कुमार विज्ञानानन्द के अनुसार समावेशी शिक्षा वह शिक्षा है जिसमें सबका साथ सबका विकास संभव हो। वर्तमान समावेशी शिक्षा के माध्यम से विकास को एक मुख्यधारा से जोड़ना है जिसमें विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को सामान्य शिक्षा अर्जन करने वाले बच्चे के साथ जोड़कर आत्मनिर्भर बनाने का एक प्रयास है। इस प्रणाली में वे सभी बच्चे लाभान्वित होंगे जिन्हें विशेष आवश्यकता है। यह अध्ययन बताता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी बिहार के विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चे पृथक से दिखाई पड़ते हैं। शासन व अन्य गैर प्रशासनिक संस्थाओं, एन.जी.ओ. आदि इन विशिष्ट आवश्यकता वाले बच्चों के लिए प्रयासरत हैं परन्तु आज भी यह बच्चे विकास की मुख्य धारा से नही जुड़ पाये हैं, बिहार में इन बच्चों की दशा व दिशा को सुधारने के विशेष प्रयास किये जाने चाहिए, समावेशी शिक्षा का परिदृश यहाँ बिल्कुल संतुष्टिपूर्ण नही है। अतः समावेशी

शिक्षा वह प्लेटफार्म है जिसमें सभी बच्चों को एक साथ विकास की मुख्यधारा से जोड़कर विकास के मार्ग में सभी की भागीदारी को सुनिश्चित करना है।[7]

मीना शकुन्तला के अनुसार भारत गॉवो से मिलकर बना देश है इसमें 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है और 60 प्रतिशत जनसंख्या ऐसी है जो कृषि को अपनी आजीविका का साधन मानती है, ग्रामीण विकास के मार्ग में अनेक बाधाऍ शिक्षा के अभाव के कारण देखी जाती है। जैसे पारम्परिक विधि से खेती करना, कृषि की नवीन तकनीकी का न होना, शासन द्वारा चलाई जा रही समावेशी विकास योजनाओं का लाभ न ले पाना आदि इन सभी समस्याओं को केवल शिक्षारूपी अस्त्र के द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है, देश का प्रत्येक ग्रामीण जब शिक्षित होगा तो वह सम्पूर्ण सुविधाओं का लाभ लेकर स्वयं का विकास करने के साथ-साथ देश की आर्थिक व्यवस्था को भी समृद्ध करेगा।[8]

सुजाता चारण के अनुसार शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिससे ग्रामीण विकास की दशा और दिशा दोनों बदल सकती है शिक्षा मनुष्य की अज्ञानता को दूर कर ज्ञानरूपी मार्ग की ओर प्रशस्त करती है। सन् 1964 यूनेस्को में आयोजित सम्मेलन में बताया गया कि सामाजिक व आर्थिक विकास के लिए अशिक्षा एक बाधित तत्व है। शिक्षा ग्रामीण व कृषि विकास दोनों में महत्वपूर्ण रूप से भागीदारी निभाती है, आज भले ही ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों की संख्या में बढ़ोतरी हुई है परन्तु यदि उनसे विषय सम्बंधित सामान्य जानकारी पूछी जाए तो वह बताने में असमर्थ होते हैं अतः वास्तविक रूप से ग्रामीण शिक्षा को बढ़ावा देना आवश्यक है।[9]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा का स्तर- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा को समाज की स्थापना के लिए न्यायसंगत व निष्पक्ष साधन के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। भारत में जहाँ साक्षरता की दर 1951 में 18 प्रतिशत थी वहीं 2011 में बढ़कर 73 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा पद्धति का आधारभूत विकास होना प्रारंभ हो गया। वर्तमान समय में स्कूल की शिक्षा प्रणाली काफी व्यापक व विस्तृत हुई है। जिसमें 15 लाख स्कूल के साथ-साथ 94 लाख शिक्षकों की भी वृद्धि हुई है। स्कूल व शिक्षकों की सेवाओं का लाभ लेने के उद्देश्य से 25 करोड़ विद्यार्थी भी इसमें सम्मिलित हुए।

शासन द्वारा संचालित शिक्षण कार्यक्रम - शासन द्वारा विकास निर्मित उद्देश्यों को प्राप्त करने व राष्ट्रीय शिक्षा नीति की पूर्व निर्मित परिकल्पना को लागू करने के उद्देश्य से विभिन्न कार्यक्रम संचालित किये गये। 1990 के दशक में विभिन्न विकास कार्यक्रमों में तेजी लाने का प्रयास किया गया, जैसे-शिक्षाकर्मी परियोजना, जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, सर्वशिक्षा अभियान, ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड, माध्यमिक शिक्षा प्रणाली आदि 2013-2014 में केन्द्र द्वारा आयोजित योजनाएँ माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा के लिए व्यवसायिक शिक्षा की प्रधानता होना, दिव्यांग बच्चों के लिए समावेशी शिक्षा पर बल देना ताकि दिव्यांग बच्चों में हीन भावना विकसित न हो। इस प्रकार शिक्षण के स्तर को ऊँचा उठाने के विभिन्न प्रयासों को शासन द्वारा अपनाया गया।[10]

ग्रामीण विकास के लिए संचालित योजनाऐं

सुकन्या समृद्धि योजना- सुकन्या समृद्धि योजना बेटियों के लिए केन्द्र सरकार की एक छोटी बचत योजना है। जिसे बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं स्कीम के अंतर्गत लांच किया गया है। यह छोटी बचत योजना में सबसे बेहतर ब्याजदर वाली योजना है।

लाड़ली लक्ष्मी योजना- प्रदेश में बालिका जन्म के प्रति जनता में सकारात्मक सोच, लिंगानुपात में सुधार, बालिकाओं के शैक्षणिक स्तर तथा स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार के लिए यह योजना शुरू की गई।

प्रधानमंत्री मातृवंदना योजना- इस योजना में गर्भवती महिलाओं को लाभ दिया जाता है। इसमें गर्भवती महिलाओं की मजदूरी के नुकसान की भरपाई करने के लिए क्षतिपूर्ति व उचित आराम और पोषण सुनिश्चित किया जाता है। साथ ही गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार के लिए नगदी प्रोत्साहन दिया जाता है।[11]

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी योजना अधिनियम- एक वित्तीय वर्ष में कम से कम 100 दिनों का गांरटीकृत रोजगार प्रदान करके ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका सुरक्षा को बढ़ाने के उद्देश्य से इस योजना को प्रारंभ किया गया था।

प्रधानमंत्री आवास योजना- यह योजना शहरी तथा ग्रामीण लोगों के लिए है। जिन लोगों के पास कच्चे मकान हैं या जिनके पास छत नही है, उन्हें घर के लिए कम कीमत पर लोन उपलब्ध कराने वाली आवास योजना

है।[12]

किसान सम्मान निधि योजना- इस योजना में किसान परिवारों को हर साल 6,000 रूपये की आर्थिक सहायता प्रदान की जाती हैं। यह आर्थिक सहायता 2,000 रूपये की तीन समान किस्तों में प्रदान की जाती है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना- इस योजना में किसानों की फसल की प्राकृतिक आपदाओं के कारण हुई हानि को किसानों के प्रीमियम का भुगतान देकर एक सीमा तक कम कराएगी। इस योजना में किसानों को बीमा कम्पनियों द्वारा निश्चित, खरीफ की फसल के लिए दो प्रतिशत प्रीमियम और रबी की फसल के लिए 1.5 प्रतिशत प्रीमियम का भुगतान किया जाता है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना- इस योजना के अन्तर्गत किसानों को 1 लाख, 60 हजार रूपये का लोन दिया जाता है। इस लोन के माध्यम से देश के किसान अपनी खेती की अच्छी तरह से देखभाल कर पाएंगे।

श्रम पंजीयन योजना- श्रमिक कार्ड एक ऐसी योजना है, जो केवल नरेगा या दिन दिहाड़ी काम करने वाले मजदूरों के लिए लागू की गई है। इसमें श्रमिक पंजीयन के पश्चात् श्रमिक कार्ड के द्वारा मिलने वाली केन्द्र व राज्य सरकार की सभी योजनाओं का लाभ मिल सकता है।[13]

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना- इस विधवा पेंशन योजना के अंतर्गत शासन द्वारा जिन महिलाओं की आयु 40 वर्ष से अधिक व 59 वर्ष से कम हैं उन्हें 300 रूपये प्रति माह की पेंशन आर्थिक सहायता के रूप में उपलब्ध कराई जाती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना- इस योजना के अंतर्गत देश के बीपीएल परिवार के 60 वर्ष या उससे अधिक आयु के वृद्ध जनों को सरकार द्वारा पेंशन के रूप में 600 रूपये प्रतिमाह प्रदान किए जाते हैं।[14]

मुख्यमंत्री आवास योजना- म.प्र. राज्य के ऐसे परिवार जो बीपीएल श्रेणी तथा आर्थिक रूप से अत्यंत कमजोर परिवार से हैं, जो अपना पक्का मकान बनाने में असमर्थ है, उन्हें सरकार पक्का घर बनाने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करती हैं।

आयुष्मान भारत योजना- इस योजना का उद्देश्य गरीब और समाज के निचले वर्ग तक आधारभूत स्वास्थ्य सहायता सुविधाओं को पंहुचाना हैं। इस कार्ड की सहायता से केन्द्र सरकार द्वारा सुनिश्चित अस्पतालों में 5 लाख रूपये तक का इलाज करवा सकते हैं। इस प्रकार ग्रामीण विकास के लिए शासन द्वारा अनेक प्रयास किए जा रहे हैं, जो ग्रामीणों को विकास की दौड़ में आगे लायेंगे।

शोध की आवश्यकता एवं महत्व- शिक्षित युवा अपने अधिकार व कर्तव्यों के प्रति सजग होता है। जब देश का युवा शिक्षित होगा तो वह स्वयं के विकास के साथ-साथ अपने परिवार, समाज, गांव व देश का विकास करने में भी अपनी अहम भूमिका निभाएगा। शिक्षित युवा अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने के साथ अन्य लोगों को भी जागरूक करेगा। अतः प्रस्तुत शोध अध्ययन में ग्रामीण विकास के लिए शिक्षा की अनिवार्यता को बताने का प्रयास किया गया है। जो ग्रामीण युवा शिक्षित हैं वे शासन की योजनाओं को समझ कर उनका लाभ ले रहे हैं तथा जो ग्रामीण अशिक्षित या कम शिक्षित हैं, वे शासन द्वारा संचालित योजनाओ का लाभ नही ले पा रहे हैं या बहुत अल्प मात्रा में लाभ ले रहे हैं। अतः इसी कारण से ग्रामीण आज भी विकास की दौड़ में पीछे हैं। शिक्षा ग्रामीण विकास में प्रकाश की किरण बनकर विकास का मार्ग प्रशस्त करती है।

उद्देश्य -

1. ग्रामीण क्षेत्र में विकास योजनाओं का अध्ययन।
2. ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा के स्तर का अध्ययन।
3. शासन द्वारा संचालित योजनाओं तथा शिक्षा के स्तर में संबंध का अध्ययन।

उपकल्पना- शासन द्वारा संचालित योजनाओं तथा शिक्षा के स्तर में कोई सार्थक संबंध नही है।

शोध प्रविधि- शोध अध्ययन हेतु प्राथमिक समंकों का संकलन मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले की भानपुरा तहसील की पांच पंचायतों आँकी, चौकी, समेली, ढाँबा और भानपुरा का चयन उद्देश्यपूर्ण दैव निदर्शन विधि से किया गया है। प्रत्येक गांव से 30-30 परिवारों का चयन किया गया है, इस प्रकार कुल 150 उत्तरदाता परिवारों का सर्वेक्षण किया गया। द्वितीयक समंकों का संकलन विभिन्न शोध-पत्र, पत्रिकाओं, इन्टरनेट व संबंधित प्रशासनिक कार्यालयों आदि से किया गया है।

विश्लेषण : प्रस्तुत शोध पत्र में ''ग्रामीण विकास में शिक्षा की प्रभावशीलता'' को जानने के लिये मन्दसोर जिले की भानपुरा तहसील की पाँच पंचायतों का सर्वेक्षण किया गया जिसमें तालिका क्रमांक 01 में शिक्षा के स्तर को जानने का प्रयास किया गया, वही तालिका क्रमांक 02

में शासन द्वारा संचालित योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया है, साथ ही तालिका क्रमांक 03 में योजनाओं से लाभान्वित हितग्राहियों की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया है तथा तालिका क्रमांक 04 में शिक्षित व लाभान्वित परिवारों के मध्य सम्बंध जानने का प्रयास किया गया। इस प्रकार चारों तालिकाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास में शिक्षा की भूमिका को जानने का प्रयास किया गया।

तालिका क्रमांक 01

(शिक्षा का स्तर)

शिक्षा का स्तर	संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	18	12
प्राथमिक	66	44
माध्यमिक	42	28
हाईस्कूल	24	16
कुल	150	100

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट होता है, कि मंदसौर जिले की भानपुरा तहसील की ऑंकी, चौकी, समेली और ढॉंबा व लोटखेड़ी पंचायतों में ग्रामीणों के प्राथमिक शिक्षा का स्तर 44 प्रतिशत, माध्यमिक शिक्षा का स्तर 28 प्रतिशत व हाईस्कूल शिक्षा का स्तर 16 प्रतिशत है। इस प्रकार यदि हम कुल शिक्षा के स्तर को देखे तो वह 88 प्रतिशत हैं। वही निरक्षरता का स्तर 12 प्रतिशत है। उपरोक्त तालिका से निष्कर्ष निकलता है, कि जहॉं ग्रामीणों की शिक्षा का स्तर 88 प्रतिशत है, वही निरक्षरता का स्तर 12 प्रतिशत है जो साक्षरता के स्तर से काफी कम है। यह कहीं न कहीं ग्रामीणों का शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। परन्तु शिक्षा का स्तर जैसे-जैसे प्राथमिक शिक्षा से ऊपर की ओर बढ़ते हैं वैसे-वैसे शिक्षा का प्रतिशत कम हो जाता है। अतः शिक्षा के इस घटते प्रतिशत में सुधार की आवश्यकता है।

तालिका क्रमांक 02

शासन द्वारा संचालित योजनाओं की जानकारी

शासन द्वारा संचालित योजना	संख्या	प्रतिशत
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना	138	92
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेंशन योजना	140	93.33
किसान सम्मान निधि योजना	110	73.33
प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना	128	85.33
मुख्यमंत्री आवास योजना	130	86.66
आयुष्मान भारत योजना	117	78
किसान क्रेडिट कार्ड योजना	108	72
महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना	109	72.66
प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना	119	79.33
लाड़ली लक्ष्मी योजना	122	81.33
सुकन्या समृद्धि योजना	120	80
श्रम पंजीयन योजना	135	90
प्रधानमंत्री आवास योजना	115	76.66
कुल योजनाओं की जानकारी	1591	81.58

(सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 150)

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट होता है कि मंदसौर जिले की भानुपरा तहसील की ऑकी, चौकी, समेली, ढाबा व लोटखेड़ी पंचायत में संचालित विभिन्न विकास योजनाओं में से कुछ योजनाओं का चयन किया गया है। शोध प्रविधि के अनुसार 150 ग्रामीण परिवारों का सर्वेक्षण किया गया है और इन्ही 150 ग्रामीण परिवारों से चयनित प्रत्येक योजनाओं की जानकारी प्राप्त की गई है, इस प्रकार सभी योजनाओं से जानकारी प्राप्त कुल 1591 उत्तरदाता है, यदि मोटे तौर पर देखें तो भानपुरा तहसील की सर्वेक्षित पंचायतों में इन्द्रा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेशन योजना को 93.33 प्रतिशत व इन्दिरा गांधी विधवा पेशन योजना 92 प्रतिशत परिवार जानते हैं वहीं किसान क्रेडिट कार्ड योजना को 72 प्रतिशत परिवार व महात्मा गांधी राष्ट्रीय परिवार योजना को 72.66 प्रतिशत परिवार जानते हैं जिनका प्रतिशत अन्य योजनाओं की जानकारी रखने वाले परिवारों की तुलना में कम है। परन्तु चयनित विकास योजनाओं में से कोई भी योजना ऐसी नही है जिसके बारे में सर्वेक्षित उत्तरदाता को जानकारी का अभाव हो। सभी योजनाओं की जानकारी रखने वाले 81.58 प्रतिशत परिवार हैं जिसके बारे में सर्वेक्षित उत्तरदाता जानकारी रखते हैं। अतः शासन द्वारा संचालित सभी योजनाओं की जानकारी परिवारो तक पहुचाने के लिये शासन को सशक्त कदम उठाने चाहिये।

तालिका क्रमांक 03

योजना से लाभान्वित हितग्राही

शासन द्वारा संचालित योजना	संख्या	प्रतिशत
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना	120	80
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेंशन योजना	128	85.33
किसान सम्मान निधि योजना	108	72
प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना	120	80
मुख्यमंत्री आवास योजना	115	76.66
आयुष्मान भारत योजना	110	73.33
किसान क्रेडिट कार्ड योजना	99	66
महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना	97	64.66
प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना	100	66.66
लाड़ली लक्ष्मी योजना	112	74.66
सुकन्या समृद्धि योजना	102	68
श्रम पंजीयन योजना	115	76.66
प्रधानमंत्री आवास योजना	40	26.66
कुल योजनाओं की जानकारी	1366	70.05

(सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 150)

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 03 में सर्वेक्षित उत्तरदाताओं में लाभान्वितों की स्थिति का अध्ययन किया गया है सर्वेक्षण से पता चलता है कि मंदसौर जिले की भानपुरा तहसील की चयनित पंचायतो में 150 ग्रामीण परिवारो को सर्वेक्षण अनुसार सभी योजनाओं के कुल 1950 परिवार हैं जिसमें से 1366 परिवार ऐसे हैं जिन्हे योजना का लाभ प्राप्त हो रहा है। इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेशन योजना ऐसी है जिसका सर्वाधिक लाभ 85.33 प्रतिशत ग्रामीणों को प्राप्त हो रहा है वहीं प्रधानमंत्री आवास योजना ऐसी है जिसका 26.66 प्रतिशत लाभ ही चयनित पंचायतों तक पहुँच पा रहा है, यदि हम मोटे तौर पर देखें तो चयनित पंचायतों में अधिकांश 70.05 प्रतिशत योजनाएँ ऐसी हैं जिसका लाभ ग्रामीण परिवारों को प्राप्त हो रहा है यदि विकास को पूर्णरूप से ग्रामीणों तक पहुचाना है तो शासन को ठोस कदम उठाने के साथ-साथ नियमों को भी लचीला करना होगा जिससे ग्रामीण परिवार योजनाओं का पूरा लाभ ले सके।

तालिका क्रमांक 04 में शिक्षित व ग्रामीण परिवारों के मध्य सम्बंध जानने का प्रयास किया गया है परन्तु सभी योजनाओं के लाभार्थियों का एक साथ गुण सम्बंध जानना संभव नही है अतः हम केवल इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेशन के लाभान्वित व शिक्षित परिवारों के मध्य सम्बंध जानने का प्रयास करेंगे क्योकि इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेशन योजना का सर्वाधिक लाभ ग्रामीण परिवारों तक पहुंच रहा है।

तालिका क्रमांक 4

शिक्षित व लाभान्वित ग्रामीण परिवार के मध्य संबंध

कुल ग्रामीण परिवार	शिक्षित परिवार	अशिक्षित परिवार	लाभान्वित परिवार	अलाभान्वित परिवार
150 (100 प्रतिशत)	132 (88 प्रतिशत)	18 (12 प्रतिशत)	128 (85.33प्रतिशत)	22 (14.66प्रतिशत)

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 04 में 150 उत्तरदाताओं का सर्वेक्षण किया गया जिसके अन्तर्गत शिक्षित उत्तरदाताओं व संचालित (इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धा पेशन योजना) के लाभान्वितों के मध्य सम्बंध जानने का प्रयास किया गया है। उपर्युक्त तालिका क्रमांक 04 में 150 ग्रामीण परिवारों में से 132 परिवार ऐसे हैं जो शिक्षित व शेष 18 परिवार अशिक्षित हैं, यदि यहाँ पर हम शिक्षित व अशिक्षित परिवारों के मध्य शिक्षा के स्तर की तुलना करें तो शिक्षित परिवार अशिक्षित परिवार से 88 प्रतिशत अधिक है जो कहीं न कहीं शिक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता को प्रदर्शित करता है। अब यदि हम योजनाओं से लाभान्वित व अलाभान्वित परिवारों को देखें तो 128 परिवार ऐसे हैं जो योजनाओं का लाभ ले रहे हैं वहीं 22 परिवार ऐसे हैं जो योजनाओं का लाभ नही ले पा रहे हैं। इस प्रकार 85.33 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो योजनाओं का लाभ ले रहे हैं जिससे यह स्पष्ट होता है कि शासन द्वारा विकास के लिये उठाये गये कदम अपने उद्देश्यों की सफलता को प्राप्त करने में विकास के लिये सार्थक प्रयास हैं। अब यदि हम शिक्षित परिवार व लाभान्वित परिवारों को correlate करें तो 81.33 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो शिक्षित होने के साथ-साथ योजनाओं से लाभान्वित हैं व 6.66 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो शिक्षित होने के बाद भी योजनाओं का लाभ नही ले पा रहे हैं, क्योंकि सर्वेक्षण से पता चलता है कि इसका

कारण लालफीताशााही, सूचना का अभाव, उदासीनता आदि हैं। 12 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो अशिक्षित होने के कारण शासन की योजनाओं का लाभ नही ले पा रहे हैं इस प्रकार शिक्षा व जागरूकता विकास योजनाओं का लाभ प्राप्त कराने वाली एक ऐसी सीढ़ी है जो विकास योजनाओं तक पहुचाने में सहायक है यदि शिक्षा रूपी इस सीढ़ी का अभाव हो, तो हम विकास को जन-जन तक पहुचाने में असमर्थ होंगे।

शोध के दौरान ली गयी शून्य परिकल्पना या उपकल्पना-

शासन द्वारा संचालित योजनाओं तथा शिक्षा के स्तर में कोई सार्थक संबंध नहीं है अर्थात् दोनों स्वतंत्र हैं। 5 प्रतिशत सर्धकता स्तर पर x^2 का सारणी मूल्य 3.841 है। जबकि x^2 का परिमाणित मूल्य 44.17 है जोकि x^2 के सारणी मूल्य से अधिक है। अतः हमारी परिकल्पना असत्य है जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शासन द्वारा संचालित योजना तथा शिक्षा का स्तर दोनों स्वतंत्र नहीं हैं। वस्तुतः शासन द्वारा संचालित योजना तथा शिक्षा के स्तर दोनों में संबंध है।

d.f.=1, x^2c = 44.17,

$x^2 t$ | x^2 परिक्षण सारणी

$x^2c > x^2$, hypothesis is rejected

$x^2c < x^2$, hypothesis is accepted

$44.17 > 3.841$

अतः 05 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर यह कहा जा सकता है, कि शिक्षा का स्तर ग्रामीणों उत्तरदाताओं को योजनाओं से लाभान्वित होने में सार्थक रूप से प्रभावित कर रहा है। जितने अधिक उत्तरदाता शिक्षित होगें उतने अधिक योजनाओं से लाभान्वित भी होंगे जिससे देश विकास की ओर प्रगतिशील होगा। अतः शासन द्वारा संचालित विभिन्न योजनाएं देश के विकास में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं।

निष्कर्ष : उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता हैं कि शिक्षा एवं शासन द्वारा संचालित योजनाओं के मध्य सकारात्मक सम्बन्ध हैं। जो व्यक्ति शिक्षित हैं वह शासन द्वारा संचालित योजनाओं की जानकारी लेकर उन योजनाओं से लाभान्वित हो रहे हैं और स्वयं के विकास के साथ-साथ अपने परिवार का भी विकास कर रहे हैं। इस प्रकार जो परिवार शिक्षित हैं वे योजनाओं का अधिक लाभ ले पा रहा हैं और जो परिवार अशिक्षित हैं वे विकास योजनाओं के लाभ से वंचित हैं। शिक्षा व्यक्ति का सर्वागिण विकास करती हैं यह व्यक्ति को जागरूक बनाती हैं उनकी निर्णय क्षमता को निखारती हैं, शिक्षा व्यक्ति के जीवन में प्रकाश रूपी दीपक का कार्य करती हैं। देश का ग्रामीण जब शिक्षित होगा तो विकास गांवों से नगर व नगर से प्रदेश और प्रदेश से राष्ट्र तक पहुँचेगा जो राष्ट्र को विकासशील अवस्था से निकाल कर विकसित अवस्था में ले जाएगा।

सुझाव : प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर कुछ सुझाव इस प्रकार हैं-

1. ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के स्तर में सुधार किया जाना चाहिए।
2. शासन द्वारा संचालित विकास योजनाओं को जन-जन तक पहुंचाने के लिए सार्थक प्रयास किये जाने चाहिए।
3. विकास योजनाओं से संबंधित नियमावली में सरलता होनी चाहिए ताकि आम आदमी उसका लाभ प्राप्त कर सके।
4. अधिकारियों व कर्मचारियों का लाभार्थियों के प्रति व्यवहार सरल होना चाहिए।
5. पिछड़े व निम्न स्तरीय वर्ग को शिक्षित करने के लिए समाज व सरकार को सामूहिक रूप से कुछ विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. जैन कोठारी कुशल, चौहान अनिता 'आदिवासी महिलाओं की शिक्षा में आने वाली विभिन्न समस्याएँ एवं सुझाव' Journal of arts, Humanities, Indexed Journal, Nov 2021, Volume-4 Issue- 11, NOV 2021, pp. 17-24
2. समावेशी विकास के लिये गुणात्मक विद्यालयी शिक्षा जरूरी, कुरूक्षेत्र, नवम्बर 2019 (ग्रामीण विकास को समर्पित) नई दिल्ली, वर्ष 66 मासिक अंक 01 पृ. 30
3. सक्सेना जगदीश, 'समग्र ग्रामीण विकास का लक्ष्य' कुरूक्षेत्र (ग्रामीण विकास को समर्पित) सतत् और समावेशी ग्रामीण विकास, जून 2021 वर्ष 67, मासिक अंक 08 पृ. 5
4. शर्मा राशि, 'समग्र ग्रामीण विकास का लक्ष्य' कुरूक्षेत्र (ग्रामीण विकास को समर्पित) सतुत और समावेशी ग्रामीण विकास, जून 2021, वर्ष 67, मासिक अंक 08 पृ. 24
5. सुजलाना परमजीत, किरण छवी 'भारत में वित्तीय समावेशन की स्थिती पर एक अध्ययन' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मैनेजमेन्ट स्टडीज़ वॉल्युम नम्बंर 05, अप्रैल 2018
6. Saji T.G. 01 April 2019 'Inelusure Growth in india. Some realities' Indian Journal of Economics and Development volume 15 No. 3, 2019
7. सिंह कुमार विज्ञानानन्द, 'बिहार में वर्तमान समय में समावेशी शिक्षा, दशा एवं दिशा' Senolarly Research Journal of Interdisciplinary Studies, Jan-Feb. 2021, Vol 8/63
8. मीना शकुन्तला 'ग्रामीण विकास की अवधारणा, बाधाएँ एवं शिक्षा की भूमिका' International Journal of Education, modern Managemant, Applied science (IJEMMASS), April-June 2021
9. चारण सुजाता 'कृषि एवं ग्रामीण विकास में शिक्षा की भूमिका' International Journal of Advanced Academic Studies, June 16, 2021
10. सतत् और समावेशी ग्रामीण विकास, कुरूक्षेत्र (ग्रामीण विकास को समर्पित), नई दिल्ली, जून 2021 वर्ष 67, मासिक अंक 8, पृ.25
11. Top 10 governmet girl child schemes url: https://www paisabazaar.com/hindi/saving schemes /top-10-government-girl-child-schemes-india accessed on on 05/12/2022 at 2pm
12. Nai duniya url: https://www naiduniya.com/madhaya-pradesh/Bhopal-madhaya-pradesh-foundation-day-special-all-round-development-of-rural-areas-in-madhaya-pradesh accessed on on 05/12/2022 at 3pm
13. url: https://www.nibsm.org.in/ accessed on on 05/12/ 2022 at 3.30pm
14. gramin vikas https: / www. My gov. in/ hi/ group/ accessed on 04/09/2022 at 7-10 pm.

 Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

वर्तमान परिदृश्य मे कार्योजित मुसहर महिलाओं के सशक्तीकरण की चुनौतियांः समाजशास्त्रीय अंतर्दृष्टि

❑ डॉ. नेहा चौधरी

सूचक शब्द : मुसहर, सशक्तीकरण, सामाजिक समस्याएँ, जागरूकता, अशिक्षा।

प्रस्तुत शोध पत्र में वर्तमान परिदृश्य मे कार्योजित मुसहर महिलाओं के सशक्तीकरण की चुनौतियों का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है। मुसहर जाति अपने परंपरागत व्यवसाय के लिए जानी जाती है। वैश्वीकरण के इस दौर में बाजारों में आने वाली नई वस्तुएं लोगों को आकर्षित कर रही हैं, ऐसे में मुसहर जाति की महिलाएं आज भी अपने परंपरागत कार्य जैसे दोना–पत्तल बनाना, खेतों में कार्य करना इत्यादि को अपनाए हुए हैं। इनके पास कृषि कार्य करने हेतु भूमि बहुत कम है, इसके अतिरिक्त कार्यस्थल से मुसहर महिलाओं को अपने कार्य का उचित पारिश्रमिक भी प्राप्त नहीं हो पाता है। अशिक्षा के कारण इनमें जागरूकता का नितांत अभाव है। मूलभूत सुविधाओं का अभाव, दयनीय आर्थिक स्थिति, बाल–विवाह, अशिक्षा इत्यादि ने इनकी स्थिति को कमजोर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आधुनिक मूल्यों के साथ सामंजस्य स्थापित न होने के कारण मुसहर महिलायें सांस्कृतिक संक्रमण की स्थिति से गुजर रही हैं। अतः इनके सशक्तीकरण में इनकी सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति गंभीर रूप से बाधक तत्व के रूप में व्याप्त है जिनका प्रस्तुत शोध में समाजशास्त्रीय विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

मुसहर शब्द की उत्पत्ति मुसहर जाति के लोगों द्वारा चूहे को आहार के रूप में ग्रहण करने की प्रवृत्ति से संबन्धित है। समान्यतः मुसहर[1] का शाब्दिक अर्थ है– मूस+हर यानि 'मूस का हरण करने वाला' अर्थात् चूहा खाने वाले को मुसहर कहा जाता है। क्रूक[2] के अनुसार "मुसहर वनमानुष अर्थात् जंगल के निवासियों की उपजाति है" इसलिए इन्हें वनवासी भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त मुसहर को भूमिया, बुईकोल इत्यादि जैसे कई नामों से जाना जाता है। यद्यपि चूहा पकड़ना और खाना किसी भी जाति या जनजाति की स्थायी विशेषता नही है। क्रूक[3] एक लोककथा का उल्लेख करते हुए स्पष्ट करते हैं कि मुसहर शब्द जैसा सम्बोधन मुख्यतः मांस का सेवन करने (flesh seeker) या शिकारी (hunter) प्रवृति के कारण माना जा सकता है, जबकि रिजले इनके लिए मुसहर शब्द को ही उचित मानते हैं। पौराणिक कथाओं व मान्यताओं के अनुसार महाकाव्य रामायण के रचियता महर्षि वाल्मीकि को मुसहर जाति का वंशज माना जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ मुसहर स्वयं को हिंदू धर्मग्रंथ रामायण की एक नारी पात्र "शबरी" के वंशज बताते हैं, जिनका जूठा बेर मर्यादा पुरुषोत्तम राजा राम ने खाया था। इनके निवास स्थान समान्यतः जंगलों, पहाड़ों और नदियों के किनारे होते हैं। इस समुदाय के लोग भारत के उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, उत्तराखंड के साथ–साथ नेपाल में भी पाये जाते है। उत्तर प्रदेश[4] में इनकी संख्या 250,000 के आस–पास है। इनका परंपरागत कार्य जंगल से लकड़ी काटना, पत्ते के दोना–पत्तल बनाने के अतिरिक्त धान की कटाई के समय धान की सफाई का कार्य करना इत्यादि हैं, जिनमें अधिकांशतः महिलाएं संलिप्त रहती हैं। हालांकि वन अधिनियम, आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण और मशीनीकरण से इनका परंपरागत व्यवसाय नकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ है, जैसे– वन से जंगली लकड़ी काटना बंद हो गया, गैस व आधुनिक फैशन वाले दोने व पत्तलों के उपयोग में वृद्धि हुई है जिसके परिणामस्वरूप इनके परंपरागत कार्य हाशिये पर आ गए हैं। मुसहर पुरुष अपने परंपरागत निवास स्थान से पलायन कर गांवों व नगरों की ओर प्रस्थान कर अब मजदूरी, रिक्शा चलाना, खेतों में कार्य करना, ईंट भट्ठों पर कार्य करना आदि को अपने जीवकोपार्जन का माध्यम बनाते चले जा रहे हैं परंतु, मुसहर महिलाएं आज भी अपने परंपरागत पेशों को अपनाये हुए हैं। चौधरी[5] के अध्ययन से ऐसा ज्ञात है कि आर्थिक स्थिति के कमजोर होने के कारण इनमें शिक्षा का नितांत अभाव है। स्माइल फाउंडेशन[6] चैरिटैबल संस्था, नई दिल्ली ने इस ओर

❑ सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, डी.ए.वी. (पी.जी.) कालेज, संबद्ध बी.एच.यू. वाराणसी (उ.प्र.)

ध्यान आकर्षित किया है कि विभिन्न रिपोर्टों के अनुसार मात्र छः प्रतिशत मुसहर पुरुष व दो प्रतिशत मुसहर महिलाएं ही पढ़-लिख सकती हैं। इतना ही नहीं कम आयु में विवाह हो जाने, छोटी उम्र मे माँ बन जाने और घरेलू कार्यों का बोझ होने के कारण शिक्षा ग्रहण करने के अवसर से वंचित रह जाती हैं, हालांकि मुसहर जाति की महिलाओं में शिक्षा के प्रति रुझान बढ़ा है। उत्तर प्रदेश में जनजाति समुदाय से होने के कारण मुसहर महिलाओं को दोहरी समस्या का सामना करना पड़ता है- "जातिगत समस्या और महिलागत समस्या", जो कि हर प्रकार से इनकी सामाजिक-आर्थिक और शैक्षणिक स्थिति को मजबूत बनाने में बाधा उत्पन्न करती हैं।

मुसहर जाति की महिलाओं के सशक्तीकरण में बाधक तत्व

शिक्षा का अभाव- मुसहर जाति सदियों से शोषण का शिकार रही है। पहले यह बंधुआ मजदूरी के दंश को झेल रहे थे और आज न्यूनतम मजदूरी की समस्या के शिकार हैं। यदा-कदा छुआछूत के व्यवहार का सामना करना पड़ता है। कमजोर आर्थिक स्थिति और छुआछूत के कारण हीन भावना के शिकार हो जाते हैं इतना ही नहीं इसी कारणवश इनमें शिक्षा नहीं के बराबर है। यह छुआछूत और जातिगत भेदभाव का ही परिणाम है कि मुसहरों के बच्चे स्कूल पढ़ने नहीं जाते हैं और जो जाते हैं वे शिक्षकों के दुर्व्यवहार के कारण पढ़ाई बीच में ही छोड़ देने को विवश हो जातें हैं। 1991 और 2001 के जनसंख्या रिपोर्ट के आंकड़ों पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि मुसहर जाति में शिक्षा का प्रतिशत अत्यधिक निम्न है जिसमें मात्र 2.25 प्रतिशत महिला तथा 9 प्रतिशत पुरूष शिक्षित हैं। वर्तमान में मुसहर महिलाओं में शिक्षा के प्रति रुचि उत्पन्न हुई है क्योंकि महिलायें अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को सुधारने में शिक्षा की भूमिका को समझ गयीं हैं। बिहार सरकार[7] (2012) की रिपोर्ट के अनुसार मुसहर पुरुषों में 7.07 प्रतिशत और 1.03 प्रतिशत महिलाएं शिक्षित हैं। खान[8] के अध्ययन के निष्कर्ष से मुसहर शिक्षा का स्तर 9.08 प्रतिशत इस ओर ध्यान आकर्षित करता है कि मुसहरों में शिक्षा के प्रति रुझान प्रारंभ हो गया है। यद्यपि सहाय[9] का अध्ययन इस तथ्य को उजागर करता है कि आज भी उच्चवर्गों के द्वारा मुसहरों के प्रति नकारात्मक रवैये इनके विरूद्ध संरचनात्मक शोषण को बनाये रखने मे योगदान करता है यही कारण है कि आज भी इनका शारीरिक, आर्थिक और मानसिक शोषण बरकरार है। राजनीति में निम्न भागीदारी, सरकारी नौकरी मे प्रतिनिधित्व का अभाव, राजनीति और अधिकारों के प्रति जागरूक्ता का अभाव, और राजनीतिक - आर्थिक शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों द्वारा शोषण के कारण इनमें निरक्षरता, कुपोषण, गरीबी, बाध्यतापूर्ण पलायन, बेरोजगारी, आत्मविश्वास की कमी और आजीविका के प्रति असुरक्षा की भावना जैसी समस्याओं ने अपनी जड़ों को मजबूती से फैला रखा है यही कारण है कि सरकारी योजना का लाभ इन तक नहीं पहुंच पाता है। मुसहर माता-पिता अपने बच्चों को शिक्षित करना चाहते हैं, परंतु गरीबी के कारण यह लोग बच्चों को काम में लगाने को बाध्य हैं या घर मे ही बैठाये रखने और घर के काम में लगाये रखते हैं। इतना ही नहीं स्कूल में भेदभाव एवं दुर्व्यवहार होने के कारण बच्चे स्कूल जाने से डरते हैं। माता-पिता घर पर बच्चे के खाली बैठे रहने से ज्यादा उचित उसे काम में लगाना पसंद करते हैं और अपने उत्तरदायित्व का निपटारा करने हेतु बच्चों का विवाह कम आयु मे ही कर देते हैं। जागरूकता की कमी के कारण पूर्व में शिक्षा के प्रति रुझान न होने की प्रवृत्ति ने वर्तमान में शिक्षा को बढ़ावा दिया है। कालांतर में इनका निवास स्थान दूर जंगलों में हुआ करता था, जहां पर स्कूल-कालेज का अभाव था इसके अतिरिक्त जागरूकता की कमी के कारण इनमें शिक्षा के प्रति रुझान भी नाम मात्र का था। स्कूल-कालेज में होने वाले जातिगत भेदभाव ने भी इनमें अशिक्षा की समस्या को बढ़ाया है। बी. पौडेल एवं एस. कत्तेल[10] के अध्ययन में 93.8 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित पाये गये जो पढ़-लिख भीं नहीं सकते थे। दलह[11] के अध्ययन में भीं यही परिणाम सामने आया था जिसके अंतर्गत पुरूष साक्षरता दर 7.3 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 3.8 प्रतिशत थी।

आर्थिक स्थिति का सुदृढ़ न होना- मुसहर जाति की महिलाओं का अर्थोपार्जन परंपरागत कार्य लकड़ी बीनने, दोना-पत्तल बनाने आदि से होता है। वर्तमान में कल-कारखानों द्वारा आधुनिक दोना- पत्तल के निर्माण, गैस, सौर ऊर्जा आदि के उपयोग से इनकी आर्थिक स्थिति खराब हुई है। इनके द्वारा बनाए गए दोना-पत्तल सामान्य गुणवत्ता के होते हैं जबकि कारखाने से निर्मित दोना-पत्तल अपेक्षाकृत सस्ता, टिकाऊ व डिज़ाइनदार

होता है, जिस कारण इनके द्वारा निर्मित सामानों की बाजार में मांग कम है। इनके द्वारा निर्मित सामानों का कोई निश्चित बाज़ार नहीं है, अतः मुसहर महिलाएं आस-पास के गांवों व छोटे-छोटे कस्बों में ही अपने सामानों की खरीद-फरोख्त करतीं हैं जिसका सीधा असर इनकी आर्थिक स्थिति पर पड़ता है। मुसहर जाति की महिलाओं के साथ-साथ पुरुषों को भी आर्थिक समस्या का सामना करना पड़ता है। अशिक्षा के कारण ये लोग बाहर जा कर भी कौशल युक्त रोजगार पाने में असमर्थ हैं, परिणामस्वरूप इनमें अशिक्षा व गरीबी की समस्या बनी हुई है। इनके परंपरागत कार्य को करने के लिए प्रशिक्षण का अभाव इनकी प्रमुख समस्या है।

सामाजिक स्थिति- प्रायः मुसहर जाति की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होती जिस कारण सम-सामयिक भौतिकतावादी समय में इनकी सामाजिक स्थिति भी अच्छी नहीं है। इस समुदाय के लोग अपने जीवन-यापन के लिए मजदूरी जैसे कार्य करते हैं। वर्तमान समय में मुसहर जाति की महिलाओं की स्थिति भी संतोषजनक नहीं है। महिलाओं द्वारा किए गए कार्यों की उचित मजदूरी न मिल पाने, निर्मित सामानों जैसे दोना-पत्तल का संतोषजनक मूल्य न मिल पाने, अशिक्षा और जागरूकता में कमी भी इनकी निम्न स्थिति का प्रमुख कारण है।

बाल विवाह- सरकार द्वारा बहुत पहले ही बाल विवाह पर कानून बना कर इसे प्रतिबंधित किया जा चुका है, परंतु गरीबी और अशिक्षा के कारण इनमें बाल विवाह जैसी कुप्रथा परंपरागत रूप से बनी हुई है। जिसका प्रभाव इनकी सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक व मानसिक स्थिति पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। हालांकि वर्तमान समय में समाज के अन्य लोगों से वृहद रूप से अंतःक्रिया व कानूनों के प्रभाव से मुसहर जाति में बाल विवाह के प्रचलन में कमी आई है।

स्वास्थ्य समस्या- इनका परंपरागत निवास स्थान दूर जंगलों में था, और आज भी ज्यादातर मुसहर महिलाएं मलिन बस्ती या दूर-दराज के अति ग्रामीण इलाकों में निवास कर रही हैं जहां से सरकारी अस्पताल एवं दवा की दुकान दूर है, जिस कारण इनका समय से उपचार नहीं हो पता है। इन स्थानों पर प्रायः अच्छी चिकित्सा सुविधा का अभाव रहता है। पुरुषों द्वारा शहर में व्यवसाय करने के कारण महिलायें समय से चिकित्सा सुविधा प्राप्त करने हेतु अस्पताल नहीं पहुंच पातीं हैं और न ही अपने स्वास्थ्य से सम्बंधित किसी भी मामले पर स्वतंत्र निर्णय ले पातीं हैं, इसके अतिरिक्त पूंजी की कमी के कारण प्राइवेट अस्पतालों में भी इलाज कराने में असमर्थ हैं। स्वच्छता का दूर-दूर तक कोई संबंध इनसे नजर नहीं आता है। मुसहर जाति के लोगों को मूलभूत सुविधाओं से युक्त निवास, पीने के पानी, भुखमरी आदि समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है जो इनके स्वास्थ्य विशेषकर महिलाओं के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालने में प्रभावकारी है।

साहित्यि समीक्षा :

ए. कुमार[12] ने बिहार के सामान्य परिदृश्य तथा **अर्चना एवं पी. सिंह**[13] ने बिहार के मधेपुरा जिला में पायी जाने वाली मुसहर जाति का अध्ययन किया। इनका मानना है कि यह जाति बिहार के अति पिछड़ा वर्ग से संबन्धित है। 2007 से नीतीश कुमार के नेतृत्व वाली सरकार ने दलितों के बीच हाशिए पर रहने वाले लोगों के विकास के लिए महादलित विकास मिशन की घोषणा की है। ए. कुमार तथा अर्चना एंव पी. सिंह अपने अध्ययन में बिहार के अत्यंत पिछड़े मुसहर समुदाय के सामाजिक और आर्थिक सहायता प्रदान करने के संदर्भ में महादलित विकास मिशन की समीक्षा करते हैं। अध्ययन से स्पष्ट है महादलित विकास मिशन की दूरदर्शिता के अंतर्गत शुरू की गई कई योजनाओं में से कुछ ही मुसहरों के लिए उपयोगी साबित हुई हैं, इसके अलावा, जाति के आधार पर भेदभाव को दूर करने में किसी भी योजना के सफल होने की जानकारी नहीं थी। योजना का अधिकांश लाभ मुसहरों तक नहीं पहुंचा है।

नेपाल के विभिन्न स्थानों जिसमें **जी. के. चौधरी**[14] ने रौतहट जिले, **एम. गिरि**[15] ने पूर्व मध्य तराई क्षेत्र, **पी. कठवाड़ा**[16] ने बारा जिले, **बी. पौडेल व एस. कत्तेल**[17] ने धौसा जिले में पाई जाने वाली मुसहर जाति के अध्ययन पर ध्यान केन्द्रित किया है। इन सभी के अध्ययन का परिप्रेक्ष्य अलग-अलग रहा है जो विकास हेतु किए गए सरकारी व गैर सरकारी प्रयासों एवं इनकी वर्तमान सामाजिक-आर्थिक स्थिति को व्याख्यायित करता है। इनके अध्ययनों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण, नगरीकरण और औद्योगीकरण जैसी वृहद प्रक्रियाओं ने इनको सकारात्मक व नकारात्मक दोनों रूपों में प्रभावित किया है। परंपरागत सांस्कृतिक संरक्षण व नवीन सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों

के साथ सामंजस्य स्थापित करने में मुसहर जाति की महिलाओं को असुविधाओं का सामना करना पड़ रहा है, जिसके कारणों में अशिक्षा, अज्ञानता, तकनीकी पिछड़ापन, राजनीतिक शक्ति में कम प्रतिनिधित्व इत्यादि हैं। इन विद्वानों ने मुसहर जाति के सर्वांगीण विकास हेतु सरकार के साथ-साथ व्यवसायिक समूहों, जनप्रतिनिधियों, तकनीकी-दक्ष लोगों आदि के सामूहिक प्रयास को भी रेखांकित किया है।

एस. यादव और ए. सक्सेना[18] के गोरखपुर, उत्तर प्रदेश के विश्वनाथपुर गांव के मुसहरों पर आधारित अध्ययन से स्पष्ट है कि जो मुसहर शिक्षित, अपने अधिकारों और राजनीति के प्रति जागरूक हैं। वे पंचायत में अपनी समस्या खुलकर रखते हैं इसलिए सिर्फ इन्हीं का विकास हो रहा है। यही कारण है कि मुसहर महिलाओं की स्थिति और ज्यादा शोचनीय है। अशिक्षा, गरीबी, राजनैतिक जागरूकता के अभाव के कारण सरकारी प्रयास कागज मे ही सिमट कर रह जाते हैं। वोट बैक की राजनीति में मुसहरों के उत्थान को मुद्दा अवश्य बनाया जाता है परन्तु चुनाव के बाद इस हेतु भरसक प्रयास नही देखा गया। अतः मुसहरों का शारीरिक और मानसिक शोषण आज भी जारी है और उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति मे कोई सुधार नहीं हो पाया है। विभिन्न अध्ययनों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से मुसहर महिलाओं के सशक्तीकरण के स्तर को जानने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. मुसहर जाति की कार्योजित महिलाओं की आर्थिक और सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. शैक्षणिक स्थिति व जागरूकता का स्तर ज्ञात करना।

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन की शोध प्रविधि वर्णनात्मक है जो चंदौली जनपद के कौड़िहार, दिरेहूँ और रामपुर ग्राम की दोना-पत्तल बनाकर बेचने वाली मुसहर महिलाओं पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि का उपयोग कर किया गया जिसके अर्न्तगत चंदौली जिला के अर्न्तगत आने वाले 513 गांवों मे से 3 गांवों का चयन अध्ययन हेतु किया गया है। जनगणना 2011 के अनुसार[19] चंदौली जिला की कुल जनसंख्या 834,724 (437,248 पुरूष और 397,476 स्त्री) है, जिसका औसत लिंगानुपात 909 है। जनसंख्या का 26.1 प्रतिशत भाग नगरीय क्षेत्र और 73.9 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र में निवास करता है। इन तीन गावों में मुसहर महिलाओं की वास्तविक संख्या की जानकारी प्राप्त न होने के कारण गैर सम्भावना निदर्शन पद्धित के स्नोबॉल प्रविधि के माध्यम से तथ्यों के संकलन हेतु अध्ययन क्षेत्र से कुल 107 दोना-पत्तल बनाकर उसे बेचने का काम करने वाली महिलाओं की जानकारी हुई, परन्तु अध्ययन में 103 कार्योजित मुसहर महिलाओं को ही सम्मिलित किया जा सका है, जिसमे से 100 उत्तरदाताओं से साक्षात्कार लिया गया और 3 मुसहर महिलाओं का वैयक्तिक अध्ययन किया गया है, जिससे समस्या की गम्भीरता को ज्ञात कर गहन अध्ययन किया जा सके। तथ्य संकलन हेतु प्राथमिक व द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोत के अंतर्गत साक्षात्कार अनुसूची एवं अर्ध-सहभागी अवलोकन पद्धति का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोत के अंतर्गत विषय से संबन्धित पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं, पूर्ववर्ती शोध पत्रों में उपलब्ध अध्ययन सामग्री का उपयोग किया गया है।

वैयक्तिक अध्ययन

शीला (काल्पनिक नाम) एक 45 वर्षीय अशिक्षित महिला है, जोकि संयुक्त परिवार में रहती है जिसमें कुल 12 सदस्य रहते हैं। शीला की तीन बेटियां और दो बेटे हैं। परिवार के पुरुष सदस्य ईट-भट्ठों पर काम करते हैं। पेड़-पौधे कट जाने के कारण दोना-पत्तल बनाने के लिए पत्ते नही मिल पाते हैं जिसके कारण पत्ते के बने दोना-पत्तल का व्यवसाय खराब हो रहा है। शीला पास के गांव में पहले पत्तल-दोना बेचने को जातीं है परंतु फाइबर के दोना-पत्तल आने से यह कार्य बुरी तरह प्रभावित हुआ है। गुजारा करना ही मुश्किल हो रहा है इसलिए बच्चों को स्कूल भेजने में असमर्थ हैं हालांकि स्कूलों में बच्चों की प्राथमिक शिक्षा मुफ्त है परंतु स्कूल तक जाने के लिए खर्चा वहन करना बहुत कठिन है। पास के गांव मे जब खेत पर काम करने के लिए मजदूरों की आवश्यक्ता होती है तो परिवार की महिलायें खेतों में काम करने को भी जाती हैं ताकि कुछ पैसे आ जायें। दिनभर मजदूरी करने के बावजूद 100-150 रूपये ही मिल पाता है। उचित मेहनताना मांगने पर मालिक बोलते है कि "मुसहर हो काम मिल जाता है यही बहुत है"। शीला का मानना है कि बेहतर जीवन के लिए शिक्षा जरूरी है परंतु मुसहर बच्चे गरीबी और छूआछूत के कारण शिक्षित होने से वंचित हैं। सरकारी योजनाओं तक

इनकी पहुंच नही के बराबर है।

62 वर्षीय तारा (काल्पनिक नाम) एकांकी परिवार में रहती है। इनके दो बेटे और एक बेटी है। पति पास के गांव मे खेत पर मजदूरी करने जाता है जिससे बहुत आमदनी नही हो पाती है और दोना-पत्तल का काम भी बुरी तरह से प्रभावित हो गया है 100 दोना-पत्तल के मात्र 2 रूपये ही मिलते हैं। तारा अपने बच्चों को स्कूल भेजती है परन्तु बच्चें स्कूल जाना पसंद नही करते हैं। इनका कहना है कि सरकारी स्कूलो में शिक्षा के साथ-साथ कॉपी, किताब, स्कूलड्रेस, स्वेटर इत्यादि फ्री मिलता है परन्तु सरकारी स्कूल में शिक्षक सभी बच्चों पर ध्यान नहीं देते हैं। अच्छे परिवार के बच्चे मुसहर बच्चों को मारते हैं परंतु इस पर कोई कार्यवाही नहीं होती है यहां तक कि शिक्षक भी मुसहर बच्चों को मारते हैं और किसी अच्छे परिवार के बच्चों का सामान खो जाने पर सिर्फ मुसहर के बच्चों के झोलों की जांच करवाते हैं परंतु अन्य बच्चों के झोले की जांच नहीं करते हैं। इसके अतिरिक्त मुसहर बच्चों को डराया-धमकाया और काम भी करवाया जाता है। अभिभावकों द्वारा शिकायत करने का भी कोई प्रभाव नही पड़ता है। तारा का कहना है कि शिक्षकों द्वारा भेदभावपूर्ण व्यवहार अशोभनीय है। एक शिक्षक पर आने वाली नयी पीढ़ी और देश के भविष्य को शिक्षित करने की जिम्मेदारी होती है इसलिए सर्वप्रथम शिक्षक को जाति, धर्म और विद्यार्थी की सामाजिक और पारिवारिक स्थिति से प्रभावित न होकर सभी के साथ समान व्यवहार करना चाहिए।

38 वर्षीय मीना (काल्पनिक नाम) संयुक्त परिवार में अपने दो बेटे और दो बेटियों के साथ रहती है। इनकी पुत्री ने कक्षा 5 तक की शिक्षा ग्रहण की है। कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण बेटी की स्कूली पढ़ाई बीच में ही छुड़वानी पड़ गयी। बेटी गांव के बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित करती है और पढ़ाती भी है परंतु बच्चों का पढ़ाई में मन ही नहीं लगता है। इनका मानना है कि मुसहर जाति में जब तक जागरूकता का स्तर नहीं बढ़ेगा तब तक समाज की मुख्य धारा से जुड़ना कठिन है, अतः पुरुष के साथ-साथ महिलाओं का शिक्षित होना सशक्त मुसहर समाज की पृष्ठभूमि तैयार करेगा। मीना इस बात से भली-भांति परिचित है कि शिक्षा व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक और मानसिक विकास का साधन है क्योंकि मुसहर महिलाएं न सिर्फ घर संभालती हैं अपितु अर्थोपार्जन हेतु कार्य भी करती हैं अपने कार्य में कुशलता को बढ़ाने, समाज और परिवार में अपनी स्थिति को अच्छा बनाने के साथ ही बच्चों के सकारात्मक मानसिक विकास हेतु मुसहर महिला के लिए शिक्षा की उपयोगिता और बढ़ जाती है क्योंकि वह स्वयं अशिक्षित होने के दुष्परिणाम से परिचित है।

विश्लेषण

वैयक्तिक पृष्ठभूमि : महिला सशक्तीकरण एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत आर्थिक सुरक्षा, कुशल स्वास्थ्य, शिक्षा, हिंसा मुक्त वातावरण और अपनी रचनात्मक क्षमता को पहचानने के साथ ही उसका उपयोग करना सम्मिलित है। सोशल पैथलॉजी मॉडल के अनुसार समाज में समस्या कुछ बीमारी के कारण उत्पन्न होती है। जिस प्रकार मानव अंग किसी गम्भीर बिमारी के कारण ठीक से काम नही करता है उसी प्रकार गरीबी, बेरोजगारी, हिंसा, अपराध इत्यादि अशिक्षा, आर्थिक असमानता और शोषण का कारण बनता है। प्रस्तुत अध्ययन में 100 कार्योजित मुसहर महिलाओं को सम्मिलित किया गया है, जिसमें 38 प्रतिशत 40 से 45 आयु वर्ग से, 24 प्रतिशत 31 से 35 आयु वर्ग से, 18 प्रतिशत 26 से 30 आयु वर्ग से, 16 प्रतिशत 46 से अधिक आयु वर्ग से एंव 4 प्रतिशत 21 से 25 आयु वर्ग से सम्बंधित हैं। 58 प्रतिशत संयुक्त परिवार और 42 प्रतिशत एकाकी परिवार से हैं।

उत्तरदात्रियों की शिक्षा एवं शिक्षा को महत्त्व देने की प्रवृत्ति : एक महिला के जीवन मे शिक्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि शिक्षा न सिर्फ अधिकारों का बोध कराती है अपितु अधिकारों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित भी करती हैं। शिक्षा महिलाओं को रोजगार करने के कई सुअवसर प्रदान करती है, रचनात्क क्षमता का उपयोग करने हेतु चेतना प्रदान करती है साथ ही समाज में एक सम्मानित पद दिलाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस प्रकार कई प्रकार की समस्याओं से छुटकारा पाने और स्वयं को मानसिक, आर्थिक एवं शारीरिक रूप से सशक्त बनाने हेतु शिक्षा महत्वपूर्ण साधन है।

सारणी संख्या 01

उत्तरदात्रियों की शिक्षा एवं बालिका शिक्षा का महत्व

उत्तरदात्रियों की शिक्षा	संख्या	प्रतिशत
अशिक्षित	55	55.00
प्राथमिक	24	24.00
उच्च प्राथमिक	17	17.00
हाई स्कूल	04	04.00
बालिका शिक्षा को महत्त्व		
हां	81	81.00
नही	19	19.00

सारणी से स्पष्ट होता है कि उत्तरदत्रियों में 55 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित हैं और 45 प्रतिशत महिलाएं शिक्षित हैं परंतु सूक्ष्मता से अवलोकन करने के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि जो महिलाएं शिक्षित हैं उनमें भी शिक्षा का स्तर संतोषजनक नहीं है, क्योंकि ये महिलाएँ ठीक से पढ़ने-लिखने में असमर्थ हैं, बहुत कठिनाई से अपना नाम लिख पातीं हैं जबकि, महिलाओं ने प्राथमिक (24 प्रतिशत), उच्च प्राथमिक स्तर (17 प्रतिशत) एवं हाई स्कूल (04 प्रतिशत) तक की शिक्षा ग्रहण की है। किसी भी उत्तरदात्री ने स्नातक स्तर की शिक्षा ग्रहण नहीं की है जिसका मुख्य कारण धनाभाव है।

मुसहर जाति की अधिकांश महिलाएं संयुक्त परिवार में रहती हैं, जिनकी मजदूरी तथा अन्य आय जनित स्रोतों से प्राप्त आय इतनी कम है कि वे अपने दैनिक उपभोग की वस्तुओं का पर्याप्त मात्रा में पूर्ति नहीं कर पाती हैं। ऐसी परिस्थिति में बच्चों को बहुत कठिनाई से ही शिक्षित कर पातीं हैं। हांलाकि मुसहर जाति की महिलाएं अब शिक्षा के महत्व को समझने लगी हैं इसलिए बालक शिक्षा के साथ ही अधिकांशतः (81 प्रतिशत) महिलायें अपनी बालिकाओं को भी शिक्षित करना चाहती हैं।

मुसहर जाति प्रायः दूर जंगलों में या पीछे के इलाके में निवास करते हैं परिणास्वरूप महिलायें अन्य सुविधाएं जैसे- अस्पताल, स्कूल, बाजार, बिजली इत्यादि से प्राप्त होने वाली सुविधाओं से वंचित हो जाती हैं। मुसहर लोग मालिक-महाजन से कर्ज लेकर अपना पेट भरते हैं, जिसके कारण कर्ज के बोझ से दबते चले जाते हैं तो शिक्षा हेतु धन खर्च करना दूर की बात है। सरकार इनके लाभ के लिए जो सुविधाएं उपलब्ध करा रही है, जानकारी एवं जागरूकता के अभाव में इससे वंचित रह जाते हैं। महिला सशक्तीकरण के इस युग में जिस समाज मे किसी भी स्तर की महिलाओं की शैक्षणिक व आर्थिक स्थिति खराब होने के साथ ही जागरूकता का भी नितांत अभाव है ऐसे मे उस समाज की महिलाएं सशक्त कैसे हो सकती है, यह एक ज्वलंत प्रश्न है।

आर्थिक स्थिति एवं पारिवारिक निर्णय में भूमिका : औद्योगीकरण और मशीनीकरण ने बेरोजगारी और गरीबी को बढ़ाया है साथ ही परम्परागत हस्त कला और कुटीर उद्योग के पतन का कारण बना। इसी प्रकार औद्योगीकरण और मशीनीकरण के कारण मुसहर जाति की महिलाओं का परम्परागत व्यवसाय प्रभावित हुआ, वन अधिनियम के अंतर्गत जंगलों से लकड़ी, पत्ता, फल आदि को तोड़ा नहीं जा सकता है परिणामस्वरूप इनकी आर्थिक स्थिति नकारात्मक रूप से प्रभावित हुई। दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु परम्परागत पेशे से समय मिलने पर यह अन्य कार्य भी करती हैं। कार्योजित होने के कारण आर्थिक-पारिवारिक मामलों मे इनकी सहभागिता सशक्तीकरण की वास्तविकता को दर्शाता है।

सारणी संख्या 02

समान वेतन, आय को व्यय करने का अधिकार तथा पारिवारिक निर्णय में भूमिका

पुरूष सहकर्मी के समान वेतन	संख्या	प्रतिशत
हां	23	23.00
नहीं	77	77.00
आय को व्यय करने का अधिकार		
हमेशा	28	28.00
कभी-कभी	54	54.00
कभी नही	18	18.00
पारिवारिक निर्णय में भूमिका		
हमेशा	22	22.00
कभी-कभी	68	68.00
कभी नही	10	10.00

प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 77 प्रतिशत महिलाओं को समान कार्य के लिए समान वेतन नही मिलता है जबकि 23 प्रतिशत महिलाओं को पुरूष सहकर्मी के समान वेतन मिलता है। अपने परम्परागत पेशे से समय मिलने पर यह अन्य कार्य इसलिए करती है जिससे कि थोड़ी बहुत आर्थिक आवश्यकताएं पूरी की जा सकें। मुसहर महिलाओं की स्थिति इतनी दयनीय है कि दो वक्त की रोटी की व्यवस्था करने लिए घर का सामान बेचने तक को मजबूर हैं परिणामस्वरूप महिलाएं कम मजदूरी पर कार्य करने को विवश हैं।

18 प्रतिशत महिलाओं को आज भी अपनी आय को व्यय

करने का अधिकार नही है 54 प्रतिशत को कभी-कभी व्यय करने का अधिकार है जिसमे घर का राशन, शिक्षा और चिकित्सा हेतु खर्च करना सम्मिलित है। 28 प्रतिशत को अपनी आय को व्यय करने का पूर्ण अधिकार है।

मुसहर जाति की अधिकांश महिलाएं अनपढ़ हैं। इनमें अशिक्षा का प्रमुख कारण दूर जंगलों में निवास के दौरान स्कूली सुविधाओं का अभाव, आर्थिक समस्या और जागरूकता की कमी है। बदलते सामाजिक परिवेश ने कुछ मुसहर महिलाओं की सोच को विकसित किया है। ये अपने बच्चों को पढ़ाना चाहतीं हैं उन्हें जागरूक करना चाहती हैं, जिसके माध्यम से यह अपने अधिकारों को समझ सकें तथा समाज में व्यापक रूप से अंतः क्रिया कर सकें और अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने हेतु सम्मानित पद पर कार्य कर सकें। यही कारण है कि 68 प्रतिशत कभी-कभी पारिवारिक मामले मे निर्णय लेतीं हैं जबकि 22 प्रतिशत हमेशा अपने परिवार में निर्णय लेती हैं मात्र 10 प्रतिशत ने कभी भी निर्णय नही लिया है। अतः निर्णय लेने मे इनकी भूमिका संतोषजनक है।

बाल विवाह का प्रचलन : कुंठित और अप्रगतिशील मानसिकता के कारण मुसहर महिलाओं का सशक्तीकरण बहुत कठिन नजर आता है। मुसहर जाति मे कहीं-कहीं बाल विवाह का प्रचलन है।

सारणी संख्या 03

विवाह की आयु	संख्या	प्रतिशत
18 वर्ष से पूर्व	74	74.00
18 वर्ष के पश्चात	26	26.00

कालांतर में मुसहर जाति में महिलाओं का विवाह अल्प आयु में ही कर दिया जाता था। विवाह हेतु योग्य वर का चुनाव घर के मुखिया द्वारा किया जाता था। यही कारण है कि 74 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का बाल विवाह हुआ है। 26 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का विवाह 18 वर्ष आयु के पश्चात हुआ। वर्तमान समय में इनमें बाल विवाह का प्रचलन लगभग समाप्त हो गया है, जिसका प्रमुख कारण पास पड़ोस के शिक्षित व उच्च जातियों में जाने, वार्तालाप करने, अंतः क्रिया करने तथा सरकारी प्रयासों द्वारा प्रचार-प्रसार करने से विवाह से संबंधित कानूनों के प्रति जागरूकता आई है।

निष्कर्ष : परिवर्तन प्रकृति का नियम है समाज में जब भी कभी किसी पहलू या इकाई मे परिवर्तन आया है उससे पूर्व अव्यवस्था, असमानता और शोषण जैसे नकारात्मक परिणाम का अनुभव किया गया है। किसी भी समाज मे नकारात्मक स्थिति का उत्पन्न होना सामान्य है जो सामाजिक परिवर्तन और विकास का आधार बनता है। परम्परागत पेशे का पतन और महाजनों द्वारा आर्थिक शोषण ने मुसहर महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को दयनीय एवं सोचनीय बनाया है। शिक्षा के अभाव ने जागरूक्ता को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है, हालांकि मुसहर महिलाएँ अब अपने अधिकार को समझने लगीं है। अतः अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मुसहर महिलाएं अपनी स्थिति को सशक्त बनाने की ओर अग्रसर हैं, अब अपनी समस्याओं पर खुल कर चर्चा करने लगी हैं। परंतु तीव्र गति से बदलती हुई, नवीन तकनीकी की ओर अग्रसर समाज में मुसहर महिलाएं अपनी समाजिक-आर्थिक को स्थापित करने हेतु असहाय अनुभव करती हैं। परिणामस्वरूप शिक्षा के माध्यम से अपनी स्थिति को सुधारने हेतु प्रयासरत हैं। इनके सशक्तीकरण के लिए सरकारी व गैर-सरकारी प्रयासों को धरातलीय स्तर पर और मजबूती के साथ क्रियान्वित करने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ

1. Kumar, A., 'Culture, Development and the Cultural Capital of Farce: The Musahar Community in Bihar', Economic and Political Weekly, 41(40), October 7-13, 2006, 4281-4285.
2. Crooke, W., 'The Tribes and Castes of North Western India', (Vol.V), Cosmo Publication, Calcutta, 1896, p.17
3. Crooke, W., 'Tribe caste of the North Western Provinces and Oudh', (Vol. IV), Superintendent of Government Printing, Calcutta, 1896, p.12
4. Census of India, 2011, Table for Scheduled Tribes. Retrived from https://censusindia.gov.in
5. Chaudhry, J. K., 'Landless and its Impact in the life of Musahar: A study of Madheshi Dalit people at Pothiyahi VDC in Rautahat District Nepal' Research Report, 2008.
6. स्माइल फाउंडेशन, चैरिटैबल संस्था, नई दिल्ली, मुसहर जनजाति के बच्चों को शिक्षित करना, 22 जून 2022, https:://www.smaelfoundationindia.org
7. Government of Bihar, 2012, Report on Scheduled castes and Scheduled tribes in Bihar, SC and ST Welfare Department, Retrived from http://scstwelfare.bih.nic.in/docs/scst%20report%20of%2016th%20August%20copy.pdf.

8. Khan, M. I., 'Access to education imperative for Mushers in Bihar', The Wire, Retrive from- https://thewire.in?caste/education-for-mushars-in-bihar.
9. Sahay, Gaurang R., 'Substantially Present but Invisible, Excluuded and Marginalised: A study of Mushars in Bihar', Sociological Bulletin (journal), SAGE publication, Vol 68, Issue 1First published online March 27, 2019. pp. 25-43. Retrived from- https://doi.org/10.1177/0038022918819357
10. Poudel, B. and Kattel, S., 'Social Changes in Musahar Community: A Case Study of Dhanusa District of Nepal' Nepal Journal of Multidisciplinary Research (NJMR), Volume 2, No. 4., December 2019, pp- 09-16
11. Dahal, D.R, 'Hindu Nationalism and Untouchable Reform: The status of Dalits in Nepali society', (D.R. (ed) Ed), Journal of Sociology and Antropology, pp1
12. Kumar, A., 'Culture, Development and the Cultural Capital of Farce: The Musahar Community in Bihar', Economic and Political Weekly, 41(40), October 7-13, 2006, 4281-4285.
13. Archana and Singh, P., 'Changing lives of Dalits, the Mushar's community in Madhepura, Bihar: Socio-economic Observation in twenty-first century', Contemporary Voice of Dalit (journal), SAGE publication, Vol.10, Issue 2, First published online july 26, 2018. Pp- 192-203. Retrived from- https://doi.org/10.1177/001955611878528
14. Chaudhry, J. K., 'Landless and its Impact in the life of Musahar: A study of Madheshi Dalit people at Pothiyahi VDC in Rautahat District Nepal' Research Report, 2008.
15. Giri, M., 'Politico Economic History of Marginalization and Change among the Musahars of East-Central Tarai', Contributions to Nepalese Studies, 2012, 39, pp-69-94
16. Khatiwada, P., 'Musahar Community Neglected by Candidates in Bara', The Himalayan Times', Published; November 25, 2017. Retrieved from- https://thehimalayantimes.com/nepal/musahar-community-neglected-candidates-bara/
17. Poudel, B. and Kattel, S., 'Social Changes in Musahar Community: A Case Study of Dhanusa District of Nepal' Nepal Journal of Multidisciplinary Research (NJMR), Volume 2, No. 4., December 2019, pp- 09-16
18. यादव, शालिनी एवं सक्सेना, आशीष, 'मुसहर समुदाय की उर्ध्वाधर गतिशीलता हेतु सामाजिक नीतियों की भूमिका (गोरखपुर जिले के मुसहर समुदाय के विशेष सन्दर्भ मे)', राधकमल मुखर्जी : चिन्तन परम्परा, वर्ष 24, अंक 1, जनवरी-जून 2022, पृ. 19–26
19. Census of India, 2011, Table for Scheduled Tribes. Retrived from https://censusindia.gov.in
20. Shah, G. (2004). Caste and Democratic Politics in India (eds). London: Anthem Press.
21. Street Child of Nepal. (2018). Children in Musahar Communities: Identifying the Educational Needs of Nepal's Most Marginalised. Kathmandu, Nepal: Street Child of Nepal. Retrieved Nov 25, 2022, from http://www.street-child.org.np/blog/single_post/3

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव

❑ डॉ पूनम बजाज
❖ राजेश चावला

सूचक शब्द : सोशल मीडिया, उच्च शिक्षा, संचार, सामाजिक संबंध।

तकनीक के क्षेत्र में हर नई खोज ने मानव के जीवन को उत्तरोत्तर सरल किया है इसी क्रम में संचार माध्यमों को देखे तो ये हमारे दैनिक जीवन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। वर्तमान दौर सूचना क्रान्ति का है और इसमें सोशल मीडिया का अपना एक विशेष स्थान है इन्टरनेट पर आधारित इस संचार ने मैकलुहान एवं ब्रूस की "ग्लोबल विलेज" अवधारणा को चरितार्थ किया है। सोशल मीडिया आज छात्रा छात्राओं के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र व्यक्तिगत, पारिवारिक, आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक जीवन को अभिन्न अंग के रूप में प्रभावित कर रहा है। कोविड–19 की स्थितियों में स्मार्टफोन प्रत्येक हाथ की आवश्यकता बन गया। वर्तमान समय में भी छात्रों की शैक्षणिक गतिविधियों पर इसका सर्वाधिक प्रभाव दिखाई देता है। प्रस्तुत अध्ययन का उदेश्य यह जानना है कि महाविद्यालय की छात्रायें इसका उपयोग किस रूप में करती हैं। अध्ययन से स्पष्ट होता है सोशल मीडिया का प्रयोग छात्राएं शैक्षणिक दृष्टि से तो करती ही हैं साथ ही साथ सर्वाधिक उपयोग चैटिंग के लिये करती हैं। इससे उनका कक्षाओं की ओर रूझान कम हो रहा है। सोशल मीडिया का सही उपयोग किसी वरदान से कम नही है लेकिन इसका असंयमित प्रयोग अनेक समस्याओं को जन्म दे रहा है।

आज का समाज जिसे "विश्व गांव" के रूप में जाना जा रहा है। वैश्वीकरण उदारीकरण और आधुनिकीकरण की प्रक्रियाओं की तीव्र गति में सूचनाओं का एक महत्वपूर्ण स्थान है। किसी भी देश में उपलब्ध जन संचार माध्यमों की उसके विकास में अहम भूमिका होती है, जब आधुनिक जन–संचार माध्यम उपलब्ध नही थें तब लोकसंचार माध्यमों द्वारा संचार स्थापित किया जाता था। पिछले कुछ दशकों में हुये नये तकनीकी परिवर्तनों ने मानवीय संचार को और अधिक सार्वभौमिक बना दिया है। आज इलेक्ट्रोनिक प्रौद्यौगिकी की संचार क्रान्ति से समाज के प्रत्येक वर्ग पर प्रभाव दिखाई देता है। उच्च शिक्षा और छात्र वर्ग भी इससे अछूता नही है। सूचना युग में बदलते परिवेश के कारण छात्र–छात्राओं द्वारा सोशल मीडिया के बढ़ते प्रयोग पर विचार विमर्श अति आवश्यक है। सोशल मीडिया ने संचार और संवाद करने की प्रणाली को पूरी तरह से बदल दिया है।[1] आज के सूचना क्रान्ति के युग में भारत जैसे विकासशील देश जहां सभी प्रकार के कार्य, व्यवसाय, ज्ञान एवं तकनीक युक्त होते जा रहे हैं वहां तकनीकी ज्ञान, प्रौद्यौगिकी, विज्ञान, सामाजिक विकास एवं मानव मूल्यों के साथ साथ विधार्थियों के जीवन को उपयोगी बनाने वाली मूल्य परक शिक्षा की आवश्यकता है।

वर्तमान में सोशल मीडिया एवं उच्च शिक्षा : उच्च शिक्षा से तात्पर्य सामान्य रूप से सबको दी जानेवाली शिक्षा से ऊपर किसी विशेष विषय या विषयों में विशद तथा सूक्ष्म शिक्षा से है। उच्च शिक्षा तृतीयक शिक्षा है जो एक अकादमिक डिग्री प्रदान करती है। यह शिक्षा के उस स्तर का नाम है जो विश्वविद्यालयों, व्यावसायिक विश्वविद्यालयों, कम्युनिटी महाविद्यालयों, लिबरल आर्ट कॉलेजों एवं प्रौधौगिकी संस्थानों आदि के द्वारा दी जाती है। इसके अन्तर्गत स्नातक, स्नातकोतर, व्यावसायिक शिक्षा एवं प्रशिक्षण आदि आते हैं।

वर्तमान समय में सोशल मीडिया हम सभी के जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। खासकर छात्रों का आकर्षण सोशल मीडिया से काफी अधिक है। इस आधुनिक मीडिया ने एक ओर शिक्षा प्राप्त करने का नया मार्ग प्रशस्त किया है तो दूसरी और यह छात्रों को उनके लक्ष्यों से भटकाने का भी कार्य कर रहा है। सोशल मीडिया ने शिक्षा व्यवस्था को नया स्वरूप प्रदान किया है। पहले जहां छात्रों को लाइब्रेरी में जाकर पढ़ना होता था, वहीं आज वह घर में रहकर आराम से पढ़ सकते

❑ सहायक आचार्य समाजशास्त्र, चौ. बल्लूराम गोदारा राजकीय कन्या महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)
❖ शोध अध्येता, म.द.स. विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)

हैं। इसमें सोशल नेटवर्किंग साइटस(यूट्यूब, फेसबुक, व्हाट्सएप एवं टेलीग्राम आदि) महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यूटयूब आज शिक्षा प्राप्त करने का लोकप्रिय माध्यम है। यहां पर बड़े-बड़े संस्थानों के विशेषज्ञों द्वारा छात्रों का पढ़ाया जाता है। किसी भी विषय की जानकारी छात्रों को आसानी से मिल जाती है। कई शैक्षणिक संस्थानों द्वारा लाइव क्लासेज चलाई जाती हैं, जहां छात्र अपने प्रश्न पूछ सकते हैं। आज ग्रामीण छात्र भी ऑनलाइन पढ़ाई करते हैं। यूटयूब के अलावा फेसबुक पर भी शिक्षकों द्वारा अपने विषय से सम्बन्धित वीडियों अपलोड किए जाते हैं। आज सभी शिक्षण संस्थानों के शिक्षकों द्वारा व्हाटसएप ग्रुप या टेलीग्राम ग्रुप बनाकर अध्ययन सामग्री तथा अन्य सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता है। छात्रों द्वारा भी समूहों का निर्माण किया जाता है जहां अध्ययन सामग्री तथा अन्य विषय पर विचार-विमर्श किया जाता है।

संचार साधनों ने आम व्यक्ति के साथ - साथ छात्रों के सामाजिक पारिवारिक, आर्थिक, राजनैतिक, साहित्यक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित कर रखा है। आधुनिकीकरण के कारण जो परिवर्तन आये थे संचार के साधनों में बढ़ोतरी से आज एक नई जीवन पद्धति समाज में दिखाई दे रही है।[2]

प्रिन्ट माध्यम जैसे समाचार, पत्र, पत्रिकाएं, रेडियो, टीवी, कंप्यूटर, इन्टरनेट आदि इलैक्ट्रोनिक माध्यम विकसित होने से जनसंचार की प्रक्रिया को गति मिली है। छात्रों के जीवन में तो इन जनसंचार माध्यमों का बहुत ही अधिक महत्त्व पाया जाता है। सन 1995 से भारत में इन्टरनेट के आगमन के बाद से सूचना के आदान-प्रदान की एक नई दिशा दिखाई देती है। इन्टरनेट ने एक सारे जनमानस से सीधे संवाद को सिर्फ तीव्र गति ही नही दी बल्कि प्रत्येक जन को चाहे वह छात्र हो, गृहणी हो, व्यवसायी हो, बुद्धिजीवी हो सभी को पत्रकार की भूमिका में लाकर खड़ा कर दिया। आज सोशल मीडिया प्रत्येक व्यक्ति तक पहुँचने का सबसे सरल और सुगम माध्यम है। सोशल मीडिया ने संचार की प्रक्रिया को गतिशील और शक्तिशाली बनाया है। सोशल नेटवर्किंग की अनेक साइटस व्हाट्सअप, फेसबुक, टिवटर, इंस्टाग्राम, टेलीग्राम, ब्लॉगिंग, चैटिंग, ऑडियो, विडियो सांझा करना आदि संचार के विकल्पों ने संचार की प्रक्रिया में दोनो पक्षों के मध्य संवाद को स्थापित किया है।[3]

सोशल मीडिया क्यों आवश्यक : सोशल मीडिया प्लेटफार्म विभिन्न जीवन शैली और व्यवसायों वाले व्यक्तियों के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनके द्वारा विद्यार्थी 1. सम्पर्क और संबंधों का निर्माण, 2. सकारात्मक प्रेरणा निर्माण, 3. पहचान का निर्माण, 4. अभिव्यक्ति प्रदान करने, 5. रचनात्मक एवं विचारों को साझा करने, 6. अनुसंधान के क्षेत्र में, 7. समुदाय में प्रभाव उत्पन्न करने आदि कारणों से विद्यार्थियों के जीवन में सोशल मीडिया का एक आवश्यक स्थान बनता जा रहा है।

साहित्य समीक्षा :

डेरेल बेरी[4] अपनी पुस्तक "सोशल मीडिया" में लिखते हैं कि कम्प्यूटर - इन्टरनेट की मदद से लोगों का जुड़ाव भी सोशल मीडिया के साथ है लेकिन आज सोशल मीडिया ने यह संकट खड़ा कर दिया है कि किस खबर किस विषय वस्तु पर कितना विश्वास करे क्योंकि कई बार कुछ गैर जिम्मेदार लोग कुछ क्षणों में ही करोड़ों लोगों को अपनी चपेट में ले लेते हैं।

डुंराटे[5] के अनुसार रोजमर्रा के संचार के अति मध्यस्थ होने के बाबजूद, डिजिटल संचार विशेष रूप से मोबाइल-मध्यस्थ संचार के क्षेत्र में शोध की कमी है। हालांकि इस क्षेत्र में जो शोध किये गये हैं, विशेष रूप से ईमेल द्वारा तथा तेजी से भेजे जाने वाले संदेशो की जांच करने वाले अध्ययन मोबाइल का उपयोग करने और उसे बातचीत में प्रयोग करने वाले वर्तमान शोधकर्ता से अपेक्षाकृत अछूते रहते हैं।

बिलवर शेम[6] के अनुसार - संचार साधनों द्वारा जिस प्रकार की सामग्री का प्रवाह होता है, उसी के अनुरूप समाज की मुख्य व्यवस्था निर्धारित होती है साथ ही संचार के नवीन साधन व्यक्ति को राष्ट्रीय घटनाओं से जोड़ते हैं और व्यक्तिगत अधिकारों के प्रति सचेत करते हैं।

नवनीत शर्मा[7] ने अपने शोध कार्य "सोशल मीडिया का किशोर विद्यार्थियों के सामाजिक व्यवहार, अध्ययन आदतों एवं शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव" में पाया है कि किशोर छात्रों की अध्ययन आदतों पर सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है परन्तु इसका अत्याधिक प्रयोग करने से उनकी एकाग्रता को हानि पहुंचती है, जिसके परिणाम स्वरूप छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि में कमी आती है।

अमिता जैन[8] अपने शोध पत्र "महाविद्यालय स्तर के

विद्यार्थियों पर सोशल मीडिया के प्रभाव" में पाती हैं कि ज्ञान की प्राप्ति और किसी भी विषय का गहराई से अध्ययन के लिये अब यह आवश्यक नही है कि शिक्षा के पारम्परिक और औपचारिक संस्थानों की ही शरण ली जाये। आज ऑनलाईन कम्यूनिटीज पर यदि लगन से प्रयास किया जाये तो कोई भी विद्यार्थी किसी भी विषय में विशेषज्ञता प्राप्त कर सकता है। सूचना, संचार, प्रौद्यौगिकी आधारित सोशल मीडिया के आविर्भाव ने अध्ययन और शिक्षा में नवाचार की गति को उल्लेखनीय गति प्रदान की है।

अध्ययन के उदेश्य :

1. सोशल मीडिया का प्रयोग करने वाली छात्राओं की सामान्य जानकारी प्राप्त करना।
2. सोशल मीडिया के छात्राओं की पढ़ाई में उपयोग की जानकारी का अध्ययन करना।
3. पढ़ाई के अतिरिक्त अन्य गतिविधियों में छात्राओं द्वारा सोशल मीडिया के उपयोग की जानकारी प्राप्त करना।
4. छात्राओं द्वारा आनलाईन बनाए गए संबंधों की जानकारी एवं उनके अनुभवों का अध्ययन करना।

प्राकल्पना :

1. सोशल मीडिया का प्रयोग करने वाली महाविद्यालय छात्राएं सभी वर्गो एवं जाति की हैं।
2. सभी छात्राएं अपनी पढ़ाई के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करती हैं।
3. पढ़ाई के अतिरिक्त अन्य बहुत सी जानकारियों एवं मनोरंजनात्मक कार्यक्रमों हेतु छात्राएं सोशल मीडिया का उपयोग करती है।
4. छात्राएं विभिन्न सोशल साइट्स के माध्यम से पुरूष मित्रों से ऑनलाईन संबंध बनाती हैं उनके अनुभव सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनो प्रकार के होते हैं।

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन में राजस्थान राज्य के श्रीगंगानगर जिले में शहर के बीच में स्थित एकमात्र सरकारी कन्या महाविद्यालय का चयन किया गया है। इस महाविद्यालय में लगभग 3000 छात्राएँ नियमित रूप में प्रवेशित हैं। इसमें कला, विज्ञान, वाणिज्य, गृहविज्ञान संकायों में यू.जी. एवं पी.जी. की छात्राएं प्रवेश लेती हैं। समग्र से उतरदाताओं के रूप में स्नात्तकोतर को लिया गया है जिनकी कुल संख्या 1140 है उनकी संख्या के आधार पर प्रतिशतानुसार यथा विज्ञान से 20 प्रतिशत वाणिज्य से 5 प्रतिशत, गृहविज्ञान से 5 प्रतिशत एवं कला से 70 प्रतिशत छात्राओं का चयन स्तरींत दैव निर्दशन द्वारा किया गया इस प्रकार कुल 200 छात्राओं का चयन किया गया। तथ्य संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची प्रविधि का प्रयोग किया गया साथ ही साथ अवलोकन का भी प्रयोग किया गया है। जहां-जहां आवश्यकता रही वहां द्वितीयक स्त्रोत्रों के माध्यम से भी सूचनाएं प्राप्त की गई हैं। शोध कार्य में मुख्यत वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध प्रारूप को लिया गया है।

तालिका संख्या : 1

उतर दाताओं की जाति

जाति	संख्या	प्रतिशत
सामान्य	42	21
पिछड़ा	68	34
अनु. जाति	72	36
अनु. जनजाति	18	9
कुल योग	200	100

भारतीय समाज की एक महत्वपूर्ण विशेषता जाति व्यवस्था है यह विभिन्न प्रकार की जातियों में विभाजित है। प्रत्येक जाति की अपनी एक संस्कृति होती है और इनमें भिन्नताएं पायी जाती हैं। उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सामान्य जाति की उतरदाताओं का प्रतिशत 21 है, 34 प्रतिशत उतरदाता पिछड़ी जाति की है, 36 प्रतिशत उतरदाता अनुसूचित जाति की है तथा 9 प्रतिशत उतरदाता अनुसूचित जनजाति की है। स्पष्ट है कि पिछड़ी तथा अनुसूचित जाति की छात्राओं की संख्या सर्वाधिक है।

तालिका संख्या : 2

उतरदाताओं का धर्म

जाति	संख्या	प्रतिशत
हिन्दू	98	49
मुस्लिम	10	5
सिक्ख	77	38.5
अन्य	15	7.5
कुल	200	100

धर्म सामाजिक नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण अभिकरण है। प्रत्येक धर्म की अपनी प्रथाएं संस्कृति तथा रीति-रिवाज होते है। सभी व्यक्तियों को अपने धर्म से जुड़े नियमों का पालन करना होता है। उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि उतरदाताओं में हिन्दू छात्राओं की 49 प्रतिशत, मुस्लिमों की 5 प्रतिशत, सिक्खों की 38.5

प्रतिशत एवं अन्य धर्मो के मानने वाली छात्राओं की 7.5 प्रतिशत संख्या है। स्पष्ट है कि सर्वाधिक संख्या हिन्दू धर्म की छात्राओं की है।

तालिका संख्या : 3

उतरदाताओं का निवास स्थान

	संख्या	प्रतिशत
गांव	110	55
कस्बा	16	8
नगर	74	37
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण में स्पष्ट है कि उतरदाताओं में 31 प्रतिशत नगर में निवास करती है, 55 प्रतिशत उतरदाता गांव में रहती हैं जबकि 8 प्रतिशत उतरदाता कस्बे में रहती हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि उतरदाताओं में सबसे अधिक संख्या गांव में निवास करने वाली छात्राओं की है।

तालिका संख्या : 4

उतरदाताओं के पिता का व्यवसायः-

व्यवसाय	संख्या	प्रतिशत
कृषि	102	51
मजदूरी	30	15
सरकारी नौकरी	10	05
व्यवसाय	22	11
निजी नौकरी	32	16
कोई रोजगार नहीं	04	02
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 51 प्रतिशत उतरदाता के पिता कृषि कार्य करते हैं, 15 प्रतिशत उतरदाताओं के पिता मजदूरी करते हैं, 05 प्रतिशत उतरदाताओं के पिता सरकारी नौकरी करते हैं, 11 प्रतिशत उतरदाताओं के पिता निजी व्यवसाय करते हैं, 02 प्रतिशत उतरदाताओं के पिता नही हैं, उनकी माताएं छोटा-मोटा कार्य करके परिवार का खर्चा चलाती हैं। स्पष्ट है कि सबसे अधिक उतरदाता के पिता कृषि कार्य करते हैं।

तालिका संख्या : 5

परिवार में सोशल मीडिया का सर्वाधिक उपयोग वाले सदस्य

सदस्य	संख्या	प्रतिशत
पुरूष	102	51
स्त्री	98	49
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 51 प्रतिशत उतरदाता के परिवार के सदस्यों में पुरूष सदस्य सर्वाधिक सोशल मीडिया का प्रयोग करते हैं और 49 प्रतिशत उतरदाता के परिवार के सदस्यों में महिला सदस्य सोशल मीडिया का प्रयोग करती हैं। स्पष्ट है कि पुरूष व महिला उतरदाता लगभग समान रूप से सोशल मीडिया का प्रयोग करते हैं।

तालिका संख्या : 6

एक दिन में उपयोग का समय

	संख्या	प्रतिशत
0-1 घंटा	40	20
1-3 घंटा	110	55
3 से अधिक घंटा	50	25
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 20 प्रतिशत उतरदाता दिन में 1 घंटा सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, 55 प्रतिशत उतरदाता दिन में 3 घंटे सोशल मीडिया का उपयोग करते है 25 प्रतिशत उतरदाता दिन में 3 घंटे से अधिक सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। स्पष्ट है कि उतरदाताओं में सर्वाधिक ऐसे उतरदाता है जिनके द्वारा 1 से 3 घंटे तक सोशल मीडिया का उपयोग किया जा रहा है जो कहीं न कहीं इस ओर इंगित करता है कि यदि इतना अधिक समय सोशल मीडिया पर बिताया जाएगा तो इनका प्रभाव उपयोगकर्ता पर होना स्वाभाविक है। यहां जन संचार का कल्टीवेशन का सिद्धांत परिलक्षित होता है, जिसके अनुसार जो जितना ज्यादा समय इन प्रकार के माध्यमों को देगा उस पर इन माध्यमों के संदेशो का उतना अधिक प्रभाव होगा।

तालिका संख्या : 7

परिवार में मोबाइल की संख्या

मोबाइल संख्या	उतरदाता	प्रतिशत
0-1	60	30
1-2	90	45
2-3	30	15
3 से अधिक	20	10
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 30 प्रतिशत उतरदाताओं के परिवार के पास 1 मोबाइल है, 45 प्रतिशत उतरदाताओं के परिवार के पास 2 मोबाइल हैं, 15 प्रतिशत उतरदाताओं के परिवारों के पास 3 मोबाइल हैं,

10 प्रतिशत उतरदाताओं के परिवारों के पास 3 से अधिक मोबाइल हैं। स्पष्ट है कि सर्वाधिक उतरदाताओं के परिवारों के पास 2 मोबाइल हैं।

तालिका संख्या : 8

सोशल मीडिया द्वारा पढ़ाई के दौरान एकाग्रता भंग होना

उतर	संख्या	प्रतिशत
पूर्ण रूप से सहमत	120	60
आंशिक सहमत	40	20
पूर्ण रूप से असहमत	25	12.5
आंशिक असहमत	10	05
कह नहीं सकते	05	2.5
कुल	200	100

एक छात्र के लिए अच्छी एकाग्रता क्षमता का होना उसकी सफलता के लिए परम आवश्यक है। सोशल मीडिया के आगमन से छात्राओं की एकाग्रता क्षमता प्रभावित हो रही है। उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण स्पष्ट है कि उतरदाताओं मे 60 उतरदाता पूर्ण रूप से सहमत है कि सोशल मीडिया उनकी एकाग्रता क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव डालता है, 20 प्रतिशत उतरदाता आंशिक रूप से सहमत है, 12.5 प्रतिशत उतरदाता पूर्ण रूप से असहमत हैं, 05 प्रतिशत उतरदाता आंशिक रूप से असहमत हैं 2.5 प्रतिशत उतरदाताओं का कहना है वे इस विषय पर कुछ कह नही सकते हैं।

तालिका संख्या : 9

सोशल मीडिया की विभिन्न साइटस का उपयोग

	हां	नहीं	प्रतिशत
फेसबुक	160	40	80
व्हटसअप	200	00	100
इंस्टाग्राम	110	90	55
टेलीग्राम	140	60	70
स्नैपचैट	120	80	60
यू–टयूब	200	00	100
अन्य	180	20	90

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 80 प्रतिशत उतरदाता फेसबुक का उपयोग करते हैं, 100 प्रतिशत व्हाट्सएप का उपयोग, 55 प्रतिशत उतरदाता इंस्टाग्राम का उपयोग, 70 प्रतिशत टेलीग्राम का उपयोग, 60 प्रतिशत स्नेपचैट का उपयोग, 100 प्रतिशत यू-टयूब का उपयोग, 90 प्रतिशत ऐसे उतरदाता हैं जो अन्य भिन्न-भिन्न साइटस का उपयोग करते हैं। स्पष्ट है कि सबसे अधिक उत्तरदाता व्हाट्सएप और यू-टयूब का उपयोग करते हैं।

तालिका संख्या : 10

सोशल मीडिया के उपयोग के आधार

आधार	संख्या	प्रतिशत
शिक्षा	200	100
मनोरंजन	200	100
धार्मिक कार्यक्रम	110	55
समाचार	130	65

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 100 प्रतिशत छात्राएं सोशल मीडिया का उपयोग शिक्षा के लिए, 100 प्रतिशत उपयोग मनोरंजन के लिए 55 प्रतिशत उतरदाता धार्मिक कार्यक्रम के लिए एवं 65 प्रतिशत उतरदाता समाचार सुनने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। स्पष्ट है कि सबसे अधिक उतरदाता शिक्षा एवं मनोरंजन के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। इसका कारण है कि शिक्षा के लिए आज अनेक संचार माध्यम है जिनकी सहायता से घर बैठे प्रतियोगिता परीक्षाओं की तैयारी करते हैं।

तालिका संख्या : 11

चैटिंग में सक्रियता

सक्रियता	संख्या	प्रतिशत
हां	170	55
नहीं	90	45
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 55 प्रतिशत उतरदाता पुरूष मित्रों के साथ चेटिंग करती हैं 45 प्रतिशत उतरदाता ऐसी हैं जो किसी भी पुरूष मित्र के साथ चेटिंग नहीं करती हैं। स्पष्ट है कि उतरदाता छात्राओं में अधिकांश पुरूष मित्रों के साथ चेटिंग करती हैं, चाहे वे समूह में हों अथवा व्यक्तिगत।

तालिका संख्या : 12

सोशल मीडिया द्वारा जीवन साथी का चुनाव

उत्तर	संख्या	प्रतिशत
हां	80	40
नहीं	120	60
कुल	200	100

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 40 प्रतिशत उतरदाता सोशल मीडिया के माध्यम से जीवन साथी का चुनना सही मानती हैं, 60 प्रतिशत उतरदाता सही नहीं मानती। स्पष्ट है कि उतरदाताओं में सबसे अधिक ऐसे उतरदाता

हैं जो सोशल मीडिया के माध्यम से जीवन साथी को चुनना सही नही मानती हैं, फिर भी विवाह साथी के चुनाव के संबंध में भी सोशल मीडिया तेजी से युवा पीढ़ी में अपना स्थान बनाता जा रहा है।

निष्कर्ष : प्रस्तुत शोध से यह निष्कर्ष निकलता है कि छात्राएं सर्वाधिक उपयोग व्हाटसएप एवं स्नेपचेट माध्यम का करती हैं और लगभग सभी छात्राएं यू-टयूब से अपने शैक्षणिक पाठयक्रम के वीडियो देखती हैं। महाविद्यालय संकाय के सदस्यों द्वारा कोरोना काल में अपलोड किये गये वीडियो से भी शैक्षणिक सामग्री प्राप्त करती हैं। यह भी पता चला है कि घर पर उनके भाइयों द्वारा मोबाईल का उपयोग कई घंटों तक किया जाता है और इसे लेकर उनका झगड़ा भी हो जाता है। पंजाबी बाहुल्य क्षेत्र होने के कारण छात्रायें पंजाबी गाने तथा डांस मोबाइल पर सर्वाधिक देखती हैं। अवलोकन के दौरान यह पाया गया कि छात्रायें विडियो देखने की गतिविधियों के समूह में करती है। जबकि अपने पुरूष मित्रों से बात करने के लिये महाविद्यालय में एकान्त स्थान को तलाश कर अकेली बैठती हैं। छात्राएं महाविद्यालय में रील्स और टिक-टॉक नही बनाती क्योंकि पकड़े जाने पर उन पर जुर्माना लगाया जाता है। घर पर खाली समय में छात्राएं धार्मिक सामग्री के वीडियो भी देखती हैं। ग्रामीण परिवेश की ये छात्राऐं नियमित रूप से महाविद्यालय मे नही आ पाती हैं तो ये व्हाटसएप और टेलीग्राम समूह से महाविद्यालय से सारी जानकारियां प्राप्त करती हैं। पुरूष मित्रों से चैटिंग के दौरान पढ़ाई से संबंधित बातचीत तथा भविष्य की योजना पर चर्चा करती हैं, तथा अधिकांश छात्राएं पैरों पर खड़ी होने के बाद भी अपने माता पिता की इच्छा से ही विवाह करना चाहती हैं, आनलाईन माध्यम से नही। काविड-19 के काल मे कक्षाओं के ऑनलाईन होने से सभी छात्राओं के पास स्मार्टफोन की उपलब्धता ने इन्हें प्रत्येक क्षेत्र में ज्ञान प्राप्त करने के लिये जागरूक किया हैं तथा परम्परागत जीवन से बाहर निकल शिक्षा और विकास के अनेक अवसरों की उपलब्धता ने छात्राओं के जीवन के विविध पक्षों को प्रभावित किया है।

आफकॉम[9] की रिपोर्ट बताती है कि जनसंख्या का 80 प्रतिशत भाग टेक्स्ट या ऑनलाईन संवाद करने को ज्यादा पसन्द करता है। समूह में किसी विषय पर चर्चा की बजाए सोशल मीडिया पर अत्याधिक शैक्षणिक सामग्री उपलब्धता के जाल में छात्र उलझ जाते हैं। इससे उनके एकाग्रचित पढाई के घंटोमें कटौती होने लगती है। इसके लिए आवश्यक है कि वे संयमित तरीके से सोशल मीडिया का उपयोग करते हुये योजनाबद्ध तरीके से अपनी पढ़ाई करें। शिक्षक महाविद्यालय में और माता-पिता घर पर एक सीमा तक ही उन पर जॉच रख सकते हैं। अंतिम रूप से उत्तरदायित्व छात्रों का ही है कि वे सोशल मीडिया का अपने भविष्य निर्माण में उपयोग करते हैं अथवा दुरूपयोग।

सन्दर्भ

1. सिडाना, ज्योति, 'उत्तरसत्य समाज और युवा पीढ़ी' Rajasthan Journal of Sociology, Volume 11 October 2019 , p. 132
2. कुमारी गोल्डी, 'सोशल मीडिया का उच्चतर शिक्षार्थियों पर प्रभाव' राधाकमल मुखर्जी चिंतन परम्परा, वर्ष 24 अंक 02 जुलाई से दिसम्बर 2022, पृ.124।
3 गंगवार, रचना 'लोकतंत्र में जनमत निर्माण पर मीडिया का प्रभाव', राधाकमल मुखर्जी की चिन्तन परम्परा, वर्ष 23 अंक 01, जनवरी-जून, पृ. 45
4 बेरी डेरेल Berry . Darrell/social media space 1995 http:// wwwku24.comhybrid(1)
5 Durauti, C.B. , 'Adapting Nonverbal Coding Theory to Mobile Related Communication: An Analysis of Emoji and Other Digital Nonverbls', Liberty University 2016, pp. 9-10
6. शेम, बिलवर 'मास मीडिया एण्ड नेशनल डेवलपमेंट', स्टेनपेड युनिवर्सिटी प्रैस, बेलपिगरर्निया, 1964 उद्धृत ललित चन्द्र जोशी सूचना संचार प्रौद्योगिकी एवं आवश्यकता', राधा कमल मुकर्जी : चिंतन परम्परा, वर्ष 17 अंक 1, जनवरी-जून 2015, पृ. 123
7. शर्मा, नवनीत, 'सोशल मीडिया का किशोर विद्यार्थियों के सामाजिक व्यवहार, अध्ययन आदतों एवं शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव', शोध गंगा, http./hdl.handls.net/10603/302056
8. जैन, अमिता 'महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों पर सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन', International Journal of Education, Modern Management, Applied Science, Social Science Vol-1, No. 4, Oct-Dec. 2019, pp. 47-50
9. Ofcom Communication Market Report 2016

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

पंजाब के प्रांतीय विधानमण्डल चुनावों में कांग्रेस के प्रदर्शन का विश्लेषणात्मक अध्ययन (1920 ई.-1946 ई.) : हरियाणा के विशेष संदर्भ में

❑ निखिल कुमार

सूचक शब्द : विधानमंडल, अधिनियम, निर्वाचन, सांप्रदायिकता, जनाधार, राजनीतिक दल एवं द्वैध शासन।

भारत बहुदलीय प्रणाली के अंतर्गत चुनावी लोकतंत्र द्वारा संचालित होने वाला राष्ट्र है जिसने अपनी व्यापक विविधता के कारण सरकार की संघात्मक एवं संसदीय शासन पद्धति का चयन किया है। वस्तुतः भारत में आंशिक रूप से चुनावी राजनीति का प्रारंभ स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले ही विभिन्न अधिनियमों के माध्यम से अंग्रेजी सरकार द्वारा दिया गया था। इस चुनावी प्रक्रिया ने भारत की वर्तमान प्रणालियों में स्थिरता एवं परिपक्वता प्रदान करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रस्तुत शोध-पत्र में हरियाणा के संदर्भ में पंजाब विधानमंडल हेतु 1920 ई. से 1946 ई. के मध्य हुए चुनावों व उनके परिणामों का विश्लेषण किया गया है। यह विश्लेषण प्रदेश में कांग्रेस पार्टी को केन्द्र में रखकर किया गया है। साथ ही इस कालखंड के दौरान आए दो प्रमुख अधिनियमों के अंतर्गत पंजाब विधानमंडल की संरचनात्मक स्थिति तथा हरियाणा के क्षेत्र में विभिन्न दलों के विकासक्रम एवं राजनीतिक समीकरणों का विवरण भी यहाँ प्रस्तुत किया गया है। प्रदेश में कांग्रेस के राजनीतिक प्रदर्शन में आए उतार-चढ़ावों व उसके कारणों का विश्लेषण करने के साथ-साथ इस संपूर्ण चुनावी घटनाक्रम एवं प्रक्रिया का प्रदेश के जनमानस, राजनीति एवं स्वतंत्रता आंदोलन पर पड़ने वाले प्रभावों का भी विस्तृत उल्लेख शोध-पत्र में प्रस्तुत किया जा रहा है।

आधुनिक भारत की राजव्यवस्था एवं शासन प्रणाली के सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्तों एवं अवयवों में 'शक्तियों का पृथक्करण', 'संघीय-संसदीय व्यवस्था' एवं 'स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव प्रणाली' सम्मिलित हैं। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में 'शक्तियों के पृथक्करण' के सिद्धान्त का जन्म पश्चिमी देशों में जॉन लॉक व मांटेस्क्यू जैसे चिंतकों के मस्तिष्क से हुआ जो मूलतः प्रबोधन की धारा के प्रतिफल थे। यह सिद्धान्त ब्रिटिश शासन प्रणाली के माध्यम से भारत पहुँचा, जहाँ भारतीय परिस्थितियों के अनुसार इसका क्रमिक विकास होता रहा। विधि बनाने (विधायिका) एवं उसे लागू करने (कार्यपालिका) की शक्तियों के पृथक्करण की यदि बात करें तो इसकी सबसे प्राथमिक झलक हमें 1833 ई. के चार्टर अधिनियम में दिखती है। यह अधिनियम ब्रिटिश संसद द्वारा अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी की भारत में अधिकारिता की समयावधि बढ़ाने के संदर्भ में था। वस्तुतः इस अधिनियम में पहली बार गवर्नर जनरल की काउंसिल में एक अतिरिक्त विधि सदस्य की नियुक्ति की बात कही गई थी।[1] आगे के अधिनियमों में इन विधि सदस्यों की संख्या क्रमिक रूप से बढ़ती चली गई तथा अंततः इन्होंने लेजिस्लेटिव काउंसिल व तथा फिर लेजिस्लेटिव असेंम्बली का रूप धारण कर लिया। प्रांतीय स्तर पर इसका प्रारंभ 1861 ई. के काउंसिल ऑफ इण्डिया एक्ट के माध्यम से हुई जिसमें बम्बई व मद्रास हेतु विधायी परिषद् की स्थापना की गई थी तथा बाकी प्रांतों को ऐसा करने हेतु अधिकारिता प्रदान कर दी गई थी।[2]

पंजाब एवं हरियाणा के संदर्भ में यदि बात करें तो 20वीं सदी में पंजाब के तेजी से होते राजनीतिकरण, बढ़ते राष्ट्रवाद, सुधारों की बढ़ती मांग एवं प्रथम विश्वयुद्ध में इस क्षेत्र के अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान जैसे कारकों के कारण अंततः 1919 ई. के भारत सरकार अधिनियम व आगे के अधिनियमों में पंजाब के साथ भेदभाव समाप्त हुआ। इससे क्षेत्र में कांग्रेस सहित अन्य अनेक राजनीतिक संगठन अत्यंत सक्रिय हो गए जिसका अत्यंत विस्तृत प्रभाव क्षेत्र की चुनावी प्रक्रिया एवं राजनीतिक भागीदारी में पड़ा।

अध्ययन के उद्देश्य : प्रस्तुत शोध-पत्र का मुख्य उद्देश्य पंजाब के प्रांतीय विधानमंडल के वर्तमान हरियाणा में पड़ने वाले क्षेत्रों के चुनाव परिणामों में कांग्रेस के प्रदर्शन का विश्लेषण करना है। शोध-पत्र में 1919 ई. के भारत

❑ शोध अध्येता, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

सरकार अधिनियम के अंतर्गत हुए 1920 ई., 1923 ई., 1926 ई. व 1930 ई. के प्रांतीय चुनावों तथा 1935 ई. के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत हुए 1937 ई. व 1946 ई. के प्रांतीय चुनावों का अवलोकन किया जाएगा। इन चुनावों में कांग्रेस व अन्य दलों की तुलनात्मक स्थिति, हरियाणा व सम्पूर्ण पंजाब के क्षेत्र के परिणामों में कांग्रेस की तुलनात्मक स्थिति, कांग्रेस की सफलता-असफलता के कारणों, चुनाव परिणामों का क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रभाव का भी तुलनात्मक अध्ययन किया जाएगा। इन प्रांतीय चुनावों का हरियाणा की राजनीति एवं स्वतंत्रता आंदोलन पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना भी इस शोध-पत्र का उद्देश्य है।

शोध-सिद्धान्त : प्रस्तुत शोध-पत्र में चुनाव परिणामों एवं उसके दौरान घटी महत्वपूर्ण घटनाओं का विश्लेषण करने हेतु मुख्यतः प्राथमिक चुनावी आंकड़ों का उपयोग किया गया है। शोधकार्य में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के लिए द्वितीयक श्रेणी के स्त्रोतों एवं आंकड़ों का चयन करते समय इतिहासलेखन के सिद्धान्तों का पालन किया गया है। घटनाओं एवं उनके परिणामों के सामान्यीकरण करने के क्रम में भी वैज्ञानिक एवं तार्किक पद्धति का उपयोग करने का प्रयास किया गया है। विश्लेषण के परिणामात्मक के साथ-साथ गुणात्मक तरीकों का उपयोग कर शोध-पत्र को अनुसंधानमूलक कार्य प्रणाली से बनाने का प्रयास किया गया है।

साहित्यि समीक्षा :

के.सी. यादव की दो पुस्तकों 'इलैक्शनस इन पंजाब' (1920-1947) एवं 'ए हैंडबुक ऑफ इलैक्शनस इन पंजाब (1909-1947)' में तत्कालीन चुनावी व्यवस्था एवं सीटों के भू-भाग के साथ-साथ केन्द्रीय एवं प्रांतीय चुनावी आंकड़ें अपने मूलरूप में प्रस्तुत किये गए हैं। परन्तु इनमें इन आंकड़ों का विश्लेषण नहीं प्रदान किया गया है।

जगदीश चंद्र[4] की 'फ्रीडम स्ट्रग्ल इन हरियाणा (1919-1947)' व **एस.पी. शुक्ल**[5] की 'फ्रीडम स्ट्रग्ल इन हरियाणा एंड द इंडियन नेशनल कांग्रेस (1885-1985)' पुस्तकों में भी सम्बन्धित विषय के आंकड़ों पर ही मुख्य ध्यान दिया गया है। साथ ही इन पुस्तकों में चुनावी परिणामों का कांग्रेस दल के दृष्टिकोण से यथोचित विश्लेषण प्रस्तुत नहीं किया गया है। अतः प्रस्तुत शोधपत्र में कांग्रेस पार्टी के संदर्भ में इन चुनावी आंकड़ों के विश्लेषण एवं प्रभावों के आंकलन पर ही मुख्य ध्यान दिया जा रहा है तथा साथ ही उक्त स्रोतों में सम्बन्धित विषय के अपेक्षाकृत कम वर्णित आयामों को भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

चुनाव परिणामों, उनमें कांग्रेस के प्रदर्शन एवं उनके प्रभावों का विश्लेषण करने से पहले अत्यंत आवश्यक है कि 1919 ई. के भारत सरकार अधिनियम व 1935 ई. के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत प्रांतों हेतु निर्धारित की गई विधायी व्यवस्था का ब्यौरा प्रस्तुत किया जाए। इसके अंतर्गत पंजाब विधायी परिषद् या सभा में कुल सीटों की संख्या, उसमें से निर्वाचित सीटों की संख्या व वर्गीकरण तथा हरियाणा के क्षेत्र में सीटों की संख्या व वर्गीकरण का तुलनात्मक विवरण भी सम्मिलित है।

1919 ई. व 1938 ई. के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत पंजाब विधानमंडल हेतु निर्धारित संरचना का तुलनात्मक अध्ययन : 1919 ई. के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत प्रांतों में सीमित तौर पर उत्तरदायी सरकार लाने हेतु 'द्वैध शासन प्रणाली' की स्थापना की गई थी। इसके अंतर्गत प्रांतीय विषयों को आरक्षित एवं हस्तांतरणीय विषयों में विभाजित किया जाना था। शिक्षा, स्वास्थ्य, स्थानीय प्रशासन, कृषि व आबकारी जैसे विषयों को हस्तांतरणीय श्रेणी के अंतर्गत रखकर गवर्नर व उसकी मंत्रिपरिषद् द्वारा प्रशासित किया जाना था।[6] प्रांतों के विधानमंडल के सदस्यों में से इन मंत्रियों का चयन किया जाता था। इसी संदर्भ में यदि हम पंजाब के विधानमंडल की बात करें तो उसे 'पंजाब विधायी परिषद्' का नाम दिया गया था तथा इसके सदस्यों की संख्या बढ़ाकर 94 कर दी गई थी। इन सीटों के बंटवारे को आगे दिये जा रहे फ्लो-चार्ट के माध्यम से आसानी से समझा जा सकता है[7]-

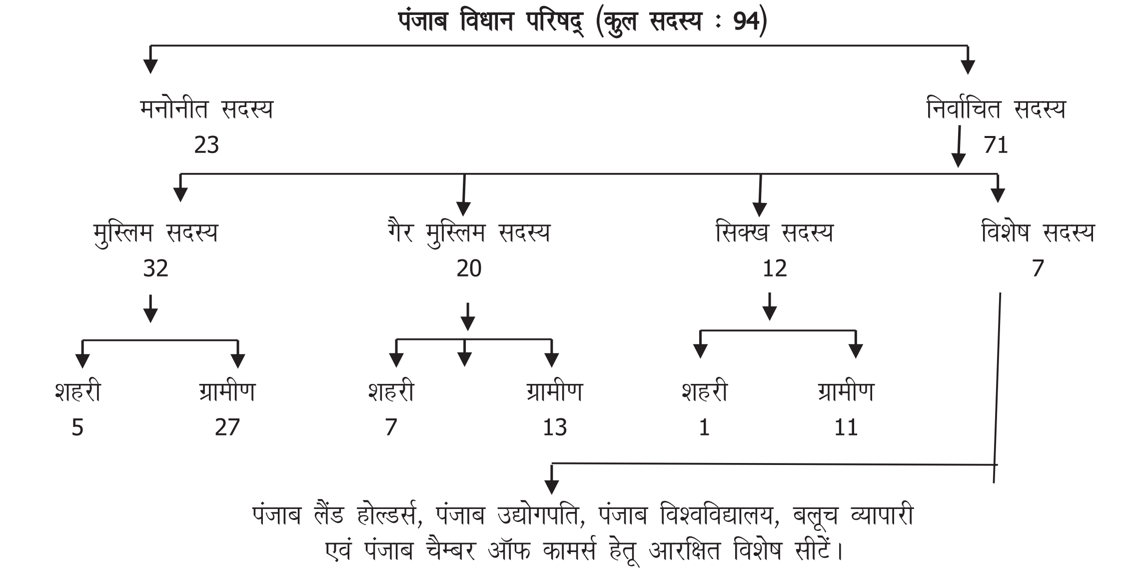

उपर्युक्त 71 निर्वाचित सीटों में से 8 सीटों पर हरियाणा के क्षेत्र के मतदाता निर्णायक स्थिति में थे। इनमें से 2 सीटें मुस्लिम (ग्रामीण) व 6 सीटें गैर-मुस्लिम (ग्रामीण) श्रेणी की थी।[5] 1920 ई. से 1936 ई. की अवधि तक के चार प्रांतीय चुनाव इसी व्यवस्था के अंतर्गत सम्पन्न हुए थे। परन्तु 1919 के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत हुए 1920 के पहले प्रांतीय चुनाव पार्टी लाइन पर न डालकर व्यक्तिगत स्तर पर लड़े थे।[6] अतः प्रस्तुत शोध पत्र के संदर्भ में राजनीतिक दलों पर अधारित चुनावी घटनाक्रम का प्रारंभ 1923 के प्रांतीय चुनावों से हुआ।

आगे फिर 1935 ई. के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत प्रांतों को स्वायत्तता प्रदान करने हेतु चुने हुए प्रतिनिधियों के उत्तरदायित्वों में वृद्धि की गई। इसी के अंतर्गत प्रांतीय विधानमंडलों में सदस्यों की संख्या भी अभूतपूर्व रूप से बढ़ा दी गई। अब 'पंजाब विधायी परिषद्' का नाम बदलकर 'पंजाब विधान सभा' कर दिया गया जिसकी निर्वाचित सीटों की संरचना आगे के फ्लो-चार्ट में दी जा रही है[7] –

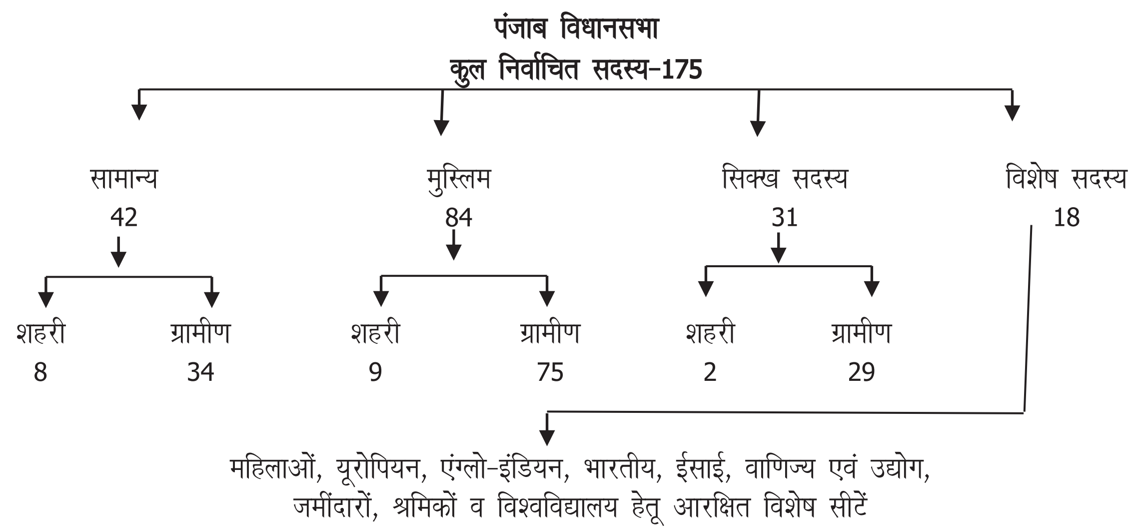

उपर्युक्त 175 सीटों में से 29 सीटें हरियाणा में प्रभाव वाले क्षेत्र में थीं, जिनमें से 15 सामान्य की (12 ग्रामीण व 3 शहरी), 7 मुस्लिम (6 ग्रामीण व 1 शहरी) तथा 2 सिक्ख सीट (1 ग्रामीण व 1 शहरी) थीं।[11] ध्यातव्य है कि इन 175 सीटों में से 167 सीटों पर 1 सदस्य व 8 सीटों पर 2 सदस्य चुने जाते थे। क्योंकि पूना पैक्ट के अंतर्गत वंचित वर्ग हेतु अलग से आरक्षण का प्रावधान किया गया था। यह आरक्षण सामान्य वर्ग की सीटों में से ही दिया जाता था। सामान्य वर्ग की कुल 42 सीटों में से 8 सीटें जबकि हरियाणा क्षेत्र की 15 सामान्य सीटों में से 3 सीटें (उत्तरी करनाल ग्रामीण, अम्बाला-शिमला ग्रामीण व दक्षिण-पूर्वी गुड़गांव ग्रामीण) इस श्रेणी की थीं।[12] 1937 ई. व 1946 ई. का प्रांतीय विधानसभा का चुनाव इसी व्यवस्था के अंतर्गत लड़ा गया था।

1919 ई. के भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत सम्पन्न हुए पंजाब विधानपरिषद् के चुनावों का विवरण :

असहयोग आंदोलन की वापसी के पश्चात् परिषद् के चुनावों में भाग लेने के मुद्दे पर मतभेद होने के चलते श्री चितरंजनदास, मोतीलाल नेहरू व विट्ठलभाई पटेल के नेतृत्व में स्वराज दल का गठन हुआ था। कांग्रेस के दो धड़ों में से इस परिवर्तनवादियों के धड़े को ही हरियाणा में ज्यादा समर्थन प्राप्त हुआ तथा श्री दूनीचंद, गणपतराय, रूपनारायण, श्रीराम शर्मा तथा शामलाल सत्याग्रही जैसे नेता इस धड़े में सम्मिलित हो गए।[13] कांग्रेस ने इन्हीं के नेतृत्व में ये चुनाव लड़े। वहीं दूसरी तरफ असहयोग आंदोलन के दौरान आपसी मतभेदों के कारण कांग्रेस छोड़ने के पश्चात् सर छोटूराम जी भी 1923 ई. आते-आते सर फजल-ए-हुसैन तथा सिकंदर हयात खान के साथ यूनियनिस्ट पार्टी में सम्मिलित हो गए जिसका घोषित प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण मुद्दों को उठाना तथा पिछड़े वर्ग एवं इलाकों की तरक्की करवाना था।[14] वहीं कांग्रेस मुख्यतः एक शहरी जनाधार वाली पार्टी थी। अतः दोनों में टकराहट स्वाभाविक थी। 20 से 28 नवम्बर, 1923 ई. को हुए मतदान के परिणामों का विवरण इस तालिका में दिया जा रहा है[15]-

पार्टी का नाम	हरियाणा क्षेत्र में जीती सीटें (कुल 8 में से)	पंजाब विधानपरिषद् में जीती सीटें (कुल 71 में से)
कांग्रेस स्वराज पार्टी	1	12
यूनियनिस्ट पार्टी	7	33
गुरूद्वारा समिति	–	9
स्वतंत्र	–	17
कुल	8	71

कांग्रेस की ओर से एकमात्र विजयी उम्मीदवार श्री शामलात जी थे, जो हिसार की गैर-मुस्लिम ग्रामीण सीट से जीते थे। ध्यातव्य है कि चुनावों के बाद लेफ्टीनेंट गवर्नर एडवर्ड मैक्लेगन द्वारा अपनी मंत्रिपरिषद् में सम्मिलित किए गए एक नेता रायबहादुर लालचंद का चुनाव परिणाम रद्द हो जाने के बाद हरियाणा से सर छोटूराम को मंत्रिपरिषद् में सम्मिलित किया गया। यह चुनाव-याचिका उत्तर-पश्चिमी रोहतक की गैर-मुस्लिम ग्रामीण सीट पर उनके खिलाफ दूसरे स्थान पर रहे कांग्रेसी नेता श्री मातूराम जी ने दायर की थी।[16] इस सीट पर 10 अक्तूबर, 1924 ई. को हुए उपचुनाव में एक अन्य यूनियनिस्ट नेता श्री टेकराम की जीत हुई। परन्तु दिलचस्प बात यह रही कि उन्हें भी 1926 ई. में गोविन्दराम द्वारा दायर की गई चुनाव याचिका के कारण ये सीट छोड़नी पड़ी तथा फिर अंततः अक्तूबर 1926 ई. में हुए उपचुनाव में चौधरी गोविन्दराम इस सीट से चुनकर पंजाब विधानपरिषद् पहुँचे।

परन्तु 1926 ई. के चुनाव आते-आते परिस्थितियाँ कांग्रेस व उसकी स्वराज्य पार्टी के बिल्कुल विपरीत हो गई थीं। इसका सबसे प्रमुख कारण इस दौरान साम्प्रदायिक सौहार्द का बिगड़ना था। इन धार्मिक दंगों के केन्द्र शहरी हुआ करते थे। उदाहरण के लिए हरियाणा में 1923 ई. से 1926 ई. के दौरान हुए कुल 14 दंगों में से 9 शहरों में हुए थे। इनमें से भी चार तो केवल पानीपत में ही हुए थे।[17] शहरी जनाधार अधिक होने के कारण कांग्रेस को इसका नुक्सान उठाना पड़ा। साथ ही 16 जून, 1925 ई. को श्री चितरंजन दास जी की मृत्यु तथा हिन्दू हितरक्षा के नाम पर लाला लाजपत राय व मदनमोहन मालवीय द्वारा अलग होकर नई इंडिपेंडेन्ट कांग्रेस पार्टी बना लेने से भी कांग्रेस की गतिविधियों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा। ध्यातव्य है कि हरियाणा में श्री नेकीराम शर्मा व उनके समर्थकों ने इस नई नेशनलिस्ट पार्टी का ही समर्थन किया तथा पूरे क्षेत्र में सभाएँ करने स्वराजवादियों की आलोचना करने के साथ-साथ उनके द्वारा लाला लाजपतराय का अनादर किए जाने का मुद्दा भी जोर-शोर से उठाया। फलतः कांग्रेस हेतु चुनाव परिणाम भी परिस्थितियों के अनुसार नकारात्मक ही रहें जिन्हें निम्न तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है[18]-

पार्टी का नाम	हरियाणा क्षेत्र में जीती सीटें (कुल 8 में से)	पंजाब विधानपरिषद् में जीती सीटें (कुल 71 में से)
यूनियनिस्ट पार्टी	5	31
हिंदू महासभा	3	12
कांग्रेस	–	2
सेंट्रल सिक्ख लीग	–	11
खिलाफतवादी	–	3
स्वतंत्र	–	12
कुल	8	71

परन्तु इतनी भारी सफलता के बाद भी यूनियनिस्ट पार्टी को आशानुरूप मंत्रिपरिषद् में स्थान नहीं मिला जिसका सबसे प्रमुख कारण उनके कार्यक्रमों के प्रति ब्रिटिश सरकार की साम्राज्यवादी चिंता थी। वहीं दूसरी तरफ, कांग्रेस का संगठन इस चुनाव परिणाम से पूर्णतः छिन्न-भिन्न हो गया जो साईमन कमीशन के विरोध के दौरान लाला लाजपतराय की मृत्यु से उपजे प्रदर्शनों तक फिर से संगठित न हो सका।

दिसम्बर, 1930 ई. में हुए पंजाब विधानपरिषद् के चुनावों तक कांग्रेस हेतु परिस्थितियां सकारात्मक रूप से बदल गई। साईमन कमीशन के विरोध से जन्में आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन में संलिप्तता व स्थानीय स्तर पर श्री नेकीराम शर्मा द्वारा किसानों की सहायता करने जैसे प्रयासों की वजह से कांग्रेस ने अम्बाला, करनाल व हिसार जैसे स्थानों पर अपना खोया हुआ जनाधार वापस प्राप्त कर लिया। साथ ही राष्ट्रीय आंदोलन की वजह से सामाजिक समरसता में हुई वृद्धि के कारण साम्प्रदायिक राजनीतिक दलों को हानि उठाना पड़ा जिसका सीधा फायदा कांग्रेस को पहुँचा। इन चुनावों में हरियाणा के क्षेत्र में अवस्थित 8 सीटों में से 4 पर यूनियनिस्ट पार्टी, 3 पर कांग्रेस व एक सीट पर हिंदू महासभा के उम्मीदवार विजयी हुए। कांग्रेस के उम्मीदवारों ने अम्बाला, करनाल व हिसार की गैर-मुस्लिम ग्रामीण सीटों से जीत दर्ज की जहाँ से क्रमशः मामराज सिंह चौहान, नाथू सिंह व सज्जन कुमार विजयी होकर विधान परिषद् पहुँचे।[19] चुनावों के बाद हरियाणा से सर छोटूराम को फिर से मंत्रिपरिषद् में आने का मौका मिला जो दक्षिण-पूर्वी रोहतक की गैर-मुस्लिम (ग्रामीण) सीट से विजयी हुए थे। इन चुनाव परिणामों ने कांग्रेस व उसके संगठन हेतु एक बूस्टर का कार्य किया तथा और अधिक तत्परता के साथ अपना जनाधार बढ़ाने में जुट गए। 1923 ई. से 1930 ई. तक के इन चुनावों में विजित उम्मीदवारों व उनके राजनीतिक दलों का विवरण इस तालिका में दिया जा रहा है[20]–

चुनाव क्षेत्र नाम एवं श्रेणी	वर्ष 1923	वर्ष 1926	वर्ष 1930
हिसार (गैर-मुस्लिम ग्रामीण)	लाला शामलाल (कांग्रेस)	चौधरी छज्जूराम (यूनियनिस्ट पार्टी)	सज्जन कुमार (कांग्रेस)
दक्षिणी-पूर्वी रोहतक (गैर-मुस्लिम ग्रामीण)	सर छोटूराम (यूनियनिस्ट पार्टी)	सर छोटूराम (यूनियनिस्ट पार्टी)	सर छोटूराम (यूनियनिस्ट पार्टी)
उत्तरी-पश्चिमी रोहतक (गैर-मुस्लिम ग्रामीण)	चौधरी लालचंद (यूनियनिस्ट पार्टी)	चौधरी बलदेव सिंह (हिन्दू महासभा)	चौधरी रामस्वरूप (यूनियनिस्ट पार्टी)
गुड़गांव (गैर-मुस्लिम ग्रामीण)	राव पोड़प सिंह (यूनियनिस्ट पार्टी)	राव बलबीर सिंह (हिन्दू महासभा)	राव बलबीर सिंह (हिन्दू महासभा)
करनाल (गैर-मुस्लिम ग्रामीण)	चौधरी दूली चंद (यूनियनिस्ट पार्टी)	चौधरी दुलीचंद (यूनियनिस्ट पार्टी)	नत्थवा सिंह (कांग्रेस)
अम्बाला-शिमला (गैर-मुस्लिम ग्रामीण)	गंगाराम (यूनियनिस्ट पार्टी)	गंगाराम (हिन्दू महासभा)	मनराज सिंह (कांग्रेस)
गुड़गांव-हिसार (मुस्लिम ग्रामीण)	साहिब दाद खान (यूनियनिस्ट पार्टी)	चौधरी यासीन खान (यूनियनिस्ट पार्टी)	चौधरी यासीन खान (यूनियनिस्ट पार्टी)
अम्बाला डिविजन (मुस्लिम ग्रामीण)	मोहम्मद शफी अली खान (यूनियनिस्ट पार्टी)	सर रहीमबख्श (यूनियनिस्ट पार्टी)	चौधरी अल्लाह दाद खान (यूनियनिस्ट पार्टी)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि हरियाणा के अलग-अलग हिस्सों में अलग-अलग राजनीतिक दलों की पैंठ बनती जा रही थी। इसका विस्तृत विश्लेषण शोध-पत्र के आगे के भाग में प्रस्तुत किया जाएगा।

1936 ई. में भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत सम्पन्न हुए पंजाब विधानसभा के चुनावों का विवरण :

पूर्व में विधान परिषद् तथा केन्द्रीय विधान सभा के चुनावों में मिली हार के फलस्वरूप कांग्रेस काफी सचेत हो गई थी। साथ ही, 1935 ई. के भारत सरकार अधिनियम के पश्चात् पंजाब विधानसभा की निर्वाचित सीटें भी बढ़ाकर 175 कर दी गई। अतः कांग्रेस ने 1935 ई. से ही इन चुनावों हेतु तैयारी प्रारम्भ कर दी। पंडित श्रीराम शर्मा के नेतृत्व में कांग्रेस का 'चुनावी बोर्ड' बनाया गया। इसका मुख्यालय रोहतक में था। श्री हरदेव सहाय जी को इसका पब्लिसिटी सैक्रेट्री बनाया गया।[21] कांग्रेस के बड़े केन्द्रीय नेताओं यथा जवाहरलाल नेहरू व सरोजिनी नायडू ने भी अम्बाला, शाहबाद, करनाल, पानीपत, रोहतक व हिसार आदि स्थानों पर यात्राएं करके लोगों से कांग्रेसी उम्मीदवारों को विजयी बनवाने की अपील की। इन यात्राओं में इन नेताओं द्वारा बेरोजगारी व आर्थिक मंदी जैसे आमजन से जुड़े मुद्दों को उठाया गया तथा सिर्फ स्वराज प्राप्ति को ही इनका हल कहा गया। वहीं दूसरी ओर यूनियनिस्ट पार्टी के फजल-ए-हुसैन व सर छोटूराम ने हिंदू महासभा के राजा नरेन्द्रनाथ व राव बलबीर सिंह ने तथा नेशनलिस्ट पार्टी के मदनमोहन मालवीय जी ने भी अपनी अपनी पार्टी के उम्मीदवारों का खूब जोर-शोर से प्रचार किया।[18] जनवरी, 1937 ई. को सम्पन्न हुए इन चुनावों का परिणाम इस प्रकार रहा[19]-

पार्टी का नाम	हरियाणा क्षेत्र में जीती सीटें (कुल 29 में से)	पंजाब विधानपरिषद् में जीती सीटें (कुल 175 में से)
यूनियनिस्ट पार्टी	16	99
कांग्रेस	4	18
खालसा नेशनलिस्ट पार्टी	-	13
हिन्दू महासभा	4	12
कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी	1	1
मुस्लिम लीग	-	1
अन्य	4	32

चुनावों के बाद सर सिकंदर हयात खान के नेतृत्व में बनी मंत्रिपरिषद् में सर छोटूराम जी (झज्जर, सामान्य ग्रामीण सीट) को विकास मंत्री व श्री टीकाराम जी (उत्तरी रोहतक, सामान्य ग्रामीण सीट) को उनका संसदीय सचिव नियुक्त किया गया। चुनावों में बाकी प्रांतों की अपेक्षा निराशाजनक प्रदर्शन रहने की वजह से हरियाणा कांग्रेस में उदासी की लहर दौड़ गई। परन्तु उन्होंने जल्द ही स्वमूल्यांकन का कार्य प्रारम्भ कर दिया। इस क्रम में जो सबसे महत्वपूर्ण कारण निकलकर सामने आया, वह था- आपसी मतभेद एवं फूट। उदाहरणार्थ- श्री दूनीचंद ने अखिल भारतीय कांग्रेस समिति को लिखे अपने पत्र में पद प्राप्ति की होड़ की इसका कारण ठहराया। वहीं, दौलत राम गुप्ता जी ने महात्मा गांधी को पत्र लिखकर रोहतक जिला कांग्रेस समिति के तत्कालीन अध्यक्ष लाला शामलाल की शिकायत की कि वो अपना अधिकतर समय लाहौर में बिताते हैं जिस कारण क्षेत्र में पार्टी के कार्यों पर ध्यान नहीं दे पा रहे हैं।[23] इन मतभेदों को मिटाने हेतु जल्द ही कार्य प्रारम्भ कर दिया गया। इस हेतु मार्च 1937 ई. में रोहतक में पंजाब पॉलिटिक्ल कांफ्रेंस का आयोजन किया गया। साथ ही, 1938 ई. के अंत में हिसार व अन्य जिलों में पड़े अकाल के दौरान भी कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं एवं नेताओं ने अत्यंत सराहनीय कार्य किया। परन्तु इन कार्यों में यूनियनिस्ट पार्टी, रायबहादुरों एवं लॉयलिस्टों की ओर से भरपूर अड़चने डालने का प्रयास किया गया। उदाहरणस्वरूप- 1939 ई. के प्रारम्भ में आसौदा में आयोजित कांग्रेस पार्टी की एक कांफ्रेंस को जमींदार पार्टी एवं यूनियनिस्ट पार्टी के कार्यकर्त्ताओं ने रोकने का प्रयास किया। इस दौरान 50 से अधिक कांग्रेसी कार्यकर्त्ता घायल हो गए। यहाँ तक कि कस्तूरी बाई, मेथी देवी व पार्वती देवी जैसी महिला कार्यकर्त्ताओं को भी लाठियां खानी पड़ी।[24] परन्तु इन सब क्रियाकलापों एवं केन्द्रीय नेताओं की लगातार यात्राओं ने हरियाणा में कांग्रेस की स्थिति पर सकारात्मक प्रभाव छोड़ा। फिर जैसे ही द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति हुई तो कांग्रेस के केन्द्रीय नेतृत्व ने प्रांत में पार्टी की मशीनरी को पुनः संगठित करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया। उदाहरण के लिए जुलाई-अगस्त की अपनी मुरी यात्रा में जवाहरलाल नेहरू ने क्षेत्रवासियों एवं नेताओं से अपनी ऊर्जा को निजी हमलों में खर्च ना करके राष्ट्रहित में लगाने की अपील की। फिर अक्तूबर, 1945 ई. में तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष अबुल कलाम आजाद ने अपनी लाहौर यात्रा में पंजाब प्रदेश कांग्रेस समिति के उन 14

सदस्यों को हटाकर कारण बताओ नोटिस जारी करा दिया जिनके क्रियाकलाप संदिग्ध एवं पार्टी विरोधी थे। इस मीटिंग की अध्यक्षता श्री नेकीराम शर्मा ने ही की थी। असल में, इन सदस्यों ने अगस्त, 1942 ई. में भारत छोड़ों आंदोलन के समय पास किए गए कांग्रेस के केन्द्रीय प्रस्तावों का विरोध किया था। इन 14 सदस्यों में से 2 सदस्य हरियाणा क्षेत्र से भी थे। ये थे- सैयद मुत्तालवी एवं मांगेराम वत्स। इसी दौरान अध्यक्ष पद से मियां इफ्तिीकारूद्दीन द्वारा इस्तीफा देकर मुस्लिम लीग में सम्मिलित हो जाने के बाद मौलना दाऊद गजनवी को पंजाब की प्रदेशीय कांग्रेस समिति का अध्यक्ष चुना गया।[25] आपसी मतभेदों को मिटाने हेतु अनेकों दौर की वार्ताओं, राष्ट्रीय स्तर के अनेक नेताओं द्वारा जिला कांग्रेस समिति के कार्यकर्त्ताओं से प्रत्येक वोटर से मिलने की अपील जैसे क्रियाकलापों के बीच 15 जनवरी, 1946 ई. को हुए चुनाव में कांग्रेस ने अभूतपूर्व प्रदर्शन किया जिसका विवरण इस प्रकार हैं[26]-

पार्टी का नाम	हरियाणा क्षेत्र में जीती सीटें (कुल 29 में से)	पंजाब विधानपरिषद् में जीती सीटें (कुल 175 में से)
कांग्रेस	16	51
मुस्लिम लीग	7	75
यूनियनिस्ट पार्टी	4	20
अकाली दल	1	22
स्वतंत्र	1	7

कांग्रेस के इस शानदार चुनावी प्रदर्शन का एक महत्वपूर्ण कारण चुनावों का राष्ट्रीय मुद्दों पर लड़ा जाना एवं केन्द्रीय नेताओं की लगातार सभाएँ तथा देशभर में स्वतंत्रता प्राप्ति हेतु बनता माहौल था। उदाहरणार्थ- जवाहरलाल नेहरू ने जनवरी में रोहतक, गुड़गांव, हिसार व करनाल आदि स्थानों पर दो दर्जन से भी अधिक चुनावी सभाएं की, जिनमें उन्होंने न केवल यूनियनिस्ट सरकार को ब्रिटिशों का प्रतिबिम्ब बताया बल्कि लोगों को आश्वासन भी दिया कि वो सत्ता प्राप्ति के लिए नहीं बल्कि पूर्ण आजादी पर लोगों का समर्थन दिखाने के लिए चुनाव जीतना चाहते हैं।[27] दूसरी तरफ, यूनियनिस्ट पार्टी की सरकार द्वारा दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिशों का पूर्ण समर्थन करने, 1942 ई. में सर सिकंदर हयात खान की मृत्यु तथा फिर 1945 ई. के प्रारम्भ में सर छोटूराम की मृत्यु के कारण इन चुनावों में अपेक्षित परिणामों की प्राप्ति न हो सकी। वहीं, मुस्लिम लीग की विजय मुख्यतः साम्प्रदायिक कारणों से ही प्रेरित थी। परन्तु उसे भी पूर्ण बहुमत नहीं मिल सका था जिसके फलस्वरूप चुनावों के पश्चात् कांग्रेस, युनियनिस्ट पार्टी व अकाली दल ने मिलकर सरकार बनाई। कांग्रेस के कोटे से बने दो मंत्रियों में से एक लहरी सिंह हरियाणा से ही थे। परन्तु मुस्लिम लीग के साम्प्रदायिक दबाव के चलते यह सरकार कार्य न कर सकी तथा खिज्र हयात खान को इस्तीफा देना पड़ा। फिर अनेक स्थानों पर तो इन पर काबू पा लिया गया तथा गुड़गांव में इन्हें काबू करने के लिए पंजाब डिस्टर्बड एरिया एक्ट की धारा 3 को लागू कर सिविल व सैन्य संस्थाओं को अतिरिक्त असाधारण शक्तियां सौंपनी पड़ीं।[28] आगे फिर 15 अगस्त, 1947 ई. को स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् क्षेत्र में दंगों एवं विस्थापित लोगों के पुनर्वास जैसे मुद्दों ने केन्द्रीय स्थान ले लिया।

प्रांतीय विधानमंडल चुनावों में कांग्रेस के प्रदर्शन का विश्लेषण : 1920 ई. से 1946 ई. की अवधि में हुए इन 6 प्रांतीय चुनावों के परिणामों का कांग्रेस पार्टी के संदर्भ में विश्लेषण करने पर अग्रलिखित बिंदू दृष्टिगोचर होते हैं-

1. कांग्रेस द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर चलाए जा रहे आंदोलनों का प्रदेश में कांग्रेस के चुनावी प्रदर्शन पर सीधा असर पड़ता था। उदाहरणार्थ- 1926 ई. में जब कांग्रेस राष्ट्रीय स्तर पर किसी बड़ी सरकार विरोधी गतिविधि में सम्मिलित नहीं थी तो उसे हरियाणा के क्षेत्र में एक भी सीट प्राप्त नहीं हुई थी। परन्तु 1930 ई. में सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय हुए चुनावों में उसने आठ में से तीन सीटों पर विजय प्राप्त की थी। इसी तरह, 1946 ई. के चुनावों में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जब कांग्रेस पूरे जोर-शोर से देश की आजादी हेतु अंतिम प्रयास करने में जुटी हुई थी तो चुनाव परिणामों में भी यह तथ्य स्पष्टतः परिलक्षित हुआ एवं उसने 29 में से 16 सीटों पर जीत दर्ज की।[29]
2. प्रारम्भ में कांग्रेस पार्टी का जनाधार ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना एवं शहरों में अधिक था, परन्तु जैसे-जैसे राष्ट्रीय आंदोलन गति पकड़ता गया, वैसे-वैसे ही पूरे प्रदेश पर सार्वभौम रूप में कांग्रेस की विचारधारा को लोग अपनाने लगे। उदाहरण के तौर

पर 1946 ई. में चुनाव में कांग्रेस ने हरियाणा के क्षेत्र में पड़ने वाले 19 ग्रामीण सीटों में से 9 कांग्रेस ने जीती थीं।[30] जबकि यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिए कि शेष 10 में से 6 ग्रामीण सीटें मुसलमानों हेतु आरक्षित थीं, जिनमें से सभी 6 सीटें तात्कालिक सांप्रदायिक विद्वेष का लाभ उठाकर मुस्लिम लीग ने जीत ली थीं। 1923 ई. व 1926 ई. के चुनावों में कांग्रेस को इन इलाकों में विफलता का सामना करना पड़ा था।

3. उत्तर-पश्चिमी हरियाणा में परम्परागत तौर पर कांग्रेस की स्थिति बाकी दलों से मजबूत रही। इसका सबसे प्रमुख कारण श्री शामलाल जैसे क्षेत्रीय नेता की उपस्थिति की। फिर 1938 ई. के अकाल में कांग्रेस के सराहनीय राहत कार्यों ने क्षेत्र में उसकी स्थिति को और मजबूत कर दिया। उदाहरण के लिए हिसार में कांग्रेस को 1923 ई., 1930 ई. व 1946 ई. के चुनावों में जीत मिली जबकि 1926 ई. व 1937 ई. के चुनावों में उसकी हार का अंतर बहुत मामूली ही रहा, यथा- 1937 ई. के चुनाव में हांसी की सामान्य ग्रामीण सीट पर युनियनिस्ट पार्टी के विजयी उम्मीदवार श्री सूरजमल को 7633 जबकि कांग्रेस के श्री लाजपतराय को उनसे थोड़े ही कम 7104 मत प्राप्त हुए थे।[31]
4. दक्षिणी-पश्चिमी हरियाणा में कांग्रेस की चुनावी स्थिति कभी भी अच्छी नहीं रही। यहाँ हिन्दू महासभा व यूनियनिस्ट पार्टी ने ही अपना वर्चस्व बनाकर रखा। 1926 ई. व 1930 ई. के चुनावों में यहाँ राव बलबीर सिंह के नेतृत्व में हिन्दू महासभा को जबकि उसके बाद के चुनावों में यूनियनिस्ट पार्टी को विजय प्राप्त हुई। यहाँ तक कि 1946 ई. के चुनावों में भी जब पूरे प्रदेश में कांग्रेस का बोलबाला था तब भी कांग्रेस यहाँ की उत्तर-पश्चिमी गुड़गांव की सामान्य ग्रामीण सीट पर यूनियनिस्ट पार्टी के राव मोहर सिंह से हार गई।[32] दक्षिणी-पूर्वी गुड़गांव की सीट पर भी वह कठिनाई से ही जीत दर्ज कर सकी थी।
5. प्रारम्भ में उत्तरी हरियाणा में कांग्रेस की स्थिति अच्छी नहीं थी। कांग्रेस 1923 ई. व 1926 ई. के दोनों ही चुनावों में अम्बाला व करनाल की मुस्लिम व गैर-मुस्लिम दोनों ही प्रकार की सीटों पर हिन्दू महासभा व यूनियनिस्ट पार्टी से पिछड़ती रही। परन्तु 1930 ई. के बाद स्थिति में बदलाव आना प्रारम्भ हो गया तथा यहाँ की गैर-मुस्लिम सीटों पर कांग्रेस ने अच्छा प्रदर्शन करना प्रारम्भ कर दिया। कांग्रेस पार्टी से अलग-अलग चुनावों में श्री मामराज सिंह चौहान, नाथू सिंह, दूनीचंद, रतन सिंह, सुंदरलाल व श्री जगदीश चंद्र जैसे नेता इन चुनाव क्षेत्रों से जीतकर विधानमंडल पहुँचने लगे।
6. केन्द्रीय हरियाणा में कांग्रेस का चुनावी प्रदर्शन अत्यंत साधारण रहा था। इसका सबसे प्रमुख कारण यहाँ के प्रमुख जाट नेता श्री छोटूराम जी का यूनियनिस्ट पार्टी के साथ जुड़ा होना था। उन्हीं के नेतृत्व में यूनियनिस्ट पार्टी ने यहाँ 1923 ई., 1926 ई., 1930 ई. व 1937 ई. के चुनावों में जीत दर्ज की। 9 जनवरी, 1945 ई. को उनके निधन के बाद ही कांग्रेस इस क्षेत्र में अपने प्रदर्शन में कुछ सुधार कर सकी तथा अंततः 1946 ई. के चुनावों में रोहतक (सेंट्रल), उत्तरी रोहतक (सामान्य ग्रामीण सीट) व झज्जर की सीटों से क्रमशः बदलू राम, लहरी सिंह व शेर सिंह नामक कांग्रेसी उम्मीदवारों ने जीत दर्ज की।[33]
7. इनके अतिरिक्त यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि जब-जब चुनाव राष्ट्रीय मुद्दे पर एवं साम्प्रदायिक सौहार्द के माहौल में हुए तब-तब कांग्रेस को इसका लाभ प्राप्त हुआ जबकि स्थानीय मुद्दों को केन्द्र में रखने पर यूनियनिस्ट पार्टी तथा साम्प्रदायिकता के माहौल में हिन्दू महासभा एवं मुस्लिम लीग जैसे दलों को चुनाव में बढ़त मिली। इसी तरह कांग्रेस जब एकजूट होकर लड़ी तो उसे सफलता मिली जबकि अलग-अलग धड़ों में बंटकर चुनाव लड़ने पर उसे असफलता का सामना करना पड़ा। 1926 ई. व 1946 ई. के चुनावों के एकदम विपरीत परिणाम इस तथ्य की पुष्टि करते हैं।

पंजाब के प्रांतीय विधानमंडल के चुनावों का हरियाणा के क्षेत्र एवं स्वतंत्रता आंदोलन पर पड़ने वाला प्रभाव : इन प्रांतीय चुनावों ने प्रदेश में स्वतंत्रता आंदोलन की गति को कई रूपों में प्रभावित किया। लगातार चुनावी गतिविधियों में व्यस्त रहने के कारण प्रदेश की जनता की राजनीतिक चेतना में वृद्धि हुई जिसका असर न केवल उनकी राजनीतिक समझ पर पड़ा बल्कि चुनावों

में भागीदारी में बढ़ोतरी के रूप में भी यह चीज स्पष्ट दिखाई पड़ी। उदाहरण के तौर पर 1946 ई. के प्रांतीय चुनावों में दक्षिणी-पूर्वी गुड़गांव व उत्तरी रोहतक की ग्रामीण सीट पर मतदान का प्रतिशत क्रमशः 69.76 प्रतिशत व 67.42 प्रतिशत रहा, जबकि 1926 ई. के चुनावों में यह दक्षिणी-पूर्वी रोहतक में 42.81 प्रतिशत व गुड़गांव की गैर-मुस्लिम ग्रामीण सीट पर 52.07 प्रतिशत रहा था, ऐसे ही 1923 ई. के चुनावों में तो यह सिर्फ 43.5 प्रतिशत व 42.1 प्रतिशत ही रहा था।[34] साथ ही, चुनावों में किसानों एवं ग्रामीणों के मुद्दे उठाए जाने से न सिर्फ चुनाव बहुआयाम बने बल्कि राष्ट्रीय आंदोलन में इन वर्गों एवं क्षेत्रों की समावेशिता में भी वृद्धि हुई। इसका एक अन्य लाभ क्षेत्रीय दलों के विकास के रूप में भी हुआ जिससे क्षेत्र के लोगों एवं स्थानीय नेताओं को भावी लोकतंत्र एवं संसदीय व्यवस्था में राजनीतिक आचरण हेतु एक पूर्वाभ्यास प्राप्त हो गया। परन्तु यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि इससे राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता एवं कट्टरता में भी वृद्धि हुई जिससे क्षेत्र में सांप्रदायिक सौहार्द को कुछ हानि तो अवश्य ही उठानी पड़ी। इसके अतिरिक्त इन गतिविधियों का कुछ असर हरियाणा के क्षेत्र की देशी रियासतों पर भी पड़ा। उदाहरणार्थ- 1937 ई. के चुनावों के पश्चात् कांग्रेस ने लोहारू की रियासत में किसानों की सहायता हेतु सक्रिय भूमिका निभाई जिसमें सबसे महत्वपूर्ण योगदान पंडित नेकीराम शर्मा, हरदेव देसाई, ठाकुरदास भार्गव व श्रीमातूराम जी का रहा।[35] परन्तु इसका सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव कांग्रेस के जनाधार एवं स्वीकार्यता में वृद्धि के रूप में दर्ज किया गया जिससे वह राष्ट्रीय स्तर पर अपने अधिक महत्त्व वाले पूर्ण स्वतंत्रता के लक्ष्य को प्राप्त कर सकी।

निष्कर्ष : उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि हरियाणा में कांग्रेस ने अपने जनाधार के मामले में 1920 ई. से 1947 ई. के दौरान एक लंबी यात्रा तय की थी। वस्तुतः उसने एक ऐसे राष्ट्रीय दल के रूप में शुरूआत की थी जिसका जनाधार अत्यंत सिमटा हुआ एवं कुछ शहरी केन्द्रों तक ही सीमित था। परन्तु 1946 ई. के चुनाव आते-आते उसने लगभग सार्वभौमिक रूप से पूरे क्षेत्र में अपनी राजनीतिक पकड़ मजबूत कर ली। इस क्रम में उसे क्षेत्रीय दलों व लोकप्रिय स्थानीय नेताओं के साथ-साथ साम्प्रदायिक ताकतों से भी लोहा लेना पड़ा। परन्तु अपने प्रभावी क्षेत्रीय नेतागणों के दशकों के प्रयासों, केन्द्रीय नेताओं की लगातार यात्राओं एवं समर्थन, अपने लगातार मजबूत होते राजनीतिक संगठन एवं राष्ट्रीय स्तर पर उसकी पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्ति की दृढ़ इच्छाशक्ति के बल पर उसने इस कठिन कार्य को पूर्ण करने में सफलता प्राप्त कर ली। भारत को आजादी मिल जाने के बाद भी कांग्रेस के इन क्षेत्रीय नेताओं ने क्षेत्र के स्थानीय मुद्दों को राज्य एवं देश के राजनीतिक मंचों पर उठाना तथा यहाँ के विकास हेतु कार्य करना जारी रखा जिसका काफी लाभ कालांतर में हरियाणा के क्षेत्र व प्रदेश की जनता को प्राप्त हुआ।

संदर्भ

1. सिंह, वीरकेश्वर प्रसाद, 'भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन एवं सांविधानिक विकास', ज्ञानदा प्रकाशन, (पी.डी.), दरियागंज, नई दिल्ली, 1990, पृ. 30
2. मित्तल, जे.के., 'भारत का वैधानिक एवं संवैधानिक इतिहास', अष्टम् संस्करण, इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशन, इलाहाबाद, 1994, पृ. 6
3. Yadav K.C., 'Elections in Punjab (1920-1947)', Manohar Publications, New Delhi, 1987
4. Chandra Jagdish 'Freedom Struggle in Punjab (1909-1947)' Vikas Publications, Kurukshetra, 1982
5. Shukla S.P. 'Freedom Struggle in Haryana and the Indian National Congress (1885-1985)', Haryana Pradesh Congress Committee, 1985.
6. महाजन, विद्याधर, 'आधुनिक भारत का इतिहास, (1707 ई. से आज तक)', एस. चंद एंड कम्पनी लिमिटेड, रामनगर, नई दिल्ली, 2018, पृ. 468-470
7. Yadav, Kripal Chandra, 'Elections in Punjab (1920-1947)', Manohar Publications, Daryaganj, New Delhi, 1987, p. 41-44
8. Chandra, Jagdish, 'Freedom Struggle in Haryana, 1919-1947', Vishal Publications, Kurukshetra, 1982, p. 72.
9. यादव, के.सी., 'हरियाणा : इतिहास एवं संस्कृति, खण्ड-2, (1803 ई. -1966 ई. तक)', मनोहर पब्लिकेशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 1992, पृ. 227
10. Birbal, 'History of Elections in India (A case study of Punjab and Haryana, 1937-1952)', Sanjay Prakashan, New Delhi 2019, p. 39-40
11. Chandra, Jagdish, op. cit. pp. 100-103
12. Yadav, Kripal Chandra, op.cit. pp. 85-86

13. Shukla, S.P. and Singh, Praduman, 'Freedom Struggle in Haryana and the Indian National Congress (1885-1985)', Haryana Pradesh Congress Committee, p. 83
14. Constitution, Aims,Objectives and Manifesto of the Unionist Party, Lahore, 1936, p. 1-42
15. Chandra, Jagdish, op.cti., p. 133
16. यादव, के.सी., 'हरियाणा का इतिहास : आदिकाल से 1966 तक', होप इण्डिया पब्लिकेशन, गुड़गांव, 2012, पृ. 466
17. रल्हन, ओ.पी., 'हरियाणा शिरोमणि पंडित श्रीराम शर्मा (1899 ई. –1989 ई.)' : गौरव गाथा, पंडित श्रीरामशर्मा सेवा आश्रम, रोहतक, 1998, पृ. 61–62
18. यादव, के.सी., 'हरियाणा का इतिहास (1803 ई. से 1966 ई.)', भाग-3, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, दरियागंज, नई दिल्ली, 1981, पृ. 171–172
19. जाखड़, रामसिंह, 'हरियाणा के राजनीतिक इतिहास की झलक', हरियाणा साहित्य मंडल, रोहतक, 1991, पृ. 84–85
20. Chandra, Jagdish, op.cit. p. 73, 77 and 95
21. Shukla, S.P. and Singh, Praduman, op.cit., pp. 100-101
22. Yadav, B.D., 'Freedom Struggle in Haryana and Chaudhary Ranbir Singh', Ch. Ranbir Singh Chair, MDU Rohtak, 2010,. p. 108-109
23. Inspection Report of Punjab Province Congress Committee, All India Congress Committee, File No. 7/1938.
24. जाखड़, रामसिंह, पूर्वोक्त, पृ. 81–82
25. Birbal, op.cit., pp. 92-93.
26. यादव, के.सी., पूर्वोक्त, पृ. 198–200
27. Shukla, S.P. and Singh, Praduman, op.cit., pp. 142-143
28. यादव, के.सी., पूर्वोक्त, पृ. 199–201
29. Birbal, op.cit., pp. 95-96
30. जाखड़, रामसिंह, पूर्वोकत, पृ. 121–122
31. Yadav, Kripal Chandra, op.cit., p. 85
32. Chandra, Jagdish, op.cit., pp. 125-127
33. जाखड़, रामसिंह, पूर्वोक्त, पृ. 122–122
34. Yadav, Kripal Chandra, op.cit., p. 53
35. Shukla, S.P. and Singh, Praduman, op.cit., p. 101-103

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

मलिन बस्ती वासियों का शैक्षिक स्तर एवं अभिरूचि : लखनऊ नगर के संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

❑ डॉ. शैलजा सिंह
❖ अब्दुल्लाह

सूचक शब्द : नगरीकरण, मलिन बस्तियाँ, शिक्षा प्रणाली, अभिरुचि।

नगरीकरण के इस दौर में कोई भी नगर मलिन बस्तियों से अछूता नही है। नगरों की मलिन बस्तियां सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक शोध के लिए बड़ी महत्वपूर्ण रहती हैं। यह अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है तथा अध्ययन क्षेत्र के रूप में उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ नगर को लिया गया है। अध्ययन क्षेत्र से साक्षात्कार अनुसूची द्वारा आंकड़ा संग्रहण हेतु 80 लोगों का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति के द्वारा लखनऊ नगर की मलिन बस्ती क्षेत्र से किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में आंकड़ों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि लखनऊ नगर के मलिन बस्ती वासियों का एक बड़ा वर्ग अशिक्षित है तथा जो शिक्षित हैं, उनका शैक्षिक स्तर काफी निम्न है। अध्ययन यह भी निष्कर्ष निकलता है कि यहाँ के लोग शिक्षा के महत्व को लेकर काफी संवेदनशील हैं।

प्राचीन काल से ही शिक्षा ज्ञान, समृद्धि, सत्ता एवं शक्ति का महत्वपूर्ण साधन है। समाज में सम्मान, पद एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए शिक्षित होना अति आवश्यक माना जाता है। शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखकर आरंभ से ही शिक्षा प्रणाली पर राज्य या शासक वर्ग अपना आधिपत्य या नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास करता रहा है। जहाँ एक ओर मानव जीवन में शिक्षा बहुमूल्य साधन है वहीं दूसरी ओर शिक्षा एक समान रूप से समाज के प्रत्येक व्यक्ति की पहुंच से दूर भी है। आरंभ से ही शिक्षा का समान वितरण कठिन व अपूरणीय लक्ष्य रहा है। प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली की स्थापना से पूर्व व्यक्ति के मौलिक अधिकार व गरिमा का कोई विशेष महत्व नहीं था, तब शिक्षा केवल विशेषाधिकार प्राप्त लोगों तक ही सीमित थी। परंतु वर्तमान समय में जब मानवाधिकारों के साथ-साथ प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा को महत्व देने की बात वैश्विक पटल पर जोरों से की जा रही हो तो अपने समस्त नागरिकों को एक समान रूप से शिक्षा उपलब्ध कराना राज्य का कर्तव्य बन जाता है।

राज्य की शिक्षा में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है कि वह शिक्षा की ऐसी व्यवस्था करे जिसमें समाज के सभी अंगों और व्यक्तियों को बराबर विकास करने का अवसर मिले। इसके अतिरिक्त समाज की उन्नति के लिए शिक्षा की योजनाएं बनाना और उसको कार्य रूप में परिणित करने के लिए साधन जुटाना भी राज्य का एक महत्वपूर्ण कार्य है।[1]

21 वीं शताब्दी के दो दशक समाप्त हो जाने के बाद भी आज भारतीय समाज का एक बड़ा वर्ग अपने मूल-भूत अधिकारों व जीवन-यापन के मौलिक संसाधनों से बहुत दूर है। जहां एक ओर देश विकास पथ पर तेजी से आगे बढ़ रहा है, वहीं दूसरी ओर जनसंख्या का एक बड़ा भाग विकास के पथ पर पीछे छूटता चला जा रहा है। विकास पथ पर लगातार बढ़ रही खाई की सबसे बड़ा कारण शिक्षा है। शिक्षा ही वह मौलिक व प्राथमिक साधन है जिसके माध्यम से मानव समाज प्रगति के पथ पर आगे बढ़ सकता है। भारतीय समाज में शिक्षा का स्वरूप, माध्यम और पहुंच ही है जो लोगों के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक स्तर के बीच खाई निर्माण में अहम भूमिका निभा रही है।

देश के स्वतंत्र होने के बाद पब्लिक स्कूलों की रीति-नीति और उनके ढांचे में कोई परिवर्तन नहीं आया। धनी परिवारों के बच्चों के अलावा वे बड़े अधिकारियों तथा मंत्रियों के बच्चों की शिक्षा के अड्डे बन गए। देश के उन लाखों सरकारी स्कूलों से उनका कोई साम्य ना था,

❑ एसोशिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र/सामाजिक विज्ञान विभाग, डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ (उ.प्र.)
❖ शोध अध्येता, समाजशास्त्र/सामाजिक विज्ञान विभाग, डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ (उ.प्र.)

जिनमें बच्चे टूटे-फूटे बरामदे या कमरे में भर दिए जाते हैं। पब्लिक स्कूल स्पष्टतः स्कूली शिक्षा की मुख्यधारा से अलग थे और समाज के समृद्ध और पिछड़े हुए लोगों के अंतर को सशक्त कर रहे थे। अनुमानतः आज भी सरकारी और व्यापारिक प्रतिष्ठानों के उच्चतम पदों पर आसीन अधिकांश व्यक्ति पब्लिक स्कूलों में पढ़े हुए होते हैं।[2]

औद्योगीकरण की प्रक्रिया ने नगरीकरण को तीव्र गति दी तथा नगरीकरण के फलस्वरूप मलिन बस्तियों का जन्म हुआ। जहां एक तरफ औद्योगीकरण ने मानव समाज को ज्ञान-विज्ञान, शिक्षा के नए आयाम, भौतिक संसाधन तथा नवीन तकनीक प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर औद्योगीकरण के दुष्परिणाम भी सामने आये हैं। तीव्र नगरीकरण के फल स्वरुप बेरोजगारी, गरीबी, प्रवसन, प्रदूषण, अपराध एवं असुरक्षा इत्यादि जैसे नकारात्मक पक्ष भी तेजी से बढ़ रहे हैं। इन्हीं सब नकारात्मक पक्षों की जन्म स्थली के रूप में नगरों की मलिन बस्तियों को देखा जाता है। मलिन बस्तियों का निर्माण एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। विश्व के सभी विकासशील देशों के छोटे-बड़े सभी प्रकार के नगरों में लगभग एक समान रूप से मलिन बस्तियां पाई जाती हैं। नगरों के ऐसे क्षेत्र जहां सभी प्रकार की मूलभूत सुविधाओं यथा शुद्ध पेयजल, सड़क, नाली, स्वच्छता तथा आवास इत्यादि का अभाव तथा जहाँ के निवासियों के मानवीय अधिकारों का हनन प्रतिदिन हो रहा हो, को मलिन बस्ती कहते हैं। मलिन बस्तियों में जो लोग रहते हैं वे मुख्य समाज से अपने आप को कभी जोड़ नहीं पाते। यहां रहने वाले लोगों में निर्धनता, अशिक्षा, घातक बीमारियां तथा असुरक्षा की भावना पाई जाती हैं।

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में भी मलिन बस्तियां पाई जाती हैं। डूडा के अनुसार लखनऊ में लगभग एक लाख लोग मलिन बस्ती क्षेत्र में निवास करते हैं।[3] मलिन बस्ती क्षेत्र में निवास करने वाले लोग सामान्य नगरवासियों की तुलना में हर क्षेत्र में काफी पिछड़े हैं। यहां रहने वाले लोगों तथा नगर के अन्य लोगों के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन में अंतर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। मलिन बस्तियों के पिछड़ेपन का मूल एवं आधारभूत कारण शैक्षिक पिछड़ापन है। प्रस्तुत अध्ययन मलिन बस्ती वासियों का शैक्षिक स्तर एवं अभिरूचि ज्ञात करने के विषय में एक प्रयास मात्र है।

साहित्य समीक्षा :

राधिका कपूर[4] ने अपने शोध पत्र "एजुकेशन ऑफ द स्लम डेवलर्स" में पाया कि भारत की मलिन बस्तियों में अधिकतर वंचित, शोषित व कमजोर वर्ग के लोग रहते हैं, जो मुख्यधारा के लोगों से सामाजिक रुप से एकदम अलग-थलग रहते हैं। मलिन बस्ती के वासी अपने मौलिक अधिकारों के प्रति उदासीन रहते हैं। यहां रहने वाले लोग ना तो शिक्षा के अर्थ को समझते हैं, और ना ही शिक्षा के महत्व के प्रति जागरूक हैं।

तरन्नुम सिद्दीकी[5] ने अपने शोध "प्रॉब्लम्स आफ ड्रॉप-आउट स्टूडेंट इन इंडियन स्लम" में यह बताने का प्रयास किया है कि 6 से 14 वर्ष तक के बच्चे जो प्राथमिक शिक्षा को बीच में छोड़ देते हैं, अधिकतर के अभिभावक बहुत गरीब होते हैं। कुछ बच्चे जो प्राथमिक विद्यालय से कक्षा 5 तक की पढ़ाई पूरी भी कर लेते हैं वे आगे की पढ़ाई इसलिए भी नहीं कर पाते क्योंकि उनकी झुग्गी-झोपड़ी के आसपास उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यालय ही नहीं होते हैं। सरकारी विद्यालयों की अनुपलब्धता तथा अभिभावकों की गरीबी बच्चों की प्राथमिक शिक्षा पूरी न कर पाने के महत्वपूर्ण कारक है।

एच.एन. नरसिंगप्पा[6] ने "स्लम एजुकेशन इंपॉर्टेंस ऑफ प्रेजेंट एंड फ्यूचर सिनेरियो" मे यह पाया है कि मलिन बस्ती वासियों के बच्चों के स्कूल जाने की संभावना सबसे कम है। सामान्य नागरिक के बच्चे तुलनात्मक रूप से कहीं अधिक नामांकन कराते हैं, और अपनी प्राथमिक शिक्षा पूर्ण भी करते हैं। परंतु मलिन बस्ती के बच्चे नामांकन में तो पिछड़ते हैं ही साथ ही शिक्षा को बीच में छोड़ने का अनुपात भी सामान्य नगरवासियों की तुलना में इनमें अधिक है। इसी के साथ मलिन बस्ती क्षेत्र के स्कूलों में क्षमता से अधिक छात्र, समुचित संसाधनों की कमी एवं गुणवत्ता की कमी भी मलिन बस्ती क्षेत्र में अशिक्षा का एक प्रमुख कारक है।

जय सिंह[7] ने "क्वालिटी आफ एलिमेंट्री एजुकेशन इन अर्बन स्लम ऑफ वारानसी सिटी" के अपने अध्ययन में पाया कि अधिकतर शिक्षकों में तकनीकी कुशलता एवं व्यवसायिक व्यवहार/अनुभव दोनों ही असंतोषजनक है। सरकारी प्राथमिक विद्यालयों के कक्षा कक्ष की गुणवत्ता बहुत ही खराब है। सरकारी विद्यालयों के कक्षा कक्ष का भौतिक एवं प्राकृतिक वातावरण निजी क्षेत्रों के प्राथमिक विद्यालयों की तुलना में दयनीय स्थिति में है। इस

अध्ययन में शोधकर्ता ने पाया कि मलिन बस्ती के बच्चों में विद्यालय जाने और सीखने की प्रक्रिया में भी अन्य शहरियों की तुलना में काफ़ी पिछड़े है।

मोना यासमीन[8] ने अपने अध्ययन 'आक्यूपेशनल मोबिलीटी ऑफ स्लम डेवलर्स : ए केस स्टडी ऑफ डेल्ही' में पाया कि मलिन बस्ती वासियों का अपने मूल आवास से नगरों मे प्रवास का कारण व्यवसायिक गतिशीलता है। लोग इस आशा के साथ शहरों की तरफ पलायन करते हैं कि उन्हे अपने मूल स्थान से अधिक कमाई होगी जिससे उनके जीवन शैली में सकारात्मक विकास होगा।

यूको टिसोजिटा[9] ने 'डिपराइवेशन ऑफ एजुकेशन : ए स्टडी ऑफ स्लम चिल्ड्रेन ऑफ डेल्ही' के अपने अध्ययन में पाया कि मलिन बस्ती के वासियों के 50 प्रतिशत से भी कम बच्चे विद्यालय में प्रवेश ले पाते हैं, जिनमें से अधिकांश बच्चे बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते है। मलिन बस्ती क्षेत्र में बीच में विद्यालय छोड़ने (ड्राप आउट) का अनुपात बहुत अधिक होता है।

उपर्युक्त साहित्य समीक्षाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शिक्षा के अभाव में मलिन बस्ती के लोग अपने अधिकारों को कार्यरूप में नहीं ला पाते और न ही अपने अधिकारों के प्रति सजग रहते हैं। अन्य नगर वासियों की तुलना में ड्रापआउट छात्रों की संख्या मलिन बस्ती क्षेत्र में सर्वाधिक होती है। इसके साथ ही विद्यालयों की अवसंरचना, भौतिक पर्यावरण तथा मलिन बस्ती से विद्यालय की दूरी इत्यादि भी यहाँ के शैक्षिक विकास में बाधक होते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य : मलिन बस्ती वासियों के संघर्ष/चुनौतीपूर्ण जीवन में अनेक समस्याओं के बाद भी क्या शिक्षा इनके जीवन में कुछ सार्थक बदलाव ला सकती है। शिक्षा के प्रति इनका दृष्टिकोण क्या है? इनका शैक्षिक स्तर क्या है? तथा अपनी आने वाली पीढ़ी के संदर्भ में ये शिक्षा को कैसे देखते हैं? प्रस्तुत शोध पत्र इन्हीं बिन्दुओं की पड़ताल करते हुए निम्नलिखित शोध उद्देश्यों द्वारा इस मुद्दे को समझने का एक प्रयास है।

1 मलिन बस्ती में रह रहे लोगों के शैक्षिक स्तर का अध्ययन करना।

2 मलिन बस्ती के लोगो की शिक्षा के प्रति अभिरुचि का अध्ययन करना।

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन में शोध के उद्देश्यों एवं शोध की प्रकृति के आधार पर वर्णनात्मक एवं अनुभवात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग किया गया है। अध्ययन में दैव निदर्शन के साथ-साथ उद्देश्य पूर्ण निदर्शन पद्धति के माध्यम से लखनऊ नगर की मलिन बस्ती क्षेत्र के 80 लोगों का चयन साक्षात्कार अनुसूची के लिए उत्तरदाता के रूप में किया गया है।

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ नगर की मलिन बस्ती क्षेत्र का चयन शोध अध्ययन के लिए किया गया है। लखनऊ नगर कुल 8 जोन में विभाजित है, दैव निदर्शन की लाटरी विधि द्वारा नगर के दो जोन यथा जोन -2 एवं जोन -6 का चयन अध्ययन हेतु किया गया है। चयनित प्रत्येक जोन से दैव निदर्शन की पुनः लॉटरी विधि से दो-दो मलिन बस्तियों का चयन किया गया है। कुल चयनित 4 मलिन बस्तियों से उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि के माध्यम से प्रत्येक से 20 व्यक्तियों के साथ कुल 80 लोगों का चयन अध्ययन के लिए किया गया है। लखनऊ नगर की मलिन बस्ती क्षेत्र में रह रहे व्यक्ति का चयन अध्ययन की इकाई के रूप में किया गया है।

लखनऊ नगर

चयनित जोन	चयनित मलिन बस्ती
जोन-2	1. हबीब नगर बी., दारू गोदाम के आगे
2.	ई ब्लॉक बीएसएनएल ऑफिस के पास हैदर कैनाल
जोन-6	1. भाप्टामऊ
	2. मुन्नू खेड़ा

प्रस्तुत अध्ययन में तथ्यों का संकलन प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही स्रोतों से किया गया है। एक तरफ जहां प्राथमिक उपकरण के रूप में साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है, वहीं दूसरी तरफ द्वितीयक स्रोतों में पत्र-पत्रिकाओं, रिपोर्ट एवं अनुसंधानकर्ताओं के प्रतिवेदनों को प्रयोग में लिया गया है। संग्रहित आंकड़ों के संपादन एवं संकेतन के पश्चात आंकड़ों के विश्लेषण के लिए आंकड़ों को सारणीबद्ध करके सरल आवृत्ति तथा प्रतिशत के द्वारा परिणामों का विश्लेषण किया गया है।

विश्लेषणः- अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण अग्रलिखित है -

1- उत्तदाताओं का शैक्षिक स्तर

तालिका क्रमांक 1
शैक्षिक स्थिति

शैक्षिक स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
शिक्षित	32	40
अशिक्षित	48	60
योग	80	100

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के 60 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित हैं जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षित हैं।

तालिका क्रमांक 2
शिक्षा के उत्तरदायी संस्थान

शैक्षिक संस्थान	आवृत्ति	प्रतिशत
सरकारी	28	87.5
निजी/प्राइवेट	4	12.5
योग	32	100.0

तालिका क्रमांक 2 से यह ज्ञात होता है कि जो 40 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षित हैं उनमें से अधिकतर 87.5 प्रतिशत उत्तरदाता ने सरकारी विद्यालय से शिक्षा ग्रहण की है जबकि 12.5 प्रतिशत ने ही निजी/प्राइवेट विद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर पाया है। निजी/प्राइवेट विद्यालयों को मलिन बस्ती क्षेत्र में शिक्षा के प्रति जागरूकता कार्यक्रम चलाने चाहिए जिससे यहाँ के निवासियों का शैक्षिक स्तर बढ़ सके।

तालिका क्रमांक 3
शिक्षा का स्तर

शिक्षा का स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
कक्षा (1-5)	20	62.5
कक्षा (6-8)	8	25.0
कक्षा (9-12)	4	12.5
योग	32	100.0

तालिका क्रमांक 3 से यह स्पष्ट होता है कि जो 32 उत्तरदाता शिक्षित थे उनमें से अधिकतर 62.5 प्रतिशत केवल प्राथमिक स्तर की ही शिक्षा प्राप्त कर सके हैं। 25 प्रतिशत उत्तरदाता कक्षा 8 तक की पढ़ाई किए हैं। जबकि मात्र 12.5 प्रतिशत ही हाईस्कूल या इण्टरमीडिएट तक की शिक्षा ग्रहण करने में सफल हुए हैं। स्पष्ट है कि अशिक्षा के साथ-साथ आर्थिक संसाधनों की कमी प्राथमिक विद्यालय से आगे की शिक्षा ग्रहण करने में बाधक होते हैं। सरकार की ओर से माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर कौशल विकास कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से संचालित करना चाहिए। जिससे अल्प सुविधा प्राप्त बच्चे रोजगारपरक शिक्षा ले सकें।

तकनीकी शिक्षा : मलिन बस्ती क्षेत्र का कोई भी शिक्षित उत्तरदाता किसी भी प्रकार की तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने में सफल नहीं हो सका है। सरकार को मलिन बस्ती क्षेत्र में भी कौशल विकास केन्द्रों की स्थापना करनी चाहिए। जिससे यहाँ के निवासी भी रोजगारपरक प्रशिक्षण प्राप्त कर सकें।

उत्तरदाताओं की शैक्षिक अभिरूचि

तालिका क्रमांक 4
मानवजीवन में शिक्षा का महत्व

महत्वपूर्ण है	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	72	90
नही	-	-
अनिश्चित	8	10.0
योग	80	100.0

तालिका क्रमांक 4 से यह ज्ञात होता है कि मलिन बस्ती में रहने वाले लगभग सभी उत्तरदाताओं ने माना है कि शिक्षा का मानव जीवन में बहुत महत्व है। मात्र 10 प्रतिशत उत्तरदाता इस प्रश्न का उत्तर देने में अनिश्चित थे। शैक्षिक स्तर निम्न होने के बाद भी बहुसंख्यक लोगो का मानना है कि शिक्षा मानव जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण है।

तालिका क्रमांक 5
शिक्षित व्यक्ति का समाज में सम्मान

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	64	80
नही	-	-
अनिश्चित	16	20
योग	80	100.0

तालिका संख्या 5 से स्पष्ट होता है कि 80 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि शिक्षित व्यक्ति समाज में सम्मान पाता है जबकि 20 प्रतिशत उत्तरदाता इस प्रश्न का उत्तर देने में अनिश्चित थे।

तालिका क्रमांक 6
शिक्षा रोजगार में सहायक

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	44	55
नही	8	10
अनिश्चित	28	35
योग	80	100.0

तालिका क्रमांक 6 से स्पष्ट है कि 55 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि शिक्षा रोजगार सृजन में सहायक होती है। जबकि 35 प्रतिशत उत्तरदाता अनिश्चितता की स्थिति में थे। मात्र 10 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि शिक्षा रोजगार हेतु आवश्यक नहीं है।

तालिका क्रमांक 7

शिक्षा का सकारात्मक महत्व

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	48	60
नही	32	40
अनिश्चित	–	–
योग	80	100.0

तालिका क्रमांक 7 से स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि शिक्षित व्यक्ति अपने परिवार व समाज के लिए सकारात्मक कार्य करता है, जबकि 40 प्रतिशत उत्तर दाता का मानना है कि परिवार व समाज के लिए सकारात्मक कार्य करने के लिए शिक्षित होना जरूरी नहीं है।

तालिका क्रमांक 8

अगली पीढ़ी की शिक्षा व्यवस्था

बच्चों को विद्यालय भेजना चाहिए	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	68	85
नही	–	–
अनिश्चित	12	15
योग	80	100.0

तालिका क्रमांक 8 से स्पष्ट है कि 85 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि बच्चों को शिक्षा के लिए विद्यालय जरूर भेजना चाहिए, जबकि मात्र 15 प्रतिशत उत्तरदाता बच्चों को विद्यालय भेजने के सम्बन्ध में अनिश्चितता की स्थिति में है।

तालिका क्रमांक 1, 2, तथा 3 उत्तरदाताओं के शैक्षिक स्तर से संबंधित हैं। अतः उक्त तालिकाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अभी भी मलिन बस्तियों में शिक्षा का स्तर काफी दयनीय है। तालिका संख्या 4, 5, 6, 7 तथा 8 उत्तरदाताओं की शिक्षा के प्रति अभिरुचि का विश्लेषण करते हैं। इन तालिकाओं के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि उत्तरदाता शिक्षित हो या अशिक्षित परंतु सभी का शिक्षा के प्रति विशेष लगाव है।

वैयक्तिक अध्ययन : शोध अध्ययन के लिए क्षेत्र भ्रमण के दौरान कुछ उत्तरदाताओं ने अध्ययनकर्ता को अतिरिक्त समय दिया तथा अपने वैयक्तिक जीवन एवं अनुभवों को साझा करते हुए कुछ महत्त्वपूर्ण जानकारियों से अवगत कराया। शोध उद्देश्यों से संबंधित कुछ महत्त्वपूर्ण वैयक्तिक अध्ययन निम्न हैं-

35 वर्षीय शाहिदा हबीब नगर बस्ती में रहती है। उसने बताया कि वह दैनिक मजदूरी कर अपने बच्चों का पालन पोषण करती है। स्वयं वह निरक्षर है परंतु शिक्षा के महत्व से खूब परिचित है। उसने बताया कि शायद ही कोई दिन होता है जब वह अशिक्षित होने के कारण अपमानित अनुभव ना करती हो। इसलिए वह अपने बच्चों को प्रतिदिन विद्यालय भेजने का प्रयास करती है।

भप्टा मऊ की आशा (40) का भी यही कहना था कि माता-पिता बहुत गरीब थे ना तो वह स्वयं शिक्षित थे और ना ही अपने बच्चों की शिक्षा की कोई व्यवस्था कर सके। आशा ने बताया कि उसके बच्चे भी पढ़ नहीं सके। दोनों बेटे शिवा (18) और जयकरण (16) मजदूरी करते हैं बेटी ऊषा (13) घरेलू कार्यों में उसका सहयोग करती है जबकि एक मात्र पिंटू (10) ही सरकारी प्राथमिक विद्यालय जाता है।

मुन्नू खेड़ा निवासी शंभू (55) जो थारू जाति के हैं, स्वयं तो मात्र साक्षर हैं परंतु अपने सभी बच्चों को शिक्षा दिलाने में सफल रहे हैं। इनका एक बेटा गोविंद(28) इंटर तक की शिक्षा ग्रहण कर विद्युत विभाग में संविदा कर्मी के रूप में कार्यरत है, जबकि दूसरा बेटा सागर(25) हाई स्कूल की परीक्षा पास कर एक निजी कंपनी में सुरक्षा गार्ड है। शंभू की दोनों बेटियां कक्षा 8 पास हैं।

गुलाम हुसैन(30), ई ब्लॉक राजाजीपुरम बीएसएनल ऑफिस के बगल हैदर कैनाल ने बताया कि उसके माता-पिता अशिक्षित हैं। परंतु उन्होंने अपने बच्चों की शिक्षा के लिए उचित प्रबंध करने का प्रयास किया था जिस कारण गुलाम हुसैन हाई स्कूल तक की शिक्षा ले पाया। गुलाम हुसैन अपना व्यवसाय करता है और अपने दोनों बच्चों को प्राइवेट स्कूल में भेजता है।

उक्त सभी उत्तरदाताओं का जीवन संघर्षपूर्ण तथा चुनौतियों से भरा है फिर भी सभी उत्तरदाता अपने बच्चों की शिक्षा को लेकर जागरूक हैं तथा उनको विद्यालय भेजने का यथा संभव प्रयास करते हैं।

निष्कर्ष : उपर्युक्त पूर्ण विश्लेषण के प्रकाश में निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लखनऊ नगर की मलिन

बस्ती के वासियों का एक बड़ा वर्ग अभी भी अशिक्षित है तथा जो 40 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षित भी हैं उनका शैक्षिक स्तर काफी निम्न है। अधिकतर उत्तरदाता मात्र प्राइमरी पास हैं। यहाँ जो लोग शिक्षित हैं भी उनमें से कोई भी उत्तरदाता इण्टरमीडिएट से ऊपर की शिक्षा ग्रहण नही कर सका है और न ही किसी ने किसी भी स्तर पर तकनीकि शिक्षा ग्रहण की है। मलिन बस्ती के अधिकतर लोग अशिक्षित जरूर हैं, परंतु यहाँ के लोग शिक्षा के महत्त्व को समझते हैं तथा शिक्षा से होने वाले सामाजिक व आर्थिक लाभ के प्रति संवेदनशील भी हैं। इस कारण से यहाँ के लोग अपनी नई पीढ़ी के शैक्षिक स्तर को सुधारने के लिए सतत् रूप से प्रयासरत रहते हैं जबकि इसके विपरीत राधिका कपूर[10] ने अपने अध्ययन में पाया है कि मलिन बस्ती के लोग अपने मौलिक अधिकारों के प्रति उदासीन होने के साथ ही साथ शिक्षा के महत्व के प्रति जागरूक भी नहीं है। प्रस्तुत शोध से यह निष्कर्ष भी निकलता है कि मलिन बस्ती वासियों का शैक्षिक स्तर काफी निम्न है। अधिकतर उत्तरदाता मात्र प्राइमरी पास हैं। तरन्नुम सिद्दीकी[11] ने भी अपने अध्ययन में पाया है कि मलिन बस्ती के बच्चे प्राथमिक विद्यालय से आगे की शिक्षा नही ले पाते हैं। बीच में विद्यालय छोड़ने का अनुपात मलिन बस्ती क्षेत्र में अधिक होता है। एच0एन0 नरसिंगप्पा[12] ने भी अपने अध्ययन में पाया है कि आम शहरियों के बच्चों की तुलना में मलिन बस्ती क्षेत्र के बच्चे विद्यालयों में नामांकन भी कम कराते हैं तथा जो नामांकन करा भी लेते है वह बीच में ही शिक्षा छोड़ देते हैं। यूको टिसोजिटा[13] ने भी अपने अध्ययन में मलिन बस्ती क्षेत्र में विद्यालय बीच में छोड़ने (ड्राप आउट) की समस्या को उजागर करने का प्रयास किया है। उक्त सभी शोध मलिन बस्ती क्षेत्र की शैक्षिक स्थिति निम्न होने तथा अधिकांश लोगों के निरक्षर होने के संदर्भ में प्रस्तुत शोध निष्कर्ष के समर्थन में हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि लखनऊ नगर की मलिन बस्ती के 60 प्रतिशत लोग अभी भी अशिक्षित हैं तथा जो 40 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं भी उनका शैक्षिक स्तर बहुत निम्न है। यहाँ के लोग कम पढ़े लिखे होने तथा अशिक्षित होने के बाद भी शिक्षा के प्रति संवेदनशील हैं तथा शिक्षा के महत्व को भी समझते हैं। परंतु परिस्थितियों के प्रतिकूल होने के कारण अधिकतर लोग अशिक्षित हैं। यदि सरकार के साथ-साथ गैर सरकारी संगठन (NGO) भी इनके शैक्षिक स्तर को सुधारने के लिए आगे आते हैं तो मलिन बस्ती के लोगों की शैक्षिक स्थिति में और भी सकारात्मक सुधार हो सकता है।

संदर्भ

1. भादू राजाराम, 'शिक्षा के सामाजिक सरोकार' आधार प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, पंचकूला हरियाणा, 2011, पृ. 15
2. कुमार कृष्ण, 'राज समाज और शिक्षा' राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली, 2019 पृ.49, 50
3. जिला नगरी विकास प्राधिकरण (DUDA) कार्यालय लखनऊ उत्तर प्रदेश।
4. Kapur, R., 'Education of Slum Dwellers' International Journal of Transformation in Business Management (IJTBM), 2016, pp. 37-43
5. Siddiqui, T., 'Problems of Drop-Out Students in Indian Slum' International Education &Research Journal 3 (5), 2017, pp. 139-144
6. Narasigappa, H. N., 'Slum Education : Importance of Present and Future Scenario' Urban Poverty and Social Exclusion, Spring Leaf Publications Mysore, 2017, pp. 336-340
7. Singh, J, 'Quality of Elementary Education in Urban Slums of Varanasi City', Jouranal , of Educational Planning and Administration, 27, (4), 2013, pp.385-406
8. Yasmin, M., 'Occupational Mobility among Slum Dwellers : A Case Study of Delhi', Development Country Studies, 2012, Vol2, No.11, pp. 91-97
9. Tsujita, Y., 'Deprivation of Education in Urban Areas : A Basic Profile of Slum Children in Dehli', Institute of Developing Economics, Discussion Paper No. 199, pp. 1-21. India, 2009
10. Kapur, R., op.cit., p. 43
11. Siddiqui T, op.cit., p. 143
12. Narsingappa, H.N., op.cit., p. 340
13. Tsojita Y, op.cit., p. 16

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी अधिनियम, 2010 : सेवा प्रदाय की नवीन व्यवस्था एवं समस्याएँ

❑ डॉ. शीतल द्विवेदी

सूचक शब्द : भ्रष्टाचार, सुशासन, लोक-निजी भागीदारी, प्रशासनिक जवाबदेही, त्वरित सेवा, प्रभावी एवं कार्यकुशल प्रशासन।

लोक कल्याणकारी राज्य द्वारा जनहित को ध्यान में रखते हुए योजनाएँ, कार्यक्रम निर्मित किए जाते हैं। इन्हें क्रियान्वित किया जाना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। शासन के कामकाज का आकलन अन्ततः उनके द्वारा नागरिकों को प्रदान की जाने वाली सेवाओं की संतुष्टि पर आधारित होता है। अतः शासन द्वारा यह सुनिश्चित करना आवश्यक हो जाता है कि वस्तुस्थिति में राज्य द्वारा संचालित योजनाएँ नागरिकों तक समय में पहुंच पा रही हैं या नहीं। वर्तमान में प्रशासनिक व्यवस्था भ्रष्टाचार, लालफीताशाही व नौकरशाही जैसी समस्याओं से ग्रसित है। राष्ट्रीय विकास हेतु इनका उन्मूलन बहुत बड़ी चुनौती है। जनता की इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अधिनियम को लागू किया गया है। यह अधिनियम नागरिकों को निश्चित समय-सीमा में सेवा प्रदान करने की गारंटी देता है। ऐसे में मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2010 के अन्तर्गत अधिसूचित सेवाओं को प्राप्त करने हेतु राज्य सरकार द्वारा निर्धारित व्यय, निर्धारित समय-सीमा व निर्धारित प्रक्रिया के अनुरूप क्या आवेदक सेवाएँ प्राप्त कर पा रहे हैं और इस प्रकार का अधिनियम सुशासन की स्थापना में कहाँ तक उपयोगी सिद्ध हो रहा है? अधिनियम के क्रियान्वयन में कौन कौन सी चुनौतियों आ रही हैं, प्रस्तुत अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया है।

सुशासन समग्र दृष्टिकोण को साथ लेकर कार्य करता है अर्थात एक ओर शासन की अच्छाइयों में पारदर्शिता, जनभागीदारी जैसे तत्वों में वृद्धि किये जाने का प्रयास करता है वहीं दूसरी ओर कुशासन के लक्षण भ्रष्टाचार, लालफीताशाही को समूल नष्ट करने का प्रयास करता है। इस प्रकार यह समग्र दृष्टिकोण सुशासन की उपज है। जब तक प्रशासन और शासन समस्याओं के उन्मूलन का प्रयास नहीं करेंगें तब तक सुशासन की नींव भी मजबूत नहीं हो सकती है।

सुशासन की प्राप्ति हेतु शासन– प्रशासन द्वारा किये जा रहे प्रयासों में विभिन्न राज्य सरकारों ने भी सेवा प्रदाय व्यवस्था में नवाचार करते हुए नागरिकों को समय-सीमा के अन्तर्गत सेवा प्रदान करने की गारंटी दी है। मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2010 इसी दिशा में की गई महत्वपूर्ण पहल है ताकि शासन द्वारा सभी को समान रूप से सेवाओं की पूर्ति सम्भव हो सके। यह वर्तमान समय की मांग व सुशासन के लिए आवश्यक हैं।

भारत में सुशासन की स्थापना हेतु भारत के राज्यों ने भी कुछ महत्वपूर्ण पहल की है जिसमें से मध्यप्रदेश सरकार का "मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2010" उल्लेखनीय है। यह अधिनियम प्रदेश के नागरिकों को प्रदान की जाने वाली चुनिन्दा सेवाओं को समय-सीमा में प्रदान करने की गारंटी देते हुए दिनांक 25 सितम्बर, 2010 को सम्पूर्ण प्रदेश में लागू किया। ऐसा कानून बनाकर लागू करने वाला मध्यप्रदेश देश का पहला राज्य बन गया है।

अधिनियम में कुल 11 धाराएँ हैं, जिसमें अधिनियम के प्रावधानों का विस्तृत वर्णन इस प्रकार है,–

धाराएँ :– 1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ, 2. परिभाषाएँ, 3. सेवाओं, पदाभिहित अधिकारियों, प्रथम अपील अधिकारियों, द्वितीय अपील अधिकारियों तथा निश्चित की गई समय-सीमाओं की अधिसूचना, 4. निश्चित की गई समय-सीमाओं के भीतर सेवा प्राप्त करने का अधिकार, 5. निश्चित की गई समय-सीमा में सेवा प्रदान करना, 6. अपील, 7. शास्ति, 8. पुनरीक्षण, 9. सद्भावनापूर्वक की गई कार्यवाही का संरक्षण, 10. नियम बनाने की शक्ति, 11. कठिनाईयां दूर करने की शक्ति।

लोक सेवा केन्द्र (LSK) की स्थापना : मध्यप्रदेश लोक

❑ डॉक्टोरल फेलो. (आई.सी.एस.एस.आर.) राजनीति विज्ञान एवं लोक प्रशासन विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची (झारखंड)

सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2010 को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए लोक-निजी भागीदारी (PPP मोड अर्थात पब्लिक-प्रायवेट पार्टनरशिप) के माध्यम से लोक सेवा केन्द्रों की स्थापना की गई। इन केन्द्रों का मुख्य कार्य अधिनियम में अधिसूचित सेवाएँ प्रदान करने के आवेदन प्राप्त करना व पदाभिहित अधिकारी तक पहुँचाकर उनके द्वारा लिये गये निर्णय आदि की जानकारी आवेदक को उपलब्ध कराना है।

साहित्य समीक्षा :

सतीश चन्द्र ने पुस्तक "Changing Nature of Public Service Delivery In India: An Analysis' में नव-उदारवादी समाज में लोक सेवा प्रदाय व्यवस्था की परिवर्तित प्रक्रिया को दर्शाया है कि आज के तकनीकी युग में गुणवत्ता उन्मुखी कौशल की आवश्यकता है।

चन्द्र प्रकाश कृत, "Ethics in Governance: Swami Vivekanand's Perspective' में लेखक के अनुसार 'सुशासन' विशेषकर से विकासशील देशों के लिए इक्कीसवीं सदीं में अत्यधिक लोकप्रिय और आवश्यक जान पड़ा। विश्व के अनेक संस्थाओं ने इसे परिभाषित कर इसके आवश्यक तत्व बताये हैं- पारदर्शिता, कुशलता, संवेदनशीलता, उत्तरदायिता, कानून का शासन, समता, सहभागिता, सर्वसम्मति उन्मुख। शासन में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता व उसके महत्व की चर्चा भारत के प्राचीन ग्रंथों में वर्णित की गयी है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में 'सुखे प्रजा, सुखम राजा' का वर्णन है।

एन. भास्कर राव द्वारा लिखित पुस्तक 'सुशासन : भ्रष्टाचार मुक्त लोक सेवाओं का प्रदाता' में जनता को प्राप्त होने वाली लोक सेवाओं के वितरण में व्याप्त भ्रष्टाचार को 'सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज' के आंकड़ों द्वारा स्पष्ट किया है, कि भ्रष्टाचार ने किस तरह शासकीय प्रक्रियाओं में गहरी जड़ें जमा रखी हैं। साथ ही भ्रष्टाचार मुक्त लोक सेवा प्रदान की व्यवस्था पर भी प्रकाश डाला है।

प्रदीप सक्सेना एवं पूनम तिवारी, "लोकसेवाओं में नैतिकता : भारत के सन्दर्भ में एक विश्लेषण" लेख में नौकरशाही के नकारात्मक पहलू पर चर्चा करते हुए इसे मुगल एवं ब्रिटिश परम्परा से ग्रस्त बताया है। भारतीय नौकरशाही देश के वर्तमान परिस्थिति के अनुकूल नहीं रह गई है।

एम. अली हुसैन, द्वारा लिखित पुस्तक 'Good Governance Through E- Governance: Reflection from Andhra Pradesh and Kerala' में लेखक ने आन्ध्रप्रदेश और केरल राज्य के लगभग 25 ई-सेवाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया है, जिनमें प्रमुखतः 'ई-सेवा' (आन्ध्रप्रदेश) और 'FRIENDS' (केरल) की सेवाओं का अनुभवात्मक अध्ययन किया है। ई-गवर्नेन्स के माध्यम से किस तरह नागरिकों को सेवा पाना सुगम हुआ है और सुशासन की प्राप्ति में वर्तमान में किन-किन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम, 2010 के क्रियान्वयन का अध्ययन करना।
2. अधिनियम के क्रियान्वयन में प्रशासकीय-प्रबंधन के समक्ष आने वाली चुनौतियों का अध्ययन करना।
3. अधिनियम के क्रियान्वयन स्वरूप लाभान्वित और लाभ से वंचित आवेदकों की प्रतिक्रिया का विश्लेषण करना।

शोध प्रवधि :- प्रस्तुत अध्ययन का समग्र मध्य प्रदेश का उज्जैन जिला है। अवलोकन की इकाइयाँ इस प्रकार हैं- (1) हितग्राही (2) सेवा प्रदाता 2(क) शासकीय अधिकारी 2 (ख) लोक सेवा केन्द्र के कर्मचारी।

समंक संकलन विधि : समंक का संकलन प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम से किया गया। प्राथमिक आंकड़ों का संकलन करने हेतु साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन तथा समूह चर्चा विधि का प्रयोग किया गया है। इस हेतु सर्वप्रथम संबंधित शोध अध्ययनों एवं अन्य विषय सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात उपयोगी तथ्यों को एकत्रित कर अध्ययन के उद्देश्यों के आधार पर तीन प्रकार की साक्षात्कार अनुसूचियाँ निर्मित की गई। इसमें पहली साक्षात्कार अनुसूची में चयनित 160 हितग्राहियों का साक्षात्कार लिया गया व द्वितीय अनुसूची में चयनित आवेदनों के 16 पदाभिहित व प्रथम अपीलीय अधिकारियों का साक्षात्कार लिया गया हैं और तृतीय साक्षात्कार अनुसूची में लोक सेवा केन्द्रों के 16 कर्मचारियों से क्रियान्वयन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त की गई है। इस प्रकार विषय से संबंधित 192 चयनित उत्तरदाताओं का साक्षात्कार लेकर वस्तुस्थिति जानने का प्रयास किया गया है। अधिनियम को लागू हुए एक दशक होने जा रहा है, इस एक दशक में अधिनियम क्रियान्वयन की क्या प्रगति है। यह जानने हेतु वर्ष 2019 व 2020 तक के उपलब्ध

समंक का संकलन किया गया है।

प्रदेश के सभी जिलों की भांति उज्जैन जिले में भी यह अधिनियम प्रभावी हुआ। अधिनियम के कुशल क्रियान्वयन हेतु लोक सेवा प्रबंधन विभाग द्वारा प्रत्येक जिले के विकासखण्ड/तहसील स्तर पर एवं शहरी क्षेत्र में लोक सेवा केन्द्र की स्थापना का निर्णय लिया गया। जिले में आठ लोक सेवा केन्द्रों की स्थापना 25 सितम्बर 2012 को की गई। यह आठ लोक सेवा केन्द्र निम्नवत् है (1) नगर निगम उज्जैन (2) तराना (3) महिदपुर (4) जनपद उज्जैन (5) घटिया (6) नागदा (7) खाचरौद (8) बड़नगर।

वर्तमान में प्रशासनिक व्यवस्था भ्रष्टाचार, लालफीताशाही व नौकरशाही जैसी समस्याओं से ग्रसित है। राष्ट्रीय विकास हेतु इनका उन्मूलन बहुत बड़ी चुनौती है। जनता की इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए अधिनियम को लागू किया गया है। यह अधिनियम नागरिकों को निश्चित समय-सीमा में सेवा प्रदान करने की गारंटी देता है। ऐसे में इस अधिनियम के अन्तर्गत अधिसूचित सेवाओं को प्राप्त करने हेतु राज्य सरकार द्वारा निर्धारित व्यय, निर्धारित समय-सीमा व निर्धारित प्रक्रिया के अनुरूप क्या आवेदक सेवाएँ प्राप्त कर पा रहे हैं, और इस प्रकार का अधिनियम सुशासन की स्थापना में कहाँ तक उपयोगी सिद्ध हो रहा है। अधिनियम के क्रियान्वयन में कौन - कौन सी चुनौतियों आ रही हैं, प्रस्तुत अध्ययन में यह जानने का प्रयास किया गया है।

शोध का महत्व -

1. सुशासन की प्राप्ति में अधिनियम भूमिका की जानकारी हो सकेगी।
2. त्वरित सेवा प्रदाय व्यवस्था की व्यावहारिक स्थिति ज्ञात हो सकेगी।
3. प्रशासन की कार्यवाही में ई-गवर्नेन्स से आये परिवर्तनों को जाना जा सकेगा।
4. मध्यप्रदेश में सेवा प्रदाय गारंटी अधिनियम के क्रियान्वयन की वस्तुस्थिति को जाना जा सकेगा।

अधिनियम के प्रति लोगों में जागरूकता की स्थिति

किसी भी नागरिकोन्मुखी कार्यक्रम व अधिनियम की सफलता उस अधिनियम में नागरिकों की सहभागिता पर निर्भर करती है। अधिनियम को लागू करने के साथ ही अधिनियम के प्रति लोगों को जागरूक बनाने के प्रावधानों का उल्लेख अधिनियम क्रियान्वयन हेतु निर्मित नियम 6 में है। इसमें 'नोटिस बोर्ड पर जानकारी का प्रर्दशित किया जाना' के शीर्षक से पदाभिहित अधिकारी को निर्देशित किया गया है कि आम जन की सुविधा के लिए सेवाओं से संबंधित सुसंगत जानकारी शासकीय कार्यालय के सहजदृश्य स्थान पर लगाए गए नोटिस बोर्ड पर प्रर्दशित करवाएगा। इस नोटिस बोर्ड पर अधिसूचित सेवाओं को प्राप्त करने के लिए दिए जाने वाले आवेदन के साथ सम्मिलित होने वाले आवश्यक दस्तावेज प्रदर्शित किए जाएंगे। इसके अतिरिक्त लोक सेवा केन्द्रों में निश्चित प्रारूप में विभागों के अन्तर्गत अधिनियम में अधिसूचित सेवाओं के होर्डिंग्स आवश्यक रूप से प्रर्दशित किये जाएंगे, जो नागरिकों के लिए सहज दृश्य व पठनीय हों।

अधिनियम के अत्यधिक जनप्रसार हेतु यह अपेक्षित है कि राज्य के जनप्रतिनिधि अपने-अपने क्षेत्र में नागरिकों को इस अधिनियम से संबंधित जानकारी उपलब्ध कराकर अधिनियम के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ाये। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के युग में यह कार्य और अधिक सहज हो जाता है जब ऐसे कार्यों में मीडिया की भागीदारी हो। समस्त प्रकार के संचार माध्यमों के साथ मुख्यतः डिजिटल मीडिया और प्रिन्ट मीडिया से अपेक्षा है कि वह स्थानीय नागरिकों को अधिनियम के प्रति व समय-समय पर इसमें सम्मिलित होने वाले प्रावधानों के प्रति जागरूक करे।

अधिनियम को सम्पूर्ण प्रदेश में लागू हुए एक दशक होने वाला है और ऐसे में अधिनियम के प्रति हितग्राहियों में जागरूकता का क्या स्तर है, उन्हें अधिनियम व अधिनियम के प्रावधानों की कितनी जानकारी है, यह जानने का प्रयास किया गया है।

सारणी 1

अधिनियम की सम्पूर्ण जानकारी

	हाँ	नहीं	आंशिक	योग
आवृत्ति	75	52	33	160
प्रतिशत	46.9	32.5	20.6	100

उज्जैन जिले में अधिनियम के प्रति नागरिकों में जागरूकता के स्तर को जानने का प्रयास किया गया। चयनित हितग्राहियों में से लगभग 50.0 प्रतिशत को अधिनियम की जानकारी है। अधिनियम के प्रचार-प्रसार की कमी के कारण ऐसे हितग्राही जिन्हें अधिनियम की जानकारी नहीं है अथवा आंशिक जानकारी ही है उनका सम्मिलित

प्रतिशत 53 प्रतिशत है। अतः अधिकांश हितग्राहियों को अधिनियम व उसके प्रावधानों की जानकारी नहीं है।

सारणी 2

आवेदन, संलग्न होने वाले प्रमाणपत्रों और लोक सेवा केन्द्र की जानकारी

विकल्प	आवेदन		संलग्न होने वाले प्रमाणपत्रों		लोक सेवा केन्द्र	
	आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत
सामाचार पत्र या अन्य प्रकाशनों से	12	7.5	1	0.6	8	5.0
सरकारी अधिकारी या विभागों से	35	21.9	28	17.5	38	23.8
एल.एस.के. नोटिस बोर्ड से	5	3.1	60	37.5	6	3.8
परिचित व संबंधियों से	57	35.6	14	8.8	56	35.0
ग्राम सभा व जनप्रतिनिधियों से	47	29.4	52	32.5	49	30.6
रेडियो व टेलीवीजन से	1	0.6	0	0	0	0
अन्य	3	1.9	5	3.1	3	1.9
योग	160	100	160	100	160	100

नवीन सेवा प्रदाय व्यवस्था के अन्तर्गत आवेदकों को आवेदन, संलग्न होने वाले प्रमाण पत्रों और लोक सेवा केन्द्रों की जानकारी अलग-अलग माध्यमों से प्राप्त हुई। आवेदन व लोक सेवा केन्द्रों की जानकारी प्राप्त करने में सर्वाधिक हितग्राहियों का माध्यम एक समान रहा। दोनों ही माध्यमों के सम्मिलित 65 प्रतिशत हितग्राहियों ने परिचित व सम्बन्धियों और ग्राम सभा व जनप्रतिनिधियों से जानकारी प्राप्त की। आवेदन प्रपत्र में संलग्न होने वाले प्रमाणपत्रों की जानकारी प्राप्त करने के माध्यम में प्रथम लोक सेवा केन्द्र, द्वितीय ग्राम सभा व जनप्रतिनिधियों से सम्मिलित 70 प्रतिशत हितग्राहियों ने जानकारी प्राप्त की। तीनों विषयों की जानकारी प्राप्त करने में रेडियो व टेलीवीजन का योगदान आवेदन में सबसे कम एवं प्रमाणपत्रों और लोक सेवा केन्द्रों की जानकारी प्राप्त करने में शून्य था।

सारणी 3

अपीलीय अधिकारी एवं क्षतिपूर्ति की जानकारी

प्रश्न		हाँ	नहीं	योग
प्रथम व द्वितीय अपीलीय अधिकार संबंधी जानकारी	आवृति	74	86	160
	प्रतिशत	46.2	53.8	100
समय-सीमा पर सेवा प्राप्त न होने पर क्षतिपूर्ति के प्रावधान की जानकारी	आवृति	29	131	160
	प्रतिशत	18.1	81.9	100

अधिनियम के अन्तर्गत अपीलीय एवं क्षतिपूर्ति के प्रावधान की जानकारी 50 प्रतिशत से कम हितग्राहियों को है। अधिकारियों द्वारा निश्चित समय-सीमा में सेवा प्रदान न करने पर आवेदक की अपील उपरान्त यह प्रमाणित होने पर कि पदाभिहित/प्रथम अपीलीय अधिकारी द्वारा बिना वैध कारण के आवेदन निरस्त किये जाने व अकारण सेवा प्रदान करने में विलम्ब करने पर संबंधित अधिकारी को शास्ति का भुगतान करना होता है। द्वितीय अपीलीय प्राधिकारी के निर्णय के अनुसार शास्ति भुगतान की यह राशि आवेदक को क्षतिपूर्ति के रूप में प्राप्त होती है। समय पर सेवा प्राप्त करने के अधिकार को सशक्त बनाने वाले हथियार के रूप में अधिनियम के इस प्रावधान की जानकारी बहुत ही कम हितग्राही उत्तरदाताओं को थी, जो एक चिंतनीय विषय है।

हितग्राहियों में अधिनियम के प्रावधानों की जानकारी के अभाव के परिणाम स्वरूप सम्पूर्ण जिले में अंकित आंकड़ों के अनुसार एक भी द्वितीय अपील आवेदन नहीं किया गया है और ना ही किसी हितग्राही को क्षतिपूर्ति प्रदान की गई है किन्तु जिले के पदाभिहित अधिकारियों ने चर्चा के दौरान यह बताया कि उनके द्वारा क्षतिपूर्ति प्रदान की गई है। अधिनियम की धारा 7(1) व (2) में द्वितीय अपीलीय अधिकारी को आर्थिक दण्ड अधिरोपित करने का अधिकार है। सम्पूर्ण जिले में द्वितीय अपील आवेदन ही नहीं किया गया तो क्षतिपूर्ति का भुगतान किये

जाने की बात तर्कसंगत प्रतीत नहीं होती है।

अधिनियम क्रियान्वयन के 16 माह पश्चात योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग मध्यप्रदेश शासन द्वारा अधिनियम के प्रभाव का आकंलन दो चरणों में प्रदेश के भिन्न-भिन्न जिलों में सम्पन्न कराया गया है। प्रथम चरण में 1600 एवं द्वितीय चरण में 960 आम नागरिकों पर सर्वेक्षण किया गया। प्रथम चरण के अनुसार सर्वेक्षित आवेदकों में से लगभग 65 प्रतिशत व्यक्तियों को अधिनियम के अन्तर्गत प्रावधानों की जानकारी नहीं थी। 10 प्रतिशत को अपील व 10 प्रतिशत को समय-सीमा पर सेवा न देने पर दण्ड के प्रावधान की जानकारी थी। मात्र 3 प्रतिशत को क्षतिपूर्ति के प्रावधान की जानकारी थी। इसी प्रकार दूसरे चरण के सर्वेक्षण में 66 प्रतिशत को अधिनियम के अन्तर्गत प्रावधानों की जानकारी नहीं थी।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक हितग्राही उत्तरदाताओं को अधिनियम की केवल सतही जानकारी है, किन्तु अधिनियम के अपीलीय अधिकार, अधिकारियों द्वारा शास्ति के भुगतान व क्षतिपूर्ति के प्रावधान की जानकारी कम हितग्राही उत्तरदाताओं को ही है।

सुशासन की स्थापना हेतु बेहतर व सशक्त नींव बनाने की दिशा में कार्य करते हुए मध्यप्रदेश शासन द्वारा लागू अधिनियम में ऐसे प्रावधान सम्मिलित किये गये हैं जिससे भ्रष्टाचार का उन्मूलन सम्भव होने का अनुमान है। किसी भी आवेदक द्वारा अधिसूचित सेवाओं में से कोई भी सेवा प्राप्त करने हेतु लोक सेवा केन्द्र में जमा किये जाने वाले आवेदन प्रपत्र व दस्तावेज के साथ मात्र 30 रूपये का शुल्क चुकाना होता है। इसके अतिरिक्त कुछ सेवाओं हेतु संबंघित विभाग द्वारा आवश्यकता के आधार पर निर्धारित दस्तावेज के रूप में टिकट शुल्क, नोटरी शुल्क व रजिस्ट्री के दस्तावेज की छायाप्रति प्राप्त करने का शुल्क आवेदक को चुकाना होता है। इस नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत आवेदक को यह ज्ञात है कि सेवा प्राप्त करने हेतु उसे कितना शुल्क चुकाना है। सेवा प्रदाय हेतु समय-सीमा के निर्धारण से आवेदक को ज्ञात है कि उसके आवेदन पर निश्चित समय-सीमा में कार्यवाही होगी, उसे कार्यालय के चक्कर नहीं लगाने पड़ेगें और निर्धारित शुल्क से अधिक राशि भी नहीं देनी पड़ेगी।

वर्तमान सेवा प्रदाय की व्यवस्था के अन्तर्गत सेवा प्राप्त करने हेतु अधिकारियों के समक्ष बार-बार अनुरोध करने की जगह सेवा प्राप्त करना नागरिकों का अधिकार है, और अधिकारी का कर्तव्य है कि वह पात्र नागरिक को निर्धारित समय-सीमा के अन्तर्गत सेवा प्रदान करें। ऐसा न करने पर संबंधित अधिकारी को शास्ति के भुगतान के साथ-साथ अनुशासनात्मक कार्यवाही का सामना करना पड़ सकता है। इस तरह अधिकारियों के समक्ष अधिनियम में ऐसे प्रावधानों को सम्मिलित कर उन्हें ईमानदार, नैतिक व जवाबदेह बनाने का प्रयास किया गया है। अधिनियम लागू होने के पश्चात इन प्रावधानों पर व्यावहारिक रूप में कितना अमल हुआ यह जानने का प्रयास किया गया है। इसके लिए सभी प्रकार के उत्तरदाताओं से इस मुद्दे से संबंधित प्रश्न किये गये।

हितग्राहियों के अनुसार :-

सारणी 4

आवेदन शुल्क 30 रूपये से अधिक लिया गया

	हाँ	नहीं	योग
आवृत्ति	25	135	160
प्रतिशत में	15.6	84.4	100

सारणी 4 में यह स्पष्ट है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं से आवेदन शुल्क 30 रूपये से अधिक नहीं लिया गया किन्तु जिन उत्तरदाताओं ने निर्धारित शुल्क से अधिक चुकाया, उनके द्वारा अधिक शुल्क चुकाने के निम्न कारण बताए गए। (1) आवेदन पत्र किसी और से भराया जाना, (2) आवेदन पत्र स्वयं न जमाकर वकील या अन्य प्रकार के मध्यस्थ से जमा करवाना। इन मध्यस्थों के गलत प्रलोभन जैसे-शीघ्र सेवा प्राप्त कराने, सम्पर्क के आधार पर प्रमाणपत्र तैयार करवाने आदि में आना है।

अनौपचारिक चर्चा के दौरान अनेक हितग्राहियों ने यह बताया कि LSK के कर्मचारियों व प्रशासकीय अधिकारियों को निर्धारित शुल्क से अधिक नहीं देना पड़ा है।

सारणी 5
अधिनियम से भ्रष्टाचार में कमी

		हाँ	नही	कोई राय नहीं	योग
हितग्राहियों के अनुसार	आवृति	114	35	11	160
	प्रतिशत	71.2	21.9	6.9	100
शासकीय अधिकारियों के अनुसार	आवृति	15	1	0	16
	प्रतिशत में	93.8	6.2	0	100
LSK के कर्मचारियों के अनुसार	आवृति	16	0	0	16
	प्रतिशत में	100	0	0	100

अधिनियम लागू होने के पश्चात हितग्राही उत्तरदाताओं में सर्वाधिक ने बताया कि सेवा प्रदाय की नवीन व्यवस्था लागू होने से भ्रष्टाचार में कमी आई हैं। अब उन्हें सेवा प्राप्त करने हेतु किसी भी अधिकारी की इच्छानुसार बतायी गई राशि का भुगतान नहीं करना पड़ता है। कुछ हितग्राही इसका अपवाद भी हैं। सामान्यतः हितग्राहियों की राय के अनुसार यह व्यवस्था सभी नागरिकों को समान रूप से नियमों के आधार पर सेवा प्रदान करने की गारंटी देती हैं, अर्थात निर्धारित समय-सीमा, निर्धारित शुल्क, निश्चित स्थान, निर्धारित प्रक्रिया के अन्तर्गत यह अमीर, गरीब सभी तरह के लोगों को समान रूप से सेवा प्राप्त करना सुनिश्चित करती है। वास्तव में यह व्यवस्था भारतीय संविधान के प्रावधान सभी भारतीयों को किसी भी प्रकार के भेदभाव रहित, समानता के मौलिक अधिकार की पूर्ति करता है। यह अधिनियम राज्य के नागरिकों को सेवा प्राप्त करने का समान अवसर प्रदान करता हैं। इस संबंध में अधिकारी उत्तरदाताओं की राय जानने का प्रयास किया गया जिसके फलस्वरूप सर्वाधिक अधिकारियों ने बताया कि सेवा प्रदाय की नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत भ्रष्टाचार में कमी आई है।

LSK के कर्मचारी उत्तरदाताओं में से शत-प्रतिशत ने स्वीकार किया है कि सेवा प्रदाय की वर्तमान व्यवस्था में भ्रष्टचार कम हुआ है। इनके अनुसार अधिकारियों का प्रत्यक्ष हितग्राहियों से सामना न होने से सेवा प्रदान करने में किसी अतिरिक्त राशि की प्रदाय होने की सम्भावना न्यूनतम हो गई हैं।

सारणी 6
हितग्राहियों के अनुसार

नवीन व्यवस्था पुरानी व्यवस्था की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक				
	हाँ	नहीं	कोई राय नहीं	योग
आवृत्ति	130	22	8	160
प्रतिशत में	81.2	13.8	5.0	100
नवीन व्यवस्था में पुरानी व्यवस्था की अपेक्षा समय व खर्च में कमी आई है				
	हाँ		नहीं	योग
आवृत्ति	125		5	130
प्रतिशत में	78.1		3.1	81.2

सेवा की पुरातन व्यवस्था व वर्तमान व्यवस्था में से सर्वाधिक हितग्राही उत्तरदाताओं ने वर्तमान व्यवस्था को अधिक सुविधाजनक बताया है। सारणी 6 में स्पष्ट है कि नवीन सेवा प्रदाय व्यवस्था को सुविधाजनक बताने वाले हितग्राही उत्तरदाताओं में से 75 प्रतिशत से अधिक हितग्राहियों को वर्तमान सेवा प्रदाय व्यवस्था में सेवा प्राप्त करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया में उन्हें कम खर्च करना पड़ा है व साथ ही उनके समय की बचत भी हुई है। उत्तरदाताओं ने अनौपचारिक चर्चा में यह भी बताया कि पूर्व सेवा प्रदाय की व्यवस्था में सेवा प्राप्त करने की प्रक्रिया में सुनिश्चितता का अभाव था जिसके कारण उन्हें सरकारी कार्यालयों में कई बार जाना पड़ता था। अधिकारियों से शीघ्र सेवा प्रदान करने की याचना करने एवं उनके द्वारा किये गये रूखें व्यवहार का सामना करना पड़ता था किन्तु वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत आवेदन स्थान, आवेदन शुल्क, आवेदन की सम्पूर्ण प्रक्रिया आदि

सुनिश्चित होने से सेवा प्राप्त करना सुगम हुआ है। साथ ही सेवा प्राप्त करने हेतु अतिरिक्त राशि देने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती हैं, किन्तु कुछ हितग्राही उत्तरदाताओं की राय में वर्तमान सेवा प्रदाय व्यवस्था को उन नागरिकों के अनुकूल नहीं माना है जो अधिक राशि व्यय कर तत्काल सेवा प्राप्त करने में सक्षम है।

सारणी 7

शासकीय अधिकारियों के अनुसार

प्रश्न		हाँ	नहीं	योग
नवीन व्यवस्था से शासकीय अधिकारियों के कार्यभार में कमी आई है	आवृति	13	3	16
	प्रतिशत	81.2	18.8	100
अधिनियम के फलस्वरूप शासकीय व्यवस्था अधिक कार्यकुशल हुई है	आवृति	15	1	16
	प्रतिशत	93.8	6.2	100
सेवा प्रदान किये जाने की समय-सीमा तय किये जाने से सेवा प्रदान करने में गतिशीलता आई है	आवृति	13	3	16
	प्रतिशत	81.2	18.8	100

सेवा प्रदाय की नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत सेवा प्रदान करने वाले सर्वाधिक शासकीय अधिकारी उत्तरदाताओं ने अपने कार्यानुभव के आधार पर बताया है कि वर्तमान सेवा प्रदाय व्यवस्था के अन्तर्गत उनके कार्यभार में कमी आई है। अब वह अधिक व्यवस्थित रूप से नागरिकों को सेवा प्रदान कर पाते हैं।

सारणी 7 में स्पष्ट है कि सर्वाधिक अधिकारी उत्तरदाताओं ने यह भी बताया है कि अधिनियम क्रियान्वयन उपरान्त सेवा प्रदाय की ऑनलाइन प्रक्रिया से शासकीय व्यवस्था अधिक कार्यकुशल हुई है। अधिकारी उत्तरदाता यह भी मानते हैं कि अधिनियम के प्रावधान के अन्तर्गत सेवा प्रदाय के समय-सीमा के निर्धारण किये जाने से सेवा प्रदाय कार्य में गतिशीलता आई है। अब वह सेवा प्राप्ति के आवेदनों का शीघ्रता से ऑनलाइन निराकरण करने में सक्षम हुए हैं। आवेदन संबंधी अभिलेखों की साफ्टकॉपी व हार्डकॉपी दोनों तरह से दस्तावेजों की जाँच कर सेवा प्रदाय संबंधी निर्णय निश्चित समय-सीमा के अन्तर्गत लेने में सक्षम हुये हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण में अधिनियम की प्रभावशीलता के सन्दर्भ में हितग्राही उत्तरदाताओं में सर्वाधिक ने स्वीकार किया है कि सेवा प्रदान की वर्तमान व्यवस्था अधिक सुविधाजनक है व पुरानी व्यवस्था की अपेक्षा सेवा प्राप्त करने में समय व खर्च में कमी आई है। साथ ही अधिकारी उत्तरदाताओं में अधिकांश के अनुसार अधिनियम क्रियान्वयन के पश्चात उनका कार्यभार कम हुआ है जिसके परिणाम स्वरूप उनके कार्य में गतिशीलता आई है व शासकीय व्यवस्था अधिक कार्यकुशल हुई है। LSK के कर्मचारी उत्तरदाताओं में सर्वाधिक के अनुसार वर्तमान की सेवा प्रदाय व्यवस्था में नागरिकों को त्वरित सेवाएँ प्राप्त हो रही है।

निष्कर्ष : प्रस्तुत अध्ययन में पाया गया कि सर्वाधिक हितग्राही उत्तरदाताओं को अधिनियम की जानकारी है। यह जानकारी उन्हें परिचित व सम्बन्धियों से प्राप्त हुई जबकि अधिनियम के अन्तर्गत आवेदन प्रक्रिया व उसमें सम्मिलित होने वाले अभिलेखों की जानकारी LSK व LSK के नोटिसबोर्ड से प्राप्त हुई है। अधिनियम के अपील, शास्ति की वसूली तथा क्षतिपूर्ति जैसे प्रावधानों की जानकारी कम हितग्राहियों को है।

सेवा प्रदाय की नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत सर्वाधिक हितग्राही उत्तरदाताओं ने सेवा प्रदाय हेतु निर्धारित शुल्क से अधिक नहीं चुकाया जिसके आधार पर हितग्राहियों का मत है कि वर्तमान सेवा प्रदाय व्यवस्था से भ्रष्टाचार में कमी हुई है। इसके साथ ही अधिकांश अधिकारी उत्तरदाताओं की राय में भी अधिनियम क्रियान्वयन के पश्चात सेवा प्रदाय व्यवस्था में भ्रष्टाचार कम हुआ है। शत-प्रतिशत LSK के कर्मचारी उत्तरदाताओं के अनुसार भ्रष्टाचार कम होने के साथ ही अधिकारियों में सकारात्मक परिवर्तन हुआ है।

सर्वाधिक हितग्राहियों के अनुसार अधिनियम क्रियान्वयन के पश्चात स्थापित सेवा प्रदाय व्यवस्था के अन्तर्गत सेवा प्राप्त करने के दौरान समय व खर्च में भी कमी आई है अतः व्यवस्था को सुविधाजनक बताया है। अधिकारी उत्तरदाताओं में अधिकांश के अनुसार यह व्यवस्था नागरिकोन्मुखी ही नहीं वरन् शासकीय व्यवस्था को भी प्रभावकारी बनाती है। अधिकारियों के अनुसार अधिनियम के प्रभावी होने के पश्चात उनके कार्यभार में कमी हुई

है व ई-शासन प्रणाली से उनकी कार्यकुशलता में भी वृद्धि हुई है। LSK के कर्मचारी उत्तरदाताओं में अधिकांश ने अधिनियम क्रियान्वयन के पश्चात नागरिकों के त्वरित सेवा प्राप्त होने के आधार पर अधिनियम को प्रभावी बताया है।

सुझाव : अधिनियम के क्रियान्वयन को अधिक प्रभावी बनाने एवं समुचित प्रशासकीय प्रबंधन करने हेतु कुछ सुझाव इस प्रकार हो सकते हैं :-

1. जिले के प्रत्येक लोक सेवा केन्द्र में एक एल.सी.डी. लगाई जाए, जिसमें अधिनियम से जुड़ी जानकारियाँ प्रर्दशित की जाए। इसके अतिरिक्त अधिनियम के प्रति लोगों में जागरूकता लाने हेतु जिले से लेकर स्थानीय स्तर तक विशेष कार्यक्रम संचालित किये जाने चाहिए।
2. मध्यस्थों द्वारा एकमुश्त आवेदनों पर रोक लगायी जानी चाहिए।
3. समस्त विभागों द्वारा प्रदान की जा रही सेवाओं के आवेदनों में सम्मिलित अभिलेखों को एकीकृत रूप में सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
4. अधिनियम में चिन्हित सेवाओं के संबंधित विभागों को लोक सेवा केन्द्रों में प्राप्त आवेदनों की हार्डकॉपी ले जाने की सुनिश्चित व्यवस्था की जानी चाहिए।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पूर्व की अपेक्षा नागरिकों को अब सेवा प्राप्त करना सुगम हुआ है। नवीन सेवा प्रदाय की प्रक्रिया में अधिकारी तुलनात्मक रूप से अब अधिक जवाबदेह हुए हैं। सर्वाधिक हितग्राही उत्तरदाताओं ने माना कि सेवा प्राप्त के आवेदनों पर अब पूर्व की अपेक्षा शीघ्र कार्यवाही की जाती है अर्थात कहा जा सकता है कि अधिनियम के अन्तर्गत आर्थिक दण्ड के प्रावधान से अधिकारी अब निश्चित समय-सीमा में सेवा प्रदान करने हेतु बाध्य हुए हैं। अध्ययन में प्राप्त आकड़ों के विश्लेषण के अनुसार अधिनियम लागू होने के पश्चात से प्रशासनिक व्यवस्था की कार्यवाहियों में हुआ परिवर्तन सुशासन की प्राप्ति की ओर सकारात्मक कदम प्रतीत होता है।

सन्दर्भ

1. कार्मिक लोक शिकायत एवं पेंशन मंत्रालय, भारत शासन, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग, बारहवां प्रतिवेदन, नागरिक-केन्द्रित प्रशासनःअभिशासन का हृदय, नई दिल्ली, 2009.
2. गजेटियर, जिला उज्जैन, 1995.
3. गुप्ता, सुनील, एवं सिंह, कमल कुमार, 'सुशासन', नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली-2012,पृ.214.
4. गुप्ता, कमलेश एवं दमेले, मंजरी, 'लोक-निजी सहभागिताः समसामयिक चुनौतियाँ व सम्भावनाएँ', लोक प्रशासन, खंड 6, अंक 1, जनवरी-जून 2014, पृ.51.
5- Jha, Satish Chandra, "Changing Nature of Public Service Delivery In India: An Analysis'BJPA, vol.xvi no.2, July-Dec.,2019, p.-150-
6. जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, जिला सांख्यिकीय कार्यालय उज्जैन, उज्जैन-2010.
7. Prakash Chanra, 'Ethics in Governance: Swami Vivekanand's Perspective', BJPA, Vol.XV No.1, Jan-June., 2018, p.62.
8. भारत की जनगणना, 2011.
9. मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी अधिनियम, 2010 'जन-प्रतिनिधियों के लिए अध्ययन-सामग्री', सुशासन एवं नीति विश्लेषण स्कूल, भोपाल, 2012.
10. मध्यप्रदेश शासन, लोक सेवा प्रबंधन विभाग, मंत्रालय, आदेश क्र. 928/2012/लो.से.प्र./61 भोपाल दिनांक 03.08.2012 राज पत्र (असाधारण) क्रम. 456 भोपाल, दिनांक 17 सितम्बर 2010.
11. मध्यप्रदेश शासन विधि एवं विधायी कार्य विभाग, मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गांरटी अधिनियम, 2010, मध्यप्रदेश राजपत्र, क्र. एफ 308-5-01-2010, भोपाल-24 सितम्बर 2011.
12. मध्य प्रदेश शासन, योजना, आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, 'लोक सेवा प्रदाय की गारंटी अधिनियम, 2010 के प्रभाव का आकलन', भोपाल-2011, पृ.-21.
13. मुंशी, सुरेन्द्र,अब्राहम, बीजू पॉल एवं चौधरी, सोमा, 'सुशासन', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2011,
14. राव, एन. भास्कर, गुड गवर्नेन्स डिलेवरिंग करप्शन-फ्री पब्लिक सर्विसेस, सेज पब्लिकेशनस, नई दिल्ली, 2013, पृ.75.
15. अटल बिहारी वाजपेयी सुशासन एवं नीति विश्लेषण संस्थान, मध्यप्रदेश शासन स्वशासी संस्था के प्रकाशन, भोपाल-2013-2016.

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023 UGC-CARE List-Social Sciences

कार्यशील महिलाओं के परिवारों में लैंगिक असमानता का बदलता स्वरूप : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

❑ धारणा शर्मा
❖ डॉ0 उमा बहुगुणा

सूचक शब्द : कार्यशील महिला, परिवार, लिंग, लैंगिक असमानता, नारीवाद।

भारतीय समाज पुरूष प्रधान समाज है इसी कारण यहाँ महिला का स्थान स्वयं ही गौण या दोयम दर्जे पर आ जाता हैं इसी स्थिति से पुरूषों एवं महिलाओं के कार्य क्षेत्र भी निर्धारित किये गये हैं। इन कार्य क्षेत्रों में पुरूष स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा तथा आर्थिक साधनों पर प्रभुत्व के अधिकारी हुए, तो स्त्री के हिस्से में गृह कार्य, घर की चारदीवारी, परतन्त्रता, अपमान, आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भरता आयी है तथा इन कार्यों को धार्मिक रूप से जोड़कर सांस्कृतिक जामा पहनाया गया जिसका परिणाम ये हुआ कि स्त्रियों की स्थिति समाज में दयनीय होती गई। इसके प्रभाव ने नारी के अस्तित्व पर सबसे बड़ा प्रहार ‘कन्या भ्रूण हत्या’ के रूप में किया। नारी की स्थिति में सुधार के लिये समाज सुधारक विद्वानों ने तथा नारीवादी विचारकों ने महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयासों पर जोरदार कार्य किया तथा लिंग के आधार पर होने वाले भेदभाव की पूर्ण निन्दा की तथा लैंगिक समानता लाने का प्रयास अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किया जिसमें सर्वप्रथम महिला शिक्षा एवं उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया जा रहा है। इन प्रयासों के फलस्वरूप लैंगिक असमानता का वर्तमान स्तर क्या है? प्रस्तुत अध्ययन में आत्मनिर्भर महिलाओं के परिवारों में लैंगिक असमानता के स्तर को जानने का प्रयास किया गया है।

भारतीय समाज विभिन्न वर्गों में विभाजित है जैसे- धर्म, वर्ग, जाति एवं लिंग आदि। धर्म, वर्ग, जाति के स्तर पर समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों की कमी नहीं है परन्तु लिंग के आधार पर विभाजन के सैद्धान्तिक कार्यो में कुछ उदासीनता रही है। लिंग सम्पूर्ण संसार को दो भागों में विभाजित करता है स्त्री व पुरूष।[1]

समाज विज्ञान विश्वकोश के अनुसार- जेंडर (लिंग) : पुरूष सम्बन्धी अथवा स्त्री सम्बन्धी विशेषताओं से सम्बद्ध वे तत्व हैं जो संस्कृति द्वारा निर्धारित होते हैं। पुरूष एवं स्त्री अथवा पुरूषत्व एवं नारीत्व से सम्बद्ध सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक पक्ष को ही लिंग की संज्ञा दी जाती है। जेंडर एक सामाजिक अवधारणा है तो सेक्स एक जैविक अवधारणा है। यहाँ यही सबसे प्रमुख बात है मानव समुदाय लिंग के आधार पर दो भागों में विभाजित है- नारी और पुरूष जबकि यौन भेदभाव जीव विज्ञान के द्वारा विभाजित किए गए हैं लैंगिक भेदभाव सांस्कृतिक आधार पर बनाये गये हैं। स्त्री न केवल जैविक अस्तित्व है बल्कि उससे अपने समाज के मानदण्डों के अनुसार कुछ कार्यों को पूरा करने की प्रत्याशा भी की जाती है। स्त्रियों की लिंग भूमिका समाज और परिवार जिसमें वे पैदा होती है उनके अनुसार निर्धारित होती है।[2]

समाज में स्त्री का स्थान उसकी प्राणीशास्त्रीय विशेषताओं से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक विशेषताओं से निर्धारित किया जाता है। स्त्री को जन्म से लेकर मृत्यु तक क्या कार्य करने हैं, कहाँ निवास करना है, इन सब की व्याख्या धर्मशास्त्रों में जमकर की गयी है। क्रांतिकारी नारीवादी सिमान डी. बावअर का कहना है कि स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि बना दी जाती है। इसका अर्थ है कि स्त्री को उसके कार्य क्षेत्र निश्चित कर स्त्री बनाया जाता है। समाज में स्त्री के अधिकार पर अंकुश लगाने का कार्य लिंग करता है सेक्स नहीं। लिंग के आधार पर स्त्री आज तक सभी यातनाओं को सहती आयी है। एक प्रश्न- तुम स्त्री हो इसीलिए तुम ये कार्य नहीं कर सकती। केवल स्त्री होने मात्र से जो अधिकार नारी से छीन लिये गये हैं वह है लैंगिक असमानता। जो पुरूषों को प्रथम स्थान पर तथा नारी को दोयम दर्जे पर रखती आयी है।[3]

❑ शोध अध्येत्री समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग, हे.नं.ब.ग. केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल (उत्तराखण्ड)
❖ एसोशिएट प्रोफेसर समाजशास्त्र एव समाजकार्य विभाग, हे.नं.ब.ग. केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य :- नारीवाद के समर्थकों का ऐसा मत जिसके अनुसार समाज के अन्तर्गत नारी का स्थान दोयम दर्जे का है क्योंकि पुरूषों ने अपनी सुख-सुविधाओं और खर्चों को ध्यान में रखकर ही सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों का निर्माण व पोषण किया है। नारियों को समाज में कैसा आचरण करना चाहिए उसका निर्धारण भी पुरूषों ने ही किया है। महिलाओं के साथ जीवन के विभिन्न आयामों में भेदभाव पुरूष-प्रधान समाज में एक स्वाभाविक घटना है। नारी सशक्तीकरण के साधन से ही लैंगिक समानता की बात संभव है।[4]

नारीवाद स्त्री और पुरूषों में समानता का सिद्धान्त है तथा समाज में लैंगिक समानता के पक्ष को रखता है तथा लैंगिक असमानता का विरोध करता है क्योंकि लैंगिक असमानता ने नारी के अस्तित्व पर प्रहार किया है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण पिछले 110 वर्षों की देश की जनसंख्या जनगणना में देखा जा सकता है।

भारत में (स्त्री-पुरूष) अनुपात

वर्ष	अनुपात	वर्ष	अनुपात
1901	972	1961	941
1911	964	1971	930
1921	955	1981	934
1931	950	1991	927
1941	945	2001	933
1951	946	2011	940

स्रोत- https://censusindia.gov.in/census.website/data/census-tables

तालिका से स्पष्ट है कि 1901 से 2011 तक भारत में महिलाओं की संख्या का अनुपात पुरूषों की अपेक्षा कम रहा है। इसके लिए प्रमुख कारण कन्या भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, पुरूष प्रधान समाज तथा अशिक्षा है जो कि लैंगिक असमानता के कारण समाज में पनपते है।[5] प्रस्तुत शोध पत्र में कार्यशील महिलाओं के परिवारों में लैंगिक असमानता के वर्तमान स्तर को जानने का प्रयास किया गया है।

साहित्य समीक्षा -

मुहम्मद नईम[6] ने 'लोक जीवन में पितृसत्तात्मकता' पर कार्य किया। इसके लिए शोधार्थी ने पुराने लोक गीतों का अध्ययन किया। शोध कार्य का उद्देश्य पुराने लोक गीतों में पितृसत्तात्मक व्यवस्था का अध्ययन करना था और ये जानने का प्रयास करना था कि पुराने लोक गीतों में पितृसत्ता किस तरह से महिलाओं को रूढ़िवादी बेड़ियों में बांधने का कार्य करती है। पुराने लोक गीतों को महिलाओं के हृदय का दर्पण कहा जाता है। अध्ययन से ज्ञात होता है कि लोक गीतों में महिलाओं ने कन्या भ्रूण हत्या, लैंगिक भेदभाव, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, उत्तराधिकार के अधिकारों से लेकर वृद्ध पीड़ा तक के भावों को प्रकट किया है। लोकगीतों में लिखा है कि कन्या नहीं होनी चाहिए, जिन घरों में पुत्र नहीं है, उन कन्याओं का विवाह कैसे होगा। दहेज के लिये धन नहीं है तो कन्या का विवाह कैसे होगा। ऐसी विचारधाराओं ने कन्या जन्म पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिये। इसके लिये नईम सुझाव के रूप में लिखते हैं कि प्राचीन काल के लोक जीवन में जो लोकगीत व कहावते हैं उनमें परिवर्तन की आवश्यकता है तथा आज के समय में नये लोकगीत का निर्माण हो जिसमें महिलाओं की स्वतंत्रता और सशक्तीकरण की चर्चा हो।

अमर सिंह[7] ने उत्तर प्रदेश के जनपद चन्दौली में 'लैंगिक असमानता के प्रति महिलाओं के बदलते दृष्टिकोण में शिक्षा की भूमिका' का अध्ययन किया, जिसका उद्देश्य लैंगिक असमानता के लिए उत्तरदायी कारकों को स्पष्ट करना तथा आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्र में लैंगिक असमानता के प्रति महिलाओं के बदलते दृष्टिकोण में शिक्षा की भूमिका का अध्ययन करना था। इसके लिए चन्दौली जिले के शहाबगंज विकासखण्ड का चुनाव किया गया। 300 महिलाओं के अध्ययन में पाया गया कि समाज में शिक्षित वर्ग की महिलाओं के विचारों में लिंगभेद को लेकर कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। लैंगिक असमानता के कारणों का आरम्भ परिवारों से होता है। अध्ययन के अनुसार लिंगभेद पर आधारित समाजीकरण परिवार से शुरू होकर बाहरी कार्यक्षेत्रों को भी प्रभावित करता है। सुझाव के रूप में शोधार्थी लिखते हैं कि लैंगिक असमानता को कम करने के लिए महिलाओं को और अधिक जागरूक करना होगा।

रूचि मिश्रा[8] ने मध्य प्रदेश के रीवा जिले में 'महिला सशक्तीकरण में समाज की भूमिका' का अध्ययन किया। जिसका उद्देश्य सशक्त महिलाओं के जीवन में पारिवारिक, शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक क्षेत्रों में हो रहे परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त करना था। इसके लिए शोधार्थी की उपकल्पना थी कि महिला सशक्तीकरण से पारिवारिक सदस्यों के दृष्टिकोण में

परिवर्तन हो रहा है। महिला सशक्तीकरण से बालक-बालिकाओं के प्रति सोच में बदलाव आया है। अध्ययन में पाया गया कि महिलाओं के आर्थिक रूप से सशक्त होने से वे परिवार के अन्य सदस्यों का दृष्टिकोण अपने प्रति परिवर्तित करने में सक्षम हुई हैं तथा लिंगभेद सम्बन्धी पूर्वाग्रहों को असत्य सिद्ध करके, भविष्य के लिए नवयुग का निर्माण कर रही है।

साधना मौर्या[9] ने जनपद जौनपुर के करजांकला में 'भारतीय समाज में कन्या भ्रूण हत्या की समस्या' पर शोध कार्य किया। जिसका उद्देश्य कन्या भ्रूण हत्या की स्थिति व कारणों का अध्ययन करना था। इसके लिए उपकल्पना बनाई गयी है कि अशिक्षा, गरीबी व दहेज प्रथा के कारण कन्या भ्रूण हत्या होती है। 300 परिवारों का अध्ययन करके पाया गया कि कन्या भ्रूण हत्या जैसे अपराध परिवार से ही आरम्भ होते हैं तथा माता-पिता इसमें प्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित होते हैं। पुत्र की महत्ता जैसे रूढ़िवादी विचारों के कारण माता-पिता द्वारा ऐसे अपराध किये जाते हैं। सुझाव के रूप में शोधार्थी लिखते हैं कि शिक्षा और महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता ही एक ऐसा उपाय है जो कि नारी को इतना सक्षम बना सकता है कि वह लिंगभेद सम्बन्धी विचारों का विरोध कर सके।

निशा बरैया[10] ने मध्य प्रदेश के ग्वालियर जिलें में लिंगभेद की समस्या पर शोध कार्य किया जिसका उद्देश्य लिंगभेद सम्बन्धी व्यवहारिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करना तथा लिंगभेद हेतु उत्तरदायी कारणों को ज्ञात करना था जिसके लिए उपकल्पना तैयार की गयी कि लिंगभेद स्वयं महिलाओं द्वारा ही अधिक किया जाता है। आय के स्तर एवं लिंग भेदभाव में कोई सम्बन्ध नहीं होता है किन्तु संयुक्त परिवारों में लिंगभेद अधिक देखने को मिलता है। अध्ययन में पाया गया कि परिवार में अधिकांश छात्राओं ने लिंगभेद को स्वीकार किया है। उन्हें परिवार में पुत्र के समान अधिकार प्राप्त नहीं है तथा लिंगभेद सभी स्तर के परिवारों में समान पाया गया है। इसके लिए शोधार्थी शिक्षा और जागरूकता को उपाय के रूप में प्रस्तुत करती है।

हेमा जोशी[11] ने उत्तराखण्ड के अल्मोड़ा जिले में सहकारी आन्दोलन एवं महिला सशक्तीकरण पर शोध कार्य किया और पाया कि सशक्त महिलाओं को परिवार में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है और वे अपने आपको परिवार का महत्वपूर्ण हिस्सा मानती हैं तथा आर्थिक रूप से सशक्त होने से अपने आप को स्वतन्त्र महसूस करती हैं।

प्रीति आमेटा[12] ने दक्षिणी राजस्थान के उदयपुर शहर में 'कामकाजी महिलाओं की सामाजिक प्रस्थिति में परिवर्तन' का अध्ययन किया था। अध्ययन का उद्देश्य कामकाजी महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन को जानना था। अध्ययन से ज्ञात हुआ कि महिलाओं के आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने से उनकी सामाजिक एवं पारिवारिक परिस्थिति में परिवर्तन हुआ है। वह अपने आपको स्वतन्त्र अनुभव करती हैं तथा अपने निर्णय स्वयं लेने में सक्षम हुई हैं।

कोठारी एवं चौहान[13] ने 'शिक्षित आदिवासी महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति' का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया कि शिक्षित महिलाओं को दूरस्थ ग्रामीण क्षेत्रों में भी रोजगार के अवसर प्राप्त हो रहे हैं और वे उच्च शिक्षा प्राप्त कर विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं तथा स्वयं आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होकर समाज व परिवार में अपनी विशेष पहचान बना रही हैं।

निर्दोषिका बिष्ट[14] ने 'महिला सशक्तीकरण तथा महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता', का अध्ययन उत्तराखण्ड राज्य के बागेश्वर, पिथौरागढ़ एवं नैनीताल के ग्रामीण क्षेत्रों पर किया और अध्ययन में पाया कि सरकार द्वारा महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त करने के लिए ज़ोरदार प्रयास किये जा रहे हैं। महिलाओं के शिक्षित होने से वह प्रत्येक कार्यक्षेत्र में अपना परचम लहरा रही हैं। जहाँ कुछ वर्षों पहले तक महिलाओं का कार्यशील होना गलत समझा जाता था वहीं वर्तमान समय के बदलते परिवेश में महिलायें अपनी शक्ति एवं कार्यशीलता का प्रदर्शन परिवार से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक सभी क्षेत्रों में कर रही हैं।

राजश्री मठपाल[15] ने राजस्थान के जयपुर शहर में 'भूमिका समायोजन के सन्दर्भ में कार्यशील महिलाओं की प्रस्थिति' का अध्ययन किया था जिसका उद्देश्य भूमिका समायोजन में कार्यशील महिला की भूमिका एवं पारिवारिक वातावरण का अध्ययन करना था। अध्ययन में स्नोबॉल विधि द्वारा जयपुर शहर की 280 महिला उत्तरदाताओं का चयन किया गया जिसमें 119 विवाहित और 161 अविवाहित महिलाएं थी। अध्ययन में पाया गया कि कार्यशील महिलाओं की पारिवारिक स्थिति में परिवर्तन

हो रहे हैं। परिवार में उनकी स्थिति सुदृढ़ हो रही है। घर के कार्यों से लेकर आर्थिक महत्वपूर्ण विषयों तक उनकी सलाह ली जाती है तथा परिवार के सदस्यों द्वारा समाज में प्रतिष्ठा दी जाती है जिससे पता चलता है कि कार्यशील महिलाओं के परिवारों में लिंग पर आधारित क्रियाकलापों में परिवर्तन हो रहे हैं।

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जैसे-जैसे महिलायें सशक्त हो रही हैं वैसे-वैसे उनकी पारिवारिक स्थिति भी सुदृढ़ हो रही है। साहित्य समीक्षा से ज्ञात होता है कि लिंगभेद परिवार से ही आरम्भ होता है। इस संबंध में कुमुद शर्मा लिखती हैं, ''लड़कियों पर मानसिक, शारीरिक और आर्थिक अत्याचार की कहानियाँ सबसे पहले घर से ही शुरू होती है।''[16]

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. कार्यशील महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
2. कार्यशील महिलाओं के परिवारों में लैंगिक असमानता का अध्ययन करना।

शोध प्रारूप :- प्रस्तुत अध्ययन का संदर्भित क्षेत्र हरिद्वार जिले की रूड़की तहसील की नगर पालिका परिषद है। रूड़की नगरपालिका 2011 की जनगणना के अुनसार 20 वॉर्डों में विभक्त है। अध्ययन के लिए उद्देश्यपरक निदर्शन पद्धति द्वारा 10 वॉर्डों का चयन किया गया तथा 10 वॉर्डों में से प्रत्येक वार्ड से 30 उत्तरदात्रियों का चयन 'सुविधा पूर्ण निदर्शन' पद्धति के द्वारा किया गया। अध्ययन में वर्णात्मक शोध प्ररचना को अपनाया गया है। इस प्रकार 300 इकाइयाँ तथ्य संकलन का आधार बनीं। अध्ययन में साक्षात्कार अनुसूची व अवलोकन के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया गया है एवं द्वितीयक तथ्यों हेतु शासकीय प्रतिवेदन, इन्टरनेट, शोध पत्र, शोध ग्रन्थ आदि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन की सीमायें :- प्रस्तुत अध्ययन कार्य अट्ठारह वर्ष से पैंतालीस वर्ष तक की आयु की कार्यशील महिलाओं पर किया गया है। इसके लिए केवल आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं का चयन किया गया है। अध्ययन की समय सीमा 2021 से 2023 तक के परिवर्तन को दर्शाती है तथा अध्ययन क्षेत्र रूड़की नगर निगम की क्षेत्रीय सीमा है।

उत्तरदात्रियों की सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि :- अध्ययन के लिए 300 कार्यशील उत्तरदात्रियों का चयन किया गया था जिसके अन्तर्गत 18-45 वर्ष तक की आयु सीमा की महिलाओं को लिया गया है जिसमें 87 प्रतिशत हिन्दू, 7.67 प्रतिशत मुस्लिम, 3 प्रतिशत सिक्ख, 2 प्रतिशत ईसाई तथा 0.33 प्रतिशत अन्य धर्म से हैं। जाति के आधार पर 53.67 प्रतिशत सामान्य जाति, 33.33 प्रतिशत पिछड़ी जाति, 9.67 प्रतिशत अनुसूचित जाति, 2.67 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति, 0.66 प्रतिशत अन्य वर्ग से है। शैक्षिक योग्यता के आधार पर 4.33 प्रतिशत हाईस्कूल, 4.33 प्रतिशत इण्टरमीडिएट, 13.67 प्रतिशत स्नातक, 43.67 स्नातकोत्तर, 34 प्रतिशत अन्य शैक्षिक वर्ग (बी0एड0, पी0एच-डी0, डिप्लोमा) से हैं। वैवाहिक स्थिति के आधार पर 79 प्रतिशत विवाहित, 15.33 प्रतिशत अविवाहित, 5 प्रतिशत विधवा तथा 0.67 प्रतिशत परित्यक्त हैं। कार्यशील क्षेत्रों के आधार पर 21.33 प्रतिशत सरकारी क्षेत्र, 16 प्रतिशत अर्द्धसरकारी क्षेत्र से, 51.67 प्रतिशत गैर सरकारी क्षेत्र से, 4.33 प्रतिशत व्यापारी क्षेत्र से तथा 6.67 प्रतिशत अन्य क्षेत्रों से हैं। पारिवारिक स्थिति के आधार पर 55.33 प्रतिशत एकाकी परिवार से तथा 44.67 प्रतिशत संयुक्त परिवार से हैं। मासिक आय के आधार पर 29 प्रतिशत उत्तरदात्रियों की आय 10000 तक है। 34 प्रतिशत महिलायें 10001 से 20000 तक मासिक आय प्राप्त करती हैं। 20001 से 30000 आय प्राप्त करने वाली महिलायें 5 प्रतिशत है। 30001 से 40000 आय प्राप्त करने वाली उत्तरदात्रियाँ भी 5 प्रतिशत है। 40001 से अधिक आय प्राप्त करने वाली महिलाओं की प्रतिशत 27 प्रतिशत हैं।

विश्लेषण

तालिका क्रमांक - 01

परिवारों में लैंगिक असमानता (लिंगभेद)

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	121	40.33
नहीं	179	59.67
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 01 से ज्ञात होता है कि 40.33 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने परिवारों में लिंगभेद को स्वीकार किया है जबकि 59.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार परिवारों में वर्तमान समय में लिंगभेद नहीं है।

तालिका क्रमांक – 02

परिवारों में पुरूषों द्वारा गृह कार्यों में सहयोग

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	251	83.67
नहीं	49	16.33
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 02 से स्पष्ट होता है कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं के परिवारों में गृह कार्यों में पुरूषों द्वारा सहयोग को 83.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने स्वीकार किया है। 16.33 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने माना है कि उनके परिवार में पुरूषों द्वारा गृह कार्यों में कोई सहयोग नहीं किया जाता है।

तालिका क्रमांक – 03

परिवार के महत्वपूर्ण विषयों पर सलाह

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	206	68.67
नहीं	11	3.67
कभी–कभी	83	27.66
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 03 से स्पष्ट होता है कि 68.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के द्वारा परिवार के महत्वपूर्ण विषयों पर दी गयी सलाह मानी जाती है जबकि 3.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने माना है कि उनके द्वारा परिवार के महत्वपूर्ण विषयों पर कोई सलाह नहीं ली जाती है और न ही मानी जाती है। 27.66 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने माना कि उनके द्वारा परिवार के महत्वपूर्ण विषयों पर दी गयी सलाह कभी–कभी स्वीकार की जाती है।

तालिका क्रमांक – 04

पुत्र व पुत्री की शिक्षा को समान महत्व

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	ज281	93.67
नहीं	19	6.33
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 04 से ज्ञात होता है कि 93.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने माना है कि वर्तमान समय में माता–पिता द्वारा बेटा–बेटी की शिक्षा को समान महत्व दिया जाता है। जबकि 6.33 प्रतिशत उत्तरदायित्वों ने बेटा–बेटी की शिक्षा में समानता को अस्वीकार किया है।

तालिका क्रमांक – 05

वंश परम्परा चलाने हेतु पुत्र की आवश्यकता

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	54	18
नहीं	246	82
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 05 से स्पष्ट होता है कि वंश परम्परा चलाने हेतु पुत्र की आवश्यकता को 18.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने स्वीकार किया है जबकि 82.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने वंश परम्परा चलाने हेतु पुत्र की आवश्यकता को अस्वीकार किया है।

तालिका क्रमांक – 06

गर्भावस्था काल में लिंग परीक्षण

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	12	4.72
नहीं	242	95.28
कुल योग	254	100

उपर्युक्त तालिका 06 से स्पष्ट होता है कि 4.72 प्रतिशत उत्तरदात्रियों को गर्भावस्था काल में लिंग परीक्षण कराना पड़ा है। अवलोकन से ज्ञात होता है कि लिंग परीक्षण की जाँच के लिए उन्हें पति, सास, ससुर आदि द्वारा बाध्य किया गया जबकि 95.28 प्रतिशत उत्तरदात्रियों को गर्भावस्था काल में लिंग की जाँच नहीं हुई है न ही उन्हें बाध्य किया गया है।

तालिका क्रमांक – 07

परिवारों में कार्यशील महिलाओं की पुरूषों के समान ही प्रतिष्ठा व सम्मान

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	245	81.67
नहीं	55	18.33
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 07 से ज्ञात होता है कि 81.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं को परिवार एवं पुरूषों के समान ही प्रतिष्ठा व सम्मान की बात को स्वीकार किया है जबकि 18.33 प्रतिशत महिलाओं ने माना है कि आर्थिक रूप से सशक्त होने पर भी महिलाओं को परिवार में पुरूषों के समान प्रतिष्ठा व सम्मान प्राप्त नहीं होता है।

तालिका क्रमांक - 08

पिता की सम्पत्ति में अधिकार पाना

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	3	1
नहीं	297	99
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 08 से स्पष्ट होता है कि अपने पिता की सम्पत्ति में अधिकार पाने के लिए केवल 1 प्रतिशत महिलाओं ने हाँ में उत्तर दिया है जबकि 99.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने अपने पिता की सम्पत्ति पर अधिकार के लिए नकारात्मक विचार दिये है। अवलोकन से पाया गया है कि 99.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियां सशक्त हैं। इसीलिए उन्हें पिता की सम्पत्ति में अधिकार नहीं चाहिए।

तालिका क्रमांक - 09

अपनी आय का प्रयोग करने हेतु पति/संरक्षक की आज्ञा

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	36	12
नहीं	264	88
कुल योग	300	100

उपर्युक्त तालिका 09 से स्पष्ट होता है कि 12.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने यह स्वीकार किया है कि उन्हें अपनी आय को प्रयोग करने से पहले पति/घर के संरक्षक की आज्ञा लेनी पड़ती है जबकि 88.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने ये माना है कि उन्हें अपनी आय का प्रयोग करने से पहले पति या घर के संरक्षक की आज्ञा नहीं लेनी पड़ती है।

निष्कर्ष :- प्रस्तुत शोध में 300 महिला उत्तरदाता सम्मिलित हुए जिनमें 79 प्रतिशत विवाहित तथा 15.33 प्रतिशत अविवाहित हैं। सभी उत्तरदात्री आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने से उत्तरदात्रियों के पारिवारिक वातावरण में परिवर्तन आया है। आंकड़ों से स्पष्ट हुआ है कि परिवारों में लिंगभेद में कमी आयी है। गृह कार्यों में सहयोग की स्थिति को लेकर अधिकांश (83.67) उत्तरदात्रियों ने माना है कि उनके परिवार में पुरूषों द्वारा गृह कार्य में सहयोग किया जाता है। जहाँ गृह कार्य प्राचीन काल से ही स्त्री के उत्तरदायित्व माने जाते थे, वहाँ वर्तमान में इस तरह के विचार परिवर्तित हो रहे हैं। महिलाओं के आत्मनिर्भर होने से पुरूषों के विचारों में भी परिवर्तन आ रहा है। अधिकांश (68.67 प्रतिशत) परिवारों में महत्वपूर्ण विषयों पर घर की महिलाओं से सलाह ली जाती है जबकि 27.66 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने कहा कि उनकी सलाह कभी-कभी ली जाती है एवं केवल 3.67 प्रतिशत ने कहा कि परिवार के महत्वपूर्ण विषयों पर उनकी सलाह नहीं ली जाती है। यहाँ सलाह लेने वाला प्रतिशत 68.67 प्रतिशत है जिससे परिवार में महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ होने का पता चलता है। वर्तमान समय में विपुलांशतः (93.67) माता पिता द्वारा पुत्र व पुत्री की शिक्षा को समान महत्व दिया जाता है। केवल 6.33 प्रतिशत ने माना कि वर्तमान समय में पुत्र-पुत्री की शिक्षा को समान महत्व नहीं दिया जाता है। निष्कर्ष के रूप में स्पष्ट है कि शिक्षा को लेकर परिवारों में लिंग भेद में कमी आयी है।

वंश परम्परा पुत्र द्वारा चलने को अधिकांश (82 प्रतिशत) उत्तरदात्रियों ने नकारा है, केवल 18 प्रतिशत उत्तरदात्री ही पुत्र की आवश्यकता को स्वीकार करती हैं। स्पष्ट है कि वर्तमान समय में परिवारों में वंश परम्परा जैसे रूढ़िवादी विचारों में कमी आयी है। गर्भावस्था काल में लिंग परीक्षण की जांच को केवल 4.72 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने स्वीकारा है, 95.28 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने कहा है कि गर्भावस्था काल में उनकी लिंग परीक्षण को लेकर कोई जांच नहीं हुई है। माता-पिता स्वस्थ सन्तान चाहते हैं। यह महिलाओं के आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने से ही सम्भव हुआ है कि वह अपने भ्रूण की रक्षा करने में सक्षम हुई हैं। स्त्री पुरूष की परिवार में भूमिका के संबंध में स्पष्ट हुआ कि 81.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने माना है कि उन्हें परिवार में पुरूषों के समान ही प्रतिष्ठा व सम्मान प्राप्त है। कार्यशील महिलाओं के परिवारों में लिंग सम्बन्धी भेद कम हो रहे हैं। पिता की सम्पत्ति में अधिकार पाने की पहल करने के लिए केवल 1 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने सकारात्मक विचार रखती हैं, 99 प्रतिशत अपनी राय नहीं के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उन्होंने बताया कि वे आर्थिक रूप से सक्षम हैं। इसीलिए उन्हें पिता की सम्पत्ति नहीं चाहिए। निष्कर्ष के रूप में कह सकते है कि यदि महिलायें कार्यशील हैं, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं तो उन्हें किसी की सम्पत्ति या दया भाव नहीं चाहिए। 88 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने माना है कि उन्हें अपनी आय का प्रयोग स्वतन्त्रतापूर्वक करने के लिए किसी की आज्ञा नहीं लेनी पड़ती। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि कार्यशील महिलाओं की परिवारों में लैंगिक समानता

के प्रति जागरूकता बढ़ी है तथा लिंगभेद सम्बन्धी क्रियाकलापों में परिवर्तन आये हैं। महिलाओं के आर्थिक रूप से सक्षम होने से उनका स्थान परिवार में सुदृढ़ व मजबूत हुआ है और वह एक ऐसे पर्यावरण का निर्माण कर रही है जिससे भविष्य में लिंगभेद होगा ही नहीं। स्वामी विवेकानन्द ने सही ही लिखा था कि ''सर्वप्रथम स्त्री–जाति को सुशिक्षित बनाओ, फिर वे स्वयं कहेंगी कि उन्हें किन सुधारों की आवश्यकता है।''[17] उनके आत्मनिर्भर होने से वे परिवार में लिंग-भेद सम्बन्धी परम्पराओं का विरोध करती हैं तथा परिवारों में एक नये समाजीकरण का निर्माण हो रहा है जिसमें लिंग-भेद कहीं नहीं है। महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास एक नये समाज का निर्माण कर रहे हैं। इसका प्रभाव भविष्य में होने वाली जनगणना पर स्पष्ट दिखाई देगा।

सन्दर्भ

1. यादव, राम गणेश, 'भारत में परिवर्तन एवं विकास', ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2014, पृ.126।
2. सिंह, जे0पी0, 'समाज विज्ञान विश्वकोष', पीएचआई, लर्निंग, नई दिल्ली, 2009, पृ.259।
3. परमार, शुभ्रा, 'नारीवादी सिद्धान्त और व्यवहार', ओरियन्ट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट, नई दिल्ली, 2015, पृ.33।
4. सिंह, जे0पी0, पूर्वोक्त, पृ.259।
5. आहूजा, राम, 'सामाजिक समस्यायें', रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2010, पृ.238–239।
6. नईम, मुहम्मद, 'लोक जीवन में पितृसत्तात्मकता', मध्य प्रदेश सामाजिक विज्ञान अनुसंधान जर्नल, 15:2 वर्ष 15, अंक–2, 2017 पृ. 37–47।
7. सिंह, अमर, 'लैंगिक असमानता के प्रति महिलाओं के बदलते दृष्टिकोण में शिक्षा की भूमिका', शोध गंगा, 2019, http://hdl.handle.net/10603/348651, Date-10.10.2022, Time:12:05 PM.
8. मिश्रा, रूचि, 'महिला सशक्तिकरण में समाज की भूमिका', शोध गंगा, 2019, http://hdl.handle.net/10603/ 309941, Date-10.10.2022, Time 02:00 PM.
9. मौर्या, साधना, 'भारतीय समाज में कन्या भ्रूण हत्या की समस्या' शोध गंगा, 2020, http://hdl:handle.net/10603/334349, Date-08.10.2022 Time:12.02 PM.
10. बरैया, निशा, 'लिंगभेद की समस्या', शोध गंगा, 2020, http://hdl.handle.net/10603/ 343569, Date-10.10.2022, Time 01:00 PM.
11. जोशी, हेमा, 'सहकारी आन्दोलन एवं महिला सशक्तीकरण', शोध गंगा, 2020, http://hdl:handle.net/10603/319498, Date-11.10.2022 Time:11.00 AM.
12. आमेटा, प्रीति, 'कामकाजी महिलाओं की सामाजिक परिस्थिति में परिवर्तन', शोध गंगा, 2020, http://hdl:handle.net/10603/336730, Date-08.10.2022 Time: 04.02 PM.
13. कोठारी, कुशल जैन एवं अनीता चौहान, 'शिक्षित आदिवासी महिलाओं की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति', राधा कमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा, 23 (2) 2021 पृ.65–73।
14. बिष्ट, निर्दोषिता, 'महिला सशक्तीकरण तथा महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन' राधा कमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा, 23 (2) 2021 पृ.171–178।
15. मठपाल, राजश्री, 'भूमिका समायोजन के सन्दर्भ में कार्यशील महिलाओं की परिस्थिति', राधा कमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा, 24 (1) 2022, पृ. 36–47।
16. शर्मा, कुमुद, 'आधी दुनिया का सच', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ.15।
17. विवेकानन्द, स्वामी, 'भारतीय नारी' श्री राजकृष्ण आश्रम, धन्तोली, नागपुर–01, मध्य प्रदेश, 1954, पृ.34।

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023
Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

लैंगिक विषमता एवं ग्रामीण महिलाएँ

❑ डॉ. उपासना
❖ डॉ. किरन डंगवाल

सूचक शब्द : लैंगिक विषमता, महिला सशक्तीकरण

भारतीय समाज ग्रामीण प्रधान समाज है। आज भी भारत की अधिकांश जनसंख्या गांव में ही निवास करती है। गांव की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर है। कृषि कार्य में पुरुषों के साथ-साथ महिलाएं भी अपना योगदान दे रही हैं परंतु उनको मिलने वाले पारिश्रमिक में भिन्नता देखने को मिलती है। महिलाएं किसी भी समाज की महत्वपूर्ण स्तंभ होती हैं। अतः उनका विकास करना किसी भी समाज के लिए अति आवश्यक है। समाज में महिलाएं अपनी बहुल भूमिकाओं का निर्वहन बड़ी ईमानदारी के साथ करती हैं परंतु फिर भी उनकी समाज में सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता। मानव समाज में प्रारंभ से ही स्त्री और पुरुषों को अलग-अलग वर्गों में रखा जाता है। स्त्री पुरुष का यह विभेदीकरण केवल बौद्धिक नहीं हैं अपितु व्यावहारिक धरातल पर यह विषमता सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा जैविकीय आदि सभी क्षेत्रों में देखने को मिलती है। लैंगिक विषमता महिलाओं के शोषण में सबसे बड़ी समस्या है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं में लैंगिक विषमता के विषय में जानकारी प्राप्त करना है।

भारत विकासशील देश होने के साथ-साथ एक कृषि प्रधान देश भी है। यहाँ की अधिकांश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि पर निर्भर है। कृषि कार्यो में पुरूषों के साथ-साथ महिलायें भी अपना योगदान दे रही हैं फिर भी हमारे देश की आधी जनसंख्या आज भी असमानता से ग्रस्त है। संसार का कोई भी समाज ऐसा नहीं है जिसमें सभी लोग एक दूसरे से पूरी तरह समान हों यह विषमता सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा जैविकीय आदि सभी क्षेत्रों में देखने को मिलती है। इस प्रकार की विषमता में लैंगिक विषमता भी देखने को मिलती है। जब स्त्रियों तथा पुरुषों की वास्तविक योग्यता और क्षमता पर ध्यान दिए बिना समाज में केवल लिंग के आधार पर स्त्रियों को पुरुषों के अधीन मानकर उनकी प्रस्थिति का असमान रूप से निर्धारण होता है तब इस दशा को लैंगिक विषमता कहते हैं। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की मानव विकास रिपोर्ट, 2020 के अनुसार लैंगिक असमानता सूचकांक में भारत का 189 देशों में 131 वाँ स्थान है।[1] हमारे देश के लिए यह बड़ी ही चिंता का विषय है कि हमारी आधी जनसंख्या आज भी असमानता से ग्रस्त है। लोवी[2] ने चार आधारों का उल्लेख किया है जिनकी सहायता से एक विशेष समाज में स्त्रियों की प्रस्थिति का मूल्यांकन किया जा सकता है। यह आधार हैं -

1. स्त्रियों के प्रति पुरुषों का वास्तविक व्यवहार।
2. समाज में स्त्री की कानूनी और प्रथागत प्रस्थिति।
3. स्त्रियों को प्राप्त होने वाले सामाजिक सहभागिता के अवसर।
4. स्त्रियों द्वारा किए जाने वाले कार्यों की प्रकृति और उनका विस्तार।

इन आधारों से स्पष्ट होता है कि आज भी महिलाओं की भारतीय समाज में सहभागिता काफी कम है। आज भी उनको पुरुषों से कम आंका जाता है। भारतीय समाज में लिंग असमानता की समस्या को बढ़ाने में निम्नलिखित कारक उत्तरदायी हैं।

1. भारतीय समाज में लिंग आधारित विभेद का एक प्रमुख कारण परंपरागत धार्मिक विश्वास हैं जिनमें महिलाओं को पुरुषों के नीचे स्थान दिया गया है तथा अपने पति की सेवा करना, स्त्री का सर्वप्रथम कर्तव्य माना गया है। इस प्रकार भारत में एक पदसोपानिक समाज के निर्माण को धार्मिक आधार प्राप्त हो जाता है जिसमें पुरुष को उच्च स्थान तथा महिलाओं को निम्न स्थान मिलता है।
2. भारतीय समाज में प्रचलित विवाह परंपरा में भी महिलाओं की राय को कम महत्व दिया जाता है। इसी कारण विवाह के पश्चात् भी न केवल महिलाओं की राय को कम महत्व दिया जाता है अपितु

❑ प्रवक्ता, रा0 क0 इ0 का0 संघीपुर, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)
❖ प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र विभाग, हे0न0ब0 गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय (उत्तराखण्ड)

शारीरिक व मानसिक प्रताड़ना भी झेलनी पड़ती है।

3. भारत में लिंग आधारित विभेद का एक प्रमुख कारण यह भी है कि महिलाएं शारीरिक दृष्टि से पुरुषों की तुलना में कमजोर होती है। अतः उनके विरुद्ध विभेदयुक्त आचरण करना अपेक्षाकृत आसान होता है।
4. भारत में लिंग आधारित विभेद में शिक्षा भी एक महत्वपूर्ण कारक है। भारत में आज भी अनेक स्थानों पर बालिकाओं को शिक्षा से दूर रखा जाता है क्योंकि भारतीय जनमानस स्त्री शिक्षा पर अधिक व्यय करने की आवश्यकता नहीं समझता है।

लैंगिक विषमता प्रमुख समस्या के रूप में हमारे समाज में व्याप्त है। भारतीय महिलाओं को जन्म आधारित अयोग्यता से मुक्त कर स्वतंत्रता एवं समानता का वातावरण उपलब्ध कराने की प्रक्रिया जटिल है। रूढ़िवादी, पुरातन सामाजिक भारतीय विचारधारा इस परिवर्तन की विरोधी है।[3] लैंगिक विषमता को कई उपागमों में स्पष्ट किया जाता है जीवशास्त्री, मानवशास्त्री, मनोवैज्ञानिक, समाजशास्त्री लैंगिक विषमता को सामाजिक व्यवस्था तथा संस्कृति का परिणाम मानते हैं। भारत में विकासशील देशों के विपरीत स्त्रियों की पहचान आज भी एक स्वतंत्र और आत्मनिर्भर व्यक्ति के रूप में न होकर एक पुत्री, पत्नी, माँ या बहिन के रूप में होती है। इस लैंगिक विषमता की प्रकृति तथा परिणामों को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, धार्मिक तथा दूसरे सभी क्षेत्रों में देखा जा सकता है। आज भी महिला को सामाजिक क्षेत्र में पुरूषों के आधीन माना जाता है। यह आधीनता सामाजिक प्रस्थिति, सामाजिक शोषण, नैतिक शोषण, शैक्षणिक विषमता, सामाजिक हिंसा, वैवाहिक विषमता आदि रूपों में देखने को मिलती है। आर्थिक क्षेत्र में लैंगिक विषमता के अंतर्गत प्रतिभा का शोषण, आर्थिक परतंत्रता, भूमिकाओं की बहुलता, संपत्ति अधिकार से पृथकता, आर्थिक पुरस्कार में असमानता, प्रतिभा का शोषण, रोजगार में विभेद जैसे रूपों में देखने को मिलता है। राजनीतिक क्षेत्र में विषमता का कारण यह है कि आज भी हमारे समाज में 10 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जिन्हें विभिन्न राजनीतिक दलों के बारे में कोई जानकारी नहीं है और वे अपने पति, पिता के कहने से ही मतदान करती हैं। अगर हम धार्मिक क्षेत्र की बात करें तो वहाँ भी लैंगिक असमानता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। पुरुष यह चाहता है कि सभी व्रत या उपवास और धार्मिक क्रियाएं स्त्रियों द्वारा ही पूरी की जाएं। यदि हम समाजशास्त्रीय आधार पर देखें तो इसमें पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था, भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था, स्त्रियों में शिक्षा का अभाव तथा अति सहनशीलता होती है।

प्राचीन काल में लड़का या लड़की में भेदभाव अधिक देखने को मिलता है खानपान के आधार पर, शिक्षा, योग्यता, रहन-सहन के आधार पर लैंगिक विषमता अधिक देखने को मिलती है। महिलाओं के प्रति किए जा रहे भेदभाव को समाप्त करने की दृष्टि से वर्ष 1979 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने के लिए अंतरराष्ट्रीय अभिसमय (International Convention on the Elimination of All forms of Discrimination) को अंगीकृत किया। भेदभाव रहित न्याय अपेक्षा करते हुए संविधान के अनुच्छेद 15 के अंतर्गत प्राविधानित है कि राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म मूल वंश जाति लिंग जन्म स्थान या इनमें से किसी आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

भारतीय संविधान पुरुषों व महिलाओं के बीच अधिकारों की समानता की मान्यता देता है परंतु निर्विवाद रूप से स्त्रियों की भूमिका व क्रिया क्षेत्रों में भेद स्वीकार करता है। संविधानगत समानता की व्यवस्था के पश्चात् महिलाओं की स्थिति संवैधानिक दृष्टि से तो सुदृढ़ हो गई, किंतु वास्तविक रूप से आज भी महिलाएं शोषण एवं उत्पीड़न का शिकार बनी हुई हैं। पंडित जवाहरलाल नेहरु के पास भारत के भविष्य का आकार बनाने में महिलाओं की क्षमता व योग्यता को मान्यता देने की अंर्तदृष्टि थी उन्होंने कहा- मुझे पूरा विश्वास है कि हमारी वास्तविक व आधारभूत वृद्धि केवल तभी होगी जब महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में उनकी भूमिका निभाने का पूर्ण अवसर प्रदान किया जाए। हमारे कानून पुरुष निर्मित हैं। हमारा समाज पुरुष प्रधान है और इसलिए इस मामले में हमारे विचार स्वाभाविक रूप से एक ओर झुके हुए हैं। हम वस्तुनिष्ठ नहीं हो सकते क्योंकि हमने विचारों व कार्यों में निश्चित दायरे में विकास किया है लेकिन भारत का भविष्य संभवतः पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं पर ही अधिक निर्भर होगा।[4]

स्त्रियों की स्थिति में सुधार के लिए विभिन्न समाज

सुधारकों ने प्रयास किये हैं। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा को समाप्त किया, स्वामी दयानंद ने शिक्षा को सर्वोच्च माना, ईश्वर चंद्र विद्यासागर ने महिलाओं में सामाजिक चेतना पैदा की, महात्मा गांधी ने महिलाओं को स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने को कहा। इन समाज सुधारकों ने महिलाओं की प्रस्थितियों को ऊँचा उठाने के लिए बहुत संघर्ष किया है। सरकार के द्वारा महिला कल्याण के लिए वैधानिक प्रयत्न किए गए जैसे- विशेष विवाह अधिनियम 1954, हिंदू विवाह अधिनियम 1955, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम 1956, हिंदू नाबालिगी तथा संरक्षकता अधिनियम 1956, हिंदू दत्तक ग्रहण तथा भरण पोषण अधिनियम 1956, दहेज निरोधक अधिनियम1961, आदि। शिक्षा व कानूनी प्रयास के पश्चात् भी लैंगिक असमानता को कम नहीं किया जा सका है क्योंकि वर्तमान समय में धार्मिक मान्यताओं में परिवर्तन हुआ है परंतु फिर भी लड़कियों के प्रति असुरक्षा की भावना, होने वाले अत्याचारों तथा दुराचार के कारण भी लैंगिक असमानता में वृद्धि हुई है। लैंगिक असमानता को कम करने के लिए हमें पारिवारिक व सामाजिक स्तर पर प्रयास करने की आवश्यकता है क्योंकि कोई भी कानून तब तक फलीभूत नहीं हो पाता है जब तक कि उसे व्यवहारिक धरातल पर ना उतारा जाए। यह केवल वैचारिक परिवर्तन के द्वारा ही संभव है हो सकता है। देश के विकास के लिए आवश्यक है कि पुरुषों के साथ साथ महिलाओं को भी सम्मानजनक स्थान दिया जाए जिससे कि महिलाएं देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें।

साहित्य समीक्षा :

बी0एम0 शर्मा[5] द्वारा 'महिला एवं शिक्षा' पुस्तक में महिला सशक्तीकरण पर गांधीजी के विचारों पर प्रकाश डाला गया है। महिला सशक्तीकरण के विभिन्न कार्यक्रमों के महत्व का विश्लेषण किया गया है। शोधकर्ता ने विद्यालय एवं उच्च शिक्षा स्तर से महिलाओं के पलायन करने के कारणों पर चर्चा की है। यह पुस्तक भारत में महिलाओं की शिक्षा के स्तर को बहुत अच्छे ढंग से प्रस्तुत करती है।

पांडे और एस्टोन[6] द्वारा 'ग्रामीण भारत में पुत्र प्राथमिकता: संरचनात्मक बनाम व्यक्तिगत कारकों की स्वतंत्र भूमिका', के अनुसार उच्च शिक्षा ही महिलाओं को लैंगिक असमानता से मुक्त करती है। एक शिक्षित पुत्री अपने परिवार को जो समर्थन व सुविधाएं उपलब्ध करवा सकती है वह समर्थन दो पुत्र मिलकर भी नहीं दे सकते हैं। गरीब माता-पिता असुरक्षा और आर्थिक दायित्वों के कारण पुत्रों को पसंद करते हैं। राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लिंग भेद को समाप्त करने का मुख्य साधन महिलाओं को शिक्षा और वित्तीय अधिकार देना है।

ब्लास्सोफ कारोल[7] द्वारा 'गरीबी से अमीरी की ओर: एक भारतीय गांव में महिलाओं की स्थिति पर ग्रामीण विकास का प्रभाव' महिलाओं की स्थिति पर ग्रामीण विकास का प्रभाव महिलाओं के लिए समृद्धि, आधुनिकता एवं विस्तृत शिक्षा उनको सशक्त करने और पितृसत्तात्मक संरचनाओं से मुक्त करने के लिए मुख्य साधन है। स्त्रियों की शिक्षा व आर्थिक स्वतंत्रता उन्हें स्वतंत्र निर्णय लेने में सहायता करते हैं और उन्हें अपने पति व अन्य संबंधियों पर आश्रितता से मुक्त करते हैं। सुदृढ़ महिला सशक्तीकरण तभी संभव है जब महिलाओं को उचित शिक्षा दी जाए। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सैद्धांतिक रूप से शिक्षा महिलाओं को वित्तीय स्वतंत्रता प्रदान करती हैं लेकिन व्यवहारिक रूप से महिलाओं को इसलिए शिक्षित करते हैं कि उन्हें योग्य वर मिल सके न की नौकरी।

उजमा[8] ने पाया की पहचान समाज, पर्यावरण और माता-पिता के माध्यम से बनाई जाती है। यह दो तरफा प्रक्रिया है- लोग आपको कैसे देखते हैं और आप खुद को कैसे देखते हैं। अपने बच्चों के प्रति माता-पिता का दृष्टिकोण उनकी पहचान बनाता है। माता पिता आमतौर पर अपनी बेटियों को असहाय, डरपोक और बहुत कमजोर मानते हैं। उनका मानना था कि उन्हें समाज के पुरुष सदस्यों द्वारा संरक्षित करने की आवश्यकता है। यह अधीनता और दमन का पहला कदम है। उसके अनुसार शिक्षित महिलाओं की दोहरी पहचान होती है- पेशेवर और निजी। उसके शोध का एक और निष्कर्ष यह था कि महिलाओं की आय को परिवार के लिए मुख्य वित्तीय स्रोत के रूप में नहीं माना जाता है, बल्कि उसके पुरुषों की आय के पूरक के रूप में माना जाता है। उन्होंने यह भी पाया कि वे परिणाम उच्च और उन्नत परिवारों की महिलाओं के लिए मान्य नहीं थे उन्हें हर कार्य में पूरी स्वतंत्रता दी जाती है।

मैरी मुथु शिवकुमार[9] के शोध 'जेंडर डिस्क्रिमिनेशन एंड विमेंस डेवलपमेंट इन इंडिया' में लैंगिक भेदभाव और महिला विकास के मुद्दे पर विस्तार से बताया गया है।

दुनिया की पूरी आबादी का लगभग आधा हिस्सा महिलाएं हैं एवं विश्व के सभी कार्यों का दो तिहाई कार्य उनके द्वारा संपादित होता है। फिर भी विश्व की कुल आय का दसवां भाग या हिस्सा ही उन्हें मिल पाता है। करीब दो तिहाई महिलाएं अशिक्षित हैं एवं विश्व की कुल संपत्ति का केवल एक प्रतिशत ही उनके पास है या उनकी वे मालकिन हैं। इस पत्र में लैंगिक भेदभाव के अर्थ, कारण, विकास में महिलाओं के महत्व इनके लिए बने कानूनों एवं लैंगिक भेदभाव को कम करने के उपायों जैसे शिक्षा, रोजगार, आर्थिक स्वतंत्रता, सशक्तीकरण, आत्मविश्वास, निर्णय लेने की योग्यता या क्षमता इत्यादि की चर्चा की है। निष्कर्ष में बताया कि अगर हम महिलाओं को लैंगिक भेदभाव जैसी समस्याओं से प्रभावित न करें तो ही महिलाएं अपनी पूरी क्षमता, बुद्धि एवं ज्ञान के द्वारा परिवार, राष्ट्र और समस्त विश्व को विकास की प्रक्रिया से जोड़ पाएंगी।

बनारसी लाल और शाही अहमद[10] ने अपने शोध 'जेंडर डिस्क्रिमिनेशन इन रूलर एरियाज' में ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी से जुड़े मुद्दे एवं महिला उत्थान में 73 वें संविधान संशोधन की भूमिका और प्रभाव पर चर्चा की है। अपने शोध में स्पष्ट किया है कि 73 वां पंचायती राज अधिनियम के लागू होने के बाद भारत के विभिन्न प्रदेशों में शिक्षा, शिक्षण या परीक्षण के क्षेत्र में एक नए दौर का आरंभ हुआ है। उनके अनुसार बिहार में पंचायती राज में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है। फलतः जनप्रतिनिधियों के द्वारा महिलाओं की शिक्षा पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। सर्व शिक्षा योजना के अंतर्गत भारी संख्या में महिलाओं को रोजगार भी प्राप्त हुआ है।

अध्ययन के उद्देश्य–

1. महिलाओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति को जानना।
2. महिलाओं से लैंगिक विषमता के विभिन्न क्षेत्रों के विषय में जानना।
3. लैंगिक विषमता के कारणों को जानना।

परिकल्पना–

1. ग्रामीण महिलाओं में आज भी शिक्षा का स्तर न्यून है।
2. महिलाएं स्वयं को पुरुषों के अधीन मानती हैं।
3. जीवनसाथी के चुनाव में महिलाओं से किसी प्रकार की कोई राय नहीं ली जाती है।

अध्ययन का क्षेत्र– प्रस्तुत अध्ययन में उद्देश्यकृत निदर्शन द्वारा हरिद्वार जिले के ब्लॉक बहादराबाद से ग्राम संधीपुर का चयन किया गया है। संधीपुर गॉव की कुल जनसंख्या 5289 है, जिसमें 2658 महिलाऐं है। तथ्य संकलन के लिए समग्र से 100 उत्तरदात्री महिलाओं का चयन दैवनिदर्शन की लॉटरी विधि द्वारा किया गया।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध में वर्णनात्मक प्रविधि का प्रयोग किया गया है। तथ्य संकलन के लिए प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों स्रोतों का प्रयोग किया गया है। प्राथमिक स्रोत के अंतर्गत साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक स्रोत के अंतर्गत पत्र, पत्रिकाएं, पुस्तकों, शोध ग्रंथों के द्वारा विषय की जानकारी एकत्रित की गई है।

विश्लेषण :

उत्तरदाताओं की सामाजिक आर्थिक स्थिति : अध्यन के अंतर्गत उत्तरदात्रियों की शैक्षिक स्थिति से स्पष्ट होता है कि 58 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ शिक्षित तथा 42 प्रतिशत अशिक्षित हैं, परिवार के स्वरूप के आधार पर 66 प्रतिशत एकाकी परिवारों से तथा 34 प्रतिशत संयुक्त परिवारों से आई है। आर्थिक स्थिति के आधार पर अधिकांश उत्तरदात्रियों की मासिक आय रू. 15000 से अधिक है।

सारणी संख्या 1

स्वयं की पुरुषों के आधीन प्रस्थिति

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	94	94
नही	06	06
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्त्रियों की प्रस्थिति के विषय में स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान समय में 94 प्रतिशत महिलाएं स्वयं को पुरुषों के अधीन मानती हैं जबकि 6 प्रतिशत महिलाएं स्वयं को स्वतंत्र मानती हैं। आज भी महिलाओं की स्वयं कोई पहचान नहीं है उनकी पहचान आज भी पुरुषों के अधीन हैं। प्रस्तुत निष्कर्ष से परिकल्पना 2 सही सिद्ध होती है।

सारणी संख्या 2

स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने के आधार पर विचार

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हॉ	26	26
नही	74	74
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 74 प्रतिशत महिलाएं निर्णय लेने में स्वतंत्र नहीं हैं जबकि 26 प्रतिशत महिलाएं ही निर्णय लेने में स्वतंत्र रही हैं। आंकड़ों से प्रदर्शित होता है कि महिलाएं स्वतंत्र रूप से निर्णय नहीं ले पाती हैं।

सारणी संख्या 3

स्वतंत्र रूप से समारोह में प्रतिभाग

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हॉ	12	12
नही	88	88
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि विभिन्न उत्सव समारोह तथा आयोजन के अवसर पर 12 प्रतिशत महिलाएं ही स्वतंत्र रूप से प्रतिभाग कर पाती हैं जबकि 88 प्रतिशत महिलाएं स्वतंत्र रूप से समारोह में प्रतिभाग नहीं कर पाती। सामाजिक समारोह में उन्हें केवल उतना ही संपर्क रखने की अनुमति मिलती है जिस पर उनके पिता, पति या भाई को कोई आपत्ति ना हो। सामाजिक संबंधों का दायरा भी साधारणतः पुरुषों द्वारा निर्धारित होता है।

सारणी संख्या 4

माता-पिता द्वारा महिलाओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता

शिक्षा पर बल	आवृत्ति	प्रतिशत
हॉ	12	12
नही	88	88
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से महिलाओं की शिक्षा के प्रति जागरूकता के संबंध में स्पष्ट होता है कि 12 प्रतिशत माता-पिता ही अपनी पुत्री की शिक्षा पर बल देते हैं जबकि 88 प्रतिशत उत्तरदात्रियों द्वारा स्वीकार किया गया कि उनके माता-पिता द्वारा उनकी शिक्षा पर बल नहीं दिया गया।

सारणी संख्या 5

समान शिक्षा प्राप्ति का आधार

समान शिक्षा	आवृत्ति	प्रतिशत
हॉ	08	08
नही	92	92
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 8 प्रतिशत उत्तरदात्रीयों को उनके भाई के समान शिक्षा प्राप्त हुई जबकि 92 प्रतिशत उत्तरदात्री इस तथ्य को अस्वीकार करती हैं। अर्थात् आज भी महिलाओं की शिक्षा में भेदभाव किया जाता है जहां पुरुष सदस्य अपनी इच्छा से शिक्षा ग्रहण कर सकता है परंतु महिलाओं की शिक्षा परिवार पर निर्भर करती है।

सारणी संख्या 6

जीवनसाथी के चुनाव में स्वयं की राय

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	08	08
नही	92	92
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 8 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के द्वारा विवाह के संबंध में विवाह के समय जीवनसाथी के चुनाव में अपनी राय को महत्व दिया गया जबकि 92 प्रतिशत उत्तरदात्रियों से विवाह के समय जीवनसाथी के संबंध में राय नहीं ली गई। इससे स्पष्ट होता है कि जहां लड़कों को जीवनसाथी के चुनाव में पूरी स्वतंत्रता मिलती है वही लड़की की पसंद अथवा नापसंद को साधारणतया कोई महत्व नहीं दिया जाता। इससे जीवनसाथी के चुनाव में ली गई परिकल्पना 3 सही सिद्ध होती है।

सारणी संख्या 7

संपत्ति के अधिकार के प्रति जागरूकता

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	40	40
नही	60	60
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है की 40 प्रतिशत महिलाएं संपत्ति के अधिकार के प्रति जागरूक हैं तथा 60 प्रतिशत महिलाओं को इसकी जानकारी नहीं है। कानून द्वारा माता पिता की संपत्ति में पुत्रियों को, पति की संपत्ति में पत्नी को तथा पुत्र की संपत्ति में मॉ को, पुरुषों के समान अधिकार मिले हुए हैं।

सारणी संख्या 8

स्वयं को शारीरिक व मानसिक रूप से पुरुषों से कमजोर मानना

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हॉ	24	24
नही	76	76
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 24 प्रतिशत

महिलाएं स्वयं को शारीरिक व मानसिक रूप से पुरुषों से कमजोर मानती हैं जबकि 76 महिलाएं स्वयं को कमजोर नहीं मानती हैं।

सारणी संख्या 9

राजनीतिक क्रियाओं में प्रतिभाग

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
हॉ	24	24
नही	76	76
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 76 प्रतिशत महिलाएं राजनीतिक क्रियाओं में भाग नहीं लेती हैं। ग्रामीण समाज में आज भी महिलाएं विभिन्न पदों पर आसीन होने के बावजूद भी निर्णय लेने में स्वतंत्र नहीं हैं। निर्वाचित होने के पश्चात भी उनके द्वारा किए जाने वाले लगभग सभी निर्णय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उनके पिता या पति द्वारा ही किए जाते हैं।

सारणी संख्या 10

उम्मीदवार को वोट दिए जाने के संबंध में विचार

उत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
स्वयं	0	0
पति की राय	90	90
पिता की राय	10	10
योग	100	100

उपर्युक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 90 प्रतिशत महिलाएं अपने पति के पसंद के सदस्य को वोट देती हैं जबकि 10 प्रतिशत महिलाएं पिता के पसंद के सदस्य को वोट देती हैं। उनकी स्वयं की पसंद या नापसंद का कोई अस्तित्व नहीं है।

निष्कर्ष : अध्ययन में यह पाया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी महिलाओं के साथ भेदभाव किया जाता है। वह स्वतंत्र रूप से निर्णय नहीं ले सकती और ना ही सामाजिक समारोह में भी स्वतंत्र रूप से भाग ले सकती हैं। आज भी महिलाओं को पुरुषों के अधीन माना जाता है। शिक्षा के आधार पर भी महिलाओं के साथ भेदभाव देखने को मिलता है। जहां महिलाओं की शिक्षा को सामाजिक मर्यादाओं के विरुद्ध माना जाता है वहीं उनकी शिक्षा के प्रति माता-पिता भी जागरूक नहीं है। विवाह के संबंध में भी उनकी राय को महत्व नहीं दिया जाता है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के द्वारा आर्थिक क्षेत्र में प्रतिभाग नहीं किया जा रहा है। महिलाएं संपत्ति के अधिकार के प्रति जागरूक नहीं हैं। महिलाएं स्वयं को शारीरिक व मानसिक रूप से कमजोर नहीं मानती हैं फिर भी विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी काफी कम है। राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं को अपनी पसंद के उम्मीदवार को वोट देने का अधिकार नहीं है और न ही विभिन्न पदों पर आसीन होने के बाद भी निर्णय लेने की उनको स्वतंत्रता है। महिलाओं के साथ होने वाले भेदभाव के पीछे सबसे बड़ा कारण महिलाओं का अशिक्षित होना है। यदि महिलाएं शिक्षित होंगी तो वह अपने साथ होने वाली विषमता के विरुद्ध आवाज उठा सकती हैं।

सन्दर्भ

1. https://www.drishtias.com/hindi/dailynews-analysis/humandevelopment.
2. Lowi, Primitive Society, Liveright Publication Columbia University, New York, 1920, p.44
3. Desai, A.R., 'Social Background of Nationalism', Popular Prakashan, Bombay, 1966, pp. 250-256.
4. आशुरानी, 'महिला विकास कार्यक्रम', इना श्री पब्लिशर्स, जयपुर संस्करण, 1999, पृ. 1-84
5. शर्मा बी0एल0, 'महिला एवं शिक्षा', कामनवेल्थ प्रकाशक, नई दिल्ली, 2004, पृ. 378.
6. पांडे और एस्टोन, 'ग्रामीण भारत में पुत्र प्राथमिकताः संरचनात्मक बनाम व्यक्तिगत कारकों की स्वतंत्र भूमिका', जनसंख्या और विकास समीक्षा, 2001, भाग 11, संख्या-2
7. कारोल ब्लास्सोफ, 'गरीबी से अमीरी की ओरः एक भारतीय गांव में महिलाओं की स्थिति पर ग्रामीण विकास का प्रभाव', एल्सेवियर साइंस लिमिटेड, भाग- 22, संख्या-5, 1994 पृ. 707-19,
8. Uzma Shoukat, 'Literacy and Womens Identity', Proceedings of the International Conference on Social Science: Endangered and Engendered, Fatima Jinnah Women University, Rawalpindi, Pakistan, 2004, pp. 84-96
9. Shiv Kumar Marimuthu, 'Gender Discrimination and Women Development in India', 2008, shivkumarmarimuthu@yahoo.co.in
10. लाल, बनारसी और शाही अहमद, 'जेंडर डिस्क्रिमिनेशन इन रूलर एरियाज', डेली एक्सेलसियर-21/05/2015

राधाकमल मुकर्जी : चिन्तन परम्परा
वर्ष 25 अंक 1, जनवरी–जून 2023
Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

पोषण वाटिका का महिला पोषण सुरक्षा में योगदान : एक अध्ययन

❑ डॉ. प्रगति

प्रस्तुत शोध प्रत्र में पोषण वाटिका के उपयोग एवं महत्त्व को दर्शाया गया है। अध्ययन के लिए दरभंगा शहर से 25–55 वर्ष की 100 महिलाएँ, जिसमें 50 महिलाएँ पोषण वाटिका का उपयोग कर रही थीं एवं 50 ऐसी महिलाएँ जिनका पोषण वाटिका से कोई संबंध नहीं था, का चयन आकस्मिक प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया। आंकड़ों का संग्रहण साक्षात्कार प्रविधि द्वारा एवं विश्लेषण प्रतिशत में किया गया है। इस अध्ययन की उत्तरदाता महिलाएँ थी जिससे दो बातें अपेक्षित थीं पहली पोषण वाटिका के महत्त्व एवं उपयोगों की जानकारी का स्तर अत्यंत अच्छा होगा, खासकर उन 50 महिलाओं का जो पोषण वाटिका का उपयोग कर रहीं थीं। दूसरा गृह विज्ञान प्रसार कार्यकर्ता के रूप में वे अपने इस ज्ञान को अन्य लोगों तक प्रसारित करेगी।

सूचक शब्द : पोषण वाटिका, पोषण सुरक्षा, बच्चे।

पोषण वाटिका या न्यूट्री गार्डन स्वयं के या परिवार के उपयोग के लिए सब्जियों, फलों या औषधीय पौधों को अपने घर के आहाते में, आसपास या छत पर उगाना ही पोषण वाटिका है। पोषण वाटिका सब्जियों को अपने घर के आसपास लगाने की प्रथा को कहते हैं। इसे पोषण वाटिका, पोषण बगिया, किचन गार्डन, न्यूट्री गार्डन, बार्डन बाड़ी, सब्जी बाड़ी, पोषण बाड़ी आदि नामों से भी जाना जाता है।

कुपोषण से बचाव और समुदाय में भोजन में विविधता को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार के ग्रामीण विकास विभाग द्वारा मनरेगा योजना के अंतर्गत पोषण वाटिकाओं के विकास के लिए निर्देश प्रसारित किये गए हैं। इन निर्देशों में राज्य की योजनाओं और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के सम्मिलन से व्यक्तिगत और सामुदायिक पोषण वाटिकाओं को बढ़ावा दिए जाने की बात कही गयी है।

इस योजना में आंगनवाड़ी के हितग्राहियों को पोषण वाटिका लगाने के लिए प्राथमिकता दी जायेगी। साथ ही सामुदायिक पोषण वाटिका लोगों के पोषण स्तर में आवश्यक बदलाव एवं भोजन में विविधता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यह समुदाय के मिलेजुले कार्यों को बढ़ावा देने एवं सांस्कृतिक स्तर पर भी समुदाय को समृद्ध बनाने में उपयोगि सिद्ध हो सकती है।[1]

खेतों में कुछ चुनिन्दा फसलों के उत्पादन पर अधिक जोर हैं एक फसली क्षेत्र पिछले दशकों में बढ़ा है और विविध पोषक तत्वों से भरपूर कई फसलों एवं सब्जियों का उत्पादन कम हो गया हैं। इससे फसल एवं खाद्य विविघता में कमी हो रही है। हमारे भोजन में रोटी, चावल एवं दाल के अलावा अन्य खाद्य पदार्थों की मात्रा कम हो गयी है। खाद्य विविधता की कमी का प्रभाव हमारे स्वास्थ्य पर पड़ रहा है इस स्थिति में अब यह आवश्यक हो गया है कि हम अपने भोजन में विविधता बढ़ाने के लिए अपने घर के आसपास पोषण वाटिका लगायें एवं उसमें अपने परिवार की आवश्यकता के अनुरूप सब्जियां, फल एवं दैनिक उपयोग की औषधीय पौधे को उगायें।

गरीबी एवं कुपोषण के दुष्चक्र को तोड़ने के लिए खाद्य एवं पोषण सुरक्षा बेहद आवश्यक्ता हैं इस प्रक्रिया में पोषण वाटिका पारिवारिक स्तर पर न केवल पोषण सुरक्षा प्रदान करेगी बल्कि गरीबी को कम करने में भी सहयोगी हो सकती हैं। इस प्रक्रिया से समुदाय को अपने घर में शुद्ध सब्जियां एवं फल मिल सकेंगे एवं बाजार पर निर्भरता घटेगी।[2]

पोषण वाटिका एक ऐसा तरीका है जो परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त फल और सब्जियों की निरंतर आपूर्ति के माध्यम से सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान करके आहार विविधता को बढ़ाने मे महत्वपूर्ण भमिका निभा सकता है।

एक बेहतर पोषण वाटिका कैसी होना चाहिए ?

1. पोषण वाटिका में पानी की समुचित व्यवस्था हो।
2. पोषण वाटिका की सुरक्षा हेतु बांस, लकड़ी या तार फेंसिंग की गयी हो।

❑ असिस्टेंट प्रोफेसर गृहविज्ञान विभाग, ललित नारायण मिश्र विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

3. पोषण वाटिका में कम से कम 6-8 तरह की सब्जियां एवं फल या औषधीय पौधे लगे हों।
4. पोषण वाटिका में उपयोग हेतु जैविक खाद बनाने के लिए कम्पोस्ट/वर्मी पिट होना चाहिए।

पोषण वाटिका (न्यूट्री गार्डन) का महत्व

1. समुदाय को स्थानीय स्तर पर जैविक, शुद्ध व पर्याप्त मात्रा में हरी सब्ज़ियाँ मिलेंगी जिससे खाद्य सुरक्षा एवं पोषण स्तर में वृद्धि होगी।
2. परिवारों में स्थानीय संस्कृति एवं परिवेश के अनुरूप भोजन में विविधता आएगी।
3. अपनी सब्जी का उत्पादन स्वयं के लिए करने से पारिवारिक खर्चों में कमी आएगी और आय का एक हिस्सा अन्य आवश्यक कामों में खर्च हो सकेगा।
4. बाजार की तुलना में कम लागत में, अच्छी गुणवत्ता वाली, बिना किसी रसायन के उपयोग के सब्जियां आसानी से मिल जाती हैं।
5. सब्जी के लिए बाजार नहीं जाना पड़ता और समय की बचत होती है।
6. यह परिवार एवं समुदाय में बेहतर वातावरण बनाने में भी मददगार है।
7. पोषण वाटिका में सब्जी के उत्पादन से स्थानीय सब्जियों एवं फलों की देशी प्रजातियाँ संरक्षित होगी जो स्थानीय जलवायु के अनुरूप उत्पादन देने में सक्षम हैं।

पौधों को लगाने की समय-सारणी

खेती के मौसम के अनुसार सब्जियों की बुवाई

खरीफ (जून-जुलाई)	इस मौसम में भिंडी, लौकी, करेला, टिंडा, बैंगन, टमाटर, ग्वार, लोबिया, मिर्ची, अरबी आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।
रबी (सितम्बर-अक्टूबर)	इस समय बैंगन सरसों, मटर, प्याज, लहसुन, आलू, टमाटर, शलजम, फूलगोभी, बंदगोभी, चना आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।
जायद (फरवरी-जुलाई)	इस समय भिंडी, ककड़ी, खीरा, लौकी, तोरई, टिंडा, अरबी, तरबूज, बैंगन आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

सब्जियां एवं मौसमी फलों में भरपूर मात्रा में विटामिन एवं खनिज तत्व, अन्य पोषक तत्व पाए जाते हैं। पोषण वाटिका से समुदाय में खासकर गर्भवती/धात्री महिलाओं एवं छोटे बच्चों को विटामिन एवं पोषक तत्वों की पूर्ति संभव हो सकेगी जो न केवल खाद्य सुरक्षा में सहायक होगा बल्कि महिलाओं में एनीमिया एवं बच्चों में कुपोषण की रोकथाम करने में भी सहायक होगा।[5]

पोषक तत्वों के अनुसार उगाई जाने वाली सब्जियां[6]

पोषक तत्व	सब्जियां, जिनमें यह पाया जाता हैं।
प्रोटीन	अरबी, मटर, सेम, फ्रेंचबीन, लोबिया, ग्वारफली, चौलाई।
विटामिन-ए	गाजर, पालक शलजम, चौलाई, शकरकंद, पत्तागोभी, मेथी, टमाटर, धनियाँ।
विटामिन-बी	मटर, सेम, लहसुन, अरबी।
विटामिन-सी	टमाटर, शलजम, हरी मिर्च, फूलगोभी, पत्तागोभी, करेला, मूली की पत्तियां, चौलाई।
कैल्शियम	फूलगोभी, गाजर, धनियाँ, मूली, शलजम, चुकंदर, चौलाई, कद्दू, प्याज, टमाटर, धनियाँ।
कार्बोहाइड्रेट	गाजर, कढ़ी पत्ता, सहजन, बीन, आलू, शकरकंद, अरवी, चुकंदर।
पोटेशियम	शकरकंद, आलू, करेला, मूली, सेम।
फॉस्फोरस	गाजर, फूलगोभी, लहसुन, मटर, करेला।
आयरन	फूलगोभी, लोबिया, बथुआ, पालक, करेला, मेथी, पुदीना, मटर।

आज तेजी से बदल रही दुनियां में खेती एवं खानपान के तौर तरीकों में भी तेजी से बदलाव हो रहे हैं। दुनिया मे सभी लोगों का पोषण सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त भोजन का उत्पादन हो रहा है, परन्तु फिर भी विश्व के कुछ हिस्सों में खाद्य समस्या बढ़ी जा रही है और 82 करोड़ से ज्यादा लोग लगातार कुपोषण का शिकार बने हुए हैं। भारत में भी पर्याप्त अनाज का उत्पादन होने के बावजूद भूख एवं कुपोषण एक बड़ी समस्या है। उपलब्ध आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि कुपोषण की सबसे अधिक समस्या बच्चों और महिलाओं में देखी गई है। वर्ष 2019-21 के नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे (एनएफएचएस-5) एवं एनएफएचएस-6 के अनुसार

भारत में हर तीसरा बच्चा यानि 35.5 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं। इन स्थितियों में 'जीरो हंगर' (भुखमरी का अंत) के 2030 के सतत विकास लक्ष्य को प्राप्त करना-दूसरे शब्दों में यह सुनिश्चित करना कि दुनिया में किसी भी कोने में, कोई भी भूखा ना रहे-एक बड़ी चुनौती है।

जलवायु परिवर्तन और बढ़ते तापमान के चलते बच्चों के आहार में विविधता कम हो रही है साथ ही उसमें पोषक तत्वों की मात्रा भी घट रही है। वर्तमान में एक या दो फसलों का उत्पादन अधिक हो रहा है जिसके कारण फसल विविधता में कमी आयी है, जिसका सीधा असर पोषण पर पड़ रहा है। हाल ही में जर्नल एनवायरनमेंट रिसर्च लेटर्स में प्रकाशित शोध में यह बात सामने आई है। यह शोध 19 देशों के 107,000 बच्चों पर किया गया है, जो दुनिया के अलग-अलग महाद्वीपों से सम्बन्ध रखते हैं। इस शोध में शोधकर्ताओं ने आहार में उपलब्ध विविधता और जलवायु परिवर्तन के सम्बन्ध को समझने के लिए लम्बे समय के दौरान तापमान में हो रही वृद्धि, बारिश और बच्चों में कुपोषण के स्तर का अध्ययन किया है। उनके अनुसार तापमान बढ़ने के साथ-साथ आहार विविधता में कमी देखी गई है, इसके विपरीत कुछ क्षेत्रों में जहां वर्षा में वृद्धि हो रही है वहां आहार विविधता में भी वृद्धि देखी गई थी। इस शोध के निष्कर्ष से पता चला है कि पांच वर्ष या उससे कम आयु के बच्चों में औसत आहार विविधता 3.2 पाई गई थी। जिसका अर्थ है कि इस सर्वेक्षण से पहले बच्चों ने 10 खाद्य पदार्थ समूहों में से औसतन 3.2 का सेवन किया था।

अतः आवश्यकता है कि हम अपने भोजन में विविधता लाने के लिए स्थानीय स्तर पर वह सब उगायें, जो हमारी थाली का हिस्सा हैं इस दृष्टिकोण से पोषण वाटिका एक कारगर तरीका है। पोषण वाटिका के माध्यम से हम समुदाय में भोजन में विविध तरह की हरी सब्जियां, फल की मात्रा को बढ़ा सकते हैं।[8]

इसके लिए लोगों में पोषण वाटिका के उपयोगिताओं एवं महत्त्वों के प्रति जागरूकता लानी होगी तथा इससे होने वाले लाभ एवं इसके महत्त्वों से अवगत कराने हेतु अध्ययन किया गया जिससे भविष्य में पोषण सुरक्षा मात्र एक शब्द बन कर न रह जाए।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. पोषण वाटिका से लाभान्वित महिलाओं की पोषण स्थिति का आकलन।
2. पोषण वाटिका के प्रति जागरूक करना/जागरूकता लाना।

अध्ययन की परिकल्पना

1. पोषण वाटिका से लाभान्वित महिलाओं की पोषण स्थिति संतोषप्रद।
2. पोषण वाटिका के प्रति जागरूकता सकारात्मक सोच एवं खाद्य सुरक्षा की पहल।

शोध पद्धति : प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र दरभंगा जिला के दरभंगा शहरी क्षेत्र के कादिराबाद एवं राजकुमार गंज को लिया गया। इसलिए प्रस्तुत शोध शीर्षक की प्रकृति को देखते हुए वर्णानात्मक शोध डिजाइन चुना गया है क्योंकि शोध विषय के वारे में तथ्य संकलित कर उनका एक विवरण प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन के अंतर्गत उद्देश्यपूर्ण न्यायदर्श (Purposive Sampling) के द्वारा दरभंगा शहर से 24 से 55 आयु वर्ग की 100 महिलाएँ ली गई हैं न्यादर्श के अंतर्गत दरभंगा शहर के कादिराबाद एवं राजकुमार गंज की 50 गृहणियाँ जो पोषण वाटिका का उपयोग कर रही हैं और 50 गृहणियाँ जो बाजार की साग-सब्जियों पर निर्भर हैं।

प्रस्तुत अध्ययन के लिए प्राथमिक डाटा साक्षात्कार अनुसूची द्वारा संकलन किया गया एवं द्वितीयक डाटा अलग-अलग वेबसाइट, पुस्तकों, शोध पत्रों व रिपोर्ट द्वारा संकलित किया गया है। अध्ययन में पोषण वाटिका के महत्त्व एवं उपयोग के स्वरूप का आकलन किया गया हैं इस अध्ययन से प्राप्त आंकड़े एवं उनके विश्लेषण का वर्णन निम्नवत हैं।

तालिका-1

पोषण वाटिका से लाभान्वित महिलाओं की BMI

BMI	वजन	सख्या	प्रतिशत
<18.5	कम वजन	7	14
18.5-24.5	सामान्य वजन	35	70
25-29.5	अधिक वजन	5	10
>30	मोटापा	3	6
	योग	50	100

नोटः- WHO BMI चार्ट के अनुसार[9]

तालिका-1 से स्पष्ट है कि 14 प्रतिशत महिलाओं का BMI <18.5, 70 प्रतिशत महिलाओं का BMI 18-24.9, 10 प्रतिशत महिलाओं का BMI 25-29.9 और 6

प्रतिशत महिलाओं का BMI >30 है।

तालिका-2

पोषण वाटिका से गैर- लाभान्वित महिलाओं की BMI

BMI	वजन	संख्या	प्रतिशत
<18.5	कम वजन	25	50
18.5-24.5	सामान्य वजन	10	20
25-29.9	अधिक वजन	10	20
>30	मोटापा	5	10
	योग	50	100

नोटः- WHO BMI चार्ट के अनुसार[10]

तालिका-2 से स्पष्ट है कि पोषण वाटिका से गैर लाभान्वित महिलाओं की BMI पता लगाने के लिए दरभंगा जिले के राजकुमार गंज और कादिराबाद मोहल्ले की 50 महिलाओं का साक्षात्कार अनुसूची के द्वारा डाटा का संग्रह किया, जिसमें यह देखने को मिला कि 50 प्रतिशत महिलाओं का BMI <18.5, 20 प्रतिशत महिलाओं का BMI 18.5-24.5 और 20 प्रतिशत महिलाओं का BMI >25-29.9 तथा 10 प्रतिशत का मात्र >30 है।

अतः पोषण वाटिका से लाभान्वित और गैर लाभान्वित महिलाओं की BMI तालिका संख्या-1 और 2 के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट रूप से देखने को मिल रहा है कि पोषण वाटिका से लाभान्वित महिलाओं की BMI अच्छी है।

तालिका संख्या 3

पोषण वाटिका से लाभान्वित एवं गैर लाभान्वित महिलाओं का तुलनात्मक क्लीनिकल परीक्षण

मसूड़ों से खून बहना	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	6	12
गैर लाभान्वित महिलाएँ	10	20
एंगुलर स्टोमाटाइटीस	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	5	10
गैर लाभान्वित महिलाएँ	6	12
पेलाग्रा	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	5	10
गैर लाभान्वित महिलाएँ	5	12
ओडिमा	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	10	20
गैर लाभान्वित महिलाएँ	5	10
त्वचा और बालों का रंग बदलना	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	8	16
गैर लाभान्वित महिलाएँ	9	18
मांसपेशियों की कमजोरी	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	6	12
गैर लाभान्वित महिलाएँ	10	20
चिलोसिस	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	10	20
गैर लाभान्वित महिलाएँ	5	10
कुल योग	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	50	100
गैर लाभान्वित महिलाएँ	50	100

अतः पोषण वाटिका से लाभान्वित एवं गैर लाभान्वित महिलाओं का क्लीनिकल परीक्षण का तुलनात्मक तालिका संख्या-3 के अध्ययन से स्पष्ट है कि पोषण वाटिका से गैर लाभान्वित महिलाओं की अपेक्षा लाभान्वित महिलाओं का स्तर बेहतर स्थिति में है।

तालिका संख्या 4

पोषण वाटिका से लाभान्वित एवं गैर लाभान्वित महिलाओं में रक्तहीनता की तुलनात्मक तालिका

रक्तहीनता मुक्त	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	30	60
गैर लाभान्वित महिलाएँ	15	30
हल्का रक्तहीनता	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	10	20
गैर लाभान्वित महिलाएँ	15	30
मध्यम रक्तहीनता	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	5	10
गैर लाभान्वित महिलाएँ	10	20
गम्भीर रक्तहीनता	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	5	10
गैर लाभान्वित महिलाएँ	10	20
कुल योग	**संख्या**	**प्रतिशत**
लाभान्वित महिलाएँ	50	100
गैर लाभान्वित महिलाएँ	50	100

अतः पोषण वाटिका से लाभान्वित एवं गैर लाभान्वित महिलाओं में रक्तहीनता की तुलनात्मक तालिका संख्या-4 के अध्ययन से स्पष्ट है कि पोषण वाटिका से गैर लाभान्वित महिलाएँ में 60 प्रतिशत रक्तहीनता से ग्रसित नही है। और पोषण वाटिका से गैर लाभान्वित महिलाओं के रक्तहीनता का स्तर की अपेक्षा पोषण वाटिका से लाभान्वित महिलाओं के रक्तहीनता का स्तर बेहतर

स्थिति में है।

निष्कर्ष : पोषण सुरक्षा हर व्यक्ति के वर्तमान एवं भविष्य दोनों अवस्थाओं में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका में हैं परन्तु प्रतिदिन के आहार में पौष्टिक खाद्य पदार्थों की समुचित मात्रा एवं सही तरीके से सम्मिलित होने के लिए पोषण वाटिका के सभी पहलुओं की जानकारी आवश्यक हैं, यह केवल इस तरह के अध्ययन से ही सभंव हो पाऐगा, जिससे भविष्य में हमारा समाज कुपोषण की समस्याओं से वंचित एवं स्वस्थ पोषण स्तर प्राप्त कर पाऐगा।

सन्दर्भ

1. जैन, चन्द्रप्रभा, 'पोषण एवं आहार', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1966, पृ.38।
2. स्वामिनाथन, एम. 'पोषण एवं आहार के सिद्धांत', बंगलोर पब्लिशिंग कं., बंगलोर, 2008, पृ. 25।
3. सिंह बृन्दा, 'पारिवारिक संबंध', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2020 पृ. 585।
4. Kisan Samadhan (https://kisansamadhan.com/which-vegetables-doyou-plant-in-which-month)
5. सिंह बृन्दा, 'आहार एवं पोषण', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2019, पृ. 20।
6. गोपालन सी आदि, 'भारतीय खाद्यों में पोषक तत्व', आईसीएमआर, हैदराबाद एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, बैतूल
7. नेशनल फैमिली स्वास्थ्य सर्वे (NFHS), अंतर्राष्ट्रीय संस्थान, जनसंख्या विज्ञान, मुम्बई, 2006, पृ. 58।
8. बख्शी, वी.के. 'आहार एवं पोषण के मूल तत्व', विनोद पुस्तक मंदिर आगरा, 2015, पृ. 228।
9. WHO, BMI Chart
10. WHO, BMI Chart

Regd. No. UPHIN/1999/00955 ISSN 0974-0074
UGC-CARE List-Social Sciences

अरावली में अवैध खनन से उत्पन्न पर्यावरण संकट (मेवात क्षेत्र के विशेष संदर्भ में)

❑ पूजा साहू

सूचक शब्द : मेवात, अरावली पर्वत, अवैध खनन, वायु एवं ध्वनि प्रदूषण, पर्यावरणीय खतरा।

मानव का प्राचीन काल से ही पर्यावरण से घनिष्ठ संबंध रहा है। मानव की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियाँ पर्यावरण के इर्द–गिर्द ही केंद्रित रही हैं। मानव ने अपनी गतिविधियों से पर्यावरण को प्रभावित किया है और अब यह गतिविधियाँ इतनी बढ़ चुकी हैं कि स्वयं मानव जीवन ही खतरे में आ गया है। मानव ने चट्टानों, पत्थरों और खनिजों की खोज के कारण पर्यावरण को बहुत प्रभावित किया है। जंगल का ह्रास, जल, मिट्टी और वायु प्रदूषण, प्राकृतिक वनस्पतियों और जीवों की कमी, जैव विविधता पर गहराता संकट खनन के कुछ पर्यावरण प्रभावित मुद्दे हैं। वर्तमान में मानव पर्यावरण का विध्वंसकर्ता बनता जा रहा है जिसका जीवंत उदाहरण मेवात क्षेत्र में अरावली पर्वत श्रृंखला में हो रहा अवैध खनन है जिसके कारण न सिर्फ पर्यावरण को नुकसान हो रहा है बल्कि स्वयं मानव जीवन भी खतरे में आ गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में मेवात क्षेत्र के अंतर्गत आने वाली अरावली पर्वत श्रृंखला में दिन प्रतिदिन हो रहे अवैध खनन एवं दोहन के मानव जीवन एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले गंभीर प्रभावों की समीक्षा की गई है। साथ ही कुछ उपाय भी प्रस्तुत किए हैं जिन्हें अपनाकर इस गंभीर समस्या से एक सीमा तक छुटकारा पाया जा सकता है।

पर्यावरणीय इतिहासः बीसवीं सदी में 1960–70 के दशक में विश्व तथा 1990 के दशक में भारत में प्रारंभ हुए पर्यावरणीय इतिहास का आज इतिहास लेखन की विभिन्न शाखाओं में महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। पर्यावरणीय इतिहास के अंतर्गत इतिहास में समय के साथ–साथ मनुष्य तथा पर्यावरण के अंतर्संबंधों, पर्यावरण के मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों, मानव की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक व सांस्कृतिक क्रियाओं के परिणामस्वरूप हुए पर्यावरणीय परिवर्तनों तथा विभिन्न पर्यावरणीय पहलुओं (पर्यावरण प्रबंधन, पर्यावरण चेतना, पर्यावरण जागरूकता जैसे विषयों) का अध्ययन किया जाता है। पर्यावरण की मानव जीवन में भूमिका का वर्णन करते हुए एलेन चर्चिल सेम्पुल ने 1910 में अपनी पुस्तक “इनफ्लुएंस ऑफ ज्योग्राफिक एनवायरमेंट” में मानव के पृथ्वी पर निर्भर होने को ‘पर्यावरण निश्चयवाद’ के रूप में परिभाषित किया और विचार दिया कि – “मनुष्य पृथ्वी की सतह का उत्पाद है। इसका अर्थ केवल यह नहीं है कि वह पृथ्वी का बच्चा है, उसकी धूल है, बल्कि पृथ्वी ने उसे जन्म दिया है, उसे खिलाया है, उसके कार्य निर्धारित किए हैं, उसके विचारों को निर्देशित किया है. ....”[1]

भारतीय मनुष्य प्राचीन काल से ही अपने जीवन में पर्यावरण एवं प्रकृति के महत्व को स्वीकार करता आया है और पर्यावरण के साथ एक सुखद अंतर्संबंध बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयास करता रहा है। लेकिन यह भी सत्य है कि इच्छाशील प्राणी होने के कारण मनुष्य के पयार्वरण के साथ संबंध समय के साथ–साथ बदलते रहे हैं। प्रारंभ में मनुष्य की पर्यावरण के साथ भूमिका पयार्वरण के एक कारक के रूप में थी जो समय के साथ–साथ बदलती गई।

पर्यावरण कारक के रूप में – पर्यावरण का रूपांतरकर्ता – पर्यावरण का परिवर्तनकर्ता – पर्यावरण का विध्वंसकर्ता[2]

पर्यावरणीय इतिहासकार, इतिहास की इस उपशाखा का अध्ययन मुख्यतः तीन उप–विषयों में करते हैं–

1. पर्यावरण कारकों का मानव जीवन पर प्रभाव।
2. मानवीय कार्यों के कारण होने वाले पर्यावरण परिवर्तन।
3. पर्यावरण के बारे में मानव विचारों का इतिहास।

मानवीय कार्यों के परिणामस्वरूप प्राकृतिक पर्यावरण में

❑ शोध अध्येत्री, इतिहास एवं पुरातत्व विभाग महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक (हरियाणा)

होने वाले परिवर्तनों के प्रभाव का मूल्यांकन करना प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य है। प्राचीन काल से ही मानव गतिविधियाँ जैसे शिकार करना, मछली पकड़ना, कृषि, पशुपालन, खनन, वानिकी, धातु विज्ञान, प्रौद्योगिकी, युद्ध तथा आदिमानव क्रियाएं अनेक रूपों में पर्यावरण को प्रभावित करती रही हैं। मेवात क्षेत्र के अंतर्गत अरावली पर्वत श्रृंखला का निरंतर खनन एवं दोहन का पर्यावरण पर पड़ने वाला महत्वपूर्ण प्रभाव है जो वर्तमान में यहां के लोगों के स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के लिए गंभीर चुनौती बन गया है जिससे न केवल पशु एवं पक्षियों की प्रजातियां विलुप्त हो रही हैं बल्कि पर्यावरणीय खतरा भी उत्पन्न हो रहा है।

अरावलीः एक परिचय

अरावली मुख्यतः भारत के राजस्थान एवं हरियाणा में स्थित एक पर्वतमाला है। भारत की भौगोलिक संरचना में अरावली प्राचीनतम पर्वत श्रृंखला मानी गई है और यह विश्व में भी प्राचीनतम है। यह पर्वत श्रृंखला राजस्थान को उत्तर से दक्षिण, दो भागों में बाँटती है। अरावली पर्वत श्रृंखला की कुल लंबाई गुजरात से दिल्ली तक 692 किलोमीटर है, अरावली पर्वत श्रृंखला का लगभग 80 प्रतिशत विस्तार राजस्थान में है। अरावली की औसत ऊँचाई लगभग 930 मीटर है तथा इसकी दक्षिण की ऊंचाई व चौड़ाई सर्वाधिक है।[3]

दक्षिण हरियाणा क्षेत्र में भिवानी, महेंद्रगढ़, रेवाड़ी, गुड़गांव, मेवात, फरीदाबाद में सवा लाख एकड़ हिस्सा अरावली का है जो कि हरियाणा में देशभर में दूसरा सबसे कम वन क्षेत्र (3.7 प्रतिशत) है। राज्य में स्थित अरावली पर्वत श्रृंखला के वन्यजीवों को बचाने के लिए अरावली क्षेत्र में सात वन्यजीव अभ्यारण और तीन चिड़ियाघर बनाए गए हैं। हिरण और मोर के लिये तीन ब्रीडिंग सेंटर बनाए गए हैं। गिद्धों के संरक्षण पर अलग से ध्यान दिया जा रहा है।[4]

अध्ययन क्षेत्र का भौगोलिक परिचय : मेवात दिल्ली से लगभग 64 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में स्थित है। यह क्षेत्र राजस्थान के अलवर और भरतपुर जिले और वर्तमान हरियाणा के नूंह जिले तक विस्तृत है। मेवात उष्णकटिबंधीय अर्ध शुष्क क्षेत्र के अंतर्गत आता है। 38^0 से 48^0 तापमान के साथ मई और जून वर्ष के सबसे गर्म महीने हैं जबकि 4^0 से 25^0 तापमान के साथ जनवरी सबसे ठंडा महीना है। ग्रीष्म काल में यहां धूल भरी गर्म हवाएं (लूं) चलती हैं। औसत वार्षिक वर्षा 336 से 440 मिलीलीटर तक होती है जो जुलाई महीने में सर्वाधिक होती है। यहां की शुष्क हवा एक मानक विशेषता है जिसके कारण मेवात के अधिकांश भाग में आर्द्रता काफी कम होती है।[5]

मेवात की प्रमुख भौगोलिक विशेषता उसकी अरावली पर्वत श्रृंखलाओं से घिरा होना है। काला पहाड़ अर्थात अरावली पर्वत मेवात के केंद्र में है, जो हरियाणा को राजस्थान से अलग करता है। काला पहाड़ के बारे में एक लोकप्रिय कहावत मेवात की भौगोलिक स्थिति का वर्णन करती है-

इत दिल्ली उत आगरा, इत मथुरा और बैराठ।
मेरो कालों पहाड़ सुहावणों, जाके बीच बसे मेवात।[6]

अरावली पहाड़ियां राजस्थान के पश्चिम से उदय होकर हरियाणा के इसी भाग से गुजर कर दिल्ली तक पहुंचती हैं। अरावली पहाड़ियों के बीच उपजाऊ घाटियां एवं जलोढ़ मैदान का क्षेत्र है, जबकि पहाड़ियों का ऊपरी हिस्सा बंजर है। यहां की मृदा हल्की रेतीली व दोमट है।[7]

यह क्षेत्र खनिज संपदा के मामले में भी समृद्ध है। अलवर राज्य के बंदोबस्त अधिकारी पी.डब्ल्यू. पाउलेट ने अलवर सरकार के अंतर्गत आने वाली अरावली पहाड़ियों को खनिज संपदा के मामले में चार समूहों में विभाजित किया है- मंडन समूह, अजबगढ़ समूह, कुशलगढ़ समूह और अलवर समूह।[8] अलवर समूह अपनी ऊंची पहाड़ियों एवं खनिज पदार्थों के सबसे बड़े हिस्से को समाहित करने के कारण सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। पूर्व में मंडावर से लेकर राजगढ़ तक और पश्चिम में प्रतापगढ़ तक फैली पहाड़ियों के समूह के साथ-साथ तिजारा पहाड़ियों का पूरा हिस्सा इस समूह के अंतर्गत समाहित है। इस समूह का प्रमुख खनिज क्वार्टरजाइट है, जबकि कुशलगढ़ समूह में चूना पत्थर

का बड़ा फैलाव पाया जाता है।[9]

पाउलेट की रिपोर्ट के अनुसार अरावली में उपयोगी खनिज प्रचुर मात्रा में थे। इनमें कॉपर पायराइट्स, अर्जेन्टीफेरस गैलेना, निकेल, रूटाइल, मैंगनीज और लोहा अयस्क सम्मिलित थे। इसके अलावा यहां तांबे की खानें भी मिलती हैं। राजगढ़ और भानगढ़ की पहाड़ियों में बड़ी मात्रा में लोहा अयस्क पाया जाता है, जबकि खोह और बलदेवगढ़ के पास रंगीन मार्बल और मोती डूंगरी रिज से काला मार्बल प्राप्त किया जा सकता था।[10]

अरावली में भरपूर जैव विविधता है। यहां पेड़ों, झाड़ियों और जड़ी बूटियों की 400 से अधिक प्रजातियां हैं, 200 के करीब देशी और प्रवासी पक्षी प्रजातियां, 100 के आसपास तितली प्रजातियां, सांपों तथा स्तनपाई जीवों की करीब 20 प्रजातियां यहां पाई जाती हैं जिनमें तेंदुए, सियार, नीलगाय और लकड़बग्घा भी सम्मिलित हैं।[11]

अरावली में पक्षियों (रेड रोस्टर, फेरुजिनस डक, पेंटेड स्टॉर्क, ब्लैक-नेक्ड स्टॉर्क, ब्लैक-हेडेड आइबिस, ओरिएंटल डार्टर, रॉक बुश क्वेल, ग्रेट इंडियन बस्टर्ड, ओरिएंटल डार्टर, रिवर लैपविंग, सिनेरियस वल्चर, यूरेशियन कर्ल्यू, एलेक्जेंड्राइन पैराकेट, लैगर फाल्कन, स्टेपी गरुड़), जानवरों (नेवला व छिपकली और सलाय गुग्गुल) की कई तरह की प्रजातियां पाई जाती हैं।[12]

खनिज संपदा का धनी अरावली पर्वत मध्यकाल से ही सबका ध्यान अपनी तरफ आकर्षित कर रहा है। पाउलेट के अनुसार लोहे का निर्माण, मुगल काल में, अलवर और तिजारा सरकार में एक महान उद्योग था। यहां 200 लोहा गलाने वाली भट्टियां थीं। लेकिन उसके समय में केवल 37 भट्टियां काम कर रही थीं, जो एक वर्ष में 18,500 मन (660 टन) लोहा निकालती थीं।[13]

हरियाणा में, विशेष रूप से मेवात में, अरावली के घने जंगलों का आवरण वाहनों और औद्योगिक प्रदूषण के उच्च स्तर वाले क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से हवा को शुद्ध करने में मदद करता है। अरावली की पहाड़ियाँ भूजल रिचार्ज में भी मदद करती हैं, जो हर वर्ष इस क्षेत्र में तपती गर्मी के महीनों के दौरान होने वाली पानी की कमी को देखते हुए महत्वपूर्ण है। अरावली एनसीआर के सबसे महत्वपूर्ण जल पुनर्भरण क्षेत्र के रूप में भी काम करती है, जिसमें हर साल जमीन में प्रति हेक्टेयर दो मिलियन लीटर पानी रिचार्ज करने की क्षमता होती है। अरावली को खोने का मतलब हमारी जल सुरक्षा को खोना है। अरावली पर्वत श्रृंखला राजस्थान से आने वाली झुलसाने वाली और जानलेवा गर्म हवाओं को सीधे आने से रोकती है। अरावली की वजह से एनसीआर का तापमान 6 से 8 डिग्री तक कम रहता है। ये पहाड़ियां दिल्ली के लिए कवच का काम करती हैं।[14]

मेवात में अवैध खनन चिंता का बड़ा कारण : खनिज संपदा की धनी अरावली कुछ लालची लोगों का ध्यान अपनी ओर खींच रही हैं। वर्तमान में मेवात क्षेत्र को जीवन देने वाली अरावली की ये पहाड़ियां ही मानवीय क्रियाओं के कारण उसके लिए सबसे बड़ा खतरा बनती जा रही हैं। अरावली पहाड़ियों में हो रहा निरंतर खनन और दोहन मेवाती जनजीवन एवं पर्यावरण को खतरा पहुंचा रहा है। अवैध खनन का प्रमुख कारण इस इलाके में कॉपर, लेड, जिंक, सिल्वर, आयरन, ग्रेनाइट, लाइम स्टोन, मार्बल, चुनाई पत्थर जैसे खनिजों का पाया जाना है। कुल खनिजों में से 90 प्रतिशत अरावली पर्वत श्रृंखला और उसके आसपास पाए जाते हैं।[15]

इलाके में अवैध खनन का खतरा निरंतर बढ़ता जा रहा है जिसके कारण जमीन की उर्वरता काफी कम हो चुकी है। इससे हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में सूखा और राजस्थान के रेतीले इलाके में बाढ़ के हालात बनने लगे हैं तथा मानसून के पैटर्न में भी बदलाव आया है। अरावली की पहाड़ियाँ दिल्ली, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश को धूल, आंधी, तूफान और बाढ़ से बचाती रही हैं, लेकिन अरावली में जारी अवैध खनन से थार रेगिस्तान की रेत दिल्ली की ओर लगातार खिसकती जा रही है।[16]

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी) के अनुसार, मेवात क्षेत्र में साल 2011 से 2017 के बीच 90 लाख टन खनिजों का अवैध उत्खनन किया गया है। अरावली में 78 मीटर गहराई तक खुदाई की अनुमति है जबकि

यह 200 मीटर अंदर तक हो रही है। राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) को हरियाणा पुलिस द्वारा दिए गए आंकड़ों से पता चलता है कि पर्यावरण की दृष्टि से इस महत्त्वपूर्ण पर्वत श्रृंखला पर अवैध खनन जारी रहने के बावजूद अब तक शायद ही किसी को दोषी करार दिया गया है। हरियाणा के फरीदाबाद, नूंह और गुरुग्राम जिलों में इस पर्वत श्रृंखला पर अवैध खनन के खिलाफ 1 जनवरी, 2017 से लेकर 31 जनवरी, 2023 के बीच 582 शिकायतें दर्ज कराई गई थीं। हरियाणा पुलिस की ओर से दायर शपथ पत्र के अनुसार केवल एक मामले में आरोपी को दोषी करार दिया गया। पिछले छह वर्षों के दौरान हरियाणा पुलिस को प्राप्त शिकायतों में से केवल 507 के लिए प्राथमिकी दर्ज की गई।[17]

सुप्रीम कोर्ट द्वारा 2002 से ही फरीदाबाद, गुरुग्राम और मेवात (नूंह जिले सहित) में अवैध खनन पर प्रतिबंध लगा दिया गया है, लेकिन कार्यकर्ताओं का आरोप है कि इस आदेश को कभी भी ठीक से लागू नहीं किया गया है। पर्यावरण प्रेमियों के समूह 'अरावली बचाओ सिटीजन्स मूवमेंट' ने अप्रैल 2022 में एनजीटी में एक याचिका दायर की थी। इसमें आरोप लगाया गया था कि खनन पर सर्वोच्च न्यायालय के प्रतिबंध के बावजूद गुड़गांव और नूंह के 16 स्थानों पर अरावली से पत्थरों का अवैध खनन किया जा रहा है। साल 2022 में सर्वोच्च न्यायालय ने कड़ी प्रतिक्रिया दिखाते हुए पर्यावरण ठीक करने के लिए फरीदाबाद, गुरुग्राम और मेवात (नूंह) में अरावली से खनन पर पूरी तरह प्रतिबंध लगा दिया था लेकिन इसके बावजूद भी खनन एवं दोहन में कोई कमी नहीं दिख रही है। सुप्रीम कोर्ट के प्रतिबंध के बाद भी अवैध खनन धड़ल्ले से हो रहा है। खनन माफिया बिना किसी रोक-टोक के दिन दहाड़े खनन गतिविधियों को अंजाम दे रहा है। एनजीटी और सुप्रीम कोर्ट की सख्ती के बावजूद अवैध खनन के इस कारोबार पर पूरी तरह से प्रतिबंध नहीं लग पा रहा है। हालत यह है कि अरावली में कई पहाड़ों की चोटियां ही गायब हो चुकी हैं। जगह-जगह बारूद से पहाड़ को काटकर पत्थरों के खनन से वहां गड्ढे तक हो गए हैं।[18]

पिछले वर्ष अक्तूबर में राजस्थान के अलवर क्षेत्र में अरावली की पहाड़ियों पर हो रहे अवैध खनन पर सुप्रीम कोर्ट ने तब रोक लगाने को कहा था जब राजस्थान सरकार ने यह स्वीकार किया कि अरावली की 138 में से 28 पहाड़ियाँ गायब हो चुकी हैं। इस पर सुप्रीम कोर्ट के तत्कालीन न्यायमूर्ति मदन बी. लाकुर ने कड़ी टिप्पणी करते हुए अधिकारियों से पूछा कि "28 पहाड़ियां आखिर कहां गायब हो गईं। क्या लोग हनुमान बन गए हैं जो पहाड़ उठाकर भागे जा रहे हैं।" इससे पहले 2017 में सुप्रीम कोर्ट ने बजरी खनन से जुड़े 82 लाइसेंस यह कहते हुए रद्द कर दिये थे कि बिना पर्यावरणीय मंजूरी और अध्ययन रिपोर्ट के खनन की अनुमति नहीं दी जा सकती।[19]

सुप्रीम कोर्ट में सर्वप्रथम 2002 में इस क्षेत्र में हो रहे अवैध खनन को रोकने के लिए कुछ रियायतों के साथ पाबंदी लगाई थी। वर्ष 2009 में सर्वोच्च न्यायालय ने अरावली वन क्षेत्र में खनन पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया था। वर्ष 2019 से 2020 के बीच करीब 247 हेक्टेयर जंगल कम हो चुका है। 2002 से लेकर 2022 तक अवैध खनन पर न जाने कितनी पाबंदियां लगाई जा चुकी हैं लेकिन खनन की यह विभीषिका रुकने का नाम नहीं ले रही है। यदि सरकारें अब भी इसे बचाने के लिये आगे नहीं आईं तो इस क्षेत्र का पूरा पर्यावरण खतरे में पड़ जाएगा। अरावली पर्वत श्रृंखला बची रहेगी, तो इस क्षेत्र का पर्यावरण भी बचा रहेगा।[20]

अवैध खनन ने न केवल पर्यावरण को बल्कि मानव जीवन को भी खतरे में डाल दिया है। अवैध खनन के दौरान नूंह में पहाड़ी दरकने से बड़ा हादसा हुआ है। हादसे के बाद मलबे में एक जेसीबी और डंपर दब गए। दोनों वाहन चालक गंभीर रूप से घायल हुए हैं। इसी तरह तावडू उपमंडल के गांव खरक जलालपुर, धुलावट, सहसोला पट्टी, छारोडा, चीला, पंचगांवा, बिधुबास सहित अन्य गांवो में धड़ल्ले से अवैध खनन का काला कारोबार जारी है।[21] हाल ही में मेवात के तावडू उपमंडल के डी. एस.पी. सुरिंदर सिंह खनन माफियाओं के खिलाफ कार्रवाई के लिए गए थे। इसी दौरान उनके ऊपर गाड़ी चढ़ा दी गई और उनकी मौके पर ही मौत हो गई।[22]

नूंह के जिलाधीश शक्ति सिंह ने कहा है कि विस्फोटक पदार्थों के साथ खनन गतिविधि मानव जीवन, उनके स्वास्थ्य व सुरक्षा के लिए खतरा है। अतः इन पदार्थों की प्राप्ति, भंडारण, बिक्री व निपटान पर प्रतिबंध लगाना चाहिए। उन्होंने यह सख्त आदेश दिया है कि नूंह जिले की सीमा के भीतर कोई भी व्यक्ति पहाड़ी क्षेत्रों में खनन के उद्देश्य से विस्फोटक पदार्थों की प्राप्ति, भंडारण, बिक्री व उसका निपटान नहीं कर सकता है। अवैध

खनन को रोकने के लिए, जिला स्तरीय टास्क फोर्स की स्थापना की है, जिसके प्रमुख संबंधित उपायुक्त हैं। डीएलटीएफ का यह उत्तरदायित्व है कि वह अवैध खनन से प्रभावित क्षेत्रों का औचक निरीक्षण करे और जिले में अवैध खनन की जांच के लिए धरातलीय स्तर पर कड़ी कार्रवाई करे।[23]

अधिकारियों के अनुसार, अरावली पहाड़ियों से पत्थर और रेत अवैध रूप से निकाली जाती है और निर्माण सामग्री के स्थानीय आपूर्तिकर्ताओं और भवन निर्माण ठेकेदारों को बेची जाती है। अधिकारियों ने कहा कि मेवात क्षेत्र के अरावली में कुल अवैध खनन का अनुमान लगाना कठिन है। हालांकि, अवैध खनन को रोकने के उपाय करने के लिए खान और खनिज (विकास और विनियमन) अधिनियम, 2015 की धारा 23 सी के आधीन राज्य सरकारों को अधिकार दिया गया है। पुलिस चोरी के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 379 के आधीन अवैध खनन के मामले भी दर्ज कर सकती है क्योंकि खनिजों को सरकारी संसाधन माना जाता है।[24]

साल 2018 में जारी नीति आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, देश का सबसे पिछड़ा जिला होने की उपाधि मेवात को मिली थी। टीकाकरण, बीच में पढ़ाई छोड़ना, शिशु मृत्यु दर एवं स्वास्थ्य समस्या आदि के आधार पर यह सूची जारी कि गई थी। यही कारण है कि यहां अवैध खनन लोगों की रोजी-रोटी का हिस्सा है। क्षेत्र के अधिकांश नागरिक अवैध खनन में संलग्न हैं क्योंकि उन्हें आजीविका का अन्य कोई साधन नहीं मिल पा रहा है। जिले में अरावली को बचाने का हर संभव प्रयास हो रहा है। गुरुग्राम मंडल में कहीं भी छिटपुट अवैध खनन की सूचना मिलते ही उस पर तुरंत कार्रवाई की जाती है। प्रतिदिन औसतन करीब पांच से सात ट्रक पकड़े जाते हैं। ग्रामीणों को समझाकर उनको पहाड़ों का महत्व बताया जाता है।[25]

मेवात में पर्यावरण की स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। यहां के पर्यावरण व सुंदरता को चार चांद लगाने वाली अरावली आए दिन अवैध खनन व पेड़ों की कटाई से घायल हो रही है। सरकार व प्रशासन इस पर रोक लगाने में पूरी तरह से सफल नहीं हो पा रहा जिससे यहां कल-कल बहते प्राकृतिक जल स्रोत खत्म हो रहे हैं। अरावली के साथ आए दिन हो रही छेड़छाड़ पर्यावरण के लिए बड़ा खतरा है। पहले इन पहाड़ियों में जगह-जगह प्राकृतिक जल स्रोत थे लेकिन यहां अंधाधुंध हो रही पेड़ों की कटाई व खनन ने इनके अस्तित्व को खत्म कर दिया है। फिरोजपुर झिरका में झिर मंदिर के आसपास कई जल स्रोत थे, जिनमें काफी पानी बहता रहता था, नूंह में भी नलहड़ व बसई गांव के पास अरावली में पानी के स्रोत थे लेकिन धड़ल्ले से हो रहे खनन ने यहां कई स्रोत बंद कर दिए हैं। कई में तो पानी की मात्रा बहुत कम रह गई है। पर्यावरणविद् बताते हैं कि यही हाल रहा तो जो सोत्र बाकी हैं वो भी दम तोड़ जाएंगे। अरावली में 12 ऐसे अंतराल पहचाने गए हैं जहां से थार रेगिस्तान गुरुग्राम और एनसीआर की ओर बढ़ रहा है। यदि हम अवैध खनन के कारण हरियाणा में अरावली की पहाड़ियों को खोते रहे, तो हम थार से आने वाली धूल भरी आंधियों से हमें बचाने वाला एकमात्र कवच खो देंगे। अरावली खत्म होने पर गुरुग्राम और एनसीआर के शहरों में वायु प्रदूषण का स्तर असहनीय हो जाएगा।[26]

अवैध खनन से उत्पन्न स्वास्थ्य संकट : मेवात के विभिन्न गांवों पर अवैध खनन से पर्यावरणीय खतरा मंडराता जा रहा है। अरावली की तलहटी में बसे ये गाँव अवैध खनन (पत्थर खनन) स्थलों से कुछ ही कि.मी. दूर हैं जिसके कारण इन गाँवों के आसपास खनन गतिविधियाँ विभिन्न पर्यावरण संबंधी एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को जन्म देती हैं। हमने यहां मेवात के विभिन्न गांवों के बच्चों और वयस्कों के स्वास्थ्य की रिपोर्ट प्रस्तुत की है जो कि अवैध खनन के कारण गंभीर बीमारियों से पीड़ित हैं।

तालिका 1.1: वयस्कों के लिए विभिन्न समस्याओं से पीड़ित लोग (प्रतिशत में)

समस्या का नाम	पुरुष	स्त्री
सांस की समस्या	17.64	30.76
दृष्टि की समस्या	11.76	23.07
अस्थमा	05.88	03.33
श्रवण समस्या	05.88	07.69
सिर दर्द	17.64	15.38
टी. बी.	05.88	03.33
थकान	15.38	06.60
विकलांगता	15.38	06.60
पेट दर्द	05.88	03.33

Source: Seema Vats, Impact of Stone Mining on the Health and Environment: A Study of the Village of Mewat, India

तालिका 1.2: बच्चों के लिए विभिन्न समस्याओं से पीड़ित लोग (प्रतिशत में)

समस्या का नाम	बालकों में	बालिकाओं में
सांस की समस्या	05.88	02.33
अस्थमा	04.16	05.88
सिर दर्द	04.16	02.43
विकलांगता	05.88	04.87
पेट दर्द	04.16	02.43
त्वचा रोग	12.50	11.76

Source: Seema Vats, Impact of Stone Mining on the Health and Environment: A Study of the Village of Mewat, India

मेवात में अवैध खनन का पर्यावरण एवं जनजीवन पर प्रभाव : अवैध खनन के कारण मेवात के ग्रामीण जनजीवन के स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर गंभीर प्रभाव पड़ रहे हैं। जिनका वर्णन इस प्रकार है[27]-

1. मौसम में धूल के कणों की उच्च सांद्रता के परिणामस्वरूप लोगों को दृष्टि की समस्या होती है। यह धूल कण प्रकाश की तीव्रता को भी कम करते हैं।
2. यहां के स्थानीय लोगों में सांस लेने की समस्या आम है जिसकी पुष्टि ऊपर दिए गए स्वास्थ्य आंकड़े भी करते हैं।
3. वातावरण में मौजूद धूल कणों के कारण स्थानीय तापमान में 3 से 5 डिग्री की वृद्धि होती है और साथ ही धूल भरी तेज हवाएं भी चलती हैं। लोगों ने स्वीकार किया है कि बाहर काम करना और खेतों में अपना नियमित काम करना बहुत कठिन है।
4. ट्रकों के नियमित उच्च यातायात के कारण पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है। शोर-शराबे एवं अंधाधुंध यातायात के कारण लोग अपने बच्चों को स्कूल भेजने से भी कतराते हैं क्योंकि उन्हें दुर्घटना होने का डर रहता है जिससे सामाजिक समस्याएं पैदा हो रही हैं।
5. वृक्षारोपण बहुत कम है तथा खेतों पर धूल की परत चढ़ने के कारण मिट्टी की उत्पादकता धीरे धीरे कम हो गई है जिससे फसल उगाना कठिन होता जा रहा है।
6. प्राकृतिक वनस्पति एवं पशु पक्षियों की प्रजातियों की निरंतर समाप्ति हो रही हैं।
7. जंगली जानवर और पशु-पक्षी कम ही दिखाई देते हैं हालांकि अधिकांश क्षेत्र पहाड़ी और जंगल वाला है।
8. हरे-भरे जंगल वनस्पति और जैव विविधता के नुकसान के कारण बंजर भूमि में बदल गए हैं जिससे इस क्षेत्र में गंभीर पारिस्थितिक असंतुलन उत्पन्न हो रहा है।
9. निरंतर हो रहा भूमि का क्षरण जंगली जानवरों और पक्षियों को बेघर कर रहा है, जिसके कारण उन्हें यहां से पलायन करना पड़ रहा है।
10. पहाड़ों से चट्टानों को हटाने के कारण हरे-भरे क्षेत्रों में अब मिट्टी के लाल बड़े धब्बे दिखाई देते हैं जो मेवात से उसके प्राकृतिक सौंदर्य को छीन रहे हैं।
11. ट्रकों द्वारा छोड़े गए कार्बनिक पदार्थ, गैस और सिल्क के कण मिट्टी पर एक परत बनाते हैं जो मिट्टी की जीवन प्रणाली, लवणता और फसल उत्पादकता को प्रभावित करते हैं।
12. खनन की चट्टानों के कचरे के ढेर को सड़क के किनारे बिखरा हुआ देखा जा सकता है जो मिट्टी के साथ-साथ हवा में नमी के स्तर को कम करता है।
13. खनन कंपनियों द्वारा नियोजित अपशिष्ट प्रबंधन तकनीक का प्रयोग नहीं किया जा रहा है जिसके कारण वायु, मिट्टी और जल प्रदूषण हो रहा है।
14. गांवों का तापमान दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है जो दिल्ली के तापमान से तीन से चार डिग्री अधिक पाया गया है।
15. तापमान में वृद्धि के कारण इस क्षेत्र में जलधाराएं सूख रही हैं।
16. निरंतर खनन के कारण पानी का जलस्तर भी कम हो रहा है। घाटा समशाबाद, बसई और नसीरबास आदि गांवों में पीने और कृषि उद्देश्य के लिए पानी की कमी देखी जा रही है।
17. अरावली में बड़े-बडे गड्ढे देखे जा सकते हैं जोकि बारिश के पानी से भर जाने के कारण मच्छरों और रोगाणुओं का घर बनते हैं जो मलेरिया हैजा आदि विभिन्न बीमारियों को इस क्षेत्र में फैला रहे हैं।
18. वन्यजीवों के आवास नष्ट होने के कारण मनुष्य-पशु संघर्ष की संभावना बढ़ रही है।

निष्कर्ष : इतिहास अतीत को जानने, वर्तमान को समझने एवं भविष्य को सुधारने में सहायक हो सकता है। इतिहास भविष्य नही बताता बल्कि इतिहास यह बताता है कि जो गलती वर्तमान में हुई है उसको ध्यान में रखते हुए भविष्य का निर्माण कैसे कर सकते हैं। पर्यावरणीय इतिहास भी हमें पर्यावरण के प्रति जागरूक रहने एवं इसे सुरक्षित, संरक्षित रखने की सीख देता है। प्राचीन

भारतीय समाज ने पर्यावरणीय चेतना और पर्यावरण संरक्षण को अपनी सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं से जोड़ा था। परंतु आधुनिकता के इस दौर में पर्यावरणीय मूल्यों की अवहेलना करना हमारी आदत बन चुकी है जिसका ज्वलंत उदाहरण मेवात में अवैध खनन के रूप में देखा जा सकता है। उपर्युक्त प्रभावों का अध्ययन कर हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि मेवात के लोगों एवं अमूल्य धरोहर अरावली को दिन-प्रतिदिन एक गंभीर संकट का सामना करना पड़ रहा है। यह संकट निरंतर बढ़ता ही जा रहा है जिसके कारण यहां के लोग, पेड़-पौधे, वनस्पति, जलवायु एवं जैव विविधता खतरे में हैं। अतः सरकार को जल्द से जल्द इस मामले पर गंभीर चिंतन करते हुए अवैध खनन की समस्या का समाधान करना चाहिए और साथ में जनजागरण हेतु सुचारू कदम भी उठाने चाहिए। अतः प्रस्तुत शोध पत्र एक प्रयास मात्र है जिससे वर्तमान युवा पीढ़ी सीख ग्रहण करके अपने भविष्य को बेहतर बना सके और पर्यावरण को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने में अपना योगदान दे सकें। हमारे द्वारा कुछ उपाय प्रस्तुत किए गए हैं जिन्हें अपनाकर मेवात में अवैध खनन की इस समस्या से कुछ हद तक छुटकारा पाया जा सकता है।

1. अरावली में लोगों का हस्तक्षेप बंद किया जाए।
2. अवैध खनन व पेड़ों की कटाई पर रोक लगे।
3. मेवात में, अरावली में लोग तेजी से घर बनाकर अवैध कब्जा कर रहे हैं, इन पर रोक लगे।
4. अरावली को हराभरा बनाने एवं वन्य जीव संरक्षण के लिए संभावित कार्यक्रम एवं योजनाएं बनाई जाए।
5. अरावली में पर्याप्त गार्ड व सुरक्षा की व्यवस्था हो।
6. औद्योगिक क्षेत्र रोजका मेव में सीवरेज व ट्रीटमेंट प्लांट की व्यवस्था हो।
7. लोगों को पर्यावरण के बारे में जागरूक किया जाए।
8. मृदा एवं जल संरक्षण के कार्यक्रम चलाए जाएं एवं अधिक से अधिक वृक्षारोपण किया जाए।

सन्दर्भ

1. Semple Ellen Churchill, 'Influences of Geographic Environment: On the Basis of Ratzel's System of Anthropo-Geography', Henry holt and company, Newyork, 1990, P. 1-2.
2. सिंह सविंदर, 'पर्यावरण भूगोल', प्रयाग पुस्तक भवन, प्रयागराज, 1999, पृ. 33।
3. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news- editorials/greens-in-the-red
4. वर्मा शुभम, 'मानव जनित जलवायु परिवर्तन के कारण हरियाणा अरावली श्रेणी की जैव विविधता पर प्रभाव', इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस्ड रिसर्च एंड डेवलपमेंट, वॉल्यूम-4, अंक-5, सितंबर 2019, पृ. 165।
5. Channing F.C., 'Land Revenue Settlement of the Gurgaon District' English, Central Jail Press, Lahore, 1882 P. 6.
6. मोरवाल भगवानदास, 'मेवाती लोक साहित्य में जीवन दर्शन एवं सृजन', सपा. चंदाराम मीणा, बाबू शोभा राम गवर्नमेंट कॉलेज, अलवर, 2005-6, पृ. 96।
7. Powlet P.W., 'Gazetteer of Alwar', Trubner & co., London, 1878, P. 177.
8. वही, पृ. 177
9. वही, पृ. 179, 180, 181।
10. वही, पृ. 182, 183।
11. सिंह मनमोहन, 'अरावली क्षेत्र में खनन के कारण पारिस्थितिकी परिवर्तन एक विश्लेषण', इंटरनेशनल जनरल ऑफ ट्रेंड इन साइंटिफिक रिसर्च एंड डेवलपमेंट, वॉल्यूम-6, 4 मई -जून 2022, पृ. 469।
12. वर्मा शुभम, पूर्वोक्त, पृ. 163।
13. पाउलेट, पूर्वोक्त, पृ. 76-77।
14. वर्मा शुभम, पूर्वोक्त, पृ. 165।
15. https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-editorials/greens-in-the-red
16. वही।
17. https://hindi.business-standard.com/india-news/illegal-mining-in-aravalli-only-one-punishment-in-6-years
19. वही।
20- https://www.drishtiias.com/hindi/daily-updates/daily-news-editorials/greens-in-the-red
21. सिंह मनमोहन, पूर्वोक्त, पृ. 467।
22- https://www.ptcnews.tv/illegal-mining-continues-on-aravalli-hills-in-nuh-mewat
23- https://navbharattimes.indiatimes.com/state/punjab-and-haryana/gurgaon/haryana-dsp-surendra-singh-bishnoi-murder-survey-aravalis-for-illegal-mining/articleshow/92977262.cms
24- https://www.jagran.com/haryana/mewat-ram-22381447.html
25- https://www.hindustantimes.com/india-news/illegal-mining-thrives-in-resource-rich-aravalli-101658304067182.html
26- https://www.amarujala.com/delhi-ncr/gurgaon/illegal-mining-continues-in-aravalli-gurgaon-news-c-1-1-220797-2023-01-20
27- https://www.jagran.com/haryana/mewat-12508478.html
28- Vats Seema, 'Impact of Stone Mining on the Health and Environment: A Study of the Village of Mewat', Journal of Earth and Environmental Science Research, vol.-4, P. 1-4.